स्त्री-सुबोधिनी

पाँचों भाग

[भाषासंवर्द्धिनी सभा, अलीगढ़ की आज्ञा से लिखित और उसी से पुरस्कार प्राप्त]

रचयिता

मथुरा निवासी सरयूलाल गुप्त कानूनगो गिर्दावर, जिला बुलन्दशहर

संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण

लखनऊ

केसरीदास सेठ द्वारा
नवलकिशोर प्रेस में मुद्रित और प्रकाशित
सन् १९२४ ई०

दसवीं बार १००००] [मूल्य २॥)

इसकी रजिस्ट्री नं० ७० सन् १९०५ में हुई है

स्त्रीसुबोधिनी

पाँचवाँ भाग

— ० —

भाषासंवर्द्धिनी सभा अलीगढ़ की आज्ञा से और
उक्त सभा से पुरस्कार पाया।

मथुरानिवासी मन्नूलाल गुप्त कानूनगो गिर्दावर
जिला बुलन्दशहर ने बनाया

संशोधित और परिवर्द्धित संस्करण।

लखनऊ

दसवीं बार

केसरीदास सेठ द्वारा

नवलकिशोर प्रेस में छपकर प्रकाशित हुई
सन १९२४ ई०

समर्पण ।

देशहितैषी महाशयो !

आपकी करतूत तो बहुत कुछ है, उसका पूरा पूरा उपकार मानना और यथोचित धन्यवाद देना मेरी जिह्वा और लेखनी का काम नहीं, उनकी सामर्थ्य से बाहर है। केवल मनमात्र का ही अनुभव हो सक्ता है, तथापि मैं कुछ यथाबुद्धि, बल और सामर्थ्यपूर्वक सुदामा के तण्डुल अर्पण करता हूँ, स्वीकार कीजियेगा।

आपके महत्कार्य में सहायता तो यह क्षुद्रबुद्धि क्या दे सक्ता है ? पर तो भी जैसे गिलहरी एक तिनका लेकर रामचन्द्रजी के पास सेतु बाँधते समय गई थी और रामचन्द्रजी ने उसको उसकी सामर्थ्य समझकर प्रसन्नता से अंगीकृत किया था, उसी आशा से यह 'स्त्रीसुबोधिनी' आपके करकमल में निवेदित है, ग्रहण करके कृतार्थ कीजियेगा।

२३ जून सन १८८२ ई०

आपका दासानुदास
ग्रन्थकर्त्ता ।

निवेदन।

जिस समय मैंने इस पुस्तक के लिखने का सङ्कल्प किया और लेखनी उठाई, उस समय यह विचार था कि, इसको ऐसी लिखनी चाहिये कि, फिर स्त्रियों को किसी दूसरी पुस्तक के पढ़ने और अवलोकन करने की आवश्यकता न रहे। पर क्या किया जावे, इच्छा जगदीश की, समय ही न मिला। अप्रैल में तो इसका विज्ञापन मेरे दृष्टिगोचर हुआ, फिर कई आवश्यक कार्यों से बाधा पड़ती गयी—अन्त में ६ मई से इसके लिखने का आरम्भ किया और ३१ मई ही को इसे समाप्त कर दिया। केवल २२ दिन लिखने को मिले, क्योंकि विज्ञापन में अवधि ३० जून तक ही की थी। उससे पहिले ही संशोधन आदि सब करना था। इसलिये यह पुस्तक मेरी इच्छानुसार न हुई। मैं इसको इससे तिगुनी करना चाहताथा, पर फिर कभी अवकाश मिलने पर इसकी पूर्ति करते समय मैं कुरीतिसंशोधन, गीतगान, सुई की करतूत, स्यानों का कौतुक और खोरानिवारण, लिखूंगा।

पाठकगण! ६२ दिवस की अवधि और इस पुस्तक के कलेवर तथा विषयों पर ध्यान दीजियेगा। बुद्धिमानों से विशेष निवेदन करना नहीं होता, उनको तो सङ्केत ही बहुत है और अपने मुख से अपनी करतूत कहनी भी, अपने मुँह 'मियाँमिट्ठू बनना" है।

इस पुस्तक में निम्न लिखित विषयों पर ध्यान दिया गया है —क्लिष्ट संस्कृत और फार्सी या अरबी के शब्द नहीं आने दिये, संयुक्त अक्षर भी बहुधा गिनतीमात्र के ही आये

विषय	पृष्ठ
आजकल की स्त्रियों के निन्दनीय दोष	१६
स्त्रियों का गहने पहनने का चाव	१६
उनके झूठे और सच्चे आभूषण	२०
अबकी युवा स्त्रियों की विद्योपार्जन में कठिन और पहिली युवा स्त्रियों का विद्योपार्जन	२१
स्त्री का सच्चा सौन्दर्य	२२
गुणहीन स्त्री की दशा	२३
स्त्रीप्रशंसा ...	२३
बुद्धिमती स्त्री के गुण	२३
बुद्धि का बल	२५
बाल्यावस्था में विद्याभ्यास	२५
युवावस्था में विद्याभ्यास की कठिनता	२६
शिक्षित और अशिक्षित बूढ़ी स्त्री की दशा	२७
मूर्ख स्त्री के दोष	२८
मूर्ख स्त्री की सन्तान	२६
मूर्ख विधवा स्त्री की दशा	३०
विद्यावती स्त्री का आनन्द और भोग	३१
बुद्धिमती और विद्यावती की प्रशंसा	३१
विद्यावती स्त्री की सन्तान	३३
विद्यावती स्त्री से पति को सहायता	३४
विद्या और बुद्धि की तुलना	३५

विषय	पृष्ठ
स्त्री को विद्योपार्जन की आवश्यकता	३४
विषयसूची	३६
गृहस्थधर्म।	
गृहस्थधर्म का आशय	३७
गृहस्थधर्म	३८
गृहस्थ की महिमा	३८
गृहस्थ का वृक्षरूपकालङ्कार	३६
सुमति और शील	३६
प्रीति की महिमा	४१
जल और दूध का दृष्टान्त	४२
बुहारी का दृष्टान्त	४२
नम्रता के गुण	४३
अभिमान का निषेध	४३
मर्यादात्याग के दोष	४५
संतोष की महिमा	४५
शान्ति के गुण	४६
धैर्य के गुण	४६
उद्यम के गुण और लाभ	४६
परिश्रम से लाभ	४८
साम्यावस्था के गुण	४८
गृहस्थी के लिये वर्जित विषय	४६

विषय	पृष्ठ
प्रोषितपतिका का निर्वाह	८६
विधवा के धर्म	८६
मन मारने के लाभ	८६
विधवा की ईश्वराराधना	९०
अष्टप्रकार के मैथुनों का निषेध	९०
विधवा के लिये व्रतों का फल	९०
विधवाधर्म के गुरु	९१
स्त्री का नातेदारों से बर्ताव	९२
रूप का गर्व न करना	९३
सखी सहेलियों से बर्ताव	९४
देवरानी जेठानी के संग बर्ताव	९४
ठाली रहने के दोष	९४
दीर्घसूत्री होने का निषेध	९६
गृहदक्षता	९६
गृहभण्डार	९७
लक्ष्मी के लक्षण और गुण	९७
उपकार का फल	९८
गृहस्थी को शिल्पविद्या से लाभ	९८
मूर्खों का पश्चात्ताप	९९
दक्षा का गृह	९९
पराया काम करना	१००

विषय	पृष्ठ
उपकारस्मरण और प्रत्युपकार की चिन्ता और चेष्टा	१०१
दूती के दोष	१०२
दूती प्रति बर्ताव	१०२
भीड में जाने का निषेध	१०३
परदेशवास और नियम	१०४
वस्त्रधारण और बाट का चलना	१०६
परनिन्दा का निषेध	१०७
पड़ोसिन का धर्म	१०८
पड़ोसी की वस्तु चुराने का निषेध	१०९
लोभ के अवगुण	११०
नीच से सम्बन्ध निषेध	१११
मूर्ख मित्र का निषेध	११२
उच्च सम्बन्ध निषेध	११३
समान सम्बन्ध की महिमा	११३
सङ्ग कुसङ्ग के गुण अवगुण	११४
हितोपदेश का ग्रहण	११५
मूर्ख को उपदेश	११६
क्रुद्ध जन के प्रति व्यवहार	११६
क्रोधनिवारण के उपाय	११७
प्रत्युपकार का निषेध	११८
ईख का दृष्टान्त	११८

विषय	पृष्ठ
घर आये का आदर सत्कार	११८
पाहुन का सत्कार	११६
सम्बन्धियों से वैर निषेद	११६
जाति बिरादरी में आना जाना	१२०
गृहस्थधर्म के गुरु	१२१
सामान्य शिक्षा।	
नई वधू को उपदेश	१२४
नई वधू का उठना बैठना	१२४
अंगिया के गुण और महीन वस्त्र निषेध	१२५
स्त्री की स्नानविधि	१२५
नई वधू का कार्यारम्भ	१२६
नई वधू का सखी सहेलियों के प्रति व्यवहार	१२६
पत्रीलिखने के नियम	१२६
विवाहसमय के वचन	१२७
व्यभिचारी पति की स्त्री का धर्म और उपाय	१२८
गार्गी और मैत्रेयी की कथा और महारानी कौशल्या का समाचार	१२६
त्याज्य स्त्रियों के नाम	१२६
ससुराल की बुराई का निषेध	१३०
पतिगृह का बर्ताव	१३०
सास बहू दोनों को उचित शिक्षा	१३१

स्त्रीसुबोधिनी प्रथमभाग का सूचीपत्र।

विषय

माता की शिक्षा
माँ का उपदेश बेटी को ससुराल जाते समय
बेटी से ससुराल की बुराई सुनना
बहू को सास की शिक्षा का स्मरण
[illegible]
बचपन के गुण और दोष
खानपान के नियम
[illegible]
[illegible]
किस दिन से ... [illegible]
[illegible]
भोजन की व्यवस्था
भोजन करने के नियम
मिल बैठकर भोजन करने के गुण
पहुनाई
रात्रि में किस प्रकार रहा करें
पर पुरुष से व्यवहार
गहनों के गुण और दोष
स्त्रियों को गहने का चाव
एक स्त्री का गहने के कारण लज्जित होना
स्त्री का सच्चा शृंगार और आभूषण

विषय	पृष्ठ
स्त्री के आठ अवगुण	१४६
बड़ों का मान और आदर	१४६
पतिसेवा की महिमा और व्रत आदि का निषेध	१४७
यात्रा के विषय उचित शिक्षा	१४७
ठगों का वृत्तान्त	१४७
ठगों की ठगी के उपाय	१४९
यात्रा में सावधानी	१४९
यात्रा में गहना-पाता ले जाने की विधि	१५०
राह भूलने पर क्योंकर पता लगावे	१५०
बिछुरने पर शीघ्रतर पता लगाने के उपाय	१५१
स्मरणीय उपदेश	१५२
कौन किससे प्रसन्न होता है	१५४
घर का काम-धन्धा।	
समय का उचित विभाग	१५६
समय की महिमा और मूल्य	१५८
नित्यकर्म	१५९
भोजननिमित्त कर्तव्य कर्म	१६०
भोजन करने का समय और क्रम	१६१
भोजन के पश्चात् कर्तव्य कर्म	१६१
शिल्पविद्या के लाभ	१६२
संध्या भोजन पश्चात् कर्तव्य कर्म	१६४

विषय	पृष्ठ
शयनमन्दिर का परिष्कार	१६४
वस्तु मँगाने का प्रबन्ध	१६४
वस्तुरक्षाविधि	१६४
देवरानी आदि के सन्तानों के प्रति व्यवहार .	१६६
साख पर वस्तु मँगाने के लाभ ..	१६६
पूरी वस्तु मँगाने के गुण	१६७
पालित पशुओं की टहल	१६७
वर्षाऋतु से पूर्व बन्दोबस्त	१६८
घर की बूढ़ी बड़ी स्त्रियों का काम .	१६९
भोज आदि का प्रबन्ध ..	१६९
अधूरे काम करने से हानि ..	१६९
अधम और उत्तम कामों के करने में भेद	१७०
अधम और उत्तम कामों की सूची ...	१७०
घर के काम धन्धे के गुण और कुछ शिक्षा .	१७१
व्यय आदि का प्रबन्ध।	
किसमें कितना व्यय करना ठीक है	१७३
व्यर्थ व्ययी होने के दोष	१७४
व्यर्थ व्यय रोकने के उपाय	१७५
कोश और गुप्तधन के गुण और लाभ ..	१७७
विवाहादि का प्रबन्ध .	१७७
मनुष्य को ऋण लेने की आवश्यकता के कारण	१७८

विषय.	पृष्ठ
ऋण के दोष	१७८
ऋण लेना सुगम है या कठिन	१७९
ऋण किस प्रकार लेवे	१८०
उऋण होने के उपाय	१८१
ऋणी की प्रतिष्ठा	१८२
अधिक व्याज के दोष	१८३
सास ननँद की चोरी से देने लेने का निषेध	१८४
नौकर चाकर की तनख्वाह	१८५
कैसा मनुष्य नौकर रखने योग्य है	१८६
नौकर के प्रति बर्ताव	१८६
चटोरपने के अवगुण और हानि	१८६
गृहस्थी का चटोरपन	१८७
निर्धनता के दोष	१८८
वस्तुक्रय के नियम	१८८
उधार और रोकड क्रय का अन्तर	१८८
उचापत की हानियाँ	१८९
सैंतने के लाभ	१८९
तुच्छ और व्यर्थ वस्तुओं से भी चतुर स्त्री को लाभ	१९०
चतुर स्त्री की अपर व्यवहारों में श्रोत	१९१
मेले तमाशे में जाने का प्रबन्ध	१९१
चींटी और कुकुटी से गृहस्थी की शिक्षा	१९२

विषय	पृष्ठ
टिड्डे और मधुमक्खी का दृष्टान्त	१९३
गहने द्वारा धनसञ्चय	१९४
गहने की हानि का परिमाण	१९४
समस्त भारत की गहने से हानि का परिमाण	१९५
धनवान् होने की क्रिया	१९६
एक सुप्रबन्धक स्त्री की कथा	१९७
गृहप्रबन्ध के गुरु	२१०

इति।

स्त्रीसुबोधिनी द्वितीयभाग का सूचीपत्र।

भोजनसंस्कार।

विषय	पृष्ठ
भोजन बनाना स्त्री का कर्म है	२१५
भोजन बनाने के लाभ	२१६
छप्पन भोग और छत्तीस व्यञ्जन	२१६
भोजन बनाना न जानने से स्त्री की हानि	२१६
सुन्दर भोजन के लक्षण	२१७
भोजन की ऋतुचर्या	२१८
भोजनों का प्रकार	२१९
खाँड़ गलाने की विधि	२२०
लड्डुओं का प्रकार	२२३

विषय	पृष्ठ
मूँग का लड्डू	२२२
बेसन का लड्डू	२२३
सूजी वा मगद का लड्डू	२२३
चुटिये का लड्डू	२२४
मेथी का लड्डू	२२५
अन्य प्रकार के लड्डू	२२५
हलुवा अथवा मोहनभोग	२२५
गाजर का हलुवा	२२६
काशीफल का हलुवा	२२७
आम का हलुवा	२२८
अनेक प्रकार की पूरी	२२८
नागौरी पूरी	२२९
पूरनपूरी	२२९
कचौरियों के अनेक प्रकार	२२९
खस्ता कचौरी	२३१
परोंवठे	२३१
पूओं के अनेक प्रकार	२३२
मालपूआ	२३३
नानखताई	२३३
बेसन की पकौड़ी	२३४
अरवी और रतालू के पत्तों की पकौड़ी	२३५

विषय	पृष्ठ
काशीफल के फूल की पकौड़ी	२३५
मूली वा बथुआ की पकौड़ी	२३५
केले की फली की पकौड़ी	२३६
चन्द्रसेनी वा बैंगनी	२३६
नमकीन चीला	२३६
मेवा का बड़ा	२३८
करारा	२३९
सखरे भोजन का विचार	२४०
रोटियों के विविध प्रकार	२४२
खमीरी रोटी	२४३
खमीर बनाने की विधि	२४४
अगा	२४४
दाल के अनेक प्रकार	२४४
उड़द की दाल बनाने की विधि	२४५
उड़द की दाल बनाने की दूसरी विधि	२४६
तथा तीसरी विधि	२४६
मूँग की दाल (मुगली जाफरानी) पकाने की विधि	२४७
साबित मूँग व मसूर बनाने की रीति	२४८
अरहर की दाल बनाने की रीति	२४८
दाल का पानी बनाने की रीति	२४९
दलिया बनाने की रीति	२४९

विषय	पृष्ठ
किन किन नाजों का भात बनता है	२५०
भात कितने प्रकार का बनता है	२५०
केसरिया भात की विधि	२५१
मीठे चॉवलों की विधि	२५१
मीठा केसरिया भात	२५२
तथा दूसरी रीति	२५२
गजरभत्त	२५३
अनेक प्रकार की खिचड़ी	२५४
भुनी खिचड़ी	२५४
तथा दूसरी विधि	२५४
खीर	२५५
छेना की खीर	२५६
ताहरी	२५६
बड़ी मँगौड़ी बनाने की रीति	२५७
चनौरी	२५७
सद व टटकी मँगौड़ी	२५८
मॉडिया	२६०
कढ़ी	२६१
मूँग की पिट्ठी की कढ़ी	२६१
झोर	२६१
सेवईं	२६३

विषय	पृष्ठ
फलाहार	२६४
दूध औटाने की रीति	२६४
दही जमाने की रीति	२६५
एक ही हाँड़ी में चार प्रकार का दही जमाने की क्रिया	२६६
रबडी बनाने की रीति	२६७
पेड़ा बनाने की रीति	२६७
बर्फी बनाने की रीति	२६७
कूटू के भोजन बनाने की रीति	२६८
सिंघाड़े के भोजन बनाने की रीति	२६८
सिंघाड़े का सीरा बनाना	२६८
अरवी बनाने की अनेक रीतियाँ	२६९
सिखरन बनाने की विधि	२७०
खुर्चन बनाना	२७०
कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ	२७१
दाल तलने की क्रिया	२७२
सेव बनाने की विधि	२७३
कचरी भूनने की रीति	२७४
ग्वारकी फली तलने की रीति	२७४
टेंटी उठाने की क्रिया	२७४
खरबूजे के छिलकों की कचरी	२७५
करेले की कचरी	२८

विषय	पृष्ठ
पिस्ते की कचरी	२७६
पापर बनाने की क्रिया	२७६
तिल मँगौड़ी	२७६
साग और भाजी के लक्षण	२७७
अरवी के पत्ते	२७७
पालक का साग	२७८
सरसों का साग	२७८
किस किस की भाजी बनती है	२७८
जमींकन्द बनाने की तीन क्रियाएँ	२७६
शकरकन्द की भाजी	२८०
आलू बनाने के अनेक प्रकार	२८०
आलू की साधारण रीति	२८०
तथा रसेदार	२८१
आलू का दम	२८१
मूल कितनी हैं	२८१
।जर की भाजी	२८२
की भाजी	२८२
अरवी की भाजी	२८३
कद्दू की भाजी	२८३
बैंगन की भाजी	२८४
तथा दूसरी रीति	२८५

विषय	पृष्ठ
मोसिव बैंगन बनाने की रीति	२८५
केले की फली की भाजी	२८६
तथा दूसरी क्रिया	२८६
करेले की भाजी	२८६
टेंडस या टिंडे की भाजी	२८७
भिंडी की भाजी	२८७
साबित भिंडी बनाने की रीति	२८८
गोभी के फूल की भाजी	२८८
तथा दूसरी रीति	२८९
गोभी के फूल की डंडी की भाजी	२८९
कचनार की बाड़ी की भाजी	२९०
किस किस की भुजिया बनती है	२९०
आलू का भर्ता	२९१
तथा दूसरी रीति	२९१
तथा तीसरी रीति	२९१
तथा चौथी रीति	२९२
बैंगन का भर्ता	२९२
दूध की तरकारी	२९३
नमक की भाजी	२९४
रायतों के प्रकार	२९४
नमकीन रायता	२९४

विषय	पृष्ठ
ककड़ी का राइता	२९५
गाजर का राइता	२९५
कद्दू का राइता	२९५
अन्य राइते	२९६
अचार के प्रकार	२९६
पानी का अचार	२९७
तेल का अचार	२९७
आम का अचार तेल का	२९८
आमका सूखा अचार	२९८
तेल पानी का अचार	२९९
आम की अचारी	३००
करेले का अचार	३०१
नींबूका अचार	३०१
मसालेदार नींबू का अचार	३०२
अदरक का अचार	३०२
टेंटी का अचार	३०२
हड़ का अचार	३०२
छोटी हड़ का अचार	३०३
नींबूका दूसरा अचार	३०४
बतारों का अचार	३०४
आक के पत्तों का अचार	३०४

विषय	पृष्ठ
सिरके के अचार	३०५
नींबू का मीठा अचार	३०५
अर्कनाना का अचार	३०६
मिर्च का अचार	३०६
भसींडे वा कमलककड़ी का अचार	३०६
आम का मुरब्बा	३०६
आमलों का मुरब्बा	३०७
अन्य मुरब्बे	३०७
नींबू का मुरब्बा	३०८
सेब का मुरब्बा	३०८
अदरक का मुरब्बा	३०८
मीठी चटनी	३०९
नौरतन चटनी	३०९
सूखी चटनी	३१०
जमींकन्द की चटनी	३१०
आम की चटनी	३११
अमलतास की चटनी	३११
समोसे वा त्रिकोने	३११
गुझिया	३१२
नारियल की बर्फी	३१३
बादाम की बर्फी	३१३

विषय	पृष्ठ
कुलफ़ी	३१३
सोंठ	३१४
नमक़ीन पानी	३१४
चाय बनाने की क्रिया	३१४
काफ़ी बनाने की क्रिया	३१५
सीना-पिरोना।	
सीना सिखाने की विधि	३१५
सीने के विविध प्रकार	३१६
पिरोने का अर्थ	३१७
सीने की विधि	३१७
कैसे डोरे से किस कपड़े को सीते हैं	३१८
सिलाई के विविध प्रकार	३१८
सजाफ़ व गोट काटना	३२०
सुज़नी	३२२
गोट टाँकने की विधि	३२३
इकहरे कपड़े पर गोट लगाना	३२३
सजाफ़ का टाँकना	३२४
गोट और संजाफ़ में कोने निकालना	३२४
अँगरखा ब्योंतने की रीति	३२५
अचकन ब्योंतने की रीति	३२७
कुर्ता ब्योंतने की रीति	३२७

विषय	पृष्ठ
चुग़ा ब्योंतने की रीति	३२७
पायजामा ब्योंतने की रीति	३२७
औरेबी पायजामा की रीति	३२८
कुर्ती ब्योंतने की रीति	३२८
दामन व लहँगा सीना	३२६
चोली	३२६
गोटे टाँकने की रीति	३३०
गोखुरू टाँकने की रीति	३३०
शिल्प विद्या।	
पूर्वकाल की शिल्पविद्या	३३२
चौदह विद्या और चौंसठ कला	३३२
चौंसठकला का विस्तार	३३३
मुख्य रंग और उनके भेद	३४०
रंग के अनेक प्रकार	३४१
रंगों के नाम	३४१
किस वस्तु से कौन रंग बनता है	३४२
कौन वस्तु रंग काटने और कौन रंग पक्का करने में बर्ती जाती है	३४३
रँगने का कपड़ा कैसा होना चाहिये	३४३
किस कपड़े पर किसका कस चढ़ता है	३४३
रंग को गहरा करना	३४३

विषय	पृष्ठ
लोहे के कट बनाने की क्रिया	३४३
किस वस्तु का रंग कैसे निकलता है ..	३४४
कसूम की रेनी बनानी ..	३४४
नील का खमीर उठाना .	३४५
कपड़े का रंग काटना .	३४५
रँगने की क्रिया	३४६
कलफ़ बनाने की विधि	३४७
रँगने में धब्बा न पड़ने की क्रिया .	३४७
आबी रँगना	३४८
आसमानी रँगना .	३४८
ज़मुर्रदी रँगना	३४८
सब्ज़ रँगना	३४८
सरदई रँगना .	३४९
अब्बासी रँगना	३४९
सब्ज़ काही रँगना	३४९
काही रँगना–दो विधि .	३४९
कासनी रँगना	३५०
कोकई रँगना	३५०
नाफरमानी रँगना	३५०
लीला रँगना–दो रीति	३५०
पीला रँगना–दो रीति	३५१

विषय	पृष्ठ
केसरिया रँगना	३५१
नारंगी रँगना	३५१
कपासी रँगना—दो क्रिया	३५१
कपूरी रँगना	३५२
अंगूरी रँगना	३५२
शर्बती रँगना	३५२
बादामी रँगना	३५२
गुलाबी रँगना	३५३
लाल रँगना	३५३
गुलेनार रँगना	३५३
पिस्तई रँगना—दो क्रिया	३५३
जंगाली रँगना	३५३
तूमी रँगना	३५४
उन्नाबी रँगना	३५४
फाख़ताई रँगना	३५४
फीरोजई रँगना	३५४
काकरेज़ी रँगना	३५४
करजवी रँगना	३५५
किशमिशी रँगना	३५५
अद्भुत दुरंगा	३५५
कपड़े पर से लोहू का धब्बा छुड़ाना	३५६

विषय	पृष्ठ
अन्य धब्बे छुड़ाना	३५६
स्याही के धब्बे छुड़ाना	३५६
चिकनाई के धब्बे छुड़ाना	३५७
पशमीने की चिकनाई छुड़ाना	३५७
रेशमी कपड़े की चिकनाई दूर करना	३५७
सब प्रकार के दाग छुड़ाना	३५७
चित्रकारी।	
पूर्वकाल की स्त्रियों की चित्रविद्या	३५७
चित्रों का मूल्य	३५८
इस देश के पहिले चितेरे	३५६
चित्रकारीकीदेश में वर्तमान दशा	३५६
चित्रकारी के भेद	३६०
चित्रकारी के लिये आवश्यकीय वस्तु	३६१
चित्रकारी की कूची	३६१
सम्मुख से मनुष्य के अंगों के चित्र का लेखा	३६२
तथा उसकी चौड़ाई का लेखा	३६३
चिहरे का लेखा	३६४
अवयवों की परस्पर लंबाई चौड़ाई	३६४
नेत्र बनाने के नियम	३६५
मुख बनाने का लेखा	३६६
हाथों की लम्बाई	३६७

विषय पृष्ठ

फुटकर।

ताँबे आदि के बर्तन साफ करना	३६६
उन पर कलई करना	३६८
काँच पर कलई करना	३६६
बासनों पर चाँदी का झोल चढ़ाना	३६६
चाँदी का झोल बनाना	३७०
मोती उजालना	३७१
गुलदस्ते को बहुत दिन तक ताज़ा रखना	३७१
टूटे काँच या चीनी को जोड़ना	३७१
काँच में पीतल आदि धातु की वस्तु चिपकाना	३७२

इति।

स्त्रीसुबोधिनी तृतीयभाग का सूचीपत्र।

गर्भाधान।

विषय	पृष्ठ
अच्छी बुरी संतान कैसे होती हैं	३७७
सन्तान में अब क्यों अवगुण अधिक होते हैं	३७८
गर्भ में क्यों अब बाधा पड़जाती है	३७८
पहिले पूर्ण आयु आदि गुणवाली सन्तान क्यों होती थीं	३७८
सन्तानोत्पत्ति के लिये पूर्वकाल में क्या क्या क्रियायें वर्ती जाती थीं	३७९
सन्तान उत्पन्न करने में किन किन बातों का विचार मुख्य है	३७९
स्त्रीधर्म	३८०
नीरोग स्त्रीधर्म की पहिचान	३८१
दूषित स्त्रीधर्म की पहिचान	३८१
स्त्रीधर्म की समाप्ति	३८२
गर्भ और रजसमाप्ति का भेद	३८२
दोनों के पहिचान के लक्षण	३८३
वन्ध्या के लक्षण	३८३
स्त्रीधर्म के चार दिनों का आचार विचार	३८३
चतुर्थ दिन की क्रिया	३८५

विषय	पृष्ठ
कौन से दिन पुत्र वा कन्या का जन्म हो सक्ता है	३८५
गर्भाधान का समय और विधि	३८५
क्षेत्र के गुणों का प्रभाव	३८८
गर्भ का पिंड काहे से बनता है	३८६
सत, रज और तम गुणवाली सतान काहे काहे से उत्पन्न होती है	३६०
गर्भ के बालक में भङ्ग क्योंकर पड़ जाती है	३६०
स्त्री के गर्भ में बन्दर वा पशु की आकृतिवाली सतान क्योंकर उत्पन्न होगई	३६१
माता के विचारों का सतान की प्रकृति में कैसा प्रभाव होता है उसके दृष्टान्त	३६२
गर्भ पहिचानने के लक्षण	३६६
गर्भ में पुत्र पुत्री के पहिचानने के लक्षण	३६७
नपुंसक सतान के लक्षण	३६८
गर्भ में दो बालकों की पहिचान	३६८
गर्भ में अच्छे बुरे बालक होने के लक्षण	३६८
दौहृद	३६६
गर्भ के बालक का भोजन	३६६
कितने दिन में बालक उत्पन्न होता है	४००
कितने कितने समय में गर्भ में बालक का कौन सा अङ्ग बनता है	४००

विषय	पृष्ठ
किन किन दशाओं में गर्भ नहीं रहता है	४०१
गर्भ रहने के उपाय	४०१
गर्भवती के मनमारने से संतान में कौन कौन गुण उत्पन्न होते हैं	४०३
प्रतिमास गर्भ कैसे बढ़ता है	४०३
किन किन महीनों में बालक गर्भ में से उत्पन्न होता है	४०३
किस महीने का उत्पन्न हुआ बालक जी सक्ता है और क्यों	४०३
गर्भ में बालक किस प्रकार से रहता है	४०४
गर्भ में बालक इस प्रकार से क्यों रहता है	४०४
एक ही गर्भ में एक से अधिक बालक क्यों उत्पन्न हो जाते हैं	४०५
गर्भरक्षा ।	
गर्भ की रक्षा किस प्रकार से करे	४०६
किन किन बातों से गर्भ में हानि पहुँचती है	४०६
गर्भवती का आहार विहार और आचार विचार	४०७
गर्भवती का क्रमपालन	४०८
गर्भस्राव और गर्भपात का भेद	४०९
इनके लक्षण	४१०
इनके उपाय	४११
कितने कितने समय में यह हो सके हैं	४१२

विषय	पृष्ठ
जिस स्त्री का गर्भस्राव या पात हो जाता होवे उसके लिये औषध	४१२
गर्भवती की चर्या	४१३
गर्भवती को मिट्टी खाने से हानि	४१५
उसका उपाय	४१५
अधिक गर्भाधान से हानि	४१६
धात्रीशिक्षा।	
धात्री को क्या क्या जानना चाहिये	४१७
अब दाई नीच जाति क्यों होती हैं	४१८
आजकल की दाइयाँ कैसी हैं और क्या उनसे हानि लाभ है	४१८
सौर का घर कैसा होना चाहिये	४१९
उसका प्रबंध	४१९
कौन कौन सी वस्तु उसमें रहनी चाहिये	४२०
प्रसव होते समय कैसे और कौनसे जन वहाँ रहने चाहिये	४२१
पीरों के समय का उपचार	४२१
पीर की पहिचान	४२१
सच्ची और झूठी पीर के लक्षण	४२२
पीर होनेपर गर्भवती की क्रिया	४२२
दाई इस समय क्या क्या करे	४२२

विषय	पृष्ठ
दाई के इस समय का काम	४२२
गर्भ में बालक किस प्रकार है इसकी पहिचान	४२२
विष्णुपद के लक्षण	४२३
गर्भ में आडे पड़े हुए बालक के लक्षण	४२३
कितने महीनेतक बालक गर्भ में किस प्रकार रहताहै	४२४
छः महीने से पूर्व के बालक का उत्पन्न होना	४२४
गर्भवती का यात्रा के दोष	४२५
पीर की तीन अवस्था	४२५
जरायु (गर्भाशय) की आकृति	४२६
पीर समय की दशा	४२६
प्रसव के लक्षण	४२७
पीर की पहिली अवस्था में प्रसूता का क्या करे	४२७
मूर्ख दाइयाँ जो इस अवस्था में क्रिया करती है वे हानिकारक है उनका निषेध	४२७
पीर धीमी पड़ जाने का उपाय	४२८
प्रसूता का भोजन और मल-मूत्र त्याग	४२८
गुतहड का चीरना	४२८
इसकी असावधानी में बालक को हानि	४२९
पीरों को उत्तेजन करने के उपाय	४२९
प्रसूता को अधिक बल करने का निषेध	४३०
प्रसूतसमय की बैठक	४३०

विषय	पृष्ठ
प्रसूता के थॉइटों का उपाय	४३१
प्रसूता के दुःख का उपचार	४३१
बालक का शिर पकड़कर न खींचना चाहिये	४३१
किस प्रकार प्रसूता को जनाना चाहिये	४३२
उत्पन्न हुए बालक की क्रिया	४३२
नारक्रिया	४३३
बालक रोता न होवे तो उसका उपाय	४३३
मूर्ख दाइयों का प्रचलित उपाय	४३३
नार किस प्रकार से काटना चाहिये	४३६
जोड़लों का नार काटना	४३६
नार काटने की सावधानी और असावधानी	४३६
नार की शुद्धि	४३७
नार में लगाने की औषध	४३७
अनन्तमूलमाश	४३७
निर्बल बालक का उपचार	४३८
बालक का स्नान	४३८
बालक के अंगों को ठीक करना	४३८
प्रसूता का औनार	४३९
औनार को खींचना न चाहिये	४३९
औनार निकालने की विधि	४४०
प्रसूता का पेट बांधना .. .	४४१

विषय.	पृष्ठ
प्रसूता का भोजन	४४१
प्रसूता का आराम	४४१
गाने बजाने की प्रचलित प्रथा	४४२
सौर में भीड न रक्खे	४४२
मल और मूत्र त्याग	४४२
सौर गृह की धूनी	४४३
छठी कब होनी चाहिये	४४३
जल्द छठी करने से हानि	४४३
प्रचलित प्रथा से हानि लाभ	४४३
प्रसूता का तैलमर्दन	४४४
प्रसूता को क्रोध का निषेध	४४४
प्रसूता के पानी की औषधियाँ	४४५
दशमूल का काढ़ा	४४५
बालक के मुख में स्तन देना	४४६
बालक के स्तन न पीने के कारण और उपाय	४४६
दूध पिलाने की विधि	४४८
माता के दूध का बदल	४४८
दूध पिलाने का काल	४४८
बालक के नार की सावधानी	४४९
बालक का स्नान	४४९
तेल लोई के गुण और क्रिया	४५१

विषय	पृष्ठ
स्नानविधि	४५०
स्त्रीचिकित्सा।	
प्रसूतिका की साधारण पूर्ती . .	४५२
प्रसूत रोग के लक्षण ...	४५३
प्रसूतरोग रोकने के उपाय	४५४
प्रसूतरोग के उपाय	४५५
सुहागसोंठ की ३ विधियाँ .	४५६
सनोपान विविध रोग में .	४५८
विषगर्भ तैल	४५८
मरीच्यादि तैल	४५९
प्रसूत रोग की अन्य औषधियाँ	४६०
प्रसूतिका के ज्वर की औषध ...	४६०
गर्भिणी के ज्वर का उपाय ...	४६१
भ्रान आने की औषध .. .	४६१
बायटों का उपाय . .	४६१
मूर्च्छारोग के लक्षण	४६२
मूर्च्छारोग का उपाय	४६४
गर्भिणी के मसूड़ों की औषध	४६५
गर्भिणी के लिये भेदी औषध	४६५
हुकमी विरेचन	४६५
गर्भिणी के वायु का उपाय	४६६

विषय	पृष्ठ
गर्भिणी को मूत्र न उतरे	४६६
सग्रहणी	४६६
गर्भिणी को वमन	४६६
गर्भिणी के पाँव की सूजन	४६७
गर्भिणी को कम नींद आना	४६७
गर्भिणी का रुधिरप्रवाह	४६७
जरायु का प्रवाह रुकना	४६७
गर्भपात के लक्षण और उपाय	४६७
पुष्पावरोध का उपाय	४६८
प्रसूता का पेट बढ़ना	४६९
शीघ्र और सुगम प्रसव के उपाय	४६९
दूध बढ़ाने की औषध	४७०
दूध शोधन	४७१
थनैला	४७१
दूध से भरे स्तन जो तर्राते हों और बालक न पीता होवे	४७२
प्रदररोग की ओषधियाँ	४७२
श्वेतप्रदर की औषध	४७३
पीलेप्रदरकी औषध	४७४
सर्वप्रदर की औषध	४७४
आँखों की औषध	४७७

विषय	पृष्ठ
रतौंधी की औषध	४७७
नत्रज्योति बढ़ाने की औषध . .	४७८
बवासीर की औषध	४७८
उबटना .	४७९
स्वास्थ्यरक्षा।	
आरोग्यता के गुण	४८०
आरोग्यता किस प्रकार से रह सक्ती है	४८०
कैसा भोजन करना चाहिये	४८१
भोजन कब करना चाहिये	४८१
भोजन करके क्या करना चाहिये	४८२
भोजन के नियम . .	४८३
विरुद्ध भोजन	४८४
भोजनों की छः प्रकार की विरुद्धता .	४८४
भोजन उपरान्त क्या करना चाहिये	४८५
पानी पीने के नियम	४८६
अजीर्ण में पानी का गुण ..	४८६
किस ऋतु में किस प्रकार पानी पीवे	४८७
शयन के नियम	४८७
शयन का घर	४८८
सोने को खाट किस भाँति बिछानी चाहिये और किस प्रकार सोना चाहिये .	४८८

विषय	पृष्ठ
उत्तर को मस्तक कर सोने से हानि	४८६
ओढ़ने बिछाने के कपड़े किस प्रकार से रहने चाहियें	४८६
मुख खोल कर सोने के गुण	४८६
किस समय का सोना हानिकारी और गुणकारी है	४६०
दिन में सोना किसे चाहिये	४६०
ओसमें सोने से हानि	४६०
मुख धोकर सोना और उठकर धो डालने के गुण	४६१
सिदौसी उठने के लाभ	४६१
उठने के पीछे का कर्म	४६१
स्नानविधि	४६२
उबटना	४६२
तैलमर्दन के गुण	४६३
स्नान में अँगोछे का काम	४६३
भोजनोपरान्त स्नान का निषेध	४६३
प्रात और नदीस्नान के गुण	४६३
परिश्रम के गुण	४६४
गृहनिर्माण के नियम	४६५
शौचघर	४६५
गृह की स्वच्छता	४६५
गृह की लिपाई पुताई और रंग	४६६

विषय	पृष्ठ
घर में तुलसी आदि	४९७
अँधेरे घर के अवगुण	४९७
घर में कबूतरों से लाभ	४९८
सोने की सामग्री की सावधानी	४९८
किस ऋतु में कौनसी वस्तु न खानी चाहिये	४९८
ऋतुचर्या	४९९
सावन में झूले के प्रचार का कारण	५००
हड़ का सेवन छहो ऋतुओं में	५०१
स्वास्थ्यसहायक बातें	५०२
स्वास्थ्यविनाशक बातें	५०४
स्वास्थ्य के सिद्धान्त	५०६
प्रकृति के स्वास्थ्यरक्षक नियम	५०८
जलशोधन	५०८
पहिले मनुष्य स्वास्थ्य ही के कारण हृष्ट पुष्ट होते थे	५१०
पीर साहिब का वृत्तान्त	५११

इति।

स्त्रीसुबोधिनी चतुर्थभाग का सूचीपत्र।

बालपोषण।

विषय	पृष्ठ
दूषित दूध के लक्षण	५१४
निर्दोष दूध के लक्षण	५१४
उत्तम धाय के लक्षण	५१४
गूला और घुटी के नुस्खे	५१६
बालक को दूध पिलाने की विधि	५१७
दूध पिलाने का समय और दशा	५१७
दूध पिलानेवाली का आहार विहार	५१८
दूधवाली के कड़े स्तनों का उपाय	५१८
बालक को गौ आदि का दूध पिलाने की विधि	५१९
दूध पिलाने का समय	५२०
दूध छुड़ाने के सुगम उपाय	५२१
माँ का दूध कब न पिलाना चाहिये	५२२
बालक को गोद में किस प्रकार रक्खे	५२२
बालक के सुलाने के नियम	५२४
बालकों के वस्त्र और कठले आदि के विषय में	५२५
गहने से शारीरिक हानियाँ	५२६
कन्धनी के लाभ	५२६
बालकों की स्नानविधि	५२७
गहने से बालकों की शोभा का विचार	५२८
बालकों के तैलमर्दन	५२९

विषय	पृष्ठ
बालकों का क्षौरकर्म	५४०
नाक, कान कुरेदने से हानि	५४०
पॉव पर पाँव रखने से हानि	५४१
ओछी खाट पर सोने से हानि	५४१
पान और हुक्के के दोष	५४१
बालचिकित्सा।	
रोगचिकित्सा की विधि	५४२
सौर की सावधानी	५४३
बालकों के रोग में मूर्खों का भ्रम	५४४
बालकों का क्वाथस्नान	५४४
बालकों की धूनी	५४५
बालक को होते ही दस्त कराना	५४५
बालरोगनिदान	५४६
बालरोगलक्षण और उपाय	५४७
बालकों को औषध देने की विधि	५४६
ढूँड़ी पकने की औषध	५४६
खाल लगजाने की औषध	५४६
बालक के दूध डालने की औषध	५५०
बालक दूध न पीवे उसका उपाय	५५०
हँड़ी बिठाने की विधि	५५१
हँसली बिठाने की विधि	५५१

विषय	पृष्ठ
काग लटकने की औषध	५५२
दुखनी आँख की औषध और उपाय	५५३
खाँसी के भेद और उपाय	५५४
ज्वरसहित खाँसी के लक्षण और उपाय	५५६
पेट चलने की औषध	५५७
आमातीसार के लक्षण और उपाय	५५८
रक्तातीसार के लक्षण और उपाय	५५९
अफरा के लक्षण और उपाय	५६०
लार गिरने की औषध	५६१
कान बहने की औषध	५६१
दाँत निकलने की चिकित्सा	५६२
गला बैठजाने के लक्षण और उपाय	५६६
आँख के कोहे और रोहों का उपाय	५६७
तालूपकने वा बैठजाने के लक्षण और उपाय	५६७
अलाई के लक्षण और उपाय	५६७
अफोहरोग के लक्षण और उपाय	५६८
दुकास के लक्षण और उपाय	५६९
ज्वर की उत्पत्ति और उपाय	५६९
संग्रहणी की औषध	५७२
मुख आने की औषध	५७२
शीतलारोग का निकलना और उपाय	५७३

विषय	पृष्ठ
मशानरोग की उत्पत्ति लक्षण और उपाय ...	५७६
मशानरोग के भेद	५७७
शुंठीमात्रा बनाने की विधि ..	५७६
मशाननाशक तैल ...	५७६
मशानग्रस्त बालक की माताके लिये नियम	५८०
चिनूनों (छारुये) की उत्पत्ति लक्षण और उपाय	५८०
हिचकी का उपाय	५८२
गंज की औषध	५८२
आग से जले की औषध	५८३
खुजली की औषध	५८३
काँच निकलने का उपाय	५८३
पेट बढ़े का उपाय	५८४
चिनग की औषध	५८४
मिरगीरोग के लक्षण और उपाय ..	५८४
नकसीर का उपाय	५८५
विशूचिका का उपाय	५८६
लू लगे का उपाय	५८६
चूने से जीभ फटे का उपाय	५८६
आँख की फूली का उपाय	५८६
बालकों का कब्ज दूर करने का उपाय	५८७
मकड़ी फले का उपाय	५८७

विषय	पृष्ठ
मक्खी काटे का उपाय	५८७
वर्तैया काटे का उपाय	५८८
कुत्ते काटे का उपाय	५८८
बावले कुत्ते काटे का उपाय	५८८
कौंतर चिपटे का उपाय	५८९
बिच्छू काटे का उपाय	५८९
साँप काटे का उपाय	५८९
साँप रोकने का उपाय	५९२
अफ़ीम का विष दूर करने का उपाय	५९२
संखिया के विष दूर करने का उपाय	५९३
सींगिया के विष दूर करने का उपाय	५९३
धतूरे के विष दूर करने का उपाय	५९३
बालशिक्षा।	
बालक का आदि शिक्षा	५९४
आदि शिक्षा न होने से हानि	५९४
माता पिता के विचार और पीछे का पश्चात्ताप	५९५
पुत्र, पुत्री की समान शिक्षा	५९५
पुत्रीशिक्षा न होने से अमित हानि	५९६
बालशिक्षा के चार अंग	५९६
बालक को पितर के नाम बताने की शिक्षा	५९७
इसके न बताने से हानि	५९७

विषय	पृष्ठ
बालकों को डराने से हानि	५६७
बालकों को ईश्वर के भय से लाभ	५६८
पुत्र को बेंदा आदि और पुत्रियों को नीला आदि गुदाने का निषेध	५६८
सन्तान के उत्तम नाम रखने के लाभ	५६६
नाम रखने की विधि	५६६
पुत्र और पुत्री के पालनभेद का निषेध	६००
इसके गुण और दोष	६००
सुशील और दुश्शील बालक का अन्तर	६०१
बालकों की शिक्षा	६०१
गाली और अपशब्द का निषेध	६०२
बुरे बालकों के संग रहने का निषेध	६०२
बालताडना की विधि	६०३
हर समय और हर वेर की ताड़ना से हानि	६०४
बालकों पर क्रोध का प्रभाव	६०४
आज्ञापालन की टेव सिखाना	६०४
लाडप्यार का बालकों पर प्रभाव	६०५
बालकों की इच्छा पूरी करने के गुण	६०६
सुमाता का प्रभाव	६०६
वार्तालाप की शिक्षा	६०६
अभीष्ट गुण सिखाने में आदर्श बनना	६०७

विषय	पृष्ठ
बालकों के अपराध पर क्षमादान	६०७
बालकों पर ताड़ना के झूठे भय का प्रभाव	६०७
सन्तान में असकुञ्चितभाव उत्पन्न करना	६०८
सन्तान के लिये उत्तम शिक्षा क्या क्या है	६०८
बालकोंके सम्मुख उनके विवाहादिकी चर्चाकानिषेध	६०६
बालकों का निडर फिरना	६०६
गुड़ियों के खेल का उद्देश	६१०
पुत्रियों को गृहस्थशिक्षा का समय	६१०
गुरुजनों की मानाशिक्षा	६११
बालकों की वाक्शक्ति के साथ ही अक्षराभ्यास शिक्षा का आरम्भ	६१२
कहानियों द्वारा शिक्षा	६१३
अक्षर सिखाने की सुगम विधि	६१३
शिक्षक ताश	६१४
मस्तक शक्ति से अधिक काम लेना	६१४
कण्ठाग्र शिक्षा	६१४
लिखाने की शिक्षाविधि	६१५
बालक का हकलापन छुटाने के उपाय	६१५
मातृभाषा की शिक्षाके गुण	६१६
बुरी पुस्तकों का पाठ निषेध	६१७
समझाकर पढ़ाने के गुण	६१७

विषय	पृष्ठ
तोते की भाँति पढ़ाना	६१७
दूसरे बालक की प्रशंसा	६१९
दृष्टान्त की कहानियाँ	६१९
रुचि अनुसार शिक्षा के गुण	६२५
जोड़ आदि सिखाने की विधि	६२६
व्यवहारशिक्षा	६२७
ध्वनिशिक्षा	६२८
कार्य सिद्धि के नियम	६२८
बालक के चित्त में धर्म विचार उत्पन्न करना	६२९
अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव	६२९
धर्मशिक्षा के अभाव से स्वधर्म में अविश्वास	६२९
धर्मशिक्षा पानेवाले बालकों के गुण	६२९
चिढ़ाने का निषेध	६३०
जीवहत्या के दोष	६३१
अपराध क्षमा का प्रभाव	६३१
सत्य की शिक्षा और असत् से घृणा	६३१
झूँठ का फल	६३२
जीवों के प्रति प्रेम	६३२
ईश्वरप्रार्थना	६३३
ईश्वरनाममाला	६३३

इति।

विषय

पुण्य का वर्णन ६
धर्म का भ्रम ६
वैतरणी के लिये गोदान ६
एक दृष्टान्त ६
वैतरणी का ठीक अभिप्राय ६
यमदूतों का ठीकस्वरूप ६

स्यानों का कपट।

स्यानों का प्रपंच और पाखण्ड ६
स्याने नाम की उत्पत्ति ६
स्यानों की बातें ६
स्यानों का धोखा ६
मूर्खों का स्यानों में विश्वास ६
स्यानों के मन्त्र का प्रभाव ६
मूर्खों के चित्तपर विश्वास जमाने की क्रियायें ६
कपट खुलना ६
मोरपख की आकर्षणशक्ति ६
पानी का ऊपर को चढ़ना ६
इसका भेद ६
पश्चात्ताप ६
अग्नि में कपड़े का न जलना ६
इसकी क्रिया ६

स्त्रीसुबोधिनी पञ्चमभाग का सूचीपत्र।

धर्मोपदेश।

विषय	पृष्ठ
धर्म का अर्थ	६३६
धर्म की मैत्री	६३६
स्त्रियों के गुरु	६३७
तुलसी की माला	६३७
स्त्रियों का जप, तप	६३७
स्त्रियोंके पूजन, पाठ का कुफल	६३८
स्त्रियों का धर्म	६३८
ईश्वर का उपकार	६४०
स्त्रियों का विश्वास	६४०
अमरोहे के मियाँ	६४०
मियाँ और गङ्गाजीमें श्रेष्ठतर कौन	६४१
शहीद और जाहरपीर इत्यादि की पूजा	६४२
जखैया पूजन में स्त्रियों की निर्दयता	६४३
आर्य नारियों के अधम विचार	६४५
ताजियों का पूजन और अभीष्ट की प्रार्थना	६४६
सेदू, बाराही इत्यादि का पूजन	६४७
स्त्रियों का गुप्तरीति से निषिद्ध पूजन	६४७
तीर्थ पर का दान	६४८

विषय	
त्याज्यदोष	७८
सम्पत्ति	७८
पराधीनता	७८
शोभा	७८
सत्सङ्ग	७८
प्रीति	७८
कुल-कलह	७८
उपकार	७८
धन	७८
सज्जन	७८
दुष्ट	७०
कृतघ्न	७०
दुःखद	७०
बल	७०
फुटकर	७०
रीति त्योहार और व्रत।	
ठीक रीति क्या है	७०
त्योहार का अभिप्राय	७०
व्रत से शारीरिक हानि	७०
प्रचलित कुरीतियों का कारण	७१
बढ़ियापुराण	७१

विषय	पृष्ठ
कुरीतिसशोधन नामक पुस्तक	७११
कुरीतियों के तीन मुख्य कारण	७११
पुत्री क्वारी रखने की कुरीति	७१२
अनेक स्त्री विवाहने की कुरीति	७१३
लोभवश कन्या को अनुचित समयतक अविवाहित रखने की कुरीति	७१३
लोभवश अल्पायु कन्या को बुड्ढेको विवाहना	७१३
शालग्राम व पीपल के सग पुत्री को विवाहना	७१४
अल्पायु विवाह के दोष	७१४
गर्भस्थ बालकों का विवाह	७१५
द्वितीय वर में दोष मानना	७१५
विवाह निमित्त पुत्री को न दिखाना	७१५
सधवा, विधवा	७१६
ककण वर्णन	७१६
ककण में छल्ले का प्रयोजन	७१७
मरवट	७१७
वर को कन्या अधीन रखने के घृणित उपाय	७१७
वर को कन्या अधीन रखने के यथार्थ उपाय	७१६
कन्या की विवाह योग्य अवस्था	७१६
विवाह समय के वचनों की उत्पत्ति	७२०
इन वचनों की असत्यता	७२०

विषय	पृ
जूती पुजवाने की निषिद्ध रीति	७२
छन्द पढ़वाने का यथार्थ अभिप्राय	७२
अब के अश्लील छन्द	७२
स्त्रियों की निर्लज्जता	७२
अश्लील मूर्त्तियों का पकवानों पर बनवाना	७२
शुभसमय में अशकुन	७२
कुलदेवताओं को बन्द करना	७२
आँधी, मेह इत्यादि का विवाह आदि में बन्द कर देना	७२
वर के पास लोहे की वस्तु रखना	७२
वर का आदि में गधी पर चढ़ना	७२
माता का इस समय कुएँ में डूबना	७२
खोरिया की कुरीति	७२
वधूमुखावलोकन	७२
धोबिन से कन्या को सुहाग दिलाना	७२
इसका कारण	७२
माई पूजन की कुरीति	७२
स्त्रियों के आगे रंडी नचाने की कुरीति	७२
मृतक का विमान निकालने की कुरीति	७२
पुरुषों के मरने पर हर्ष मनाने की कुरीति	७३
मृतक पर बहुमूल्य वस्त्र उड़ाने का दोष	७३

विषय	पृष्ठ
जूती पुजवाने की निषिद्ध रीति	७२१
छन्द पढ़वाने का यथार्थ अभिप्राय	७२१
अब के अश्लील छन्द	७२१
स्त्रियों की निर्लज्जता	७२२
अश्लील मूर्त्तियों का पकवानों पर बनवाना	७२२
शुभसमय में अशकुन	७२२
कुलदेवताओं को बन्द करना	७२३
आँधी, मेह इत्यादि का विवाह आदि में बन्द कर देना	७२३
घर के पास लोहे की वस्तु रखना	७२४
वर का आदि में गधी पर चढ़ना	७२४
माता का इस समय कुएँ में डूबना	७२५
खोरिया की कुरीति	७२५
वधूमुखावलोकन	७२६
धोबिन से कन्या को सुहाग दिलाना	७२७
इसका कारण	७२७
माई पूजन की कुरीति	७२८
स्त्रियों के आगे रंडी नचाने की कुरीति	७२९
मृतक का विमान निकालने की कुरीति	७२९
पुरुषों के मरने पर हर्ष मनाने की कुरीति	७३०
मृतक पर बहुमूल्य वस्त्र उड़ाने का दोष	७३०

विषय	पृष्ठ
विमान का गोटा आदि लाकर घर में रखना	७३१
अगरवालों में हाँसे तमासे की कुरीति	७३१
स्यापे की कुरीति	७३१
स्यापेवालियों की दशा	७३२
उल्लानी, बैन और नोदे पढ़ने की कुरीति	७३२
पर्दे की उलटी रीति	७३३
पर्दे की उभय दृष्टि	७३४
पर्दे का अभिप्राय	७३४
पूर्वकाल में पर्दे का अभाव	७३४
पर्दे के अभिप्राय का लोप	७३५
पर्दे का प्रचार	७३५
घूँघट का अभिप्राय	७३५
घूँघट से गुरुजनों का मान्य	७३६
स्त्रियों का शिर उघरा रखना	७३६
पर्दे के छोड़ने में संकोच	७३७
घूँघट के लाभ	७३७
मानका यथार्थ बर्ताव	७३८
कुआँ और चाकपूजन की कुरीति	७३९
त्योहार की शाब्दिक उत्पत्ति	७३९
चार वर्णों के चार त्योहार	७३९
त्योहारों का गूढ़ अभिप्राय	७४०

विषय	पृष्ठ
सूपकर्म की उन्नति	७४१
आजकल के त्योहार	७४१
तीजका त्योहार	७४२
सलून्यों	७४३
दशहरा	७४३
करवाचौथ	७४४
दिवाली	७४५
अन्नकूट	७४६
गोवर्द्धनपूजा	७४६
देवउठान	७४७
वसन्तपञ्चमी	७४८
होली	७४८
उपरोक्त त्योहारों का गूढ़ अर्थ	७४९
व्रत का सत्यार्थ	७५१
वर्षाऋतु के व्रतों का अभिप्राय	७५१
व्रतों से अमित हानि	७५२
ठीक व्रतों से तीन बडे बडे लाभ	७५३
व्रतों के भेद	७५३
व्रतों का ठीक अभिप्राय	७५५
व्रतों की सख्या	७५५
व्रतोंका वर्णन	७५५

विषय	पृष्ठ
पन्द्रह तिथि के १५ व्रत	७५५
चैत्रसुदी तीज	७५७
ज्येष्ठ की अमावास्या	७५८
भादोंसुदी तीज	७५६
भादों सुदी पञ्चमी	७६०
शीतला के व्रत	७६१
चौथ का व्रत	७६२
अँहोई का व्रत	७६२
सावनसुदी पञ्चमी	७६२
भाईद्वीज	७६२
व्यासपूर्णिमा	७६४
बहुलाचौथ	७६४
सिद्धिविनायक	७६५
वामनद्वादशी	७६६
अनन्तचौदस	७६६
कात्तिकस्नान	७६६
माघस्नान	७६६
आशीर्वाद	७६८

इति।

स्त्रीसुबोधिनी

प्रथमभाग

उपोद्घात

दो० भई जिनहीं में लक्ष्मी, और सरस्वती मात।
सो अब ऐसी हैगई, धन बुधि जात नसात॥

एक नगर में किसी समय ऐसा हुआ कि, सब लोगों ने मिल कर यह मत विचारा कि, आजकल समय के प्रभाव से लोगों के अधिकतर अनपढ़ और मूर्ख होने से, अपने धर्म्म का राजा न होने से, लोगों की बुद्धि हीन हो जाने से और इसीप्रकार के सैकड़ों और कारणों से, वैदिक धर्म्म में बहुत ही हानि होगई है। ब्राह्मणों ने उपदेश करना छोड़ दिया और वे लोभग्रस्त बन गये। जो कोई कुछ देवे तो कहीं कथा बाँचें व देवालय की पूजा करें नहीं, तो कुछ काम नहीं। इसी कारण हमारे सनातन धर्म्म में अमित हानि होती जाती है। उपदेशकों ने सब प्रकार जुवा डालदिया है; क्योंकि न तो वे उपदेश करते, न चेताते, न आप वेद पढ़ते, न दूसरों को पढ़ाते और न धर्म्मविषय में कोई व्यवस्था देते हैं। यदि पूछिये, तो अन्धपरम्परा पर ही आरूढ़ हो, मुसदेशी कह देते हैं

और बहुत तो उनमें से यह भी नहीं जानते कि धर्म्म क्या है ? इधर उधर से जो कुछ सुन लिया है वह ही अपने अन्नदाताओं को सुना देते हैं । इसलिये यह उत्तम हो कि जैसे ईसाई लोग अपना धर्म्म फैलाने के लिये स्थान-स्थान पर उपदेश करते फिरते हैं और निज व्यय से अपने मत की पुस्तकें छाप २ कर बाँटते हैं, वैसे ही हम सब भी करें । नगर के दस बीस देवालयों में या ऐसे ही अन्य स्थानों में कथा बचवाया करें, जिसके सुनने को सब छोटे-बड़े स्त्री-पुरुष आया करें और सुनकर अपने धर्म्म से जानकार हों और और से ही निजमत से जानकार होकर दूसरे मतों से भ्रष्ट न होने पावें । जैसे आजकल अंग्रेज़ी पढ़े हुए बहुत से मनुष्य ईसाई हो जाते हैं वा अपने मत की निन्दा करने लगते हैं, जिसका कारण केवल यह ही है कि वे अपने मत से जानकार नहीं होते हैं, नहीं तो कभी ऐसा न होने पावे । क्योंकि जब से आर्य्यसमाज इस देश में स्थापित हुए हैं और लोगों में सनातन आर्य्यधर्म्म के अकाट्य सिद्धान्त प्रकाशित हुए हैं तब से अंग्रेज़ी पढ़े हुए क्या वरन अंग्रेज़ और मुसल्मान तक अपने २ मत को त्याग सनातन आर्य्यधर्म्म की प्रशंसा कर और उसका गौरव मान इस ओर को खिंचने लगे हैं । ईसाई होना तो अब बन्दसा होता

जाता है परन्तु तो भी अभी लोग निज २ धर्मों से अज्ञात हैं । सो निजमत से जानकार होने का उपाय अवश्य ही करना चाहिये । यह मता विचार ऐसा किया कि देवालयों में कथा विठा दीं और सदा के लिये यह प्रबन्ध किया कि नित सन्ध्या को चार बजे से दिन मुँदे तक इसीकी चर्चा रहे । स्त्री पुरुष सब सुनने को आया करें, जो कोई न आवे उसकी निन्दा हो और उसे दण्ड मिले । इसलिये सब अपने सौ काम छोड़कर भी कथा सुनने को जाया करें । कहीं किसीने स्मृति बाँचना, कहीं पुराण बाँचना, कहीं वेदान्त, कहीं वेद, कहीं धर्म्मशास्त्र और कहीं नीति बाँचना आरम्भ कर दिया । इसी प्रकार जैसी जिसकी रुचि थी और जो जिसमें निपुण था उसी को ले बैठा और यथारुचि उपदेश करना आरम्भ कर दिया । स्त्री तो बहुतकर पुराण सुनने को जाया करती थीं—इन्हीं स्त्रियों में एक स्त्री अपनी बेटी को, जिसका नाम मोहिनी था, सग लेजाकर श्रीमद्भागवत की कथा सुना करती थी और उसका लिखना पढ़ना सब छुटवाकर रातदिन कथा ही की बातें बुझवाया करती थी । सिवाय इस धर्म्म-कहानी के उससे और कुछ काम नहीं करवाती थी ।

एक दिन जब वह कथा सुनने को गई थी तब इसकी बड़ी बेटी, जिसका नाम दुर्गा था, अपनी सुसराल से

किसी आवश्यक काम के लिये अपनी मा के यहाँ आयी। घर को सूना देख वह दासी से पूछने लगी कि, मा भावज और बहिन सब आज कहाँ गई हैं ? दासी ने उत्तर दिया कि, मुहल्ले भर की सब स्त्रियाँ नित इस समय कथा सुनने को जाया करती हैं । यहाँ सात आठ दिन ही से अब ऐसा होगया है कि, पाँच वर्षतक के बालक को कथा सुनने जाना पड़ता है । जो नहीं जाता है उस पर दण्ड होता है । यह सुन दुर्गा अपने मनमें बहुत हँसी और कहनेलगी कि बात तो अच्छी विचारी, पर छोटे बालकों को इससे कुछ लाभ न होगा । वे तो कथा की बातों को समझेंगे भी नहीं और जो कहीं समझ भी लिया तो यथार्थ न समझेंगे । इसलिये कुछ का कुछ ही ध्यान बँधेगा। इससे तो उनकी शिक्षा के लिये पाठशाला नियत कर दी जाती और उनमें उनको अपने २ धर्म्म की पुस्तकें पढायी जातीं तो उत्तम होता । इसमें इतना लाभ न होगा जितना इन पाठशालाओं मे होता । यह विचार वह चुप होगई ।

दासी से कुछ और पूछने ही को थी कि, इतने में इस की मा, भावज और बहिन कथा सुनकर आगईं । दुर्गा उठ कर सब से प्रेम से मिली और मोहिनी को प्यार करके बोली कि बहिन ! कहाँ गई थी ? मै तो तेरी बाट ही देख रही-

थी–कह अच्छी तो रही? माता का कहना माना? भावज से क्या २ सीखा पढ़ा? मैं जो कह गयी थी वह पढ़ चुकी या नहीं और अब क्या पढ़ती है? मोहिनी बोली कि, कई दिन हुए पढ़ना तो मा ने छुड़ा दिया, अब तो अपने संग कथा सुनने को लेजाया करती है और सब दिन उसी को दुखराया करती है। जो कुछ मैंने पढ़ा था अब तो उसे भी भूली जाती हूँ। थोड़े दिन में कुछ भी याद न रहेगा। यह सुन दुर्गा बोली कि, अच्छा जो तू कथा सुनती है तो बता कथा में तूने क्या २ सुना? कथा की कोई अच्छी बात तो सुना जो तैंने याद की हो। मोहिनी सुनते ही बोल उठी, अरी बहिन! कथा में बड़ी अच्छी २ बातें सुनने में आती हैं। जो तू चला करेगी तो तूभी सुना करेगी कि, कथा में कैसी २ अच्छी बातें निकला करती हैं। सुन श्री कृष्णचन्द्रजी की बातें मैं तुझे सुनाती हूँ, जो मुझे याद है। बातें तो मैंने बहुत सुनीं, पर सब मेरी समझ में नहीं आयीं। उन बातों को तो मा भी नहीं समझी और न बहुत सी और लुगाई समझीं। कोई २ ही समझी हों तो हों, पर पूरी २ वे भी न समझी होंगी और किसी २ दिन तो ऐसी कथा बचती है कि कुछ भी समझ में नहीं आती और न मन लगता है। उस दिन तो सब जनी आपस में बातचीत करती रहती हैं और कोई २ तो वहां काम

करने को ले जाया करती हैं। जिस दिन अच्छी कथा बचती है, उस दिन तो सब का मन लग जाता है और सब मन लगा कर सुनती है और उस दिन की कथा सब को भलीभाँति याद भी हो जाती है।

दुर्गा ने हँसकर पूछा कि, बहिन! अच्छी कथा किसे कहते हैं? मोहिनी बोली कि जिसमें अच्छी २ बातें आवें और हँसते २ पेट फट जाय। बहिन! पांडेजी कथा में ऐसी २ बातें कहा करते हैं, कि हँसाते २ लुटा देते हैं और जब उन्होंने श्रीकृष्णचन्द्रजी की कथा बाँची थी तब तो बहुत ही हँसाते थे। उस कथा को तो सब बड़ी भलीभाँति समझ जाती थीं और सब को भलीभाँति याद भी है। बहिन कल से तू भी चलियो। देख तो कैसी २ बातें सुनने में आती हैं। तू तो बहुत पढ़ी लिखी है, पोथी बाँचती है तू तो सब समझ जावेगी।

दुर्गा ने कहा कि अच्छा तू कह तो सही कि तूने कथा में क्या २ सुना। मोहिनी कहने लगी–क्या २ बताऊँ। बहुत सी बातें हैं। एक हो तो बताऊँ, पर हाँ, जो मुझे याद हैं, वे तुझको सब बतादूँगी। सुन! श्रीकृष्ण, जी जब गोपियों के घर में पीछे से घुस जाते और दूध दही या माखन खा आते और गोपों को ले २ कर छींके पर चढ़ जाते और जब गोपिया घर आकर यह देखतीं,

और यशोदा रानी के पास उरहना लेकर जातीं और सब बातें कहतीं, तब सब को बडी हँसी आया करती थी।

श्रीकृष्णचन्द्रजी की बातें सुन २ कर पेट में बल पड २ जाते थे। कभी किसी गोपी के घर चोरी करते, किसी की मथनिया फोड आते, कभी गूजरियों को बाट में रोक लेते और उनसे हँसी कर कर के गोरस का दान माँगते, किसी का घूँघट उघार देते, किसी का दुपट्टा झटक देते; इसीभाँति किसी का कुछ करते और किसी का कुछ; अन्त में जब गोपियाँ बहुत ही खीझतीं तब उनको छोडते थे। कभी किसी गूजरी से घर जाने को कह देते, पर उसके यहाँ न जाते,दूसरों के चले जाते। वह रात भर पेंडा देखा करती। कभी आप वन में जाकर बंशी बजाते तो उसकी ध्वनि सुन कर सब गोपियां उठ भागतीं। कोई एक आँख में काजल दिये हुए, कोई उलटी कंचुकी कसे हुए, कोई कँसे और कोई कँसे, सब वन को भगजातीं और जब वे सब वहाँ पहुँचतीं तब उनकी हँसी करने लगते। कथा में बहिन! ऐसी २ बातें सुनने में आती है और हाँ देख! एक और याद आई। एक दिन जब सब गोपी अपने २ चीर धर यमुनाजी में नहाने को धसीं और डुबकी मारी कि कृष्णजी सब के चीर हरकर कदम के पेड़ पर जा दुबके। जब गोपी कपडे पहिनने को निकलीं

तब अपने चीर न देखे। तब तो वे बहुत घबराईं और मारे लाज के नेक २ होने लगीं। जब गोपियों को बहुत देर होगई, तब आप कदम पर से बोल उठे कि तुम्हार चीर यह रहे हमारे पास। पर मिलेंगे तब, जब यहाँ आकर तुम माँगोगी। उस दिन तो वे बिचारी लाज और सकुच के मारे मर २ गईं और बहुतही खीझीं। अन्त को गोपियों को बहुत ही रिझाकर उनके चीर दिये। इसी प्रकार उनकी कथा राधाजी के संग की बची थी कि, उनसे भी वे ऐसाही किया करते थे। कहीं दूध काढने के मिस उनके घर जाते थे, कहीं बाजगी बन कर पहुँचते थे, कभी मालिन बन कर जाते थे, कभी मनिहारी बन कर और इसीप्रकार राधिकाजी भी उनसे मिलने के लिये एक न एक उपाय निकाल ही लेती थीं। कभी हार खोने का मिस करतीं, कभी किसी का और कभी किसी का, इसी प्रकार बड़ी बातें कथा में सुनीं। बहिन ! मैं तो अच्छी भाँति कह नहीं सकी हूँ जैसे पांडेजी बाँचते थे, नहीं तो बहिन तू भी हँसी २ डोलती। मा को मुझसे अच्छी आती होगी, उससे सुनियो। दुर्गा इन सब बातों को सुनकर मन में बहुतही पछताई कि, हाय ! देखो मूर्खता का क्या फल है कि, जो बातें बुरी हैं उनको तो समझ लिया और याद करलिया पर जो अच्छी थीं उनको न सुना न समझा।

यह कारण अनसमझपने का है। जो यह पढ़ी लिखी होती तो पाचवें तथा ग्यारहवें स्कन्ध को और जो सम्पूर्ण भागवत में उत्तम २ विषय हैं जैसा जडभरत का चरित्र आदि, इनको सुनकर ये लाभ उठाती और मुक्तिमार्ग को पहिचानती; पर उनमें से तो एक अक्षर भी न सुना समझा और दशमस्कन्ध की वे बातें याद करलीं जिनके यथार्थ अभिप्राय को वक्ता भी नहीं समझ सके। ऐसी २ बातें मन में विचार कर कहने लगी कि, इस देश की स्त्रियों की दशा कब सुधरेगी ? यह देश क्या निरा अधम ही होता चला जायेगा ? क्या कभी भी यहाँ की स्त्रियाँ पहिलीसी बुद्धिमती फिर भी किसी समय में होंगी ? क्या इनके शुभ दिन फिर भी कभी बहुरेंगे ? अथवा ये इसी दशा में वैशाखनन्दनी की भाँति अपना जन्म काटा करेंगी ? चाहे इनको बँधुआ बना कर रक्खो चाहे दासी बना कर और चाहे उनसे भी बुरी भाँति, पर कुछ नहीं—क्या इन्हें कभी भी अपनी दशा का सोच आवेगा और उससे निकल कर पुरुषों के सग फिर भी अपने देश की उन्नति में सहायक होंगी ? जगदीश ! क्या तू इनको इसी शिथिल दशा में रखने से प्रसन्न है वा फिर भी अपनी दया और कृपा दिखाकर इनको विद्या सुख का अनुभव कराके उस के अमृतपान से इनको पुनर्जीवित करेगा ?

बहुत हुई ! अब तो कृपाकटाक्ष फेर और कुपित भृकुटी को हटा। यह भी तेरी ही सृष्टि में से तो है। ऐसे पछता २ कर छोटी बहिन से कहने लगी, देख ! तेने यह तो कथा सुनी ही है, पर तुझे न लाभ हुआ और न फल। अब तुझको ऐसी कथा सुनाती हूँ जो तेरे लिये बहुतही उपयोगी होगी। तेरी अवस्था अभी भागवत आदि की कथा सुनने की नहीं है और न तेरी अभी ऐसी समझ है। तुझको तो पहिले अच्छी भाँति लिख-पढ़ लेना चाहिये और जब तेरी समझ अच्छी होजाय तब ऐसी कठिन बातों को सुने तो लाभ हो। मैं तुझको वे बातें सुनाऊँगी जो तेरे जन्म भर काम आवेंगी, इस लोक और परलोक दोनों में, और लड़कियों के सुनने योग्य भी वेही बातें हैं जो मैं सुनाऊँगी। पर आज तो मैं अभी आई हूँ सो,थोड़ा साही तुझे सुनादूंगी, जिससे तेरा चाव बना रहे, फिर कल से तुझे वे वे बातें बताऊँगी, जो लड़कियों और स्त्रियों के सीखने योग्य हैं।

सुन ! पहिले समय में इस देश की स्त्रियाँ कैसी २ पढ़ी लिखी और बुद्धिमती होती थीं जो पुरुषों के से काम करती थीं, बरन कभी कभी उनसे भी बढ़कर। पहिले जब मैं आई थी तब तुझे मैंने कई पुस्तकें सुनाई थीं, जिनमें स्त्रियों की बड़ाई पाई जाती थी, जैसे वामामनरञ्जन और एक दूसरी

नई भारतखण्ड की स्त्रियों के जीवनचरित्र इत्यादि। उनमे तू भलीभाँति जानगई थी कि स्त्रियां पुरुषों से किसी बात में कम नहीं हैं, पर अब उनको शिक्षा नहीं होती है इसी कारण वे ऐसी हीनदशा में हैं और बहुत तो ऐसी स्त्रियां होगई हैं जिनके रचे हुए ग्रन्थ भी हैं-जैसे रोमशा जिसने ऋग्वेद प्रथम मण्डल १८ अनुवाक १२६ सूक्त ७ ऋचा की टीका की है।

लोपामुद्रा-जिसने ऋग्वेद प्रथममण्डल १८अनुवाक १७९ सूक्त १ और २ मन्त्र की व्याख्या की है।

अपला-जिसने ऋग्वेद ८ मण्डल ६ अनुवाक ८१ सूक्त की व्याख्या की है।

सलभा-(महाभारत में कथा है) कन्या जो दर्शन शास्त्र में बड़ी निपुण थी, जिसने देशाटन करके अध्यात्म-विद्या का प्रचार किया।

देवहूती-(कपिलमुनि की माता) जिसने सांख्य-शास्त्र बनाया।

कौशल्या-जिसने नीतिशास्त्र रचा।

सुमित्रा-जिसने धर्मनीति बनाई।

लक्ष्मीदेवी-जिसने मिताक्षरास्मृति की टीका की जो बल्लभभट्ट के नाम से प्रसिद्ध है।

विद्याधरी–जिसने शङ्कराचार्य्य को शास्त्रार्थ में परास्त किया ।

विद्योत्तमा–जिसने बड़े २ पण्डितों को शास्त्रार्थ में हरादिया और अन्त को जब महामूर्ख कालिदास के संग ब्याही गयी तब अपनी विद्या के प्रभाव से अपने पति को लिखा पढ़ाकर ऐसा पण्डित बनालिया कि वे ही कालिदास संस्कृत के कवियों में अग्रसर गिने जाते हैं।

मदालसा–जिसने अपने पुत्र को ब्रह्मविद्या पढ़ाई।

विदुला–जिसने अपने बेटे को राजनीति सिखाई।

मन्दोदरी–जो धर्म्मशास्त्र में महानिपुण थी। उसने अपने पति रावण को कैसा २ समझाया है।

चन्द्रसखी–जो कैसी कवि हुई है।

बीबीरत्नकुँवरि–जिसने पद्य में प्रेमरत्न रचा है। मीरा और गंगाबाई–जिनके रचित सहस्रों प्रसिद्ध भजन गाये जाते हैं।

बहुतसी स्त्रियों के नाम तो केवल उनके पढ़ने लिखने के कारण ही अब तक घर २ प्रसिद्ध और विख्यात हैं। जैसे अनसूया, द्रौपदी, ऊषा, शकुन्तला (राजा दुष्यन्त को कमलदलपर श्लोक लिखकर दिये थे) लीलावती, दमयन्ती, मैत्रेयी, भगवती, रुक्मिणी और राधिका श्रीकृष्णचन्द्रजी को (पत्री लिखकर पठाती थीं) सीता,

मालती, अदिति, शतरूपा, कुन्ती, सरस्वती, रेणुका और मायावती इत्यादि—कहाँतक इनके नाम गिनाऊ? गिनाने २ कई माला पूरी होजायँगी और अन्त न आवेगा।

इस देश की स्त्रियां सब बातों में बड़ी निपुण और चतुर होती थीं। क्या धनसञ्चय में और क्या विद्योपार्जन में, क्या गृहरक्षना में और क्या शास्त्रविद्या में, प्रायः सब ही कामों में वे गुणी होती थीं। यहाँ तक कि इसी कारण उनको प्रत्येक गुण और विद्या की अधिष्ठाता और देवी माना गया है। जैसे विद्या की सरस्वती, धन की लक्ष्मी, आठ सिद्धि और नवदुर्गा इत्यादि।

महारानी लीलावती, जो महाराजा भोज की स्त्री थीं, अपने नाम की एक पुस्तक रचगई हैं, जिससे बढ़कर गणितविद्या में दूसरी पुस्तक नहीं रची गई। उक्त महारानी ने राजा भोज को विद्याप्रचार के प्रबन्ध में ऐसी महान् सहायता दी थी, जो भोजप्रबन्ध से भली भाँति प्रकट है। इन महारानी ने अनपढ़ स्त्रियों को बिन्दी लगाने का निषेध करा दिया था कि जबतक स्त्री लिखना पढ़ना न सीख लेवे, उसको बिन्दी लगाने का अधिकार नहीं। यदि लगावे तो दण्ड पावे।

अनसूयाजी ने सीताजी को पातिव्रत धर्म्म का कैसा उपदेश किया था।

विद्याधरी-(माधोमिश्रकी स्त्री)ने महाराज भोजके राज्यभर में विद्याप्रचार का कैसा उत्तम प्रबन्ध किया था।

यदि आजकल की पढ़ी लिखी स्त्रियों के नाम पूछे तो एक पुस्तक तो निरी उनकी नामावली ही से भर जावेगी। क्योंकि आजकल समाचारपत्रों से प्रत्येक का नाम सब को ज्ञात होजाता है। सुन, उनके थोड़े से नाम तुझको संक्षेप वृत्तान्त सहित बताये देती हूँ।

पण्डिता रामाबाई ने, जो संस्कृतवेत्ता थीं, स्वामीदयानन्द से शास्त्रार्थ किया था। अंग्रेजी पढ़ीं बलायत होआई है और अब बम्बई नगर में शारदासदन खोल रक्खा है।

जानकीबाई—ब्राह्मणवर्ण जयपुरप्रान्त के नार्णूग्राम निवासिनी संस्कृत भाषा में वेद वेदान्त गीता उपनिषद् स्मृति काव्य दर्शन व्याकरण इत्यादि में निपुण।

श्रीमती हेमन्तकुमारी—सुगृहिणी सम्पादिका, प्रसिद्ध पण्डित नवीनचन्द्रराय की दुहिता।

श्रीमती हरदेवी—भारतभगिनी सम्पादिका, अंग्रेजी में निपुण और बलायत भी हो आई हैं।

श्रीमती भाग्यवतीदेवी—वनिताहितैषी सम्पादिका कानपुर प्रान्त की सच्चेंडी निवासिनी।

चन्द्रकलाबाई—जिसने कवियों के संग समस्यापूर्त्ति

करके—कई येग पारितोषिक पाया । इनका रचा हुआ करुणाशतक भी है ।

प्रेमदेवी पजाबनिवासिनी ने, लाहौर से सन् १८८८ ई० में, डाक्टरी मे पास किया।

श्रीमतीजगन्नाथन त्रिवणापट्टमनिवासिनी ने, सन् १८९० ई० में,(L R C P E,,) एल.आर सी पी ई.,की उपाधि प्राप्त की ।

कुमारीसोहराबजी-यह(B A ,)बी ए , है, पूना निवासिनी है, लण्डननगर में आपने वक्तृता भी दी थी।

कुमारी एस ए बनर्जी ने सन् १८९० ई० में लण्डन जाकर परीक्षा दी और (M A ,) एम. ए , की उपाधि प्राप्त की ।

कुमारी अशोकलता, आगनेशदत्त, मृणालनी बनर्जी ने (Entrance) इन्ट्रेंस और प्रियंवदावागची, हेमप्रभाबोस,इन्द्राठाकुर ने(F A)एफ.ए., और कुमारी सरला घोषाल (Honor in English) एवं कुमारी शरद्चक्रवर्ती (B A ,) बी. ए , की परीक्षा सन् १८९० ई० में देकर उत्तीर्ण हुई ।

कुमारीविधुमुखीबोस ने डाक्टरी में (L M S ,) एल. एम एस., परीक्षा दी और उत्तीर्ण हुई—

बम्बई नगर में जो जातीयसभा(National Congress)

सन १८८६ ई० में हुई थी, उसमें प० रमाबाई, श्रीमती कादम्बनी गांगोली बी. ए., श्रीमती त्र्यम्बक कनारेल और श्रीमती त्र्यम्बक प्रतिनिधि बनकर गई थीं।

यह तो संक्षेप से इस देश की थोड़ी सी स्त्रियों का वृत्तान्त मैंने तुझको सुना दिया है, जो इंगलैंड देशवासिनियों का वृत्तान्त सुनाऊंगी तो सुनते न बनेगा। कहना तो एक ओर रहा, उनकी तो अकथ कहानी है। जो कुछ वे करें और उनकी विद्या की प्रशंसा की जावे थोड़ी है। उनमें तो सहस्रों बी. ए, (B A.) एम. ए., (M A.) हैं। उनके देश में तो पुत्र, पुत्री दोनों की समान शिक्षा होती है कुछ अन्तर नहीं है। उनमें बड़ी २ विदुषी स्त्रियां उत्पन्न होती हैं, जैसी प्राचीन समय में इस देश में भी होती थीं। उनमें तो इसी कारण स्त्रियों को इतनी योग्यता होगई है कि, वे पुरुषों से कम नहीं हैं। जैसे मेडेम ब्लेवेटस्की (Madam Blavatsky) मिसिज एनी बेसेन्ट (Mrs. Annie Besant), मिसिज ए. पी सिनैट (Mrs A P Sinnet) इत्यादि।

वे तो पुरुषों के समतर काम धंधा, और नौकरी करने लगी हैं। अमेरिका (United States) में नौसहस्र स्त्रियां

डाक्टर हैं। सहस्रों छापे (Printers and Compositors) का काम करती हैं, जो पुरुषों से अच्छा होता है। इसी कारण वे पुरुषों के बराबर वेतन पाती हैं। लण्डन में अठारह सहस्र १८,००० स्त्रियाँ समादपत्रा में काम करती हैं। समस्त इंगलैंड में ६६ स्त्रियाँ बड़े २ व्यापार करने वाली हैं। ३ साहूकारी की कोठी चलाती हैं। ७६५ दलाली और आढ़त करती हैं। १६ हुण्डी की दूकान करती हैं। ६८५ माल मोल ले ले कर बेचती है। १६७ व्यापारी बनकर देश विदेश जानेवाली हैं। १७,८५५ लेखक (Clerks) का काम दफ्तरों में करती हैं। ६६० समादपत्रों की सम्पादिका हैं। १२६ समाददाता हैं। ३,६७० नाटकपात्री हैं।

यह प्रथा अभी उसी देश में है। इस देश—भारतभूमि—में अभी यह प्रचलित नहीं हुई है कि, स्त्रियाँ लिख-पढ़ कर पुरुषों के समान नौकरी करें। हाँ मद्रासप्रान्त (Madras Presidency) में एक स्त्री इन्स्पेक्ट्रस (Inspectress of Schools) पाठशालाओं की नियत हुई है और स्यामदेश के राजा के यहाँ तो ४०० स्त्रियाँ सिपाही का काम करती हैं। अब पढ़ने लिखने की रीति, पुत्रियों के लिये, कुछ २ प्रचलित इस देश में भी होती जाती है। क्योंकि १८८१ ई० की मनुष्यगणना से ज्ञात है कि, बङ्गदेश में ६१,४४६ स्त्रिया

सन १८८९ ई० में हुई थी, उसमें प० रमाबाई, श्रीमती कादम्बनी गांगोली बी. ए., श्रीमती त्र्यम्बक कनारेल और श्रीमती त्र्यम्बक प्रतिनिधि बनकर गई थीं ।

यह तो संक्षेप से इस देश की थोड़ी सी स्त्रियों का वृत्तान्त मैंने तुझको सुना दिया है, जो इंगलैंड देशवासिनियों का वृत्तान्त सुनाऊंगी तो सुनते न बनेगा। कहना तो एक ओर रहा, उनकी तो अकथ कहानी है। जो कुछ वे करें और उनकी विद्या की प्रशंसा की जावे थोड़ी है। उनमें तो सहस्रों-बी. ए., (B. A.,) एम. ए., (M. A.,) हैं। उनके देश में तो पुत्र पुत्री दोनों की समान शिक्षा होती है कुछ अन्तर नहीं है। उनमें बड़ी २ विदुषी स्त्रियां उत्पन्न होती हैं, जैसी प्राचीन समय में इस देश में भी होती थीं। उनमें तो इसी कारण स्त्रियों को इतनी योग्यता होगई है कि, वे पुरुषों से कम नहीं हैं। जैसे मेडेम ब्लेवेटस्की (Madam Blavatsky) मिसिज एनी बेसेन्ट (Mrs Annie Besant) मिसिज ए. पी सिनैट (Mrs A P Sinnet), इत्यादि।

वे तो पुरुषों के समतर काम धंधा और नौकरी करने लगी हैं। अमेरिका (United States) में नौसहस्र स्त्रियाँ

डाक्टर हैं। सहस्रों छापे (Printers and Compositors) का काम करती हैं, जो पुरुषों से अच्छा होता है। इसी कारण वे पुरुषों के बराबर वेतन पाती हैं। लण्डन में अठारह सहस्र १८,००० स्त्रियाँ सम्वादपत्रों में काम करती हैं। समस्त इंगलैंड में ६६ स्त्रियाँ बड़े २ व्यापार करने वाली हैं। ३ साहूकारी की कोठी चलाती हैं। ७६५ दलाली और आढ़त करती हैं। १६ हुण्डी की दूकान करती हैं। ६८५ माल मोल ले ले कर बेचती हैं। १६७ व्यापारी बनकर देश विदेश जानेवाली हैं। १७,८५५ लेखक (Clerks) का काम दफ्तरों में करती हैं। ६६० सम्वादपत्रों की सम्पादिका हैं। १२६ सम्वाददाता हैं। ३,६७० नाटकपात्री हैं।

यह प्रथा अभी उसी देश में है। इस देश—भारतभूमि—में अभी यह प्रचलित नहीं हुई है कि, स्त्रियाँ लिख-पढ़ कर पुरुषों के समान नौकरी करें। हाँ मद्रासप्रान्त (Madras Presidency) में एक स्त्री इंस्पेक्ट्रस (Inspectress of Schools) पाठशालाओं की नियत हुई है और स्यामदेश के राजा के यहाँ तो ४०० स्त्रियाँ सिपाही का काम करती हैं। अब पढ़ने लिखने की रीति, पुत्रियों के लिये, कुछ २ प्रचलित इस देश में भी होती जाती है। क्योंकि १८८१ ई० की मनुष्यगणना से ज्ञात है कि, बङ्गदेश में ६१,४४६ स्त्रिया

सन १८८६ ई० में हुई थी, उसमें पं० रमाबाई, श्रीमती कादम्बनी गांगोली बी. ए., श्रीमती त्र्यम्बक कनारेल और श्रीमती त्र्यम्बक प्रतिनिधि बनकर गई थीं।

यह तो संक्षेप से इस देश की थोड़ी सी स्त्रियों का वृत्तान्त मैंने तुमको सुना दिया है, जो इंगलेंड देशवासिनियों का वृत्तान्त सुनाऊंगी तो सुनते न बनेगा। कहना तो एक ओर रहा, उनकी तो अकथ कहानी है। जो कुछ वे करें और उनकी विद्या की प्रशंसा की जावे थोड़ी है। उनमें तो सहस्रों बी. ए. (B A,) एम. ए., (M A,) हैं। उनके देश में तो पुत्र पुत्री दोनों की समान शिक्षा होती है कुछ अन्तर नहीं है। उनमें बड़ी २ विदुषी स्त्रियाँ उत्पन्न होती हैं, जैसी प्राचीन समय में इस देश में भी होती थीं। उनमें तो इसी कारण स्त्रियों को इतनी योग्यता होगई है कि, वे पुरुषों से कम नहीं हैं। जैसे मेडेम ब्लेवेटस्की (Madam Blavatsky) मिसिज एनी बेसेन्ट (Mrs. Annie Besant), मिसिज ए. पी सिनैट (Mrs A P Sinnet,) इत्यादि।

वे तो पुरुषों के समतर काम धंधा और नौकरी करने लगी हैं। अमेरिका (United States) में नौसहस्र स्त्रियाँ

डाक्टर है। सहस्रों छापे (Printers and Compositors) का काम करती है, जो पुरुषों से अच्छा होता है। इसी कारण वे पुरुषों के बराबर वेतन पाती है। लण्डन में अठारह सहस्र १८,००० स्त्रियाँ समाचारपत्रों में काम करती है। समस्त इंगलैंड में ६६ स्त्रियाँ बड़े २ व्यापार करने वाली है। ३ साहूकारी की कोठी चलाती हैं। ७६५ दलाली और आढ़त करती हैं। १६ हुण्डी की दूकान करती हैं। ६८५ माल मोल ले ले कर बेचती है। ४६७ व्यापारी बनकर देश विदेश जानेवाली है। १७,८५५ लेखक (Clerks) का काम दफ्तरों में करती हैं। ६६० समाचारपत्रों की सम्पादिका हैं। १२६ संवाददाता हैं। ३,६७० नाटकपात्री हैं।

यह प्रथा अभी उसी देश में है। इस देश—भारतभूमि—में अभी यह प्रचलित नहीं हुई है कि, स्त्रियाँ लिख-पढ़ कर पुरुषों के समान नौकरी करें। हाँ मद्रासप्रान्त (Madras Presidency) में एक स्त्री इन्स्पेक्टरस (Inspectress of Schools) पाठशालाओं की नियत हुई है और स्यामदेश के राजा के यहाँ तो ४०० स्त्रियाँ सिपाही का काम करती है। अब पढ़ने लिखने की रीति, पुत्रियों के लिये, कुछ २ प्रचलित इस देश में भी होती जाती है। क्योंकि १८८१ ई० की मनुष्यगणना से ज्ञात है कि, बङ्गदेश में ६१,४४६ स्त्रिया

प्रकार विना दूसरे पहिये के एक पहिया का रथ नहीं चल सक्ता इसी प्रकार सृष्टि के कामों के चलने के लिये स्त्री पुरुष, दोनों को दो पहिये बनाया है । स्त्री से पुरुष को बड़ी २ सहायताएँ पहुँचती हैं । पुरुष की सहायता का मुख्य आधार स्त्री ही है । स्त्री बिन घर नहीं, और घर बिन पुरुष कुछ नहीं कर सक्ता । पुरुष धन उपार्जन करके लाता है, स्त्री उसको व्यय करके गृह के काम काज चलाती है । जब पुरुष जीविका के लिये बाहर जाता है तब स्त्री बालकों को शिक्षा दे सक्ती है, घर को स्वच्छ रखती है, जिससे आरोग्यता रहती है । इसी प्रकार स्त्री अनेक प्रकार से सहायता पहुँचाती रहती है । भोजन बनाने में, कपड़े सीने में, दुःख सुख, सम्पत्ति, विपत्ति, शोच और विचार सब में वह मिली रहती है ।

पर जो स्त्री बुद्धिमती होती है तो वह घर के कामकाज कर भी लेती है, वरन बहुत चतुरता से और अच्छे प्रकार करती है । जो मूर्ख होती है वह रात दिन उलटी दुःखदायिनी रहती है । बात बात में क्लेश, कलह, हानि और दुःख ही करती रहती है ।

नारी पुरुष से किसी बात में न्यून नहीं है । परमेश्वर ने उसको कौनसी बात नहीं दी है ? किसी ने सत्य कहा है—

दो० जो हरि सोई राधिका, जो शिव सोई शक्ति ।

जो नारी सोई पुरुष, यामें कछु न विभक्ति॥

किसी किसी ने नारी को अबला कहा है, पर वही अबला गुण और बुद्धि पाकर सबला होजाती है। अर्थात् अपने पति को अपने वश में करलेती है। जो काम बल से नहीं बनता है, वह बुद्धि से सहज ही में हो जाता है। इसके दृष्टान्त की तो कुछ आवश्यकता नहीं है। सिंह और हाथी को मनुष्य बुद्धि के बलही से पकड लाता और ऐसा सुशील बना लेता है कि उसको अपने निपट अधीन करलेता है और उससे मन चाहे सो काम लेता है। बल करके वह कभी ऐसा नहीं कर सक्ता है। रेलगाडी, पनचक्की आदि कैसी कैसी अद्भुत कलें बुद्धिही से रचीगई हैं, जो सहस्रों मनुष्यों के बल के बराबर काम देती है।

स्त्री सदा तीन प्रकार से अधीन रहती है अर्थात् बाल्यावस्था में पिता के, तरुणाई में पति के और वृद्धापन में पुत्र के। इसीलिये वह सदा पराधीना है और कहावत प्रसिद्ध है कि, "पराधीन सपनेहु सुख नाहीं"। परन्तु बुद्धिमती स्त्री इन तीनों प्रकारों को अपने से ऐसा प्रसन्न करलेती है कि, उसको सपने में भी दुःख नहीं होता है, किन्तु सदा वह सब प्रकार से सुखी रहती है।

बालपन में पिता के घर रहकर वह सब आवश्यकीय बातें सीख लेती है, जिनसे उसको जन्मभर काम पड़ता

है और फिर पीछे पछताने का शोक नहीं रहने देती इस अवसर में थोडासा परिश्रम करके मरण पर्यन्त का वरन उससे भी आगे तक का सुख कमालेती है। बहिन ! इसी कारण मैं तुझे भी अब ये सब बातें सिखादूंगी। जो स्त्री ऐसा कर लेती है वह अपनी युवावस्था में पति के संग रह कर नानाप्रकार के सुख भोग करती है और अपने गुणों से उसे प्रसन्न रख कर आप भी स्वर्ग के सुख को यहीं भोगती है। क्योंकि स्त्री के लिये पति की प्रसन्नता से बढ़ कर इसलोक और परलोक दोनों में कोई भी सुख नहीं है। जिस स्त्री ने बचपन में कुछ नहीं सीखा उसका जन्म वृथा है और दुःख और क्लेश ही में जाता है। क्योंकि गुणहीन से सुख की आशा कदापि नहीं होती और न अब इस बडी अवस्था में वह कुछ सीख सक्ती है। गुणहीन होने से वह उल्टी अपने पति के लिए दुःखदायिनी होजाती है और आप भी अपने को एक प्रकार का भार समझ कर बुरे बुरे विचार मन में विचारती है और यही कहावत होजाती है:—

दो० समगुणदोष मिलायके, वर खोजो यह रीति।
ब्याह वायसी हंससँग, क्यों कर हुइ है प्रीति॥

और जो किसी स्त्री ने इस अवस्था में चाहा भी कि कुछ सीखलू तो भी बहुत कठिनता पडती है।

प्रथम तो मन ही नहीं लगता, जैसा कि कहा है,

दो०हरे वृक्ष की ज्यों छड़ी, मनमानी लचजाय।
सूखे से नहि लचत है, करे अनेक उपाय ॥

दूसरे घर का भार, आलस्य के दिन, मदन का वेग, और बुद्धि की जडता–ऐसी कठिनदशा में पढना लिखना कैसे बनसक्ता है ? इसी कारण जो इस अवस्था का सुख है उसका अनुभव भी वे नहीं करसक्तीं, उसका भोग तो एक ओर रहा। फिर मूर्ख स्त्रियाँ बुढापे में अति दुःख पाती हैं। क्योंकि यह अति ही हीनदशा है। अंग शिथिल होजाते हैं। वे घरवालों को भार जान पडती हैं। बहू बेटिया सब नठराती हैं। परन्तु जो बुद्धिमती हैं वे इस प्रकार निर्वाह करती हैं कि सब की वे आदरणीय बनी रहती हैं। बालशिक्षा और बालपोषण का भार अपने ऊपर लेकर कुल की वृद्धि करती हैं और कुल को सब प्रकार के दोष और कलह से बचाये रखती हैं इसलिये स्त्री को इस प्रकार वर्ताव करना चाहिये।

चौपाई

बालभाव जबतक रह नारी। तबतक पितु आज्ञा अनुसारी॥
हो सयानि तब करि पति सेवा। ताको समझि लेइ निज देवा॥
मन प्रसन्न राखे सब छन में। आलस नींद ग्रसे नाहिं तन में॥
होइ गेह कारज में दक्षा। करे सदा धन सम्पति रक्षा॥

सब पदार्थ को रहे बनाये । रात दिवस देखे मन भाये

हे बहिन ! अब मैं तुझे विद्या और मूर्खता के गुण और दोष बताती हूँ, जिससे तू जान जायगी कि, स्त्री के लिये विद्या सीखना सब से प्रथम काम है । मैं तुझसे मूर्ख स्त्रियों के दोष कुछ और वर्णन करती हूँ उन्हें कान लगा कर सुन । प्रथम तो मूर्ख स्त्रिया कच्चे भ्रम में पड़ जाती हैं । हर कोई इनको फुसला लेता है और ऐसी ऐसी मूर्खता की बातों में विश्वास कर बैठती है कि, जिनको सुनकर मेरा तो जी कॉप उठता है । सब कोई उनको धोखा देकर ठग लेजाते हैं । भड्डरी, भगत, स्याने, भोपे यह तो तैंने देखे ही है कि, मूर्ख स्त्रियॉ इनको कैसा मानती हैं । उनका विश्वास है कि येही हमारे बालकों को जीवदान देते है और सिवाय इनके सैकड़ों ऐसे दुष्ट मनुष्यों के कहने सुनने और बहकाने में आजाती हैं कि, कुल को कलङ्क लगा बैठती हैं और लोक में निन्दा कराती है और उल्टी अपने पति के लिए दुःखदायिनी हो जाती है । अनपढ और मर्द का स्वभाव तो जानती ही है कि, कैसा लट्ठसा होता है, नवाये नहीं नवता । पति ने कुछ कहा कि टकेसा उत्तर दे उसके जी को दुखा दिया । वही कहावत कि॰—

दो॰ करिये सुखको होय दुख, यह धौ कौन सयान।

वा सोने को जारिये, जाते फाटत कान ॥

रातदिन दोनों दु खी रह चिन्ता में दहकते हैं जिसमें चिता से'न्'अधिक है । चिता मरे को ही जलाती है, पर चिन्ता जीवित ही को । स्त्री के मूर्ख होने से केवल पुरुष के सुख और घर ही की हानि नहीं होती, वरन मूर्ख स्त्री की सन्तान भी तो वैसी ही मूर्ख होती है । क्योंकि जो कुछ टेव बालकपन में पडजाती है वह फिर कठिनता से निकलने में आती है । बालक अपनी मा ही के पास बहुत रहता है और जैसी टेव मा की होती है वैसी ही वह सीखता है । मूर्ख माता से मूर्खता की टेव और विद्यावती माता से विद्या की बातें उसमें आती है ।

प्रथम तो जैसा वृक्ष होगा वैसा ही उसके बीजमें अंकुर निकलेगा और दूसरे जो उसको इस अवस्था में कोई हानि पहुँचगई तो वह उस उत्तमता को नहीं पहुँचता जैसी कि उसके बीज में थी । सो यही दशा मनुष्यसन्तान की है । जैसी संगति में वह बैठेगा वैसी टेव,गुण और दोष ग्रहण करके सीखेगा और तब वही दोहा कहते बनेगा —

दो० बुरी प्रकृति जाकी पडी, कभी न छूटत सोय ।
नीलवर्ण ज्यों वस्त्र में, नहिं छूटत है धोय ॥

बहुधा देखने में आया है कि मूर्ख स्त्रियाँ लाड प्यार में गाली दे देकर अपने बालकों को भी गाली देना

पुरुषन ते दुगुनी क्षुधा, बुद्धि चौगुनी होय।
मोहआठ साहस छगुन,याविधि त्रिय सबकोय॥

विद्यावती स्त्री कभी किसी की ठगाई में नहीं आती है। मै तुझसे अपनी आँखों देखी एक बात कहती हूँ। स्त्री को विद्यावती होने से लाभ होता है। मेरे नगर में एक मनुष्य गहना रख कर लेन देन करता है। एक समय कोई मनुष्य अपना गहना छुटाने को उसके यहाँ रुपये और ब्याज लेकर गया, पर उसने कहा कि मैं तुम्हारा गहना कल भोर को निकाल दूँगा। वह यह सुन चला गया। इन्होंने भी भोर को उसे निकाल घर में एक और गुप्त स्थान में रख दिया और आप किसी काम को बाहर आये। राह में वह मनुष्य मिल गया, जिसका गहना निकाला था। उसने इनसे पूछा तो इन्होंने कहा कि मैं उसे निकाल कर अभी फलाने स्थान पर रख आया हू। यहाँ से जाकर दे दूँगा। एक ठग इसको सुन रहा था। सुनते ही इनके घर गया और गहने का सब वृत्तान्त ठीक-ठीक बताकर कहने लगा कि, वह वहाँ खड़े हैं, मुझे भेजकर वह गहना मँगाया है। उस स्थान से निकाल कर दे दो। इनकी स्त्री थी बड़ी चतुर। सोचने लगी कि इसने पता तो ठीक-ठीक सब बता दिया; पर मेरे पति तो इस भाँति कभी गहना पाता मँगाते नहीं है।

आप आकर ले जाते हैं और न घर का भेद बताते हैं। यह तो सब पते ठीक ठीक बताता है, इसमें 'दाल में कुछ काला' है। यह सोच कर नाहीं कर दी कि कह देना हमको नहीं मिलता, आप आ कर ले जावें। इस ठग ने बहुत ही कुछ कहा कि उन्होंने बहुत ही जल्दी मँगवाया है। इस बात से उस स्त्री को और भी अधिक सन्देह हो गया। इस कारण उसने गहना उसको नहीं दिया। जब उसका पति घर आया और उस स्त्री ने उससे पूछा तो सब समाचार ज्ञात हुआ। स्त्री बोली कि मैंने भी यही सोचा था कि आपने राह में उस मनुष्य से कहा होगा कि हम निकाल कर यहाँ रख आये हैं, यह सुन रहा होगा, बात बना कर माँगने को आ गया है। उसका पति उसकी इस बुद्धिमानी से बड़ा ही प्रसन्न हुआ। यह स्त्री बुद्धिमती और विद्यावती थी इसीलिए ठगाई में न आई। कोई मूर्ख होती तो ठगा जाती। किसी ने ठीक कहा है.—

दो०श्रवण नैन मुख नासिका, सब के एकहि ठौर।
रहनसहन चितवन चलन, चतुरन की कछु और॥

स्त्री के विद्यावती होने से सन्तान को भी बहुत लाभ होता है। वे सन्तान को प्रथम ही से शिक्षा में लगा लेती हैं। क्योंकि बालक बचपन में पिता से माता के पास अधिक रहता है। इसीकारण बालशिक्षा में बड़ी सुगमता

पड़ती है। पुरुष का आधा भार बच जाता है और उस को सब प्रकार का सुख ऐसी स्त्री से मिलता रहता है। आज्ञाकारी वह रहती, अनुयायी हो कर वह चलती, अनुकूलवर्तिनी वह बनती, दासी भाव रखकर सेवा वह करती, पत्नी बन कर पति को सदा प्रसन्न वह रखती और आप सुखी होती है। विपत्ति में मित्र और मन्त्री का काम कर के पति के आधे दुःख को बाँट उसके ताप को हरती है। फिर इस जगत् में कौन सी दुर्लभ वा अलभ्य वस्तु बुद्धिमती स्त्री के पटतर पुरुष के लिये है अर्थात् कोई नहीं। परन्तु हे बहिन! इतना कहना मैं भूल गयी कि बुद्धि भी विना विद्या के पैनी और चोखी नहीं होती। बुद्धि तो थोड़ी बहुत सब ही में परमेश्वर ने दी है, परन्तु विद्या ही उसको चोखी बना कर काम की करती है। यों तो पशु पक्षी सब ही को बुद्धि है, परन्तु विद्या नहीं। मिट्टी सब स्थानों में है, पर बासन वहाँ ही बनता है, जहाँ कुम्हार होता है। लोहे में काट है, परन्तु जब तक शान पर नहीं चढ़ता, काटता नहीं। हीरा भी जब तक ओपा नहीं जाता तब तक चमकता नहीं और अपने गुण और मूल्य को प्रकट नहीं करता है। यथाः —

दो० हीरा ओप धरे नहीं, जब लग चढ़ै न सान।
विद्या से माँजे विना, बुद्धि गहै नहिं ज्ञान॥

इसीप्रकार यदि मनुष्य बुद्धिमान् भी हो तो भी विद्या बिना कुछ नहीं कर सक्ता है। इस जगत् में विद्या भी एक अमूल्य वस्तु है, जो विनय देती है और विनय से योग्यता आती है। योग्यता से धन और धन से धर्म होता है, जिससे सुख मिलता है। इस कारण विद्या से बढ कर कोई वस्तु नहीं है। इस लोक में यही सार है। इसलिये इसको अवश्य ग्रहण करना चाहिये।

दो० धनसुखमन्पतिभोगियो,अरु राजनको राज।
जो तू चाहे सहज में, पढ़ विद्या तजि काज॥

हे बहिन! तूने जो अपना पढ़ना व लिखना छोड दिया है सो बहुत ही बुरा किया। सब से प्रथम तुझको पढ़ना ही उचित है। जब पढ लिख जायगी, तब अपने आप सब समझ जायगी और मुझसे भी अपने मन की बात बे मिले ही कह दिया करेगी। विद्या में यह एक और बहुत बड़ा गुण है कि, जब कोई अपना प्यारा वा हितू परदेश को चला जावे, तब बिना दूसरे से कहे हुए अपने मन की सब बातें उसको जता सक्ती है। पर जो लिखना-पढना नहीं जानती, वह ऐसा नहीं कर सक्ती। उसको अपनी गुप्त बात अवश्य दूसरे से कहनी पड़ेगी और भेद खुल जावेगा। स्त्री की बहुत सी बातें ऐसी हैं कि, जिनको वह पति के सिवाय किसी दूसरे से नहीं कह सक्ती।

तो फिर बता, विना पढ़े लिखे स्त्री क्या कर सक्ती है ? इस लिये स्त्री को पढ़ना बहुत ही उचित है। पढ़ी लिखी स्त्री अपने घर के व्यय का लेखा-जोखा व्योरेवार रख सक्ती है और घर बैठे देश भर का समाचार पुस्तकों द्वारा देख सक्ती है। जैसा कहा है —

'बैठ कर सैर मुल्क की करनी, यह तमाशा किताब में देखा'।

इसलिये तू पढ़ना मत छोड़। जब तक हो सके तू पढ़े जा। कल से मैं तुझे सब बातें बताऊँगी कि स्त्री को बालकपन ही से कौन कौन सी बातें सीखनी चाहियें, जो उसको अपने पिता के घर और पति के घर काम आती है। इन सब को मैं तुझे सुनाऊँगी और पीछे उन सब का फल बताऊँगी। अब तो आज इतना ही बहुत है। कोई मिलने भेंटने को आती होगी। मैं तुझे क्रम से यह बातें सुनाऊँगी,

१ गृहस्थधर्म, सामान्य शिक्षा, घर का काम-धंधा, व्यय आदि का प्रबन्ध।

२ भोजनसंस्कार, सीना पिरोना, शिल्पविद्या।

३ गर्भाधान, गर्भरक्षा, धात्रीशिक्षा, स्त्रीचिकित्सा।

४ स्वास्थ्यरक्षा, बालचिकित्सा, बालपोषण, बालशिक्षा।

५ धर्मोपदेश, स्यानों का कपट, नीति, रीतिभाँति, त्योहार और व्रत। इति उपोद्घात।

गृहस्थधर्म ।

दो० पतिसेवा गृहकाज व्यय, सूपशिल्पकुलरीति।
स्वास्थ्यसीव्यपालनजनन, नारिधर्मकहुनीति॥

जब दूसरा दिन हुआ तब दुर्गा अपनी बहिन मोहिनी को बुला कर यों कहने लगी, बहिन मोहिनी ! आ, अब तुझे कल की बात सुनाऊँ । मोहिनी ने कहा; अच्छा बहिन, आई । बोल, पहिले क्या सुनावेगी ? वही गृहस्थ धर्म, जो आज सुनाने को कहा था या और कोई ? मैं तो इसका अर्थ भी नहीं जानती कि इसका अभिप्राय क्या है ?

दुर्गा बोली "तो घबराती क्यों है ? मैं तुझे ऐसी भाँति समझा कर कहूँगी कि, तुझे पूछने की आवश्यकता भी न रहेगी। ले बैठ जा, सुन ! पहिले मैं तुझे यही बताती हूँ कि, गृहस्थधर्म कहते किसे हैं । इसका यह अभिप्राय है कि, सब मिल कर एक गाँठ बँध कर रहें । 'गृह' कहते हैं पकड़ना वा इकट्ठा होना वा गाँठ जो इसी शब्द से निकला है, और 'स्थ' कहते हैं ठहरना, अर्थात् इकट्ठे हो कर ठहरना और धर्म कहते हैं नियम वा कार्य को । इसलिये सब का मिल कर यही अर्थ हुआ कि वे नियम, जिनसे सब में प्यार प्रीति रहे और सब में एका हो अर्थात् कुटुम्ब

में जितने मनुष्य हों उन सब को एकमन हो कर मेल से रहना चाहिये । कार्य व्यवहार चाहे अलग-अलग भी करें, पर जैसे पहिये के आरे इधर उधर घूम-घूम कर भी उसी अपनी कीली पर लगे रहते हैं, इसी प्रकार कुटुम्ब के समस्त जनों को उद्यम और उपार्जन करने में वर्तना चाहिये । वे जो कुछ लावें वह सब एक ही स्थान में रहे । यह तो तुझको इसका अर्थ और अभिप्राय बताया । अब इसके धर्म बताती हूँ ।

सब से प्रथम इसमें दया का होना उचित है अर्थात् एक दूसरे से आपस में दया भाव रक्खें और सहायता देते रहें । सब को बराबर समझना चाहिये और इस प्रकार बर्ताव करना चाहिये कि आपस में अपना पराया ज्ञात न हो । सब मित्र ही मित्र वा प्रियजन ही दृष्टि आवें ।

गृहस्थ के धर्म अत्यन्त ही कठिन हैं । उनका पालन सुगम नहीं है । क्योंकि जितने दूसरे आश्रम हैं, वे सब इसी पर भरोसा रखते हैं । यदि यह आश्रम न हो, तो संसार का कोई काम न चले । यहाँ तक कि सृष्टि चलना भी दुर्लभ हो जाय । ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, सन्यासी, परमहंस, योगी, वैरागी, मुनि, ऋषि सब इसी के आश्रय रहते हैं । प्रथम तो सन्तान इसी आश्रम में होती है, फिर पालन भी सब का इसी एक आश्रम से होता है । कोई

आश्रम ऐसा नहीं है, जो इस आश्रम से कुछ न कुछ आशा न रखता हो। इसलिये यह आश्रम सर्वोपरि है और इसी कारण इसमें विघ्न भी शीघ्र पड जाते है । इसका निर्वाह बहुत सावधानी से करना चाहिये । यह उज्ज्वल और श्वेत वस्त्र के समान है, जिसमें तनिक सा भी मैला छींटा तुरन्त ही चमक उठता है । इसको कोई कोई वृक्ष से इस प्रकार दृष्टान्त दिया करते है कि, कुल तो जिसकी पींड है, धर्म डाली है, मनुष्य पत्र है, दृष्टान्त इसका मूल है, दुःख, कलह और सन्ताप प्रचण्ड वायु है, जिसके वेग में इसके उखडने का बहुत ही भय रहता है । परन्तु शील अपने शीतल जल से सींच सींच कर प्रतिदिन इसके मूल को दृढ करता रहता है । डाली पत्तों को बढ़ाता और वृक्ष को फुलाता फलाता है । सुमति इस वृक्ष का रस है, जो इसकी नस नस में पहुँच इसका पालन करता है । जब तक यह वृक्ष सुरक्षित रहता है, तब तक इसकी शीतल छाया में आनन्द से बैठ द्रोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि विपत्तिरूपी सूर्य की किरणों की ताप से बचे रहते है । जो सुमतिरूपी रस और शीलरूपी जल न हो तो यह वृक्ष सूख जाता है या प्रचण्ड वायु से उखड कर गिर पडता है । फिर दुःख, कलह, सताप अपने अपने झकोरों से और द्रोह, ईर्ष्या, द्वेष अपने अपने

ताप से वे वे क्लेश देते हैं कि कुटुम्ब का ठिकाना नहीं लगता । इनके मारे नाना प्रकार के दुःख सहता, इधर का उधर नेठौर ठिकाने स्थान और मतिभ्रष्ट हो, डाँवा डोल, बुरे-बुरे कर्मों में फँसा, मारा मारा डोलता है। कहीं पता नहीं लगता, कोई बात नहीं पूछता, पास नहीं बैठता और न बिठाता है । अपना नहीं बताता, वरन अपने पराये हो जाते हैं और बिराने तो दृष्टि भी नहीं डालते हैं कि कौन है । इसलिये इस वृक्ष की रक्षा भले प्रकार करनी चाहिये । शील और सुमति को कभी इससे अलग न होने दे । क्योंकि किसी ने सुमति और शील की प्रशंसा यों की है,

चौपाई

जहाँसुमतितहँसम्पति नाना।जहाँकुमतितहँबिपतिनिदाना॥
दो०गिरितेगिरि परचो भलो, भलोपकरिबो नाग ।
आगमाहिँधसिबोभलो, बुरो शील को त्याग॥

कोई कोई इसप्रकार से भी उदाहरण देते हैं कि गृहस्थ-रूपी एक गाड़ी है, जिसमें धर्म की धुरी, मेल और प्रीति के पहिये हैं । स्त्री-पुरुष दोनों बैल हैं । यदि परिश्रम और साहस से सुमार्ग में चलें, तो मनोरथ को पा सकें हैं । नहीं तो चकनाचूर हो जाने का भय कुमार्गगामी होने पर रहता है ।

गृहस्थमात्र का धर्म है कि आपस में सदा प्यार प्रीति से रहें। गृहस्थों के लिये प्रीति भी अत्युत्तम वस्तु है। प्रीति से ही जगत बन रहा है। प्रीति ही से जगत् के काम चलते हैं। प्रीति ही से मा बाप अपने सन्तान को पालते हैं और उनकी प्रीति-हेतु सहस्रों कष्ट और दुःख सहते हैं। प्रीति ही के कारण सन्तान अपने बूढ़े मा बाप की सेवा करते हैं। प्रीति ही से स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखती है। प्रीति ही से पति अपनी स्त्री को सुख देता है, उसके मन की सब प्रकार लिये रहता है। प्रीति ही से भाई भाई को प्यार करता है। प्रीति ही से परदेशी स्वदेशी से भी भला बन जाता है। निदान प्रीति ही ऐसी वस्तु है जो इस जगत को थाम रही है। नहीं तो सब आपस में लड़ भिड़ कर कट मरते और जो मरते नहीं, तो एक एक जन, एक एक वस्तु के लिये तो अवश्य ही भटक भटक कर ही रह जाता और वह उसे कभी न मिलती। सब अपने अपने स्वार्थ ही में लगे रहते, कोई किसी का सहायक न होता। राजा कभी अपनी प्रजा को सुख पहुँचाने के प्रबन्ध में मस्तक न पचाता और न प्रजा अपने राजा की मन से सेवा करती। पर यह सब प्रीति ही का कारण है कि एक दूसरे का सहायक होता है और दूसरे के कष्ट में पड़ कर उसे निवारण करता है। इसलिये बहिन! प्रीति

गृहस्थमात्र का धर्म है कि आपस में सदा प्यार प्रीति से वर्त्तें। गृहस्थों के लिये प्रीति भी अत्युत्तम वस्तु है। प्रीति से ही जगत् बन रहा है। प्रीति ही से जगत के काम चलते हैं। प्रीति ही से मा बाप अपने सन्तान को पालते हैं और उनकी प्रीति हेतु सहस्रों कष्ट और दुःख सहते हैं। प्रीति ही के कारण सन्तान अपने बूढ़े मा बाप की सेवा करते हैं। प्रीति ही से स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखती है। प्रीति ही से पति अपनी स्त्री को सुख देता है, उसके मन को सब प्रकार लिये रहता है। प्रीति ही से भाई भाई को प्यार करता है। प्रीति ही से परदेशी स्वदेशी से भी भला बन जाता है। निदान प्रीति ही ऐसी वस्तु है जो इस जगत् को थाम रही है। नहीं तो सब आपस में लड़ भिड़ कर कट मरते और जो मरते नहीं, तो एक एक जन, एक एक वस्तु के लिये तो अवश्य ही भटक भटक कर ही रह जाता और वह उसे कभी न मिलती। सब अपने अपने स्वार्थ ही में लगे रहते, कोई किसी का सहायक न होता। राजा कभी अपनी प्रजा को सुख पहुँचाने के प्रबन्ध में मस्तक न पचाता और न प्रजा अपने राजा की मन से सेवा करती। पर यह सब प्रीति ही का कारण है कि एक दूसरे का सहायक होता है और दूसरे के कष्ट में पड़ कर उसे निवारण करता है। इसलिये बहिन! प्री-

भी गृहस्थी के लिये बहुत ही आवश्यक है । क्योंकि प्रीति की महिमा इस प्रकार कही गयी है,

सो०जलपयसरिसबिकाय,देखहुप्रीतिकिरीतिभल।
बिलग होय रस जाय, कपट खटाई परत ही ॥

कुण्डलिया

पानी पयसों मिलत ही, जान्यो अपनो मित्त ।
आप भयो फीको बहे, जल को कियो सुचित्त ॥
जल को कियो सुचित्त तप्त पय को जन जानी ।
तब अपनो तन जारि बारि मन प्रीति हि आनी ॥
उफन चल्यो मधि अग्नि शान्ति जल छिरकत ठानी ।
सत पुरुषन की प्रीति रीति ज्यों पय अरु पानी ॥

इस गृहस्थ गर्भ का मूल प्रीति ही है, जिसको तुझे एक दृष्टान्त देकर समझाती हूँ । तैंने देखा है कि, बुहारी से कूड़ा कर्कट कैसी सुन्दर भाँति शीघ्र बुहर जाता है और बुहारी में सिवाय सींकों के और कुछ नहीं होता है । यदि एक एक सींक कर के बुहारो तो कभी भी न बुहारा जायगा । सो यह गुण बुहारी मे केवल सींकों की प्रीति ही का है, कि जब तक वे उस प्रीति की डोर मे परस्पर बँधी हुई हैं, तब तक ही बुहार सक्ती है । जहाँ प्रेमडोर टूटी, कि सींकें अलग हुई और फिर कुछ नहीं बुहर सक्ता । इसीप्रकार इस जगत् का काम केवल प्रीति ही से

मरता है। यदि यह न होतो तो कोई काम न चलता।

जिसप्रकार प्रीति इस गृहस्थ का मूल है, वैसे ही न-म्रता इसका फल है। गृहस्थी इस फूल के आये बिना नहीं सोहती। इस फूल से गृहस्थी की अधिक परम रूनी शोभा है। जिस गृहस्थी में यह फूल नहीं है, उसका जन्म निष्फल है। क्योंकि इसी फूल के आने से इस वृक्ष में सुख का फल लगता है, नहीं तो सदा दुःख ही रहता है। नाना प्रकार के कष्ट सह कर अन्त को नाश में मिल जाता है। यह नियम है कि भारी वस्तु नीचे को खिस-कती और झुकती है और हलकी वस्तु ऊपर को सरकती और उठती है। जिस गृहस्थी में सुख के फल लदे हुए है, उसको ससार भर के मनुष्यों से भारी समझना चाहिये। इससे और भी कि उसके माथे पर घर भर का बोझ है। इसलिये उसको तो नवते ही बनता है। जो नहीं नवता, वह अपनी ऐंठ में बोझ के मारे कमर टूट, गिर पड़ता है। ओछे जनों की पहिचान ही यह है कि वे सदा मस्तक उठा कर और अकड़ कर चलते हैं। जैसे पक्षियों में कौवा और वृक्षों में अरण्ड और सहजना। क्योंकि जहाँ इनको थोड़ी सी भी प्रभुता मिली या धन हाथ लगा अथवा किसी प्रकार का सुख प्राप्त हुआ कि फिर वे फूले नहीं समाते और अन्त में नाश को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे,

दो० अम्ब फले तो नव चले, अरण्ड फले सतराय।
यतिको फूल्यो सहजना, फल औ मूल नसाय॥

परन्तु जो सज्जन पुरुष होते हैं, वे "आम" के वृक्ष सदृश होते हैं। जितने फलते हैं, उतने ही नवते हैं। पर अरण्ड और सहजना ज्यों ज्यों फूलते हैं, उतने ही भीतर से पोले और निकम्मे होते जाते हैं। पर सज्जन पुरुष इन दोहों को भी मन में धारण कर, कभी, धन, सम्पत्ति, बल, यौवन और अधिकार पाकर भी घमण्ड नहीं करते क्योंकि इससे क्षुद्रता का दोष लगता है और प्रशंसा के स्थान में निन्दा होती है।

दो० कनक कनक तें सौगुनी, मादकता अधिकाय।
वाहि खाय बौराय है, याहि पाय बौराय॥
गुरुजन होइ न मान मद, विधि हरि हर पद पाय।
कपहूँ कि काँजी सीकरनि, क्षीरसिंधु बिनसाय॥

गृहस्थ को चाहिये कि बड़ी से बड़ी सम्पत्ति वा अधिकार पा कर भी समुद्र की भांति शान्तस्वभाव बना रहे और जैसे मेह का पानी पहाड़ों को कुछ बाधा वा विकार नहीं करता है, इसीप्रकार इन विकारी पदार्थों वा दुर्व्यसनों से साधुओं की भाँति अपने मन को निर्विकार रक्खे। बरसाती नालों की भाँति न बन जावें, कि तनिक ही से में इतने वेग से बहने लगे और तनिक पीछे ही विलाय जायँ।

गृहस्थ को चाहिये कि अपनी मर्यादा म रहे । कभी मर्यादा उल्लघन न करे । क्योंकि मर्यादात्यागी का सङ्ग तो क्या, स्पर्श तक लोग नहीं करते ह, किन्तु सङ्ग छोड देते हैं । जैसे वर्षा ऋतु में मर्यादा त्याग के कारण नदियों का पानी पीना तो एक ओर रहा, लोग उनमें स्नान करना भी छोड देते हैं और जैसे नदियों की मर्यादा उल्लघन से उनके आश्रित जीव निकल हो जाते हैं; वैसे ही गृहस्थी में स्वामी की मर्यादा छोडने से उसके सब आश्रित जन विपत्तिग्रस्त हो जाते हैं । इसलिये गृहस्थ में नम्रता भी अवश्य ही होनी चाहिये । इसके साथ सन्तोष, शान्ति और धीरज भी उचित है । इनके बिना भी गृहस्थ का धर्म नहीं निभता । क्योंकि गृहस्थी सुख के निमित्त है और सुख बिना सन्तोष के नहीं होता । कहा है कि 'सन्तोषी सदा सुखी' । जिसमें सन्तोष नहीं, वह सदा दुःख ही पाता रहता है । जो सुख उसको मिल भी रहा है, वह भी दुःख रूप हो जाता है । क्योंकि असन्तोषी को सदा भटकना ही लगी रहती है । और मन जब तक कि सुख को सुखकर नहीं मानता, तब तक सुख भी सुख नहीं होता है । वह सुख भी दुःख ही स्वरूप हो जाता है । जिस प्रकार सन्तोष से गृहस्थ को सुख मिलता है, उसी प्रकार धीरज और शान्ति से भी मिलता है ।

मनुष्य में शान्ति सदा रहनी चाहिये । संसार में यह बड़ी ही आनन्ददायक वस्तु है । परमेश्वर स्वयं शान्तिस्वरूप है । फिर ऐसी अमूल्य वस्तु गृहस्थी को अपने हाथ से कदापि न छोड़ना चाहिये । जिसने शान्ति को छोड़ा, उसने अपने आनन्द को हाथ से दे दुःख मोल लिया । जब मनुष्य में से शान्ति जाती रहती है, तब क्रोध आदि उसके शत्रु मन में स्थान कर बैठते हैं और अपनी आग से उसे जला-जला कर भून डालते हैं । परन्तु शान्ति, शील मनुष्य अपने शीतल स्वभाव द्वारा उस जलाने वाली आग से बचा रहता है और उसे दूर ही से निवारण कर देता है । जैसे गरम लोहे को ठंढा लोहा काट देता है; पर गरम लोहे से ठंढे का कुछ नहीं हो सकता ।

जैसे सन्तोष और शान्ति सुख देते हैं, वैसे ही धीरज विपत्ति और दुःख आदि दुःखदायियों को अपने पास फटकने नहीं देता और यदि ये कभी किसी प्रकार से आ भी गये तो इन्हें निर्बल करके तुरन्त निकाल देता है । गृहस्थी को कुछ बाधा नहीं पहुँचने देता । धीरे-धीरे उनके मूल को खोद कर उनको निर्मूल कर डालता है ।

गृहस्थ को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि सदा उद्यमी बने रहने ही में लाभ है । निरुद्यमी कभी न होना चाहिये । आलस्य को मन में भी न लावे । क्योंकि

आलस्य दरिद्रता है । विना उद्यम किये गृह का पालन कभी नहीं हो सक्ता । आलसी हो कर भूखों मरना पडता है । आलस्य धर्मों का नाश करनेवाला है । जिस घर में आलस्य धसा और बसा, जानो उस घर का अन्त आ गया। प्रथम तो कुछ पूँजी ही नहीं रहती फिर 'आय बन्द, व्यय नित नया' । आवे कहाँ से ? और कहावत प्रसिद्ध है कि, 'विना सोत कुएँ भी निवट जाते हैं' । आलसी पुरुष को कोई उधार तक नहीं देता है । लोग जानते हैं कि, जब वह अपने घर का सब खा गया तो हमारा उधार कहाँ से निबटावेगा और जब वह भूखों मरने लगा, तब बुरे कामों की ओर चित्त चलायमान होता है और अपने निज धर्मों को छोड़ भ्रष्ट हो जाता है और फिर थोड़े ही दिनों में नाश को प्राप्त होता है । लोक में अपनी निन्दा करा कर, परलोक में काला मुख कर नरक भोगता है । इसलिये गृहस्थ को कुटुम्बपालन के लिये उद्यमी सदा रहना चाहिये । नहीं तो आलसी, सरोवर की भाँति सूख जाता है । उद्यमी नदी बहती रहती है, जहाँ कहीं पानी थोड़ा भी हो जाता है वहाँ दूसरी नदियाँ उसे उद्यमी जान उसकी सहायता को आन मिलती हैं । जो गृहस्थ उद्यमी होता है, उसका कभी कोई काम अटका नहीं रहता । उद्यम के सिवाय

मनुष्य में शान्ति सदा रहनी चाहिये । संसार में यह बड़ी ही आनन्ददायक वस्तु है । परमेश्वर स्वयं शान्ति स्वरूप है । फिर ऐसी अमूल्य वस्तु गृहस्थी को अपने हाथ से कदापि न छोड़ना चाहिये । जिसने शान्ति को छोड़ा, उसने अपने आनन्द को हाथ से दे दुःख मोल लिया । जब मनुष्य में से शान्ति जाती रहती है, तब क्रोध आदि उसके शत्रु मन में स्थान कर बैठते हैं और अपनी आग से उसे जला-जला कर भून डालते हैं । परन्तु शान्ति, शील मनुष्य अपने शीतल स्वभाव द्वारा उस जलाने-वाली आग से बचा रहता है और उसे दूर ही से निवारण कर देता है । जैसे गरम लोहे को ठंढा लोहा काट देता है, पर गरम लोहे से ठंढे का कुछ नहीं हो सकता ।

जैसे संतोष और शान्ति सुख देते हैं, वैसे ही धीरज विपत्ति और दुःख आदि दुःखदायियों को अपने पास फटकने नहीं देता और यदि ये कभी किसी प्रकार से आ भी गये तो इन्हें निर्बल करके तुरन्त निकाल देता है । गृहस्थी को कुछ बाधा नहीं पहुँचने देता । धीरे-धीरे उनके मूल को खोद कर उनको निर्मूल कर डालता है ।

गृहस्थ को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि सदा उद्यमी बने-रहने ही में लाभ है । निरुद्यमी कभी न होना चाहिये । आलस्य को मन में भी न लावे । क्योंकि

आलस्य दरिद्रता है। विना उद्यम किये गृह का पालन कभी नहीं हो सक्ता। आलसी हो कर भूखों मरना पड़ता है। आलस्य धर्मों का नाश करनेवाला है। जिस घर मे आलस्य घसा और बसा, जानो उस घर का अन्त आ गया। प्रथम तो कुछ पूँजी ही नहीं रहती फिर 'आय बन्द, व्यय नित नया'। आवे कहाँ से ? और कहावत प्रसिद्ध है कि, 'बिना स्रोत कुएँ भी निबट जाते हैं'। आलसी पुरुष को कोई उधार तक नहीं देता है। लोग जानते हैं कि, जब वह अपने घर का सब खा गया तो हमारा उधार कहाँ से निबटावेगा और जब वह भूखों मरने लगा, तब बुरे कामों की ओर चित्त चलायमान होता है और अपने निज धर्मों को छोड़ भ्रष्ट हो जाता है और फिर थोड़े ही दिनों में नाश को प्राप्त होता है। लोक में अपनी निन्दा करा कर, परलोक में काला मुख कर नरक भोगता है। इसलिये गृहस्थ को कुटुम्बपालन के लिये उद्यमी सदा रहना चाहिये। नहीं तो आलसी, सरोवर की भाँति सूख जाता है। उद्यमी नदी बहती रहती है, जहाँ कहीं पानी थोड़ा भी हो जाता है वहाँ दूसरी नदियाँ उसे उद्यमी जान उसकी सहायता को दान मिलती है। जो गृहस्थ उद्यमी होता है, उसका कभी कोई काम अटका नहीं रहता। उद्यम के सिवाय

मनुष्य में शान्ति सदा रहनी चाहिये। संसार में यह बड़ी ही आनन्ददायक वस्तु है। परमेश्वर स्वयं शांति स्वरूप है। फिर ऐसी अमूल्य वस्तु गृहस्थी को अपने हाथ से कदापि न छोडना चाहिये। जिसने शान्ति को छोड़ा, उसने अपने आनन्द को हाथ से दे दुःख मोल लिया। जब मनुष्य में से शान्ति जाती रहती है, तब क्रोध आदि उसके शत्रु मन में स्थान कर बैठते हैं और अपनी आग में उसे जला-जला कर भून डालते हैं। परन्तु शान्ति, शील मनुष्य अपने शीतल स्वभाव द्वारा उस जलाने वाली आग से बचा रहता है और उसे दूर ही से निवारण कर देता है। जैसे गरम लोहे को ठंढा लोहा काट देता है; पर गरम लोहे से ठंढे का कुछ नहीं हो सक्ता।

जैसे संतोष और शान्ति सुख देते हैं, वैसे ही धीरज विपत्ति और दुःख आदि दुःखदायियों को अपने पास फटकने नहीं देता और यदि ये कभी किसी प्रकार से आ भी गये तो इन्हें निर्बल करके तुरन्त निकाल देता है। गृहस्थी को कुछ बाधा नहीं पहुँचने देता। धीरे-धीरे उनके मूल को खोद कर उनको निर्मूल कर डालता है।

गृहस्थ को इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि सदा उद्यमी बने रहने ही में लाभ है। निरुद्यमी कभी न होना चाहिये। आलस्य को मन में भी न लावे। क्योंकि

आलस्य दरिद्रता है । विना उद्यम किये गृह का पालन कभी नहीं हो सक्ता । आलसी हो कर भूखों मरना पड़ता है । आलस्य धर्म का नाश करनेवाला है । जिस घर में आलस्य धसा और बसा, जानो उस घर का अन्त आ गया। प्रथम तो कुछ पूँजी ही नहीं रहती फिर 'आय बन्द, व्यय नित नया' । आवे कहाँ से ? और कहावत प्रसिद्ध है कि, 'विना सोत कुएँ भी निबट जाते हैं' । आलसी पुरुष को कोई उधार तक नहीं देता है। लोग जानते हैं कि, जब वह अपने घर का सब खा गया तो हमारा उधार कहाँ से निबटावेगा और जब वह भूखों मरने लगा, तब बुरे कामों की ओर चित्त चलायमान होता है और अपने निज धर्म को छोड़ भ्रष्ट हो जाता है और फिर थोड़े ही दिनों में नाश को प्राप्त होता है। लोक में अपनी निन्दा करा कर, परलोक में काला मुख कर नरक भोगता है । इसलिये गृहस्थ को कुटुम्बपालन के लिये उद्यमी सदा रहना चाहिये । नहीं तो आलसी, सरोवर की भाँति सूख जाता है । उद्यमी नदी बहती रहती है, जहाँ कहीं पानी थोड़ा भी हो जाता है वहाँ दूसरी नदियाँ उसे उद्यमी जान उसकी सहायता को आन मिलती है । जो गृहस्थ उद्यमी होता है, उसका कभी कोई काम अटका नहीं रहता । उद्यम के सिवाय

थोड़े से परिश्रम करने की भी टेव गृहस्थ को चाहिये। न जाने दैवयोग से कब कैसा समय हो।

जो परिश्रम नहीं करता, वह मनुष्य नहीं, वह जीव जन्तुओं से भी गया बीता है। ऐसा है, जैसे रूख, ईंट, पत्थर। हाथ, पांव होते हुए भी टूंटे, लूले, लँगड़े बनना किसने कहा है? परमेश्वर ने इनको किस लिये दिये हैं? काम करने को या निकम्मे रखने को?

जिसमें परिश्रम करने की टेव नहीं, वह पत्थर की सी मूर्ति है, जहाँ रख दी, वहाँ ही रक्खी रही। खिला दिया खा लिया, पिला दिया पी लिया। ऐसे जन अन्त को बहुत ही दुःख पाते हैं। आज तो परमेश्वर की कृपा से नौकर-चाकर सब हैं। कल ऐसा हो कि, हम हो भी कोई सेवा में न रक्खे। तो फिर ऐसी दशा में ऐसे मनुष्य सिवाय दुःख भोगने और पछताने के कुछ और नहीं कर सके। पर जिनको पहिले ही से ऐसी टेव होती है कि, थोड़ा-थोड़ा परिश्रम करते रहते हैं, वे विपत्ति में भी कभी दुःख नहीं उठाते और न ऐसे गृहस्थ कभी विपत्ति को देखते हैं, जो सदा अपना वर्ताव एक सा रखते हैं। न कभी कम और न कभी अधिक वरन सदा बराबर चले जाते हैं। कोई काम न घट कर करते और न बढ़ कर। सदा वही काटे की तोल, जिसमें न कोई बुरा कहता

और न कोई बढ़ कर चलने का दोष लगाता, न ऐसों की एक बेर निन्दा होती है और न दूसरी बेर प्रशंसा; बरन सदा बड़ाई ही रहती है। गृहस्थ को कभी कोई काम अपने वित्त से बढ़ कर भी न करना चाहिये। जैसे कहावत है कि, 'तेते पाँव पसारिये जेती लाँबी सौर'। जिसमें जाड़े मरने का डर ही न रहे। सदा अपने दुबके दुबकाये गर्म हुये नींद ले सो रहे हैं। जो एक उत्सव या विवाह बढ़ कर कर दिया और फिर वैसा न बन पड़ा वो सिवाय हँसी और लोकनिन्दा के कुछ नहीं होता। इसलिये बर्ताव सदा एक सा होना चाहिये और बिना कुटुम्ब के बड़े बूढ़ों के पूछे भी कोई काम न करना चाहिये। क्योंकि उनको तुमसे अधिक बातें ज्ञात हैं। वे सब जानते बूझते हैं और बहुत देखेभाले हुए हैं। सब बातों की बुराई भलाई को सब प्रकार से पहिचानते हैं। इस लिये जो कुछ उनकी आज्ञा हो, वही काम करना चाहिये। उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई बात न होनी चाहिये। इससे बहुत सी हानि होने का भय है। सब गृहस्थियों को ऊपर कही हुई बातों का स्मरण रख कर उन पर ध्यान रखना चाहिये और उन्हीं के अनुसार बर्तना चाहिये।

अब बहिन! मैं तुझको वे बातें बतलाती हूँ, जिनका गृहस्थियों को निषेध है। और जो कभी न करनी

थोड़े से परिश्रम करने की भी टेव गृहस्थ को चाहिये न जाने दैवयोग से कब कैसा समय हो ।

जो परिश्रम नहीं करता, वह मनुष्य नहीं; वह जीव जन्तुओं से भी गया बीता है । ऐसा है, जैसे वृक्ष, ईंट, पत्थर । हाथ, पाँव होते हुए भी टूटे, लूले, लँगड़े बनना किसने कहा है ? परमेश्वर ने इनको किस लिये दिये हैं ? काम करने को या निकम्मे रखने को ?

जिसमें परिश्रम करने की टेव नहीं, वह पत्थर की सी मूर्ति है, जहाँ रख दी, वहीं ही रक्खी रही । खिला दिया खा लिया, पिला दिया पी लिया । ऐसे जन अन्त को बहुत ही दुःख पाते हैं । आज तो परमेश्वर की कृपा से नौकर-चाकर सब हैं । कल ऐसा हो कि, हमको भी कोई सेवा में न रक्खे । तो फिर ऐसी दशा में ऐसे मनुष्य सिवाय दुःख भोगने और पछताने के कुछ और नहीं कर सके । पर जिनको पहिले ही से ऐसी टेव होती है कि थोड़ा-थोड़ा परिश्रम करते रहते हैं, वे विपत्ति में भी कभी दुःख नहीं उठाते और न ऐसे गृहस्थ कभी विपत्ति को देखते हैं, जो सदा अपना बर्ताव एक सा रखते हैं । न कभी कम और न कभी अधिक वरन सदा बराबर चले जाते हैं । कोई काम न घट कर करते और न बढ़ कर । सदा वही काँटे की तोल, जिसमें न कोई बुरा कहता

और न कोई बढ़ कर चलने का दोष लगाता, न ऐसों की एक बेर निन्दा होती है और न दूसरी बेर प्रशंसा; बरन सदा बड़ाई ही रहती है। गृहस्थ को कभी कोई काम अपने वित्त से बढ़ कर भी न करना चाहिये। जैसे कहावत है कि, 'तेते पॉव पसारिये जेती लॉबी सौर'। जिसमें जाडे मरने का डर ही न रहे। सदा अपने दुबके दुबकाये गर्म हुये नींद ले सो रहे हे। जो एक उत्सव वा विवाह बढ कर कर दिया और फिर वैसा न बन पड़ा तो सिवाय हँसी और लोकनिन्दा के कुछ नहीं होता। इसलिये बर्ताव सदा एक सा होना चाहिये और बिना कुटुम्ब के बड़े बूढ़ों के पूछे भी कोई काम न करना चाहिये। क्योंकि उनको तुमसे अधिक बातें ज्ञात है। वे सब जानते बूझते हैं और बहुत देखेभाले हुए हैं। सब बातों की बुराई भलाई को सब प्रकार से पहिचानते हैं। इस लिये जो कुछ उनकी आज्ञा हो, वही काम करना चाहिये। उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई बात न होनी चाहिये। इससे बहुत सी हानि होने का भय है। सब गृहस्थियों को ऊपर कही हुई बातों का स्मरण रख कर उन पर ध्यान रखना चाहिये और उन्हीं के अनुसार बर्तना चाहिये।

अब बहिन! मैं तुझको वे बातें बतलाती हूँ, जिनका गृहस्थियों को निषेध है। और जो कभी न करनी

चाहिये । सुन, वे ये हैं । कुसमय की निद्रा, दूसरे के घर में रहना । इन बातों से मनुष्य के दरिद्र आता है और कहते भी हैं कि, 'दिन का सोना दरिद्र का लक्षण है' । कारण इसका यही है कि जो समय परिश्रम करने और जीविका प्राप्त करने का है, उस समय सोने में लाभ की जगह हानि होती है । फिर लाभ की जगह हानि होने से दरिद्र का प्रवेश होता है । ऐसी ही दशा दूसरे के यहाँ बसने से होती है । इसमें न वह अपना काम करने पाता और न हम अपना । दोनों को सिवाय हानि के कुछ लाभ नहीं होता है । और सोई वृथा भ्रमण से होता है अर्थात् ये तीनों बातें अच्छे कामों का नाश करती हैं । कोई अच्छा काम बन नहीं पड़ता । धर्म में अन्तर पड़ जाता है और नष्ट हो जाता है । धर्म नष्ट होने से मनुष्य का मन ठिकाने नहीं रहता है और मन के ठिकाने न रहने से कुछ भी लाभदायक नहीं बन पड़ता है । अनर्थक वचन भी वर्जित हैं । इससे इतनी बातों की हानि होती है—प्यार, प्रीति, मेल, मिलाप । दुःख-दर्द में सहायता मिलना; किन्तु उलटी इनके पलटे द्रोह, ईर्ष्या, वैर, कपट आदि की वृद्धि हो जाती है ।

गृहस्थ को इतनी बातें कभी न करनी चाहियें । प्रीति की क्षय, सत् असत् के विवेक का नाश, विद्या का विनाश,

शिक्षा में शिथिलता और असावधानी, ज्ञान की
नि, चित्त की चञ्चलता, सत्सग का त्याग, गुरों का
अनर्थ का लाभ, सज्जनों से विरोध, किसी के
की हानि, परनिन्दा, असत् का ग्रहण और शील
त्याग ।

इन बातों से गृहस्थ को बडी बडी कठिनाइयाँ पड जाती
और फिर उसका निर्वाह दुर्लभ हो जाता है । जो
म मैंने अबतक कहे वे गृहस्थमात्र के लिये पालने
य हैं और इन नियमों के भी पालने से गृहस्थ को
सुख मिल सक्ता है, जो मे अब बताती हूँ ।

(१) गृहस्थ अपना मन अपने वश में रक्खे ।
ता और सहिष्णुता सीखे ।

(२) विना विचारे कभी कोई बात मुख से न निकाले ।

(३) क्रोधी की बात का उत्तर न दे, क्योंकि इससे
ह बढती है ।

(४) निन्दक और पिशुन से सावधान रहे और
रार को बरा दे ।

(५) मधुर वचन बोलने की टेव न छोडे, क्योंकि
र सब को प्रिय है ।

(६) पडोसी वा मित्र के दोषों को मन में न धरे ।
के दोष और अपराध को क्षमा करता रहे ।

(७) पडोसी का हाथ उसके दुःख सुख में बँटै, जिससे वह हमारे में बँटावे ।

(८) किसी के अवगुण न प्रकट करे और निन्दा करने का तो स्वप्न भी न देखे । ये दोनों दुःख के मूल हैं ।

(९) छोटों पर स्नेह और बड़ों का मान करे, क्योंकि इससे परस्पर प्रेम होता है ।

(१०) प्रत्येक काम को पूरे विचार और आगापीछा सोच कर करे ।

(११) पाँच वकारों का सदा सभ्रम रक्खे (१) विद्या, (२) वपु, (३) वचन, (४) वस्त्र, (५) विभव (धन)—

गृहस्थ को अपने सम्बन्धियों और प्रेमियों से कभी,कभी मिलते अवश्य रहना चाहिये । नहीं तो प्रीति में अन्तर आ जाता है । अधिक नहीं तो वर्ष भर में एक बेर तो अवश्य ही किसी मिस से मिल लिया करे ।

गृहस्थ मन में कभी पाप का विचार भी न करे । क्योंकि पाप का बडा भारी विष है, जैसा काले सर्प का । क्योंकि कहा है कि, 'मन का पाप और घर का साँप मृत्यु तुल्य हैं' ।

गृहस्थ को मेघ की सी वृत्ति और धारणा करनी चाहिये अर्थात् दानी और सज्जन बनना चाहिये कि,

जिसको देख कर सबका चित्त प्रसन्न हो जाता है। परन्तु बलापी न होना चाहिये। जैसा गरजनेवाला बादल कि, जो बरसता कम है।

अब मैं वह धर्म कहती हूँ कि, जो मुख्य कर स्त्री को गृहस्थी में रह कर वर्तने चाहियें और ध्यान में रखने चाहियें। क्योंकि तुझे तो गृहस्थिन ही के धर्मों से काम पड़ेगा। इसलिये मैं तुझे वे ही सुनाती हूँ।

स्त्रियों के धर्म दो प्रकार के हैं। एक तो वे, जो वे अपने लिये करती हैं और दूसरे वे, जो उन्हें दूसरों के संग वर्तने पड़ते हैं।

प्रथम मैं तुझे वे ही बताती हूँ, जो अपने आप करने होते हैं अर्थात् जो अपने कुटुम्बियों के साथ ही करने होते हैं। जैसे बेटे के साथ, पति के साथ, सास, ससुर, ननँद, भावज, देवरानी, जिठानी इत्यादि अथवा और बन्धुवर्गों के साथ वर्ते जाते हैं। इनमें से भी मैं सब से पहिले वे धर्म कहती हूँ, जो स्त्री को अपने पति के संग वर्तने चाहियें। क्योंकि सब से अधिक उसीसे काम पड़ता है और उसी की प्रसन्नता के धर्म विशेष कर मुख्य हैं।

स्त्री वही है जो तन, मन और वाणी करके अपने पति की सेवा और आज्ञा में रहे। तन से सेवा करना यह है कि, पति को जिस प्रकार बने, उसी प्रकार सुख पहुँचावे,

(७) पड़ोसी का हाथ उसके दुःख सुख में बाँटे, जिससे वह हमारे में बँटावे ।

(८) किसी के अवगुण न प्रकट करे और निन्दा करने का तो स्वप्न भी न देखे । ये दोनों दुःख के मूल हैं ।

(९) छोटों पर स्नेह और बड़ों का मान करे, क्योंकि इससे परस्पर प्रेम होता है ।

(१०) प्रत्येक काम को पूरे विचार और आगापीछा सोच कर करे ।

(११) पाँच वकारों का सदा सञ्चय रक्खे (१) विद्या, (२) वपु, (३) वचन, (४) वस्त्र, (५) विभव (धन)—

गृहस्थ को अपने सम्बन्धियों और प्रेमियों से कभी कभी मिलते अवश्य रहना चाहिये । नहीं तो प्रीति में अन्तर आ जाता है । अधिक नहीं तो वर्ष भर में एक बेर तो अवश्य ही किसी मिस से मिल लिया करे ।

गृहस्थ मन में कभी पाप का विचार भी न करे । क्योंकि पाप का बड़ा भारी विष है, जैसा काले सर्प का । क्योंकि कहा है कि, 'मन का पाप और घर का साँप मृत्यु तुल्य हैं' ।

गृहस्थ को मेघ की सी वृत्ति और धारणा करनी चाहिये अर्थात् दानी और सज्जन बनना चाहिये कि,

जिसको देख कर सबका चित्त प्रसन्न हो जाता है। परन्तु प्रलापी न होना चाहिये। जैसा गरजनेवाला बादल कि, जो बरसाता कम है।

अब मैं वह धर्म कहती हूँ कि, जो मुख्य कर स्त्री को गृहस्थी में रह कर वर्तने चाहियें और ध्यान में रखने चाहियें। क्योंकि तुझे तो गृहस्थिन ही के धर्मों से काम पड़ेगा। इसलिये मैं तुझे वे ही सुनाती हूँ।

स्त्रियों के धर्म दो प्रकार के हैं। एक तो वे, जो वे अपने लिये करती हैं और दूसरे वे, जो उन्हें दूसरों के संग वर्तने पड़ते हैं।

प्रथम मैं तुझे वे ही बताती हूँ, जो अपने आप करने होते हैं अर्थात् जो अपने कुटुम्बियों के साथ ही करने होते हैं। जैसे बेटे के साथ, पति के साथ, सास, ससुर, ननँद, भावज, देवरानी, जिठानी इत्यादि अथवा और बन्धुवर्गों के साथ वर्ते जाते हैं। इनमें से भी मैं सब से पहिले वे धर्म कहती हूँ, जो स्त्री को अपने पति के संग वर्तने चाहियें। क्योंकि सब से अधिक उसीसे काम पड़ता है और उसी की प्रसन्नता के धर्म विशेष कर मुख्य हैं।

स्त्री वही है जो तन, मन और वाणी करके अपने पति की सेवा और आज्ञा में रहे। तन से सेवा करना यह है कि, पति को जिस प्रकार बने, उसी प्रकार सुख पहुँचाने,

दुःख न होने दे; किन्तु दुःख को दूर करती रहे।

मन मे सेवा करना यह है कि, पूर्ण और निष्कपट प्रेम अपने पति से माने। उस दशा में भी कि पति चाहे प्रेम न भी मानता हो। वाणी से सेवा करने का यह अभिप्राय है कि, मृदु, मधुर, प्रिय और प्रेमसने, क्रोधरहित, आदर सूचक वचनों से सम्भाषण किया करे। कभी किसी प्रकार उसके मन की बात के सिवाय, दूसरी बात को चित्त में भी न विचारे और न करे। सब समय अपने को दासी ही जान पति की इच्छा के काम करे। परछाहीं के समान उस के पीछे लगी रहे। जैसे परछाहीं अपने पुरुष की ओर ही चलती है, जहाँ पुरुष जाता है, उसी ओर को परछाहीं भी चलती है, इसी भाँति जैसी इच्छा अपने पति की देखे, वैसे ही बर्ते। जहाँ पति कहे, वहाँ बैठे, जब कहे, तब उठे, जो कहे, वही करे। कभी दूसरी बात करने से उसकी इच्छा को न बिगाड़े। जिससे देखे कि, मेरा पति प्रसन्न और सुखी होता है, उसी को करे। क्योंकि पति की प्रसन्नता मुख्य है।

पुरुष के क्रोधी वा अप्रसन्न रहने से स्त्री को कुछ सुख नहीं मिलता। बरन ठौर ठिकाना नहीं रहता। जहाँ पुरुष है, वहाँ ही स्त्री है। जब पुरुष ही नहीं, जिसे वह पति कहे, तो पत्नी कब और कहाँ हो सक्ती है। यह तो हाथ की सी लीक है। जब हाथ ही नहीं, [illegible] इसलिये

स्त्री को सिवाय अपने पति की प्रसन्नता के दूसरा काम नहीं। जिस भाँति हो सके उसी भाँति पति को प्रसन्न रक्खे।

स्त्री में सदा तीन प्रकार रहने चाहियें। माता, मोहिनी और मन्त्री अर्थात् भोजन कराने में माता की सी अत्यन्त प्रीति, केलिरस हास्य प्रेम प्रीति की बातों में कुलटा के समान मोहिनी के गुण धारण करना, विपत्ति में मन्त्री के समान अच्छी अनुमति दे कर धीरज और ढाँढ़स बँधाना। जो स्त्री ऐसा करती है, उससे उसका पति सदा प्रसन्न रहता है।

यदि कोई स्त्री भार्या बनना चाहे, तो इन गुणों को ग्रहण करे, जिससे पति प्रसन्न रहे और परिवार में प्रतिष्ठा पावे।

चौपाई

मनक्रम वचन पतिहि सेवकाई। तियहि नयहि सम आन उपाई॥
अस जियजानि करहिं पतिसेवा। तिहि पर सानुकूल सब देवा॥

महादेवजी ने जो पार्वतीजी को भार्याधर्म बताया था, वह महाभारत में वर्णित है सो उसका आशय ले कर मैं तुमको बताती हूँ। स्त्री को भार्या बनने के लिये ये गुण और धर्म ग्रहण करने चाहियें अर्थात् पति की सहधर्मचारिणी होना, सुस्वभाववाली, प्रियवादिनी, सुचरित्रा, प्रियमूर्ति, सदा पतिदर्शनाभिलाषिणी, पतिव्रता, मङ्गलमयी, धर्मसाधिनी, शुद्धाचारिणी, पति को देवतुल्य जान-

नेवाली, सदा प्रसन्नवदना, पति से क्रोध न करनेवाली, पतिसेविनी, गृहदक्षा, मधुर और नम्रभाषिणी, पति को संसार की समस्त वस्तुओं से अधिक प्रीति करनेहारी, पाकक्रिया में निपुण, अतिथि, अभ्यागत और टहलुवों को सुख से रखनेवाली, सब से पीछे भोजन करनेवाली, जिसकी सेवा से सब गृहवाले सुखी और पति के हित के कामों में लगी रहनेवाली जो स्त्री होगी, वह भार्यापद के कहलाने योग्य है अन्यथा नहीं। भार्या के यह भी गुण हैं,

दो० ज्ञानवन्त औ धर्म को, तत जानत पतिसेव।
अल्पसँतोपिन होत सो, लक्ष्मीही सत भेव॥
सदासरस मंगलयुकत, सदा धर्मरति धारि।
सदा दया अरुसत्ययुत, सुखसेवित सोनारि॥
सदाभक्तिपतिकीगहे, भोजनअतिहितकारि।
गृहकारजमें जो चतुर, सुखसेवितसोनारि॥
भार्या जो गृहमें चतुर, प्रिय बोलत निन बैन।
सो नारी पतिप्राण है, जिनते निजतनचैन॥

इन गुणों के पश्चात् भार्या बनने में कुछ और भी अभीष्ट है, सो तुझको वह भी बताती हूँ। यदि स्त्री इन प्रेम गुरुओं का ध्यान रक्खेगी और इनके अनुसार बर्तेगी तो आशा है कि, उसका पति कभी उससे अप्रसन्न न होगा, सदा प्रसन्न रहेगा।

(१) पति को जिस भाँति बने, सुख पहुँचाना, जिस प्रकार पति प्रसन्न रहे वही करना ।

(२) पति को कभी क्लेश वा दुःख न होने देना । यदि हो भी, तो उसको उपाय से दूर करना ।

(३) पति क्रोध भी करे, तो भी आप क्रोध न करना, किन्तु सदा नम्र, मृदु, मधुर वचन बोलना ।

(४) पति अपना निरादर भी करे, तो भी उसका यथायोग्य आदरभाव करना ।

(५) पति प्रीति न माने तो भी अपनी प्रीति न घटाना और उसकी सेवा से कभी मुख न मोड़ना ।

(६) पति की आज्ञा बिना कभी कोई कैसा भी काम न करना ।

(७) पति से छल, छिद्र, दुराव, कपट तथा चोरी इत्यादि न रखना ।

(८) पति के संग सदा सत्य का व्यवहार वर्तना, झूठ कभी न बोलना ।

(९) पति की निन्दा कभी किसी दशा में न करनी चाहिये । चाहे उसमें सौ अवगुण ही क्यों न हों ।

(१०) पति यदि, परस्त्रीगामी भी है, तो भी कभी पति से विपरीत भाव न हो, न सौत से ईर्ष्या वा डाह माने, बराबर पति-सेवा प्रेमपूर्वक करे ।

(११) पति की इच्छा वा आज्ञा के अनुसार सदा काम करना चाहिये । पति तुम्हारी इच्छा के विपरीत ही हो, कभी पति की इच्छा वा आज्ञा के विपरीत काम मत करो । चाहे वह कैसा ही अच्छा काम हो ।

(१२) पति के मित्रों को मित्र और शत्रुओं को शत्रु समझो । इसके विपरीत कभी न वर्तो । पति के भेद को कभी किसी से न कहो, उसके मित्र से भी नहीं ।

(१३) पति को उसकी इच्छा के विपरीत कभी उत्तर न दो और जो दो, तो सदा नम्रता, अधीनता, कोमलता, शीलता और मधुरता से निवेदन करो ।

(१४) पति की वस्तु में से कभी न चुराओ, दुषकाओ वा बिगड़ने दो; किन्तु उसको भलीभाँति सुरक्षित रक्खो ।

(१५) पति के सम्मुख कभी मैली कुचैली वा दुःखी मन से न जाओ । जब जाओ तब स्वच्छ वस्त्र आभूषण धारण करके और शृङ्गारमयी तथा प्रसन्न वदन होकर जाओ ।

(१६) काम-केलि के समय कभी शोक वा दुःख की बात न कहो । क्योंकि यह समय हास्य और रहस्य का है । इस समय ऐसी बातें वर्जित हैं ।

(१७) दुःख दरिद्र व किसी और हीन दशा में

पति की सेवा से कभी मुख न मोड़ो । सच्ची दासी की नाईं टहल करती रहो ।

(१८) आप रूपवती और पति कुरूप हो, तो भी कभी अपने रूप का घमण्ड या पति के कुरूप की निन्दा मत करो ।

(१९) पति से कभी किसी बात का अभिमान न करो, सदा दासी बन कर रहो ।

(२०) पति-सेवा को ईश्वर-भक्ति से भी अधिक समझो । क्योंकि बड़े बड़े तप और व्रत पतिसेवा के रर के बराबर हैं । शास्त्रों में ऐसा ही लिखा है ।

कोई कोई स्त्रियाँ दुष्ट और मूर्ख स्त्रियों की बातें सुन सुन कर या उनके बहकाने में आकर, अपने पति की निन्दा कर कहने लगती हैं कि, मैं तो अपने पति का कहना कभी नहीं मानती सदा अपना ही कहना करती हूँ । चाहे वह सौ भूँका करे, मैं तो अपनी ही टेक रखती हूँ. कभी उठ कर आदर तक नहीं करती और न कभी पहिले बोलती । वह अपने आप ही आ बोलता है, और मैं तो कभी उसकी दर भी नहीं धरती । जब कभी वह कोई बात मुझसे कहता है, तब तो मैं टके सा उत्तर देकर मुख बिगाड़ देती हूँ । अपने आप हार मान कर मेरा ही कहना मानता है । सो हे बहिन ! जो ऐसी स्त्रियाँ होती

हैं, वे सदा इस लोक में भी और परलोक में भी दुःख पाती हैं । लोग लुगाई सब उनकी निन्दा कर उनको कर्कशा कहने लगते हैं । जिसने अपने पति की निन्दा की, उसने पति का क्या बिगाड़ा ? अपना ही जीवन बिगाड़ा । यहाँ कलहिन प्रसिद्ध हुई, वहाँ ईश्वर के यहाँ जाकर नरक में पड़ी । यहाँ पति जीवते ही राँड के से दुःख भोगे, वहाँ जाकर नरक का सुख लिया । पति और पिता के यहाँ से आदर गया । लोक में उलटी हँसाई हुई । इसलिये कभी किसी स्त्री को अपने पति की निन्दा का विचार मन तक में भी न लाना चाहिये । क्योंकि जो स्त्री पतिव्रता रह कर सती होती है, वह यहाँ तो सुख पाती ही है, मरे पर भी अपने पति को लेकर साढे तीन करोड वर्ष तक (जितने कि मनुष्य के देह पर रोंगटे हैं) स्वर्ग में वास करती है । यह तो नरक में जानेवाली स्त्रियों के काम है कि अपने पति से बैर, कपट और छल रक्खें । आप भी दुःख पावें और पति को भी दुःख देना चाहें । ऐसी स्त्री खोटी कहलाती है और इन नामों से प्रसिद्ध हैं । इनका संग सदा त्यागना चाहिये । इनको पास तक न बिठाना चाहिये, न इनसे बोलना ही चाहिये । वरन मुख भी न देखना चाहिये । नाम और अवगुण उनके ये हैं,

(१) कुपत्नी=छिनाल ।

(२) पतिद्रोहिनि=जो अपने पति से बैर रक्खे और उसकी निन्दा करे ।

(३) दूती=इधर की उधर और उधर की इधर लगालूतरी करती रहे ।

(४) दुश्शीला=दुष्ट स्वभाववाली ।

(५) वकवादिनि=व्यर्थ और बहुत बोलनेवाली ।

(६) कुटनी=जो स्त्रियों को कुचाली और व्यभिचारिणी बनावे । भार खावे ।

(७) बहुरूपिनि=भाँतिभाँतिकेरूपधारणकरनेहारी।

(८) वेश्या=रामजनी ।

(९) कलहिन=कलह करने वा करानेवाली ।

(१०) कर्कशा=सदा लडाई रखनेवाली ।

(११) चोर वा ज्वारिन=वस्तु को चुरा ले जावे और जुवा का व्यसन रक्खे ।

(१२) टोटकाही=टोना वा टोटका करनेहारी ।

(१३) उन्मादी=काम के मद में उन्मत्त हुई अर्थात् कामासक्ता ।

(१४) मदमाती=मद पिये हुए व पीनेवाली अथवा यौवन और काम के मद से उन्मत्त ।

पति प्रतिकूल जन्म जहँ पाई । विधवा होइ पाइ तरुणाई ॥
सो०सहजअपावननारि, पतिसेवतशुभगतिलहहिं ।
यशगावतश्रुतिचारि, अजहुँतुलसीहरिहिप्रिय॥

किसी कवि ने एक पतिव्रता स्त्री के लक्षणों को अपनी पुस्तक में यों लिखा है कि, वह स्त्री पार्वतीजी के दर्शनों को यह समझ कर नित्यप्रति जाया करती थी कि, उनका पतिप्रेम प्रसिद्ध है और स्त्रियों में इसी कारण वे सर्वपूज्य हैं। जब एक दिन इस स्त्री को यह ज्ञात हुआ कि पार्वती जी महादेवजी की अर्धाङ्गिनी हैं अर्थात् पार्वतीजी की देह में आधीदेह महादेवजी की है, तब उसी समय से पार्वतीजी के दर्शन इस विचार से त्याग दिये कि मुझको परपुरुष का मुखावलोकन करना पड़ता है।

बहुत सी ऐसी ऐसी पतिव्रता स्त्रियाँ हो गई हैं कि, उन के नाम लाखों वर्ष से आजतक प्रसिद्ध चले आते हैं और अन्य पतिव्रता स्त्रियाँ प्रभात उठकर उनका अब तक नाम लेती हैं। सो ले, तुझको उनके नाम भी बताती हूँ। वे ये हैं,

(१) सूर्य की सुवर्चला, (२) चन्द्र की रोहिणी, (३) वशिष्ठ की अरुन्धती, (४) अगस्त्य की लोपामुद्रा, (५) च्यवन की सुकन्या, (६) कपिल की श्रीमती, (७) इन्द्र की शची, (८) सत्यवान् की सावित्री, (९) सगर की केशिनी, (१०) नल की दमयन्ती,

(११) मादाम की मदयन्ती, (१२) राम की जानकी, (१३) महादेव की सती, (१४) ब्रह्मा की मानिनी, (१५) नारायण की लक्ष्मी, (१६) रावण की मन्दोदरी।

हे बहिन ! पति कैसा ही बुरा क्यों न हो—लूला, लँगड़ा, काना, व्यभिचारी, चोर, जुवारी, परन्तु स्त्री को उस के अवगुणों को कभी मन में भी न लाना चाहिये। सदा उससे प्रीति ही माननी चाहिये और उसकी सेवा में तत्पर रहना चाहिये। कभी उसकी आज्ञा उल्लंघन न करनी चाहिये। पतिआज्ञा का उल्लंघन करने से बढ़ कर स्त्री के लिये इस संसार में कोई दूसरा पाप नहीं है। जैसे जीवमात्र को परमेश्वर की आज्ञा न मानने से पाप होता है, उसी प्रकार स्त्री को केवल पति की ही आज्ञा न मानने से उतना पाप होता है। क्योंकि स्त्री का पूज्य तो केवल पति ही है। अपने पति से सदा प्रीति माननी यही स्त्री का परम धर्म है। चाहे पति अपने मन का हो या न हो। क्योंकि अब वह छूट तो सक्ता ही नहीं। जैसा है, वैसा ही भोगना पड़ेगा। फिर प्रीति न करने से कौन सा कार्य निकलता है।

जगत् का नियम है कि, सुन्दर और अच्छे से तो सब ही को प्रीति होती है। स्त्री ही को क्या? पर नहीं, प्रीति तो वही है, जिसमें स्वार्थ न हो। जब स्त्री ने सुन्दर और अच्छे

पति से प्रीति जोडी, तब उसकी क्या बडाई ? ऐसों से तो सब ही को प्रीति हो जाती है । बात तो यही है कि, जिस से दूसरे प्रीति न मानैं और फिर एक जना प्रीति माने, वह ही तो प्रीति है । स्वार्थ से जो प्रीति होतीहै, वह प्रीति नहीं कहला सक्ती । प्रीति यही है, जो अपनी हानि सह कर भी दूसरे के सुख और प्रसन्नता के हेतु की जाती है । इस लिये स्त्री को अपने पति से प्रीति का वर्ताव सदा रखना चाहिये । चाहे पति कैसा ही हो । पति से प्रीति रखना तो स्त्री का परम धर्म है और यही उसका सुहाग है । इस के न होने से तो वह फिर किसी काम की नहीं । पर आज कल की स्त्रियाँ अपना सुहाग और बड़ाई शृङ्गार करने, बहुत सा गहना पहिनने और चटकीले मटकीले गोटे किनारी के कपड़े ओढ़ने में समझती है । सो यह उनकी बडी भूल है । स्त्री का सुहाग उसके गुणों से हो सक्ता है । क्योंकि गुणवती स्त्री से पति को अवश्य ही प्रीति होती है । बरन दूसरों को भी, जो स्त्री के सुहाग का फल है । यदि स्त्री ने ऐसा ही सुहाग मान रक्खा है और गुण कुछ भी नहीं है तो वह थोथा सुहाग है । प्रत्येक वस्तु का गुण सराहा जाता है, न कि रूप । यदि रूप और गुण दोनों हों तो फिर सोना और सुगन्ध की कहावत है । स्त्री को अपने पति से कभी कड़वी ना कड़ी बात न

बोलना चाहिये । सदा नम्र स्वभाव रहे, कभी पति को ऐसा उत्तर न दे, जिससे उसके मन को दुःख हो वा बुरा जान पड़े ।

जब कभी अपने पति को क्रोध में देखे तो चुप हो जाय। वचन मुख से न निकाले। सदा साँच और मीठा बोले । कभी कटु वचन अपने मुख से न निकलने दे। जब बोले, तब प्रिय ही बोले । प्रिय बोलनेवाले से कभी कोई अप्रसन्न नहीं होता है, वरन जगत् वश में हो जाता है । पति बिचारे की कितनी चलाई है । मीठा बोल दूसरे को अपनाय लेता है। बैरी तक भी तो मीठे बोलने से बैर छोड़ कर मित्र बन जाता है। रूप रंग और धन को कोई नहीं देखता । जो देखता है, सो बोल चाल और रहन-सहन तथा गुण को देखता है । जिसका स्वभाव साँच और मीठा बोलने का होता है, उससे सब प्रीति मानते हैं । जैसा कहा भी है,

दो० कागा काको धन हरे, कोयल काको देय ।
मीठे वचन सुनाय के, जग अपनो करि लेय ॥

स्त्री को अपने तई स्वतन्त्र कभी न गिनना चाहिये । पति चाहे आज्ञा दे कर भी स्वतन्त्र कर दे और अपने सब काम स्त्री ही की इच्छा पर छोड़ दे और कभी उसको किसी काम में न टोके, तो भी स्त्री को सदा अपने पति

की आज्ञा बिना वा पूछे बिना कोई काम न करना चाहिये । दूसरे प्रकार भी अपने को स्वतन्त्र न जाने । स्वतन्त्रता स्त्री को विष समान है । जो स्त्री स्वतन्त्र हुई, जानो उसका अन्त आ गया । यथा,

चौपाई

महावृष्टि चलि फूटि कियारी। जिमिस्वतन्त्र है बिगरहिं नारी॥

कारण इसका इतना ही है कि स्त्री ने अपनी स्वतन्त्रता से कोई सा काम कर लिया और वह उसके पति की सी इच्छा का न हुआ, तो मन में अन्तर पड जाता है। कभी कभी स्त्री की स्वतन्त्रता से ऐसे ऐसे कर्म देखने में आ जाते हैं, जो कलंक के कारण हो लोक में निन्दा कराते हैं । प्रथम तो स्त्री के स्वतन्त्र होने ही में लोग नाना प्रकार के भ्रम उस स्त्री की ओर से करने लगते हैं । फिर ऐसी दशा में स्त्री को भी कोई अवसर ऐसा बन जाता है कि लोगों को सच्चे वा झूठे हँसने का दॉव मिल जाता है । यह जगत् की रीति है कि, दूसरों के दोष का लोग बहुत जल्दी प्रकट कर देते हैं । अपने चाहें सहस्रों हों तो भी नहीं लजाते और गिनते। कहावत है कि, " दूसरे की फूली को तो टोकते हैं, अपने टेंट को भी नहीं देखते। " स्त्री को स्वतन्त्र रहने का बहुत ही निषेध है । इसलिये स्त्री को अपने को कभी स्वतन्त्र न बनाना चाहिये

बालपन में पिता के अधीन, युवावस्था में पति के अधीन और वृद्धावस्था में पुत्राधीन रहना उचित है और नहीं तो इस प्रकार जाने,

क० नारी को स्वतन्त्रता न उचित उचारी वेद, बालकपने में पिता पूछि कीजे काज है। स्वामी पूछि कीजे काम किंचित निवाह पाऊे, स्वामी हू न होय पुत्र पूछि साजे साज है। पुत्र हू न होय पतिपक्ष पूछि कीजे काज, यह हू न होय पितुपक्ष राखे लाज है। दोऊ पक्ष रहित कदापि कोऊ काम करे, सम्मति सदा ही पूछि ग्रामाधीश राज है॥

अपने पति से स्त्री को सदा सत्य बोलना चाहिये। कभी कोई बात कपट वा छल की न कहनी चाहिये और न करनी चाहिये। क्योंकि ये दोनों प्रीति के छुडानेवाले हैं। जैसे मैं पहिले कह चुकी हूँ कि, "बिलग होय रस जाइ कपट खटाई परत ही।" जिस स्त्री ने अपने पति से झूठ बोला, उससे उसके पति को कभी प्रीति न होगी। चाहे पीछे सौ उपाय कर पचि मरिये। मन का स्वभाव है कि, जहा फटा वहा फटा, और फट कर कभी मिलता नहीं। यदि किसी दशा वा काल में मिल भी गया तो बीच में अवश्य कुछ अन्तर रह जावेगा। चाहे जिस वस्तु को देख लो कि, एक बेर उसके दो टूक करके फिर मिलाओ तो बीच में सन्धि रहही जाती है। यहा तक

कि, फोडे में भी गूँथ पड जाती और स्पष्ट दीखती रहती है। यद्यपि एक शरीर के दो भाग मिल कर फोडा भरता है। किसी कवि ने यह ठीक कहा है,

दो० मन मोती अरु दूध रस, इन को यही स्वभाव।
फाटे पीछे ना मिले, कोटिन करो उपाव ॥

जिनके मन में छल और कपट है, वे इस जन्म में क्या कभी उस जन्म में भी नहीं मिलेंगे। जैसे दूध को खटाई फाड देती है, ऐसे ही मन को कपट और छल फाड देते है। जो स्त्रियाँ अपनी मूर्खता से व दूसरों की देखादेखी व कहने सुनने से अपने पति से कपट का व्यवहार रखती हैं, वे पीछे समझ आने पर बहुत ही पछताती हैं। और फिर अपने किये को दोष दे अपने मस्तक को धुनती है और जन्म भर दुःख भोग अपने इस सुन्दर जीवन को यों ही खो देती है।

मूर्ख तो ठगा कर कुछ सीखता है, परन्तु जो चतुर होते हैं, वे पहिले ही से आगापीछा विचार और दूसरे को देख काम करते है और सदा सुख भोगते हैं।

मैंने देखा है कि, मूर्ख स्त्रियाँ सदा दुःख ही में अपना जन्म बिताती हैं और चतुर स्त्रियाँ अपने पति के संग नित नये सुख भोग करती हैं और अपना जीवन प्राण-पति को गिन सदा उसकी सेवा तन, मन, धन से करती

हैं । अपने ऊपर कष्ट सह कर भी प्रसन्न होती हैं और कभी मन में इस बात का घमण्ड तक भी नहीं करतीं कि, हमने अपने पति के ऊपर यह एहसान किया । वे तो अपने को दासी मान कर सदा पतिसेवा ही को अपना परम धर्म समझती हैं । क्योंकि स्त्री को इस संसार में पति से बढ़ कर कोई दूसरा पदार्थ आनन्ददायक नहीं है । इसलिये स्त्री को जहाँ तक हो सके, पति को अनुकूल रखने के उपाय सोचने और करने चाहियें । जिससे आनन्द लाभ हो । पहिले समय में ऐसी ऐसी स्त्रियाँ हो गई हैं कि, सेवा तो एक ओर रही, पति के प्रेम में जिन्होंने अपने प्राण तक दे दिये हैं, उनकी कीर्ति के स्तम्भ ग्राम ग्राम में बने हुए हैं । कोई ग्राम व नगर ऐसा अभागा होगा, जिसमें इन स्वर्गवासिनी स्त्रियों के कीर्तिस्तम्भ न हों । सन् १६५६ ई० से ले कर सन् १८२६ ई० तक अर्थात् केवल १७३ वर्ष में ७०,००० सत्तर सहस्र आर्य महिलायें इसी पतिप्रेम में सती हो, स्वर्गसुख भोगने को चली गईं । जब से राजाज्ञा से सतीदाह होना बन्द हो गया है, तब से कम होते होते बहुत ही कम हो गई है । तथापि बहुत सी स्त्रियाँ अब भी अपना शरीरदाह व प्राण त्याग के सती हो जाती हैं । जैसे गया नगर के बोरी ग्राम में विष्णुसिंह ब्राह्मण की स्त्री अप्रैल सन् १८८० ई० में सती

किया । मेरे पति जब बाहर से घर में आते, तब में समा हितचित्त हो कर उनको आसन देती थी और यथानियम उनकी सेवा करती थी । जो खाद्य पदार्थ मेरे स्वामी को अरोचक होते थे, मे भी उनको कभी नहीं ग्रहण करती थी । पुत्र कन्या प्रभृति परिवार के लोगों के जो जो काम आवश्यकीय होते थे, मैं नितप्रति बड़े भोर ही उठ कर आप ने सब काम कर लेती थी और करवा लेती थी। मेरे स्वामी यदि किसी कार्यविशेषनिमित्त परदेश गमन करते, तो मे केशपाश बन्धन नहीं करती, न सुगन्धि लगाती थी । यहाँ तक कि नेत्रों में अञ्जन भी रञ्जन नहीं करती थी । भोगविलास की इच्छा को त्याग, सर्वदा संयत-चित्त हो कर पति के मंगलकार्य किया करती थी । जब मेरे पति सोते थे तब आवश्यकीय कामों को भी छोड़ कर मैं पति के पास ही सेवा में रहा करती थी । परिवार प्रति-पालन के लिये भी पति को कष्ट नहीं देती । पति के किसी गुप्त विषय को कभी प्रकाश नहीं करती थी । घर को स्वच्छ रखती थी । सो इसी पति सेवा के उपलक्ष्य में मुझको यह स्वर्गलाभ हुआ है । अन्य कोई बात नहीं है ।

पद्मिनी चित्तौड की रानी थी । इसका चरित्र भी इस देश के लोगों से छिपा नहीं है । यह स्त्री पति प्रेम और

पातिव्रत में पिछले समय में बड़ी धुरन्धर हुई है । इसकी कथा यों है कि, अलाउद्दीन दिल्ली के बादशाह ने जब भीमसिंह चित्तौड के राजा की महारानी पद्मिनी के रूप की प्रशंसा सुनी, तब उसका चित्त चलायमान हो गया। यहाँ तक कि, उसने भीमसिंह से कहला भेजा कि, रानी को हमारे महलों में भेज दो । राजा ने जब निषेध किया तब उसने उसे बंदीगृह में डाल दिया । पर जब यह समाचार रानी को ज्ञात हुआ तब उसने बादशाह से कहला भेजा कि, आप राजा को क्यों तंग करते है। मैं आप ही तुम्हारे पास आ जाऊंगी। परन्तु मुझको एक बेर अपने पति से भेंट करने की और अपनी एक सहस्र सहेलियों को साथ लाने की आज्ञा हो जावे । इस प्रार्थना को कामासक्त बादशाह ने स्वीकार कर लिया और आज्ञा दे दी। रानी ने क्या चतुराई की कि, एक सहस्र वीरपुरुषों से कह दिया कि, आप स्त्रीवेष धारण कर के और आवश्यकीय सब अस्त्र-शस्त्र ले कर पालकियों में बैठ कर मेरे साथ चलिये । यह आज्ञा दे, वह स्वय भी अस्त्र शस्त्र ले कर और पालकियाँ उठवा कर चल दी । जब पालकियाँ बादशाह के डेरे के पास पहुँचीं तब वह पहिले बंदीगृह में जा कर निज पति से मिली । राजा ने रानी को वीर वेष धारण किए हुए देख कर बड़ा आश्चर्य किया और प्रेमवश हो कर आलिङ्गन करना चाहा ।

तब रानी ने ली कि, प्राणपति, यह समय इसका नहीं है। मैंने तुम्हारे छुड़ाने के हेतु यह सब प्रपञ्च रचा है। एक सहस्र वीरपुरुषों को अपने सग स्त्रीवेष में लाई हूँ और दो घोड़े मेरे और आपके लिये यहाँ से थोड़ी दूर पर खड़े हैं। शीघ्रता से चल दीजिये। यह कह कर राजा के हाथ में तलवार दे दी और वहाँ से निकाल लाई। पहरुए आज्ञावश सब अचेत हो रहे थे। कुछ रोकटोक न हुई। सवार हो कर अपने गढ में दोनों आ गये।

जब रानी को बादशाह के पास पहुँचने में देर हुई, तब बादशाह व्याकुल हो कर बंदीगृह की ओर गया और राजा रानी दोनों को वहाँ न पा कर क्रोधाग्नि में भभक उठा और सेना को आज्ञा दी कि, जितनी सहेली रानी के संग आई है, सब का धर्म नष्ट कर डालो और आज ही युद्ध के लिये चढ़ चलो। सो उसी दिन चित्तौड़ पर जे चढ़ गये और घोर युद्ध हुआ। राजा के दस पुत्र सग्राम में कुल खेत रहे। तब राजा स्वयं लड़ाई में गया; पर मारा गया, तब रानी ने अपनी सखियों से कहा कि, हमारे पति और पुत्र सब सग्राम में कट कट कर स्वर्गवासी हुए; अब हम भी चिता में भस्म हो कर उनसे चल कर मिलें। नहीं तो यह पापिष्ठ यवन हमारा धर्म नष्ट करेगा। स्त्रियों का भूषण और धन केवल सतीत्व ही

है, सो अब उसकी रक्षा के लिये अग्निप्रवेश के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। यह कह प्रथम पद्मिनी ने स्वयं चितारोहण किया और पश्चात् समस्त राजपूतनी इसी प्रकार जल कर भस्म होगईं। जब राजा भीमसिंह को बादशाह जय कर चुका तब रानी के लोभवश उसने चित्तौड़ के अन्तःपुर में प्रवेश किया; परन्तु जब देखा कि, एक भी रमणी वहां दिखाई नहीं पडती और सबने जल जल कर उस रमणीक भूमि को श्मशान बना दिया है तब वह बहुत पछताया। कहते हैं कि, इतनी स्त्रियाँ इस समय सती हुई थीं कि, उनकी नथें जो तोली गईं तो ७४॥ मन उतरीं। उन्हीं की आन अब तक चिट्ठियों पर लिखी जाती है कि, जो कोई अन्य पुरुष इस चिट्ठी को खोलेगा उसको इतनी हत्या का पाप लगेगा।

बहिन! देख, रानी पद्मिनी और उसकी राजपूतनियों को कि, सतीत्व बनाये रखने को प्राण तो दे दिये, पर धर्म नष्ट न होने दिया। एक आज कल की स्त्रियाँ है कि, कामवश निज पति को भी त्याग देती है। विषपान करा के उनको मार डालती हैं। पति को त्याग जार पुरुष के संग भाग निकलती है। जो स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखना चाहे, वह इन षोडश कलाओं को धारण करे, जो क्षेमेन्द्र कवि ने लिखी हैं,

(१) प्रसन्नमुख रहे ।
(२) स्मितहास्यविकासित मुखारविन्द से बोले।
(३) घर आने पर पति का सत्कार करे ।
(४) रसोई आप बना कर परसे ।
(५) मुखवास (ताम्बूल इत्यादि) निज कर से दे
(६) शृंगारमयी हाव, भाव, कटाक्ष से रहे ।
(७) कविता व पुस्तकादि पढ़ कर पति को सुनावे
(८) पति की रुचि के अनुसार खेल सीख ले औ
पति के संग खेले ।
(९) मनोहर गान करे ।
(१०) मधुर वाणी से बोले ।
(११) पति के दोषों को मन में न धरे ।
(१२) पति के क्रूर वचनों पर उदासीन बनी रहे
(१३) प्रत्येक कार्य में पति को उचित सम्मति दे
(१४) पति के आरोपित दूषणों पर क्रोध न क
विनय दर्शावे ।
(१५) परपुरुष के संग हास्य से कभी बात न करे
(१६) पति को रति और विलास में संतोष दे ।

बहिन ! यह तो स्त्रियों के धर्म मैंने पति के संग रहने के बताये । अब मैं उनके धर्म बताती हूँ कि, जिनके पति परदेश को जीविका के लिये चले जाते हैं । ऐसी स्त्रियाँ,

जिनके पति उनके पास नहीं है, अपने मन से अपने पतियों का स्मरण दूर न करें, किन्तु अपने मन में वही प्रीति बनाये रक्खें, जो पास रहने पर थी। क्योंकि स्त्री और पति का दूर ही क्या है, उनके तो मन एक है। जिनका मन मिला है, वे कभी दूर नहीं हैं। जैसे,

दो० जल में बसे कुमोदिनी, चन्दा बसे अकास।
जो जन जाके मन बसे, सो जन ताके पास॥
मूरति मेरे मित्र की, चढ़ी रहत है चित्त।
कहा भयो तन ना मिल्यो, मन मिलि आवत नित्त॥

नित उठ अपने पति का स्त्री ध्यान कर ले और उसी के चरणों में चित्त रक्खे। सोते समय भी उसीका ध्यान कर के सोवे अथवा उसका चित्रपट कढ़वा, नित्य उसके दर्शन प्रभात को उठ कर कर लिया करे व आननमात्र का अत्यन्त छोटा फोटू खिंचवा कर आरसी में मढ़वा ले, जो समय पति के भोजन करने का हो, उसके पीछे आप भोजन करे, सोने के समय से पीछे सोवे और उठने के समय से पहिले उठे।

जिस स्त्री का पति परदेश में हो, वह शृगार कर के न रहे। आभूषण आदि धारण न करे। चटकीले, भड़कीले वस्त्र न पहिने। किन्तु अति ही साधारण प्रकार से रहे। किसी उत्सव में जैसे विवाहादि हैं, न जाय। न किसी से

हँसी करे । पराये घर कभी न रहे । जुवा आदि खेल कभी न खेले । जहाँ पुरुषों का समूह हो, वहाँ कभी न जाय और न देखे । किसी के घर न डोले, न इधर उधर फिरे । कभी चिल्ला कर न बोले । किसी से लड़ाई व कलह न करे । बिना वस्त्र के कभी न रहे । गाने में न बैठे और न सुने । सदा बूढ़ी बड़ियों के पास रहे सहे । युवा स्त्रियों में कम बैठे । एकान्त में न रहे । शृंगार की वस्तुओं को बहुधा बरन कभी न देखे । मन में चञ्चलता न आने दे और सबके ऊपर यह कि, अपने मन को वश में रक्खे, जितेन्द्रिय बनी रहे । स्त्री के लिये इससे बढ़ कर दूसरा कोई उपाय नहीं है । जो स्त्री जितेन्द्रिय नहीं, उससे अपना धर्म कभी भी न निबहेगा । क्योंकि स्त्रियों का स्वभाव चञ्चल बहुत होता है और मन की चञ्चलता से ऐसी ऐसी हानियाँ देखने और सुनने में बहुधा आई हैं, जिनका न कहना ही भला है । ये तो स्त्रियाँ हैं, बड़े बड़े ऋषि और मुनियों के मन में चञ्चलता होने से उनके तप भंग हो गये हैं । इसलिये पहिले ही से स्त्री को जितेन्द्रिय रहने और मन को मारने की टेव डालनी चाहिये । जो ऐसे समय में काम आवे और अपने धर्म पर सदा आरूढ़ रहे, जो अपने और अपने पति के कुल के [illegible], उनसे कभी किसी समय बाहर [illegible] हैं, वे

नी कुलवती और कुलीन घराने की कहलाती है, जगत में बड़ाई पाती है, पिता और पति दोनों कुल की मणि बनती हैं और बड़ाई कराती है। नहीं तो कुल की कलङ्किनी बन नील का टीका अपने माथे और कुलवाला को लगाती है। कुलवती स्त्रियाँ सदा लज्जावती बन कर रहती हैं। कभी कोई काम ऐसा नहीं करतीं, जिससे उनकी पति जाय व उन्हें दोष लगे।

लज्जा यही नहीं है कि, डेढ़ हाथ का घूँघट खींच लिया और मन में कुछ लाज नहीं रक्खी। घूँघट खींचने से लाज नहीं होती है और न परदे ही में रहने से। लाज तो मन की है। यदि मन में लाज है तो चाहे परदे में रहो न बाहर घूँघट खींचो न खुले मुख रहो, कुछ डर नहीं है। परन्तु मन की निर्लज्जता को प्रथम त्यागो। यदि मन ही में लाज नहीं है तो कहीं भी नहीं है। न परदे में और न घूँघट में। फिर वही कहावत होती है कि, 'यह खेलै कुल की वधू टट्टी ओट शिकार।'

लाज से अभिप्राय है कि, कोई काम ऐसा न करे कि लोकहँसाई हो व कलङ्क लगे। चाहे वह काम छिप कर किया जावे व प्रकट। काम ऐसा करना चाहिये, जिससे कोई बुरा न कहे और दोष न लगे। लोकनिन्दा से डरना ही लज्जा है। क्योंकि राजा रामचन्द्रजी ने लोक-

निन्दा ही मे डर, निर्दोष और पतिव्रता सीता महारानी को राजभवन से निकाल वनवास दिया था । केवल इतने पर ही कि, एक रजक को सीताजी की निन्दा करते रामचन्द्रजी ने सुन लिया था ।

जिसको लोक में बुरा काम कहें, वही निर्लज्जता का है । इसलिये जगत् में फूंक फूंक कर पाँव धर कर काम करना चाहिये, जिससे लाज बनी रहे और जिसको बनाये रखना गृहस्थ को बहुत ही आवश्यक है । जिस गृहस्थ की लाज गयी, उसका इस संसार से सर्वस्व गया । जिसकी लाज रही, उसका सब कुछ रहा । चाहे वह धनी हो व निर्धन । गृहस्थ लज्जावान ही सराहा जाता है ।

पर गृहस्थ की लाज रखना स्त्री के हाथ अधिकतर है । जो यही रक्खे तो रहे, नहीं तो सहज में खो दे ।

लज्जा स्त्री के लिये रत्नजटित भूषणों से भी अधिक शोभा देती है । क्योंकि निर्लज्ज स्त्री मनमानते भूषण धारण किये हुए भी नहीं सोहती है । वरन उसके भूषण उतने ही अधिक उसको लजाते है । अतएव लज्जारूपी भूषण को स्त्री अवश्य ही ग्रहण कर के धारण करे । उस में यह अधिक गुण है कि ये विना मूल्य बन जाते हैं । सोने चाँदी के भूषण विना मूल्य नहीं आते और चोरी चले जाते हैं, परन्तु यह आभूषण चोर से सुरक्षित रहता

है। साथ ही यह अकेला उन सौ भूषणों से अधिक मूल्य और गुण भी रखता है।

स्त्री अपने पति के परदेश रहने पर अपना काल सदा गृहकार्य में, शिल्प में और बालपोषण में व्यतीत करे। जिसके सास ससुर हैं, उसे तो अपने पालन की कुछ चिन्ता नहीं। और जिसके सास ससुर नहीं हैं, वह स्त्री सदा अपना पालन शिल्पविद्या से करे। ऐसी वैसी स्त्रियों में कभी न बैठे। बड़ी सावधानी से रहे। जिस चाल को कोई बुरा कहे उसे तत्काल छोड़ दे। कभी उसे न करे। इसप्रकार से जिस स्त्री का पति परदेश में हो, वह रहे सहे और वर्ते। जिसका पति मर गया हो और वह विधवा हो गई हो, उसके लिये धर्म यह है कि, प्रथम तो अपने पति के साथ ही सती हो जाय, पर आज कल इस राज्य में सती होना बन्द हो गया है। कोई होने नहीं पाती और सती कुछ पति के सङ्ग भस्म होने ही से नहीं होती। अपने मन को मारना और पति के चरणों में चित्त रख कर ईश्वर का भजन करना यही सती होना है। जिसने मन मारा, उसने सब मारा और जिसने यह न मारा, उसने कुछ भी न मारा। इसलिये विधवा को मन का मारना ही सती होना है। उसको नीचे के नियमों पर ध्यान दे कर चलना चाहिये। उसके लिये इससे बहुत अच्छा होगा।

सब से प्रथम उसको अपने परमेश्वर की आराधना में अपना समय व्यतीत करना चाहिये। शास्त्र आदि को विचारते रहना और संसार के सुखभोग से मन हटा कर ईश्वर की ओर लगाना चाहिये। सदा साधु स्वभाव से रहना, कभी मंगल या उत्सव में न जाना, युवती और पतिवाली स्त्रियों की बातें न सुनना न उन्हें देखना, आभूषण और शृंगार तनिक भी न करना, बाल न काढ़ना, पान न खाना, सुगन्धि न लगाना, पृथ्वी पर सोना और एक समय भोजन करना चाहिये। आठ प्रकार के जो शास्त्र में मैथुन कहे हैं, उनको वह सदा त्यागती रहे। वे ये हैं (१) ध्यान (दूसरे पुरुष का), (२) दर्शन (पुरुषों को निहारना), (३) स्पर्श (दूसरों को अपनी देह छुलाना), (४) आलिङ्गन (किसी को छाती से लगाना व चिपटाना), (५) समागम (किसी से भिड कर बैठना विशेषकर पुरुष से), (६) क्रीडा (किसी से हँसी ठट्ठा करना व कोई खेल खेलना), (७) कथा (राग व रस की बात करना व सुनना) और (८) एकान्त वास (अकेली रहना)।

ईश्वर निमित्त जहाँ तक व्रत हो सकें, वहाँ तक व्रत कर के सन्ध्या के समय खाना। सो भी अति साधारण भोजन। स्वादिष्ट व बलकारक भोजन कभी न करना।

घर के ऐसे काम धंधे करते रहना, जिसमे लोहू अधिक तर हाथों की ओर बहने लगे। जैसे चक्की पीसना व चर्खा कातना। इन दोनों कामों से रुधिर हाथों की ओर अधिक-तर बहता है और इनसे जांघों में चर्बी नहीं बढने पाती और इसी कारण कामाग्नि बहुत ही कम हो जाती है।

इन्द्रियों को सदा मार कर अपने वश में रखना। कभी किसी को प्रबल न होने देना। धर्म और नीति के उपदेश सुनना और सुनाना। अच्छी अच्छी पुस्तकों को पढना। कार्तिक व माघ स्नान करना। निर्जला और निराहार व्रत करना। विधवा के लिये ये ही नियम हैं। जो विधवा इनके विरुद्ध काम करती है, वह दोष की भागी होती है और अपनी निन्दा कराती है।

लगे हाथों तुझको कुछ विधवाधर्म का गुरु भी बताये देती हूँ।

(१) जेठ, देवर, बाप, भाई व अन्य रक्षक के अनुगामी हो वर्ते।

(२) बकवाद और हठ न करे, किन्तु खुदवारी को त्यागे।

(३) क्रोध न करे, दीन हो कर संतोष से निर्वाह करे।

(४) रक्षक की आज्ञा बिना कभी कुछ न करे।

(५) चित्त को चञ्चल न होने दे, स्थिर रक्खे।

(६) युवती स्त्रियों मे न बैठे। सदा बूढ़ी बड़ियों में बैठे और खोटी कुपत्नियों के पास बैठना क्या, उनसे तो बातचीत भी न करे, बरन उनके दर्शन भी न करे।

(७) निकाम कभी न रहे। घर का कुछ न कुछ काम धधा करती ही रहे, जिससे मन चलायमान न होने पावे।

(८) धर्म में निष्ठा रक्खे।

(९) अपने उपार्जित धन से अनाथ बालक और विधवाओं की सहायता व पालन करती रहे।

(१०) पढ़ी हुई होवे तो उपदेश भरी पुस्तकों को आप पढ़े और दूसरों को सुनावे।

यह धर्म तो पतिप्रति के रहे, अब जो दूसरों के सङ्ग वर्तने चाहियें, उनको सुन। स्त्री को उचित है कि, अपने जितने नातेदार हों, सब से प्रेम प्रीति रक्खे। कभी प्रीति को न तोड़े। जो अपने से बड़े हों, उनसे सदा भय करे। जैसा आदर-सत्कार उनका चाहिये, वैसा करे। उनकी आज्ञा भङ्ग न करे। उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई बात न करे। जिस काम को करने को वे कहें, उसके करने में नाहीं न करे, चाहे उसके करने को अपना मन हो वा न हो। जो अपने से छोटे हों, उन पर सदा

प्यार प्रीति रक्खे। उनसे अच्छी तरह बोले, उन्हें शिक्षा दे, लाड़ से रक्खे, प्यार से खिलावे, सदा उनको उपदेश देती रहे और अपने पुत्र के समान समझे। कोई अपराध भी यदि उनसे बन जाय तो मन में न धरे, क्षमा कर दे। उन्हें प्यार से समझा दे कि, फिर वे उस अपराध को न करें। जो अपने बराबर के हों, उन से वैसा ही बर्ताव रक्खे, हँसे बोले, स्त्रियों से बहिन की सी प्रीति और पुरुषों से भाई की सी प्रीति माने। आपस में कभी विरोध न करे। यदि कोई कुछ अनुचित भी कह ले तो बुरा न माने। पर आप किसीसे ऐसी बात न बोले, जो उसे बुरी लगे। सदा सब से प्यार प्रीति और प्रेम का बर्ताव रक्खे।

अपनी सखी सहेलियों में बैठ कर अपनी बड़ाई कभी न करे। रूपवती हो तो कभी किसी का बिदुराव न करे कि, फलानी कैसी है, जैसी तवे की कालौंस व भोंडी सूरत की। इसी प्रकार के और शब्दों से कह कर कभी अपने वचन को बट्टा न लगावे। ऐसी रूपवती की कोई कभी बड़ाई नहीं करती, किन्तु सब जनी यही कहने लगती हैं कि "रूप है तो अपने पति के लिये है, हमें बिदुराती है, सो क्या हमको अपना रूप दे देगी। रूप है तो अपने को। हम क्या किसी से माँगने जाती हैं कि,

और सावधान रहना चाहिये । कोई काम पडा न रहने देना चाहिये । आज का काम कल पर कभी न छोडना चाहिये । इस दोहे को सदा स्मरण रक्खे,

दो० काल करे सो आज कर, आज करे सो अब्ब ।
अवसर बीतो जात है, फेर करेगो कब्ब ॥

काम तो एक बेर करना ही पडेगा । अब किया तो तुम्हें करना पडेगा, पीछे किया तो तुम्हीं करोगी । पर इतना होगा कि, अब न करने से और पडा रहने देने से उसमें हानि हो जायगी और पीछे पछताना पडेगा । घर का काम अच्छे प्रकार करने ही में स्त्रियों की चतुराई प्रकट होती है । जिस स्त्री की वस्तु घर मे तित्तर बित्तर पडी रहती है व कूडा कर्कट रहता है, उसे सब कोई फूहर और मूर्ख कहते है । पाहुना व दूसरा जब जो घर में आता है, पहिले यही देखता है । दूसरी वस्तुओं पर तो वह पीछे ध्यान देता है । चतुर स्त्री किसी वस्तु को घर में फैली व बिखरी नहीं रहने देती । जो वस्तु जहाँ चाहिये वहाँ ही धरती है और उसको अच्छी भाँति सुरक्षित रख कर लाभ उठाती है । मूर्ख स्त्री कुत्ते, बिल्ली, मूसे, चूँस को खिलाकर पछताती है । व्यय दूना करती है और उल्टी फूहर कहलाती है । स्त्रियों को व्यय आदि में भी अधिक सावधानी रखनी चाहिये । घर के भण्डार को

कभी न निबटने दे। व्यय थोड़ा करे। पर इतना थोड़ा भी नहीं कि, जिससे कञ्जूसिन कहलावे अर्थात् व्यर्थ व्यय न होने दे। ऐसा करने से गृहस्थ को बहुत लाभ होता है। जो गृहस्थ व्यय अधिक करता है और विशेषकर स्त्री, तो वह सदा ऋणी ही बना रहता है और दुःख ही पाता है। अधिक व्यय गृहस्थ के लिये विष है। जो स्त्री मिय-वादिनी, व्यय को सोच कर करनेवाली, भण्डार की रक्षक, सुन्दर, स्वच्छवेष, जितेन्द्रिय, धर्म में आरूढ़ और दयावती है, वह लक्ष्मी कहलाती है अर्थात् घर का कोष, धन सम्पत्ति आदि सब स्त्री ही के अधीन है, जो स्त्री चतुर है, वह इन सब बातों को अच्छी भाँति कर सकी है। इसलिये गृहस्थ स्त्री को चतुर होना भी परम उपयोगी है। चतुराई से सब काम अच्छे ही अच्छे होते हैं।

गृहस्थ स्त्री को चाहिये कि, जो उपकार उसने दूसरे के सङ्ग किया है, उसे भूल जाय और जो उपकार दूसरों ने उसके सङ्ग किया है, उसे सदा याद रक्खे, जिससे दूसरे फिर भी उसकी सहायता कर सकें। जो किसी के उपकार को भूल जाता है, उसके सङ्ग फिर कभी कोई उपकार नहीं करता और उसको कृतघ्न कहते हैं। अपना उपकार भूल जाने से दूसरे लोग उसे दूना याद रखते हैं और मानते हैं। जो कोई अपने उपकार को अपने मुख से कहता

फिरता है, उसके उपकार का फल जाता रहता है। जितना उसका फल था, सो उसे मिल गया कि, दस जनें जान गये कि, इसने इसके संग उपकार किया था। यदि वह अपने मुख से न कहता तो जिसके संग उपकार किया था, वह उसको दूना मानता। अब उसने अपनी बड़ाई अपने मुख से करके उसके गुणको नष्ट करदिया। गृहस्थिन स्त्री के लिये इससे यह भी शिक्षा निकली कि, अपने किये की अपने मुख से कभी बड़ाई न करे। क्योंकि अच्छे मनुष्य अपने मुख से कभी बड़ाई अपने आप नहीं करते जब कोई अपनी बड़ाई आप करता है, तब दूसरे नहीं करते, किन्तु उलटी उसकी निन्दा करने लगते हैं। गृहस्थिन स्त्री को शिल्पविद्या पढ़ना बहुत ही उचित है। क्योंकि भले घर की बहू बेटियों को इससे बहुत ही काम पड़ता रहता है। यह विद्या सदा लाभदायक है और विशेषकर विपत्ति व बुरे समय में तो बड़ीही सहायता इससे मिलती है। गृहस्थी का काम इस विद्या से बहुत निकलता है। नित्य के बर्तने की वस्तुओं को शिल्प (कारीगरी) जानेवाली स्त्रियाँ अपने आप बना लेती हैं। तनिक तनिक सी वस्तु के लिये दूसरों का आश्रय नहीं टटोलती हैं और न दाम खोती हैं। जो स्त्रियाँ इस विद्या को जानती हैं, वे कभी दूसरे की सहायता का मुख नहीं तकतीं, वरन अपने हाथ से कर लेती

है। वे दूसरों का काम भी कर के अपना एहसान उन पर कर देती है और अपने काम को जब कभी उनसे आन कर पड़ता है तो सहज में निकाल लेती है।

मैने देखा है कि, मूर्ख स्त्रियाँ जो नहीं जानती हैं, तनिक तनिक से काम के लिये घर घर स्त्रियों की हाहा-सी खाती फिरती है। यदि किसी ने मोह-मुलाहिजे मे व अवकाश पा कर कर दिया तो भला, नहीं तो अपना सा मुख ले कर खिसियानी-सी फिर आती है और पछताने लगती है कि, हाय! हमने क्यों न सीख लिया। जो हम हीं जानतीं तो काहे को इस भाँति हाहा और निहोरे खाती फिरतीं। जो स्त्रियाँ इस विद्या को सीख लेती है, उन के घर में बर्तने की आवश्यकीय सब वस्तुएँ मोजूद रहती हैं और वे अपना समय अच्छे प्रकार व्यतीत करती है। घर का अपने हाथ की बनाई हुई वस्तुओं से सुसज्जित रखती है। कहीं पर्दे, मोइये, खिलौने आदि बनाती हैं, कहीं फूल, बेल बना बना कर टोपियों और अँगरखों में लगाती है। भाँति भाँति के चित्र और लिखने काढ कर घर को शोभित रखती है। अपनी बुद्धि से नित्य नई वस्तुएँ बना बना कर तय्यार करती है। जो स्त्रियाँ इस विद्या में चतुर होती है, वे सब बातों में चतुराई प्रकट करती है और सब बात की चतुराई उनको आ जाती है।

यह रीति की बात है कि, मनुष्य जितनी बात देखता और सीखता है, उससे दूनी अपनी बुद्धि से जान जाता है और बना लेता है।

जो काम अपने को आता हो और दूसरी कोई उस काम के कराने को आवे तो कभी नाहीं न करनी चाहिये। किन्तु बड़े चाव और प्यार से उसका काम कर देना चाहिये, और जो छुटकारा न हो तो नम्रता और स्नेह के साथ कह दे कि, तनिक ठहर कर कर दूँगी। इस को यहीं छोड़ जाओ। इतनी देर पीछे किसी को भेज देना, मैं कर के दे दूँगी अथवा मत भेजना, मैं ही आप भिजवा दूँगी। और यदि यह देखे कि, इसके यहाँ पर छोड़ जाने से इसको सन्देह होगा कि, इसमें से कुछ ले लिया है व कोई ऐसी ही स्त्री हो, जिसका स्वभाव ऐसा ही हो (क्योंकि बहुधा स्त्रियों का स्वभाव ऐसा देखने और सुनने में आया है) तो ऐसी की वस्तु को अपने यहाँ कभी न रक्खे। यदि वह कहे तो भी न रक्खे। उसके सामने ही उसका काम कर दे, परन्तु नाहीं न करे। चाहे उसने भले ही कभी तुम्हारे काम करने को नाहीं कर दी हो। जो उसने कभी पहिले नाहीं कर दी थी तो अब के जब तुम्हारा काम आ कर पड़ेगा तो कभी भी नाहीं न करेगी। वरन बहुत उपकार मान कर मन से

कर देगी। जिसने अपना काम किसी समय कर दिया है, उसके उपकार को तो कभी न भूल जाना चाहिये, किन्तु इसी चिन्ता में रहे कि, इसके काम करने का मुझे कब दाँव व अवसर मिले, जो मैं उससे उऋण होऊँ। जिसने तुम्हारा कभी तनिक सा भी काम कर दिया है तो तुम उसका उससे दुगुना तिगुना काम कर दो और जिसने कभी करने से नाहीं कर दी थी, उसकी निन्दा व पीठ पीछे बुराई कभी मत करो। ऐसा करना बहुत ही बुरी बात है। ऐसों का काम कोई भी नहीं करता है। वह घर घर मारा मारा फिरा करता है। क्योंकि जो कोई किसी का चवाव करता है, उसको कोई अच्छा नहीं कहता। कभी किसी को छुटकारा है, कभी नहीं है। पर दूसरे पर अपने काम न करने का दोष कभी न धरना चाहिये। आप सदा दूसरे का काम कर दे तो सब कोई उसका भी कर देगा। क्योंकि यह दोहा किसी ने ठीक कहा है,

दो० आप भला तो जग भला, नाहिं भला न कोय।
जो तोसों जैसी करे, सो तिहि तैसी होय॥

सुनी हुई बात का विश्वास कभी न करे और एक आध बेर की बात को तो मन में भी न धरे। जब तक कि, अपनी आँख से न देख ले, तब तक कभी भरोसा न करे।

समय नहीं है और न वैसी अब स्त्रियाँ ही हैं और न वैसे अब पुरुष। इसलिये आज कल कुलवती स्त्रियों को मेले और भीड में कभी न जाना चाहिये। भीड ही में क्या; किन्तु जहाँ दो व चार पुरुषों का समूह खडा देखे, वहाँ हो कर निकले भी नहीं। दूसरे पुरुष की परछाहीं तक को भी न पतियाने और विशेषकर उस पुरुष को, जो अपने घर का व नातेदार नहीं है व जिसे तुम भला मनुष्य नहीं जानती हो। यदि जावे तो अपने पति के संग जावे। यदि स्त्री को अपने पति के संग जा कर परदेश में रहना पडे (क्योंकि आजकल बहुधा नौकरी वालों को ऐसा करना पडता है कि, अपनी स्त्री को जहाँ नौकरी होती है, संग ले जाते हैं) तो व्यय आदि अधिक होता है; पर तो भी सुख नहीं मिलता। सब बात की बेचैनी रहती है। इसलिये तुझे अब यह भी बताये देती हूँ कि, जो ऐसा अवसर आन पडे तो क्या करना होता है।

बहुत बेर देखने और सुनने में आया कि, पुरुष केवल अपनी स्त्री ही को ले जाते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि घर में से कोई बूढी-बडी स्त्री संग चली जाती है और दो चार महीने व एक आध वर्ष रह कर आप तो चली आती है और बहू को पति ही के पास

छोड आती हैं । यह तो सब से अच्छी बात है कि, बूढ़ी बड़ी घर की कोई स्त्री परदेश में अपने सग रहे । क्योंकि वहाँ सब परदेशी ही परदेशी होते है । सिवाय पति के अपना जन कोई नहीं होता, जिसे पतियाने और न वहाँ की रीति, चाल-व्यवहार जानती हैं, न वहाँ के लोगों का स्वभाव-बर्ताव व चाल-ढाल पहिचानती है, न यह ज्ञात है कि, कौन कैसा है और कौन कैसा । किसके पास उठना बैठना ठीक होगा और किसके पास नहीं । जो बूढ़ी-बडी अपने सग होती हैं तो किसी बात की चिन्ता नहीं रहती । वह देखे भाले होती है । उडते पखेरू को पहिचानती हैं । वह लडकबुद्धि होती है । अभी ससार को कुछ देखा न भाला । सहज में बहकाने और फुसलाने मे आ जायँ । पर वहाँ कठिन बात होती है, जहाँ ऐसा होता है कि, घर की तो अपने सग कोई न हो, केवल आप और अपना पति ही हो तो वहाँ पर बडी चतुराई और सावधानी से काम करना होता है कि, जिसमे धोखा न खा बैठे । ऐसी दशा में यह उपदेश स्मरण रक्खे कि, जल्दी किसी से प्रीति न जोड ले, न किसी से विरुद्ध रहे । वरन ऊपर ही से प्रीति माने और घर के भेद से किसी को भेद न होने दे । कचा हाल कभी किसी को किसी बात का न बतावे । सुन सब की ले, पर किसी की किसी से

न कहे । अपने मन ही में विचार सब की बात का ठीक कर ले और इसी प्रकार स्त्री पुरुष जिससे अपना काम पड़े, परिचय कर अपने मन में सोच ले कि, यह स्त्री ऐसी है और यह ऐसी । जिसको अच्छी, सच्ची और सुचाल देखे, उससे तो अपना मेल डाले, जिसको बुरी और अयोग्य समझे, उसका धीरे धीरे अपने यहाँ से आना जाना बन्द करने का ढंग निकाले । पर इस प्रकार नहीं, जिससे लड़ाई व विरोध पैदा हो । जिसको भला जान लिया है, उससे दूसरियों को समाचार पत्र करे, जो अच्छे गृहस्थियों के घर हों, उनके यहाँ का आने जाने का व्यवहार डाले । अपनी प्यार प्रीति और चाल चलन से उनके मन में स्थान करके उनकी सहायता की भागी बने । उनको अपने जातिवालों व कुटुम्बियों की भाँति समझे । क्योंकि परदेश में वे ही अपने जातिवाले हैं, जिनसे प्रीति है और अपने दु ख-सुख में हाथ बटाते हैं । इसी प्रकार अपना निर्वाह उनके साथ करे । स्त्री को जब कहीं जाना पड़े, तब कपड़े इस प्रकार ओढने पहिनने चाहियें कि, कोई अग व देह न दीखती रहे । माथे से पाँव तक सब ढका जायँ । कोई निर्लज्ज व फूहर न बताने । राह बाट में कोई देख कर कुछ टोके नहीं । धीरे धीरे अपनी सीधी चाल से राह में चलना चाहिये । यह

नहीं कि, कंधे मटकाकर व अकड़ कर व हाथ हिलाते हुए और पाँव उचकाते हुए ऊँटनी की भाँति लम्बे लम्बे डग धरती व इधर उधर कम की सी गर्दन फेरती और निर्लज्जों की भाँति देखती हुई जाय। जैसा बहुधा बहुत सी स्त्रियाँ करती हैं।

राह में इठलाते, हँसते व चिल्ला चिल्ला कर बातें करते हुए और मुख खोले हुए भी न चलना चाहिये। न जानें, कौन अपना पहिचानता मिल जाय, तो फिर लज्जित होना पड़े। और न जानें अपने मुख मे बोलते में कोई बात कैसी निकल जाय, जिससे लोग हँसें और बोली-ठोली डालें।

जब कभी बाहर जाना हो, सदा दूसरी स्त्री को, जो बूढ़ी-बड़ी हो, अपने संग ले जाना चाहिये। इकेले न निकलना चाहिये।

हे बहिन! यह बातें तो मैंने तुझे वे सुनाई, जो स्त्री को अपने लिये करनी उचित हैं। अब वे कहती हूँ कि, उसे पास पड़ोसियों के संग रह कर कर्म बर्तना चाहिये। सब से पहिले तो इस कहावत को याद रक्खे कि, 'आप भला तो जग भला'। बुरा वही है, जो दूसरे को बुरा समझे। क्योंकि बुरा वही, जिसमें बुराई रहे। इस कारण दूसरी को चाहे वह कैसी ही बुरी क्यों न हो, अपने

मुख से कभी बुरी न कहे। किन्तु भलाई ही करती रहे। जो बुरी होगी, उसको हर कोई बुरी ही कहेगी । हमारे इकली के कहने न न कहने से कोई बुरी न हो जावेगी और न भली । परन्तु अपने मुख से बुरा वचन न निकलना चाहिये । यह गृहस्थिन का धर्म है । सॉची बात आधी लडाई होती है । बुरे को बुरा कहना अपने को गाली दिलवाना है । जो तुम किसी की फूली को टोकोगी, तो दूसरी तुम्हारे टेंट को उलटेगी । पराई निन्दा कभी न करनी चाहिये । चाहे झूँठी हो न सच्ची। पडोसी के साथ पड़ोसी का धर्म है कि, उसके दोष और बुराई को जहॉं तक बने छिपावे, कभी प्रकट न होने दे । क्योंकि आज तुम उसके सचे दोष उघारती हो तो कल वह तुम्हारे झूँठे दोष अपने मन मे बना कर खडे करेगी और दस में प्रकट करेगी । पडोसिन पडोसिन आपस में बहिन बहिन से भी अधिक हैं । जितनी बहिन काम नहीं आती, तितनी किसी समय पर पड़ोसिन काम आ जाती है, बहिन एक बेर लड भी पडती है पर पडोसिन का धर्म है कि, कभी अपनी पडोसिन से नहीं लडती । बरन दु:ख में दुःखी और सुख मे सुखी होती हैं । चाहे सुख में साथी न भी हो, पर दु ख में तो अवश्यमेव साथ देना और हाथ बटाना चाहिये । पडोसिन का जो कुछ काम हो और तुम कर

सकी हो तो अवश्यमेव कर दो। कभी मुख मत मोड़ो। विशेष कर ठीक त्योहार व विवाह आदि के काम में तो निश्चय ही सहायता दो। क्योंकि यही दिन फिर तुम्हारे लिये भी एक समय रक्खा हुआ है।

जो तुम्हें कोई बात अपनी पड़ोसिन की कहनी हो तो उससे एकान्त में बुला कर कह दो। उसके पीठ पीछे कभी मत कहो। मुख की कही हुई बुराई और निन्दा नहीं कहलाती है। बुराई और निन्दा वही है, जो पीठ पीछे कहने में आवे। इसमें इतनी और बुराई है कि, जो तुम किसी की एक बात दूसरे से कहोगी, वह उसीकी एक की चार लगावेगी। जो तुम अपनी पड़ोसिन से उसी के मुख पर कहोगी तो जितनी बात है, उतनी ही रहेगी और पड़ोसिन बुरा भी न मानेगी। क्योंकि तुमने तो उसके भले के लिये उसे एकान्त में ले जा कर समझाया है। तुम्हारी इच्छा कुछ उसकी बुराई और निन्दा करने की तो है ही नहीं। जो ऐसा ही होता तो तुम एकान्त में न कहतीं, दस पाँच जनों के सन्मुख कहतीं।

जैसे पड़ोसी की निन्दा और बुराई से डरना चाहिये, वैसे ही उसकी वस्तु लेने से भी डरना चाहिये। कभी अपने पड़ोसी की वस्तु पर मन न ललचाना चाहिये। जो ऐसा करती है, वह अपनी वस्तु को खोती है। जो तुम

किसी की वस्तु उठाओगी तो दूसरी जब दॉव पावेगी तुम्हारी उठा कर ले जावेगी और जब तुम इस बात में प्रसिद्ध हो जाओगी तो सब कोई जब किसी की वस्तु जायगी, तुम्हारा ही नाम लगावेगी। भले चाहे दूसरी ही उसे ले गई हो। कहावत कहते हैं कि, 'नामी चोर मारा जाय और नामी शाह कमाय खाय।' कभी दूसरे की वस्तु पर लालच नहीं करना चाहिये। वह लालच ही फिर उसे दुःख देता है और उसके नाश का कारण होता है, जिसके पीछे हाथ मलते और सिर धुनते ही बनता है। जैसे, देख शहद की मक्खी को। तू देखती ही है कि, अपने पड़ोसी फूल का रस चुरा कर ले गई और इस पर ले जा कर अपने छत्ते में जा धरा। जब शहद बन गया तो उसी के लालच के मारे उसी में हाथ पाँव फँस गये तो पीछे पछता कर हाथ मल मल कर सिर धुनने लगी और यह दोहा पढ़ने लगी,

दो० शहद पख लिपटाय के, माखी यों पछताय।
हाथ मले औ सिर धुने, लालच बुरी बलाय॥

अन्त को उसी शहद में लिपटी लिपटी मर गई और चींटियों ने नोच नोच खाई। न वह फूलों का शहद चुराती, न उसमें लिपट कर चींटियों का भक्षण होती। इसलिये अपने पड़ोसी के संग अन्याय व चोरी करने मे

डरना चाहिये । जो अन्याय करती है वह सदा दुःख ही पाती है और अन्यायिन कहलाती है । फिर सब उसके साथ भी अन्याय ही करना चाहती हैं । अन्यायिन की कोई सहायता नहीं करती यहाँ तक कि, ऐसी को कोई अपने पास तक नहीं बिठाती । अन्यायिन को पंच और राजा दोनों से दण्ड मिलता है और वह अपने अन्याय का फल पाती है । जैसा अपने को गिने वैसा ही अपने पड़ोसी को भी सब बातों में गिने । जैसे अपने को दुःख और सुख होता है, वैसा ही अपने पड़ोसियों को होता है । जिन बातों को तुम चाहती हो कि, तुम्हारी पड़ोसिन तुम्हारे संग न करे, तुम्हें भी चाहिये कि, तुम भी वैसी बातें उसके संग कभी न करो । पड़ोसी कुएँ की परछाईं है । जैसी बोलोगी व वर्तोगी, वैसा ही व्यवहार मिलेगा ।

कभी किसी ऐसी स्त्री से हेलमेल न करो, जो अपने से नीची हो व अपने से ऊँची हो । जो तुम्हारी पटतर वा बराबर हो, हेलमेल करना उसी से अच्छा है और सोहता है । ओछे की प्रीति में दुःख के सिवाय सुख कभी नहीं मिलता । पहिले तो ओछे जन अपने से बड़े के पास बैठने ही से इतरा जाते हैं और फिर तनिक ही से में तोड़ डालते हैं । उन्हें न तोड़ते लज्जा आती और न जोड़ते हर्ष । किसी प्रकार ओछों की प्रीति में भलाई

नहीं मिलती। सिवाय पीछे के दु:ख के, सुख कभी नहीं निकलता। तिनके की भाँति प्रीति को तोड़ डालना ओछों ही का काम होता है। इसलिये उनसे कभी प्रीति न करे। कहावत भी तो तूने सुनी है कि, 'ओछे की प्रीति बारू की भीति।' ओछे से अच्छे जन कभी न प्रीति जोड़ते और न बिगाड़ते। दोनों भाँति से हानि होती है। इस समय एक कवि का वचन याद आ गया। वह मैं तुझे सुनाती हूँ,

सो० गिरि ते गिरिये जाय, मानसरोवर डूबिये।
मरि जइये विष खाय, मूरख मित्र न कीजिये॥

और एक सवैया भी तुझे सुनाये देती हूँ, जो अकबर बादशाह से कवि गंग ने कहा था,

सवैया

जिहि के ढिग गंग तरंग बहे तिहि कूप तड़ाग पिया न पिया।
जिहिके उरमें हरिनाम बसे तिहिं औरका नाम लिया न लिया॥
जिहिं भाग्यसों आन सुपात्र मिलें सो कुपात्र को दान दिया न दिया।
कवि गंग कहैं सुनु शाह अकब्बर, मूरख मित्र किया न किया॥

ओछे मूर्ख और नादान सब एक ही है। कभी वही मूर्खा कहलाती है, और कभी ओछी। जिसमें इनमें से एक भी गुण है, उसमें ये सब अवगुण हैं। अपने से ऊँचे व बड़े से भी कभी मित्रता न करे। क्योंकि ऊँचे से जोड़ने

में दबना पड़ता है। बराबर का बर्ताव नहीं रहता । और जो बराबरी करनी पड़ती है, उसमें व्यय अधिक होता है और अपनी आय से अधिक हो जाता है । आय से अधिक व बढ़कर चलने में भी गृहस्थ की हानि ही होती है । किसी किसी स्थान पर तो अन्त आ जाता है और निर्धन होना पड़ता है। इसलिये सम्बन्ध भी अपने से ऊँचे से न करना चाहिये । जो ऊँचे घर की बहू आती है तो मा बाप के बल में ससुरालवालों से दबती नहीं है; किन्तु दबा लेती है । और जो अपनी बेटी ऊँचे घर जाती है तो भूखे व नीचे घराने की कहला कर दुःख पाती है और सब के तानेतोरे सहती है और मा बाप बेटी को देते देते घबरा जाते हैं, कहाँ से लावें । जीविका थोड़ी, देना बहुत पड़ता है । क्योंकि सगाई की है ऊँचे घर से । इसी लिये रीति व्यवहार भी कुछ अपनी लाज को कुछ सम्बन्धी की लाज को वैसे ही करने पड़ते हैं । यह नहीं जानते कि, गृहस्थ अपने घर में कैसे काम चलाता है । पर लोकलाज के लिये करना ही पड़ता है । फिर वे इसी करनी के हो भी लेते हैं । इसलिये कभी अपने से ऊँचे व नीचे से नाता न जोड़े । जो बराबर का हो, उसी से व्यवहार रखना और नाता करना अच्छा है ।

जिसका स्वभाव और काम अपने से मिलता है, उसी

मे मेल रक्खे । जिसका न मिलता हो, उससे मेल न डाले । क्योंकि भला की रीति है कि, जोड़े पीछे तोड़ने नहीं है और जब एक का स्वभाव दूसरे से नहीं मिलता व उन के काम एक दूसरे के विरुद्ध होते हैं तो उनसे निभती नहीं है, पीछे टूट ही जाती है । जोड़ कर तोड़ने से न जोड़ना ही भला होता है । इसलिये ऐसे मनुष्यों से जोड़ने में लाभ नहीं, जिनका स्वभाव और काम अपने से मेल नहीं खाता ।

हे बहिन ! सदा सज्जन स्त्रियों के पास बैठना चाहिये और जो कलह रखती है, क्रोध करती है, जिनको चुगली खाने की टेव है व जो चालचलन की खोटी हैं, कड़वा और चिल्ला कर बोलती हैं व घर में से चुरा चुरा कर दूसरी को दे देती है, ऐसी स्त्रियों के पास कभी न बैठना चाहिये । संगति का बड़ा भारी फल होता है । जैसी संगति बैठोगी, वैसी ही बुद्धि आवेगी और वैसी ही टेव पड़ेगी । पेट में से ले कर कोई नहीं आती । पासवालियों को देख देख कर ही सीख जाती है, थोड़े दिनों में उनकी सी चाल-ढाल आये बिना नहीं रहती है । क्योंकि यह दोहा किसी ने ठीक कहा है,

दो० दोष संग ते नसतु है, संग पाय बन जाय ।
कॉजी तें पय फटतु है, दधि डारे जम जाय ॥

पशु पक्षी जड़ जन्तु जे, नेह सगति पाय।
होत चतुर तजि देत हैं, अपने अशुचिसुभाय॥

इसलिये जो सदा अपने से भली, बुद्धिमती और चतुर हो, उसकी सगति में बैठे। बड़ों और अच्छों की धूलि होकर भी रहना भला है। मूर्ख, नीच और बुरों की प्रभुताई भी हानि करती है। जैसे फूल की सगति पा कर कीड़ा ठाकुर के सीस पर चढ़ जाता है, पर वही लकड़ी के सग में रहने से चूल्हे व भट्टी में जलता है। जल, अग्नि की सगति से भाफ बन कर बादल बन जाता है और आकाश में चढ़ जाता है और वही जल माटी के साथ रहने से कीच में पड़ दुर्गन्ध देने लगता है और रूँदा रूँदा पैरों में फिरता है। बुद्धिमती और साधु स्त्री की सगति में स्त्री को रहना चाहिये, जिससे अच्छी अच्छी बातें सीख, लोक और परलोक दोनों को सुधारे।

जो कोई तुम्हारा हित, विचार उपदेश करे, चाहे वह कैसा ही हो, उसका उपकार मानो और उसके उपदेश को सुनो और ग्रहण करो। फिर अपने मन में विचार कर, जैसा होवे, वैसा काम करो। उपदेश करनेवाले के मुख पर उसकी बडाई करो और कहो कि, आपने हमारे ऊपर बड़ी दया और कृपा की कि, ऐसी भली बात बताई। हम आपका कहाँतक उपकार मानें। आप तो हमारी हितू,

और प्यारी हो । सिवाय आपके ऐसी बात कौन बताती
जो अपनी होती है, वे ही ऐसा करती है । दूसरी काहे
करती है? अपनी अपनी सब को पडती है, पर भल
स्त्रियाँ दूसरों का भी ध्यान रखती है ।

जो कोई तुमको बुरा भी उपदेश दे, उपकार उसक
भी मानो । चाहे उपदेश को मन में मत धरो, और त्या
दो । परन्तु उसके उपदेश की बुराई व निन्दा कभी म
करो । दूसरी बुरा उपदेश करे तो भले ही करे, पर तु
कभी किसी को बुरा उपदेश मत दो । बुरा उपदेश दे
से तो न देना ही अच्छा है और उपदेश भी विचार क
देना चाहिये । बहुत सी स्त्रियाँ भला बताते भी बुर
मानती है । ऐसियों के संग भलाई करने में उलटी बुरा
पल्ले बँधती है और फिर यह दोष आता है,

दो० हितहू की कहिये नहीं, जो नर होय अबोध ।
ज्यों नकटे को आरसी, होत दिखाये क्रोध ॥

जो कोई अपने से किसी प्रकार क्रुद्ध हो जाय तो कदापि
उसके सम्मुख उत्तर मत दो । जब तक उसका क्रोध रहे,
मधुर वचन ही मुख से निकालती रहो । उसकी बात और
शब्दों पर कुछ भी ध्यान मत दो कि, वह क्या कह रहीहै।
क्योंकि वह तो इस समय अन्धी है । तुम उसके संग क्यों
वैसी ही बनती हो ? और जो कोई अधिक क्रोध करे तो

उस समय मधुर वचन भी निकालना उचित नहीं है । उस समय चुप ही साधना भला है । क्योंकि एक चुप सहस्र को हराती है । क्रोधवान् को उत्तर देना आग में फूस डालना है, जिससे वह दूनी दूनी भभकती और दहकती है । आग में ईंधन न रहने से आप ही बुझ जाती है । पानी की भी आवश्यकता नहीं होती । जब जाने कि, दूसरी का क्रोध ठंढा हो गया, तब मधुर वचन में विनती के साथ कहो और जो अपना अपराध हो तो क्षमा माँगो और जो उसी ही का अपराध हो तो बहुत नम्रता के साथ उसे जता दो और समझा दो और आप उसका अपराध अपने मन से बे कहे हुए ही क्षमा कर दो । मधुर वचन क्रोध के लिये शीतल जल का गुण रखते हैं । जैसा कहा है,

दो० मधुर वचन से जात मिटि, उत्तमजन अभिमान ।
तनक शीत जल से मिटे, जैसे दूध उफान ॥

आप कभी क्रोध में होने की टेव न डाले । दूसरे के अपराध पर कभी क्रोध प्रकट न करे । केवल वचन ही से उस के दोष को निवारण कर दे । क्रोध की आग बुरी होती है । जो स्त्री क्रोध करती है, उसे वह अन्धी बना देता है और बुरे बुरे काम करा डालता है । इसके रोकने के ये उपाय हैं कि, प्रथम तो जब क्रोध को आता देखे तब वैसे ही सावधान हो जाय और उसको टाल दे और जो आ ही जाय

तो शीतल जल पी लेने व सौ से लेकर एक तक उलटी गिनती गिन जाय, क्रोध जाता रहेगा। क्रोध को न आने देने का एक सुगम उपाय यह भी है कि, गम्भीर बना रहे। बहुत जल्दी किसी काम को न कर बैठे। यदि कोई मूर्ख किसी बात को कह ले तो उसका उत्तर उसे कभी न दे। यह दोहा उस समय याद रक्खे,

दो॰ मूरख को मुख बॉबई, निकसत वचन भुजंग।
ताकी औषध मौन है, विष नहि व्यापत अंग।

यदि तेरे संग कोई स्त्री बुराई की बात करे तो तू कभी उसके संग उसका पलटा मत दे। तूने ईख को देखा है कि, अपने काटने और पेरनेहारे के संग कैसा बर्ताव करती है अर्थात् जो उसे जितना अनरस करता है, उसे वह उतना ही अधिक रस देती है। वह काटकर पछताता है और फिर उसके बीज को बो कर वर्ष भर तक उसके सींचने में श्रम करता है। इसी पर यह दोहा बनाया गया है,

दो॰ जो तू चाहे अधिक रस, सीख ईख की लेइ।
जो तोकूँ अनरस करे, ताहि अधिक रस देइ।

यदि तेरी बैरिन भी तेरे घर आवे, तो बड़े आदर और सत्कार से उठ कर उसका सन्मान कर। और यदि कोई साधारण स्त्री ही आवे तो भी उसका मान और आदर कर के उसे मिठा और ऊँचा आसन दे, हित से बोल, आने

का उपकार मान। जब तक वह रहे, तब तक अच्छी अच्छी बातों में उसके मन को प्रसन्न रक्खे और हर ले। जब चलने को कहे, तब एक व दो बेर तो नाहीं कर, जब जाने ही लगे तब उससे कह कि, फिर भी कभी कृपा करना। क्या करें, हमारा तो छुटकारा नहीं होता। कभी हम भी आवेंगी। मन तो तुमसे भरा नहीं है, पर तुम्हारी बात को भी नहीं टाल सक्ता। कभी कभी जब अवकाश हुआ करे, इधर भी भूल-भटक कृपा किया कीजिये, और हमारे न आने का कुछ ध्यान न धरना। ऐसे कहतीहुई बहुत नहीं, तो द्वार तक तो अवश्य ही उसके संग जावे। चाहे जो कोई आवे, सब के लिये अपने मन में इस चौपाई को धारण रक्खे,

चौपाई

आवे घर कुल कोई नारी। लेहु सनेहु प्रीति करि भारी॥
विनय सहित पूछहु कुशलाता। करहु सनेहप्रेम रसबाता॥

यदि कोई पाहुना अपने घर पर आवे तो उसका सत्कार जितने दिन वह रहे, उतने दिन अच्छे प्रकार अपने वित्त के अनुसार करो। उसके पीछे आप भोजन करो। उसके शयन किये पीछे आप सोओ। उससे अरकमाओ नहीं।

अपने जितने नातेदार हों, कभी किसी से आप न बिगाड़ो। उनकी दो चार बातें भी सह लो। नातेदार से

तो शीतल जल पी लेवे व सौ से लेकर एक तक उलटी गिनती गिन जाय, क्रोध जाता रहेगा। क्रोध को न आने देने का एक सुगम उपाय यह भी है कि, गम्भीर बना रहे। बहुत जल्दी किसी काम को न कर बैठे। यदि कोई मूर्ख किसी बात को कह ले तो उसका उत्तर उसे कभी न दे। यह दोहा उस समय याद रक्खे,

दो॰ मूरख को मुख बॉबई, निकसत वचन भुजंग।
ताकी औषध मौन है, विष नहिं व्यापत अंग॥

यदि तेरे संग कोई स्त्री बुराई की बात करे तो तू कभी उसके संग उसका पलटा मत दे। तूने ईख को देखा है कि, अपने काटने और पेरनेहारे के संग कैसा बर्ताव करती है अर्थात् जो उसे जितना अनरस करता है, उसे वह उतना ही अधिक रस देती है। वह काटकर पछताता है और फिर उसके बीज को बो कर वर्ष भर तक उसके सींचने में श्रम करता है। इसी पर यह दोहा बनाया गया है,

दो॰ जो तू चाहे अधिक रस, सीख ईख की लेइ।
जो तोकूं अनरस करे, ताहि अधिक रस देइ॥

यदि तेरी बैरिन भी तेरे घर आवे, तो बड़े आदर और सत्कार से उठ कर उसका सन्मान कर। और यदि कोई साधारण स्त्री ही आवे तो भी उसका मान और आदर कर के उसे मिठा और ऊँचा आसन दे, हित से बोल, आने

का उपकार मान। जब तक वह रहे, तब तक अच्छी अच्छी बातों से उसके मन को प्रसन्न रख और हर ले। जब चलने को कहे, तब एक व दो बेर तो नाहीं कर, जब जाने ही लगे तब उससे कह कि, फिर भी कभी कृपा करना। क्या करें, हमारा तो छुटकारा नहीं होता। कभी हम भी आवेंगी। मन तो तुमसे भरा नहीं है, पर तुम्हारी बात को भी नहीं टाल सक्ती। कभी कभी जब अवकाश हुआ करे, इधर भी भूल-भटक कृपा किया कीजिये, और हमारे न आने का कुछ ध्यान न धरना। ऐसे कहतीहुई बहुत नहीं, तो द्वार तक तो अवश्य ही उसके सग जावे। चाहे जो कोई आवे, सब के लिये अपने मन में इस चौपाई को धारण रक्खे,

चौपाई

आवे घर कुल कोइ नारी। लेहु सनेहु प्रीति करि भारी॥
विनय सहित पूछहु कुशलाता। करहु सनेह प्रेम रस नाता॥

यदि कोई पाहुना अपने घर पर आवे तो उसका सत्कार जितने दिन वह रहे, उतने दिन अच्छे प्रकार अपने वित्त के अनुसार करो। उसके पीछे आप भोजन करो। उसके शयन किये पीछे आप सोओ। उससे अरकसाओ नहीं।

अपने जितने नातेदार हों, कभी किसी से आप न बिगाड़ो। उनकी दो चार बातें भी सह लो। नातेदार से

निगाडने में फिर बिरादरी में सम्बन्ध कठिन से होता है। नातेदार से बिगाडे पीछे बनना नहीं हो सक्ता है । नातेदार से बिगाड कर अपनी गों के लिये विवाह व ठिक में फिर हाथ पाँव जोड कर उनमे जोडनी ही पडती है। यदि नहीं जोडते हैं, तो दस जनी हँसी और बुराई करती है और काम भी नहीं सरता है । इससे यही उत्तम है कि, पहिले बिगाडे ही नहीं, जिससे पीछे इतनी खुशामद करनी पडे, लोकहँसाई हो और आपस में मन फट जाय । नातेदार और जाति बिरादरी से सदा हेल-मेल ही बनाये रखने में कोई बुराई ठाढ़ी नहीं होती, वरन बुराई टलती रहती है । कोई वैरी खडा नहीं होने पाता है ।

गृहस्थ का वैरी तो स्वप्न में भी न रखना चाहिये । गृहस्थधर्म बहुत ही कठिन है । न जाने, कौन वैरी किस समय क्या उपद्रव उठा खड़ा करे, जिससे गृहस्थ को दुःख हो जाय ।

गृहस्थ को अपनी बिरादरी में आना जाना सदा रखना चाहिये । क्योंकि जो तुम किसी के न जावोगी, तो तुम्हारे कौन आने बैठी है ? जाति में सब ही बराबर हैं और थोडी सी बात में चबाव होने लगता है । बिरादरी का यदि तनिक सा भी बुलावा आवे तो सौ काम छोड़

कर सब से पहिले जाना चाहिये । जो स्त्रियां ऐसा करती है, उनके यहाँ जब कोई कार्य विवाह व उत्सव आदि होता है, तब सब हँसी हँसी से चली आती है । पर जो दूसरों के कभी नहीं जातीं, उनके नौ नौ बुलावे भेजने पर भी कोई उनके नहीं आतीं । यह तो रीति की बात है कि, 'तू मेरे तो मैं तेरे ।' नहीं तो कोई किसी का बिरादरी में दबा व उधार खाये थोड़ा ही है । बिरादरी में तो जो तनिक सा भी कोई काम घमण्ड व अकड़ का करती है तो बिरादरीवाली उस थोड़े से का दसगुना कर देती हैं । बिरादरी में सब काम बहुत समझ बूझ कर करने चाहियें ।

बुद्धिमती स्त्री तो सब प्रकार से चतुर होती है । वे जैसा अवसर देखती हैं और समय समझती हैं, वैसे ही बर्तने लगती हैं । अब मैं कहाँ तक कहूँ । यह थोड़ा सा कह दिया है । अब अन्त में तुझको गृहस्थी के लिये कुछ गृहस्थगुर बतलाती हूँ । इनके अनुसार वर्तने से गृहस्थी की मान प्रतिष्ठा बनी रहती है और अन्तर नहीं पड़ता ।

(१) माता को पृथ्वी से भी बड़ी और पिता को आकाश से भी ऊँचा समझे क्योंकि माता पालती और पिता रक्षा करता है ।

(२) यथायोग्य सब बड़े छोटों का मान सन्मान करना उचित है ।

(३) एकान्त में कभी किसी दूसरे पुरुष के पास न बैठे, चाहे बाप, भाई कोई हो ।

(४) भोजन का प्रबन्ध रसोइया होते भी स्त्री को आप ही करना उचित है ।

(५) छोटों को शिक्षा देनी और बड़ों से लेनी चाहिये।

(६) ऐसा न बोले कि, शब्द बाहर तक सुनाई दे। द्वार पर खड़ी न हो। कोठे पर न चढ़े, और न खिड़की व झरोखों में से बाहर झाँके कि, बाहरवाले देख लें।

(७) अनजानी स्त्री व जिसके आने को पति व घरवालों ने वर्ज दिया हो, न आने दे ।

(८) बजने गहने पहिन कर बाहर न जाना चाहिये। क्योंकि इससे जो मनुष्य उसकी ओर न भी देखते हों, वे भी देखने लग जाते हैं ।

(९) बहुत न डोले, न निरर्थक किसी के घर आवे जावे । इससे सत्कार की हानि होती है ।

(१०) दूसरे के घर बिना बुलाये न जाना । यदि अधिक मेल-मिलाप हो, तो कभी कभी जाने में कुछ डर नहीं है। पर अपने घर का पहिले पूरा प्रबन्ध कर जाना चाहिये ।

(११) पाहुने की सबसे पहिले भोजन की चिंता

करनी चाहिये और यथायोग्य आदर-सत्कार करना चाहिये।

(१२) जो शिक्षा की बात कहे, उसकी बात माननी चाहिये ।

(१३) कपड़ा ऐसा ओढे पहिने कि, न शरीर दीखे और न लाज लगे; किन्तु शरीर की रक्षा भी होती रहे ।

(१४) जिस वस्त्र से न अगरक्षा हुई और न लाज गई, उसका पहिनना न पहिनना समान है ।

(१५) बहू बेटियों को सदा पुरुषों की दृष्टि से अलग होना चाहिये । इसलिये कि, इस अवस्था में सो कर सुध नहीं रहती है । कोई अंग उघाड़ पुरुषों की दृष्टि न पड़ जाय ।

(१६) यदि बाहर पुरुष कुछ वस्तु घर में से मँगावे तो तुरन्त दे देना चाहिये । यदि न होवे तो इसप्रकार टाले कि, बाहर हँसी न होवे व भेद न जान पड़े ।

(१७) आवश्यक वस्तु से कम न करनी चाहिये, जिसमें अप्रतिष्ठा समझी जावे ।

(१८) अपने रोगी की टहल और शुश्रूषा मन से करनी चाहिये ।

(१९) अपने बडेबूढ़ों के जीतेजी कोई धन्धा ऐसा सीख लेना चाहिये जो समय पड़े पर उदरपूर्ण के लिये काम आवे ।

गृहस्थधर्म समाप्त ।

सामान्य शिक्षा।

इतना कह कर दुर्गा बोली कि, अब तक तो तुझको गृहस्थधर्म बतलाया। अब कुछ सामान्य शिक्षा की बातें लगे हाथों और बताये देती हूं। ले, सुन! ससुराल में जब लडकी जाय तो वहाँ बडे शील स्वभाव में रहे। क्योंकि नई बहू के देखने को जब नातेदार व मुहल्ले वाली स्त्रियाँ आती हैं तब यही देखती है कि, बहू की बोल, चाल, उठक, बैठक, आँचल, लाज और चतुराई कैसी है। सो बहू को चाहिये कि, सब से पहिले उठे। अँधेरे ही में मल मूत्र त्याग कर आवे। नई बहू को तो इसका विशेष कर बहुत ही ध्यान रखना चाहिये। सब से पीछे सोने को जावे और सदा पुरुषों से अलग सोवे। क्योंकि बहू को ऐसे रहना चाहिये कि, सासरे में कोई यह न जान सके कि, बहू कब और कहाँ सोई थी और कब तक सोती रहती है।

उठ कर पहिले अपना गहना पाता देख लेना चाहिये कि, कुछ गिर तो नहीं पड़ा है। क्योंकि जो इस समय ज्ञात हो जावेगा तो मिल भी जावेगा; नहीं तो किसी टहलुई इत्यादि की दृष्टि पड़ने पर, फिर न मिल सकेगा।

भोजन भी सब से पीछे करे। पति की गुप्त बात

किसी से न कहे और न सब के सामने उससे बोले। किसी बूढी-बडी की बात में तर्क न दे। कभी नङ्गी हो कर न न्हावे और न शौच को जावे। सदा वस्त्र पहिन कर ही जावे। कुच उघारे न रक्खे। यह महानिर्लज्जता की बात है और स्वास्थ्य के भी विरुद्ध है। महीन कपडा पहिन कर कभी स्नान न करे और विशेष कर तीर्थादि स्थान पर कि, जहाँ सैकडों मनुष्यों की दृष्टि पडती है। मेरी तो यह सम्मति है कि, स्त्री को तीर्थस्थान के लिये जाना ही अच्छा नहीं है। चाहे वह मोटे ही कपडे पहिन कर क्यों न स्नान करे। इस कारण कि, ऐसे स्थानों पर स्नान करना महानिर्लज्जता है। मैंने देखा है कि, बहुत सी स्त्रियाँ मोटे कपडों के विषय में कहती हैं कि, चुभता है, पहिना नहीं जाता और न सँभारा जाता है। इसलिये मेरा उनसे यह प्रश्न है कि, जब उनसे पाव भर व आध सेर के भारी मोटे कपडे नहीं सँभाले जाते तो वे चाँदी सोने के भारी भारी भूषणों को क्यों नहीं उतार कर फेंक देती है? पर उनके लिये तो वे 'चूँ' भी नहीं करतीं। 'भारी भारी' ही पुकारती रहती हैं।

ससुराल में कोई बात ऐसी न करे, जो वहाँ चिढ पड जावे।

जब प्रथम ही जावे तो प्रथम छोटे छोटे काम करने लगे; जैसे बत्ती बटना, साग सुधारना आदि। इसके पीछे हौले हौले फिर दूसरे बड़े काम करने लगे। वहाँ जा कर माता पिता व यहाँ की सखी-सहेलियों से मोह न छोड़ दे। यौवन, निद्रा, धन, विद्या, गुण, रूप, क्रोध, प्रेम, बल, अधिकार और कुनबे के मद में सचेत हो कर चलेगी तो सदा आनन्द पावेगी और सब ठौर प्रतिष्ठा बनी रहेगी। नहीं तो कष्ट भोगेगी और निरादर होगा। जो बहू बेटी इस ओर ध्यान दे कर चलती है, उसकी बड़ाई हुआ करती है।

चौपाई

सरल स्वभाव आँख में शीला। वेष सुहावन वचन रसीला॥

अपनी सखी-सहेलियों तथा नातेदारों से सदा पत्र-व्यवहार रखना कि, परस्पर की कुशल क्षेम ज्ञात होती रहे। पत्रों में आदरसूचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। जैसे,

सखी को—प्राणप्रिय, सुभगे, परमस्नेही, परमनिश्चशील श्री ३—

बड़ी ननँद को—श्रीमती महामान्या, परमपूज्या श्री ५—

छोटी ननँद को—परममाननीय, शीलशिरोमणि श्री ३—

छोटी बहिन को—प्राणप्यारी, नेत्रप्रकाशिनी श्री १—

भावज को—सौभाग्यशिरोमणि श्री १—

जेठानी को—श्रीमती सर्वगुणखानि, शीलवान्, कृपानन्त श्री ५—

देवरानी को—रूपनिधान, शीलवान्, पतिप्रमोदिनी श्री १—

पति को—प्राणनाथ, प्राणजीवन, मम सौभाग्यदायक व कारण श्री ५—

बहू को—कुलदीप, शीलवन्त, सौभाग्यपरिपूर्ण, प्रिय-वादिनी श्री १—

जो वचन भाँवर फिरते समय अपने पति से कहे थे, उनका ध्यान रखना चाहिये। वे वचन ये हैं, जो विवाह समय किये जाते हैं—

(१) मैं दूसरे के घर में निवास न करूँगी।

(२) बहुत न बोलूँगी।

(३) न किसी दूसरे पुरुष से बतलाऊँगी।

(४) जैसे सीता ने, रुक्मिणी ने, पार्वती ने अपने अपने पति की सेवा में मन लगाया, मैं भी उसी प्रकार मन लगाऊँगी।

(५) तुम्हारी (पति की) आज्ञा विना माता पिता के भी न जाऊँगी। राजद्वार में कभी न जाऊँगी।

(६) मद्यपान कभी न करूँगी।

(७) तुम्हारे सिवाय दूसरा पति कभी न करूँगी। पति से कभी द्रोह न माने। न उसकी निन्दा किसी के सम्मुख करे। पति चाहे स्त्री का आदर करे व न करे और चाहे वह परस्त्री से रति भी मानता हो, पर स्त्री को पति की सेवा ही करनी उचित है। उसको इस बात की चर्चा किसी दूसरी स्त्री व पुरुष से न करनी चाहिये। यदि और कोई आनकर करे, तो भी उसकी बात पर ध्यान न दे। ऐसी दशा में कभी अपने पुरुष की बुराई, चवाव व खोटी न कहे, न पति से कभी कोई कटु वचन व उलाहने से बोले। इससे पति को दूनी चिढ़ हो जाती है। पर यदि स्त्री इसकी चर्चा न करेगी और बराबर पति की सेवा करती रहेगी और आज्ञा मानती रहेगी तो पति को स्वयं लज्जा आवेगी। यदि कभी अवसर पावे तो एकान्त में अपने पति से बहुत ही नम्रभाव व शील स्वभाव और आधीनता से निवेदन करे। अपना दुःख प्रकट कर के समझावे, यदि एक बेर में न माने तो फिर कभी अवसर पा कर समझावे। एक बेर, दो बेर, अनेक बेर समझावे। पर सेवा से मुख न मोड़े और किसी से इस समझाने की चर्चा तक न करे, और किसी के सम्मुख उस स्त्री की भी बुराई न करे, न उससे ईर्ष्या व डाह माने व प्रकट करे। जो बात हो, उसको अपने मन ही में रहने दे।

यदि पति इतने पर भी न समझे तो अब कहना छोड दे और संतोष कर बैठे। इसका फल अन्त में अच्छा निकलेगा। क्योंकि तुम्हारी सेवा से पति को लज्जा अवश्य आवेगी। जो स्त्री ऐसा वर्ताव न करेगी, वैसा करेगी, जैसा कि, मूर्ख स्त्रियाँ करती हैं, तो पति चिढ़ कर दूना दूना करेगा। इस उपदेश के विषय में मुझको पुराण की एक कथा स्मरण आ गई, सो सुनाती हूँ। याज्ञवल्क्य मुनि के दो स्त्री थीं। गार्गी और मैत्रेयी। परन्तु दोनों पण्डिता और चतुर थीं। दोनों बहिन बहिन की भाँति रहती थीं। कभी सपत्नीभाव नहीं मानती थीं। स्वप्न में भी ईर्ष्या, द्वेष व लडाई का विचार मन में नहीं लाती थीं। पति से और परस्पर में पूर्ण प्रेम मानती थीं। सदा सुख और आनन्द से रहीं। कभी दुःख व कष्ट नहीं भोगा। अतएव अब भी स्त्रियों को वैसा ही करना चाहिये।

राजा दशरथ के ३६० रानी थीं। पर कौशल्याजी रामचन्द्र की माता, जो सब से बडी रानी थीं, कभी किसी सौत से डाह नहीं मानती थी और न कभी राजा ही से कुछ कहती थीं। किन्तु बराबर अपना पातिव्रतधर्म निबाहती थीं।

कुलीन स्त्री को इतनी स्त्रियों से कभी न बोलना

चाहिये—वेश्या से, छली से, व्यभिचारिणी से, वैरागिनि से, टोना करनेवाली और दुश्शीला से ।

जब कभी ससुराल से माता के घर आवे तो पति के घर की कोई बुराई न करे । इसके सुनने से एक तो माता पिता को दुःख होता है, दूसरे ससुरालवालों से मन फट जाता है । यदि किसी और ने भी स्त्री के माता पिता से ससुरालवालों की बुराई आन कर कह दी है और अब उस स्त्री से पूछा जावे तो स्त्री को उचित है कि, कुछ न कहे। नहीं तो ससुराल जाने पर स्त्री ही का नाम लगेगा और उसे बुरा भला सहना पड़ेगा । वे लोग स्त्री पर कोप करेंगे और अपना नेह हटा लेंगे ।

ससुराल में जा कर कभी पतिप्रेम व अन्य किसी बात के घमण्ड में न आ जावे और वहाँ किसी से वैरभाव न रक्खे । कभी जेठ, देवर व सास, ससुर से अलग करने का विचार न करे। क्योंकि स्त्री के करने से अलग न होंगे। जैसे हाथ की उँगली और लकीरें हाथ से अलग नहीं होती हैं, उसी प्रकार पति के सम्बन्धी भी अलग न हो सकेंगे । वे सब एक हैं । स्त्री ही उनमें निरानी है । स्त्री ही अलग हो जावेगी । वे सब एक रहेंगे। सो ऐसा बर्ताव करना चाहिये कि, स्त्री को भी वे अपने ही में समझने लगें, निरानी न समझें । इसीलिये सास का अपनी माता से

ी अधिक सन्मान करे। क्योंकि ईश्वरकृपा से नववधू भी
कभी दिन इस दशा को प्राप्त हो ही जावेगी। उस समय
बुढ़ापेगी, जब इसकी बहू इसका मान न करेगी, और
स समय वह कैसी बुरी लगेगी। उसी दशा को विचार
र सास की मान-प्रतिष्ठा करनी उचित है।

मास को भी अपनी बहू का लालन पालन सन्तान
से भी अधिक करना चाहिये और बहू के अपराधों को क्षमा
करती रहे, जिससे बहू के मन में सास का स्नेह और डर
बना रहे। सास को उचित नहीं कि, बात बात में बहू को
झिड़के व गाली दे व बुरा कहे अथवा सब के सामने
उसकी बुराई करे व माइकेवालों को कोसे। सास को
अपने बहूपने की दशा स्मरण कर के बहू के संग बर्तना
चाहिये। जब दोनों ऐसा उचित बर्ताव करेंगी तब आज
कल की सी कहासुनी जो घर घर हो रही है, कभी न
होगी। मा और सास दोनों इस विषय में ऐसी मूर्ख बन
रही हैं कि, हँसी आती है। मा जब अपनी बेटी की सुनती
है तब उसकी सास को बुरा भला कहती है। पर जब वही
अपनी बहू के संग वैसा ही बर्ताव करती है तब उन बातों
को निपट भूल जाती है। यह ऐसी अन्धपूर्णता की बात
हो रही है, जिससे कोई घर शून्य नहीं है।

मा बेटी को ससुराल के लिये बिदा करते समय जो

उपदेश करती हैं, उसका पीछे कुछ ध्यान नहीं रखतीं। अपने टेंट को नहीं देखतीं, दूसरे की फूली को नाम धरती हैं। मा का उपदेश बेटी को ससुराल जाते समय यह होना चाहिये कि, बेटी ! तू अपने बालपने के घर से विदा हो कर ऐसे घर जाती है, जहाँ तू किसी को नहीं जानती। पर वहाँ तुझे सदा रहना पड़ेगा। तुझको चाहिये कि, वहाँ तू ऐसा व्यवहार करे कि, वे थोड़े ही दिनों में तुझको जान लें और तू उनकी प्रीतिपात्री बन जावे। सो तू वहाँ जा कर यह करियो कि, अपने स्वामी तथा समस्त कुटुम्बियों से प्रीतिभाव रखियो। थोड़े ही खाने पीने, वस्त्र आभूषणों में संतोष मानियो। परन्तु पति और उसके नातेदारों को अच्छे भोजन खिलाइयो।

ससुराल की बुराई व भेद किसी से मत कहियो। यहाँ तक कि, मुझसे भी मत कहियो। पति की दासी हो कर रहियो और परछाँही हो कर चलियो। कभी अपनी ओर से कुटुम्ब में विछोह मत होने दीजियो। यदि होता होवे, तो यथाशक्ति रोकियो। पति से कभी ननँद व देवर इत्यादि की बुराई करके मन मत फाड़ियो। आप दु:ख व हानि सह लीजियो, पर ऐसा मत होने दीजियो।

मा को भी चाहिये कि, जो अपनी बेटी ससुराल की बुराई करे व अपना दु:ख दर्द सुनावे तो उस बुराई को

न सुने। बेटी के दुःख दूर करने का उपाय उत्तम रीति से बता कर उसको सन्तोष दे दे और आप भी उन बातों का ध्यान करके अपनी बहू के संग भी वैसा ही बर्ताव रक्खे। सास को अपने बहूपने की दशा का भी इस समय स्मरण करना चाहिये कि, हमारी सास भी बिना दोष हमको कैसे कैसे नाम धरती थी और चैन नहीं लेने देती थी। उस समय कैसी कैसी हमारे जी में आती थीं। क्या इन बातों का, जो हम अपनी बहू के संग करती है, इसको मलमला न आता होगा, और वैसे ही विचार यह अपने मन में न विचारती होगी। जिन बातों का अब हम अपनी बहू को नाम धरती है, इन्हीं का हमारी सास हमको नाम धरती थी। पर हम सास का दोष समझ कर उसकी बुराई करती थीं। इसी प्रकार जो यह हमारी बुराई न बखान करती है तो क्या दोष है। मुझे अपना वर्ताव ठीक कर लेना चाहिये।

बहू को चाहिये कि, जैसे सास कहे, वैसे ही करे। विपरीत न करे। जिसके संग बैठने को मने करे, उसके संग न बैठे और इकेले में तो किसी के संग न बैठे। यहाँ तक कि, बाप, भाई के संग भी अकेली बैठने का शास्त्र में निषेध है। क्योंकि स्त्री पुरुष का घी अग्नि का सा सम्बन्ध है।

यदि अपने से कोई लड़े तो चुपकी हो जावे, बोले नहीं, उत्तर न दे । यदि जेठानी, देवरानी अपने सन्तान में प्रर कमावें तो भी आप उनके सन्तान से न भरकसावे । उनको अपनी सन्तान ही का सा प्यार करे । दूसरे की बुराई न करे, भले ही वह अपनी बुराई करती हो । माता व पिता के घर और ससुराल के लिये यह याद कर ले,

चौपाई

भाइ बहिन भानज सँग मीती । सहित सनेह करहु यह रीती॥
वैरभाव जो घर में राखत । ताको उत्तम कोउ न भाखत॥
सहनशीलनिजकरहुस्वभावा । जो सब नर नारी को भावा॥
मैके रह प्रसन्न सब का जी । पतिगृह सास ससुर हों राजी॥

दो० अङ्ग भङ्ग काना बधिर, कूबड़ लङ्गड़ देखि ।
कीजे नाहि उपहासकछु, आपनहित अवरेखि॥

चौपाई

मातु पिता सम सासु ससुर में । कीजे भाव जाय पतिपुर में ॥
सेवा विधि मर्याद समेता । नारिधर्म कह बुद्धिनिकेता ॥
अति आदर करजेठ जेठानी । बालकसम देखत देवरानी ॥
बहिन समान ननँद को जानहु । शुद्धभाव सबही में आनहु॥
सबकी सेवा पति के नाता । दर्शावहु गुण गण की बाता ॥

जो ससुराल में जा कर इस रीति से नहीं बर्तती तो उसके लिये यह कहते हैं,

चौपाई

मैं के पशु यह रही चरावत। नारिधर्म कछु एक न आवत॥

बोलचाल अपनी ऐसी रक्खे कि, कोई नाम न धरे। कभी विना सोचे बात न कहे और कटु वचन तो कभी भी न कहे। क्योंकि इसका घाव बहुत ही होता है। तीर, बर्छी, भाले आदि तो घावों में से निकल भी आते हैं, परन्तु कड़वी बात हृदय के गम्भीर घाव में से कभी नहीं निकलती। कहा भी है,

सो० नावक शर घन तीर, काढ़त कढ़त शरीर ते।
कुवचन तीर अधीर, कढ़त न कबहूँ उरगड़े॥

विन कही बात अपनी चेरी है, पर कही हुई बात अपनी स्वामिनी हो जाती है। इसलिये जिह्वा को सदा अपने वश में रक्खे। समय विचार कर बोले। एकान्त में अपने विचारों को वश में रक्खे। सभा में अवसर पा कर प्रकट करे। यह शस्त्र मनुष्य को ऐसा अद्भुत दिया गया है, जो चलने से कभी घिसता नहीं वरन पैना होता है। अन्य शस्त्र तो चलाने से घिसते और गोंठे होते हैं। सदा प्रिय बोले। क्योंकि इसमें कुछ खर्च नहीं पड़ता। बोल-चाल के ये गुरु याद रक्खे,

(१) बहुत न बोले।
(२) निरी चुप भी न रहे।

(३) समय पर न बोलना फिर पीछे बकना व पछताना दोष गिना गया है ।

(४) दो के बीच में कभी न बोले ।

(५) बिना पूछे भी न बोल उठे ।

(६) बे सोचे समझे न कह दे ।

(७) शीघ्रता से न बोल दे ।

(८) ऊटपटाँग न बके ।

(९) उलाहने भरी व मनभेदी बात सभा में कभी न कहे ।

(१०) सदा प्रिय, यथार्थ, धर्म और अर्थसयुक्त बोले ।

(११) मिथ्या बात व जिसका कोई विश्वास न करे, कभी न कहे ।

(१२) दूसरों को जो बुरी लगे, ऐसी बात भी न कहे ।

(१३) पीछे किसी की बुराई व निन्दा न करे ।

(१४) सत्य, कोमल, मधुर और हित की बातें कहे ।

(१५) अपनी प्रशंसा अपने मुख आप न करे ।

(१६) बातचीत में हठ न करे । इससे मन मैला हो जाता है ।

सासुरे में जा कर कोई काम सास, ननँद की चोरी से न करना चाहिये । जैसे कोई वस्तु घर की किसी को दे देना व बेच देना । जैसा बहू बहुधा करती है कि, अपने

गहने के खो जाने का मिस बना देती हैं और दूसरी स्त्रियों को बेचन को दे देती हैं अथवा अपने दुपट्टे व लहँगों का गोटा किनारी फाड काट कर उखाड लेती हैं और छुपके छिप कर बेच देती हैं और दूसरी वस्तु उनके दाम से मोल मँगवा लेती हैं। इसमें दुगुनी हानि होती है। एक तो यह कि, जो वस्तु छिप कर बेची जाती है, वह आधे दाम की बिकती है और फिर जो इसीप्रकार मँगाई जाती है, वह दूने दाम पर आती है। इस लेखे रुपये में चार आने का माल रह जाता है। घरवाले जब सुनेंगे तो क्लेश करेंगे व अपने मन में खीझेंगे। फिर कोई गहना जो खो भी जायगा तो बहू के कहने का विश्वास न होगा और न फिर कभी बहू को मन कर के बनवावेंगे। इसलिये कभी ऐसा काम न करे कि, जिससे घर की हानि भी हो और क्लेश भी हो और अपना विश्वास भी जाय।

बहुधा स्त्रियाँ ऐसी आती हैं कि, जो बहू को ऐसी सीख देंगी, उनके संग दुःख प्रकट करेंगी, क्षोभ जनावेंगी, प्यारी बनेंगी, काम काज कर देने को कह कह कर व कर कर के बहू के मन में घुस बैठेंगी। पर ये ठगिनियाँ बेर की भाँति होती हैं। जो ऊपर से तो बहुत सुन्दर दीखती हैं, पर उनके भीतर गुठली बडी कडी और

बुरी होती हैं । सो इनमे सदा बचते रहना चाहिये और इतनों से तो सदा ही बचे । व्यभिचारिणी लुगाई से, मूर्ख की दवाई से, झूठी मित्रताई से, आपस की लड़ाई से, अधर्म की कमाई से और ईश्वर की विमुखताई से।

यदि कोई कड़वी भी बात अपने हित की कहे तो उसको अपना हितू जानना चाहिये और जो कुछ वह कहे, सो करना चाहिये । क्योंकि कड़वी औषध बहुत गुणकारी होती है ।

जब कोई पाहुना अपने यहाँ आवे तो उसके सामने कोई बात ऐसी न करे, जो उसके मन को बुरी लगे व वह अपने मन में हमको मूर्ख समझे। कभी किसी के सामने कान, नाक, दाँत आदि न कुरेदने चाहियें । यह पास के बैठनेवालों को ग्लानि उपजाते हैं ।

जो भोजन पिता व पति के घर में मिले, उसको मन से, परमेश्वर की प्रार्थना कर के, भोग लगावे । कभी परोसी थाली पर से न उठे और मन बिगाड़ कर भोजन न करे। क्योंकि,

चौपाई

स्वइ अहार उत्तम कहलावे। जो अपने घर में बनि आवे॥

जब अपने पति व अन्य किसी दूसरे जन को भोजन कराये तो उससे दुःख व चिन्ता उत्पादक बात न कहे ।

हँसमुख हो कर भोजन करावे । जो वस्तु रसोई में हुई होवे, थोड़ी बहुत यथायोग्य सब को देवे ।

जब किसी के घर भोजन करने को जावे व सब के संग में बैठ कर भोजन करे, तो इस प्रकार वर्ते ।

(१) सब से प्रथम भोजन करना आरम्भ न करे और न समाप्त करे ।

(२) सब भोजनों को परस्पर मिला कर भोजन का रंग रूप न बिगाडे कि, औरों को ग्लानि आवे ।

(३) भोजन को कभी न सूँघे और न चवड़ चवड़ कर खावे और न उँगली व हाथ को चाटे ।

(४) बचे हुए भोजन का लालच न करे ।

(५) औरों के आगे के भोजन को न ताके ।

(६) गुठली, छिलके सामने न डाले, जो भिनकें । उनको किसी गुप्तस्थान में डालना चाहिये ।

(७) भोजन इस प्रकार करे कि, दूसरे को घृणा न आवे और न उसको घृणा आवे, जोउस बचे हुए को खावे ।

(८) जब सबजनी भोजन छोडें, आप भी छोडदे ।

(९) सब से पहिले आप भोजन कर के हाथ न धोवे ।

(१०) पान तम्बाकू को इसभाँति न खावे कि, दूसरों को ग्लानि आवे ।

(११) अपने कपड़े इत्यादि भोजन में न सान लें और न मुख व हाथ साने।

(१२) पानी इस प्रकार पीवे कि, धॉस न आ जावे और न दूसरों पर छींटें पड़ें और न अपने कपड़े व बिछौने पर पानी गिरे।

जो कोई अच्छी वस्तु अपने खाने को मिले, उसे सब के संग मिल बाँट कर खावे। कभी अकेले न खावे। जो मिल बाँट कर खावेगी तो दूसरी जनी भी संग बाँट कर खावेंगी। इससे प्यार प्रीति भी बढ़ेगी और दूसरों की वस्तु का स्वाद भी चख लेगी। सब वस्तु तो एक जनी मँगा नहीं सक्ती। कोई किसी ने मँगवाई और कोई किसी ने, तो थोड़ी थोड़ी सब के चखने में आ गई।

अपने वस्त्रों को बड़ी सावधानी से रक्खे। जिसमें मैले-कुचैले न होने पावें कि, अपना स्वास्थ्य बिगड़े और दूसरों को घृणा उत्पन्न हो। अपने गहने को कभी किसी के सामने (जैसे टहलुई इत्यादि) न रक्खे। वरन उनको ऐसे स्थान पर जाने भी न दे और ऐसे स्थान पर रक्खे कि, जहाँ किसी को ध्यान भी न हो कि, यहाँ रक्खा होगा। इसलिये साधारण स्थान में रक्खे, पर वह सुरक्षित होवे।

गहना पहिन कर कभी स्नान इत्यादि को न जावे।

रात्रि को अचेत न सोवे कि, कोई चोर इत्यादि चोरी कर ले जावे। पर यह भी नहीं हो सक्ता कि, नींद में बेचैन रहे। इसलिये ऐसा करे कि, चौथे पहर भोजन कर के सन्ध्या तक निबट जावे और सो रहे। रात के एक व दो बजे उठ बैठे। नित्यकर्म से निश्चिन्त हो कर फिर भोजनों की सामग्री प्रारम्भ कर के सूर्योदय तक निबट जावे और काम-धन्धे में लग जावे। इसी प्रकार करती रहे। इसमें कुछ हानि भी नहीं हो सक्ती और स्वास्थ्य में भी बाधा नहीं पड़ सक्ती और चोरों का भी भय नहीं रहता। सदा अपना आचार एक सा रक्खे। कभी कोई बात ऐसी न करे, जिससे लोग अस्थिर मन कहने लगें। अपने चित्त का एक स्वभाव रक्खे। कभी किसी की हँसी न करे, न चिढ़ावे। कोई बात निर्लज्जता की न करे। जैसे अश्लील गीत गाना कि, सुननेवाले भी सकुचें।

यदि अपने को दूसरे के घर मिलने-भेंटने जाना पड़े तो वहाँ इस प्रकार बर्ते कि, कोई बात निर्लज्जता की प्रतीत न हो। जैसे बहुधा स्त्रियाँ अपने सङ्ग के बालकों को सब के सन्मुख स्तन खोल कर दूध पिलाने को बैठ जाती हैं व स्तन खोले फिरती रहती हैं। सो न करना चाहिये। सदा एकान्त में बैठ कर दूध पिलावे और अँगिया सदा धारण करती रहे।

जिसके घर जाना पडे और वह यदि आग्रह से भोजनों को कहे, तो विना कारण नाहीं न करे। नहीं तो वह बुरा मानेगी।

आजकल की स्त्रियों में यह एक अवगुण है कि, वे शील और गुण तो सीखती नहीं है, पर गहने को मरी मिटती है। गहना शोभा के लिये पहिनते हैं, न कि देह में बोझ डालने के लिये और शोभा को बिगाड़ कुशोभा करने के लिये। स्त्रियाँ बूढी हो जाती हैं; पर गहने का चाव नहीं जाता। मुख में दाँत नहीं, देह में मास और रुधिर नहीं, काम में निर्जीव, पर गहना पहिनने में युवती से भी अधिक अनुराग। गहने का तो इतना चाव होता है कि, कहीं नातेदारी आदि में जाने पर दूसरों तक के भी गहने माँग कर वे पहिन जाती हैं और जो नहीं मिलता तो राँग और काँसे ही का पहिन लेती हैं। पोत ही के बना कर पहिन लेती हैं। यहाँ तक कि, खरबूजों के बीजों के गजरे इत्यादि बना कर पहिन लेती है। गहने से देह चाहे काली ही पड जावे और मैल भी जम जाय, पर उन्हें उतारेंगी नहीं। चाहे दस बीस और पहिना दो। एक एक गहने के ऊपर चाहे दो दो, तीन तीन लाद दो, पर वे नाहीं नहीं करेंगी।

और तो एक ओर रहा, मेरी समझ में इनके सोने,

चाँदी की बेड़ी हथकड़ी और गले में तौक तक डाल दो, तो भी वे नाहीं नहीं करेंगी, दुःख न मानेंगी, सुखी ही रहेंगी। क्योंकि मैंने एक स्त्री का समाचार सुना है कि, एक दिन उसके पति ने उस स्त्री से कहा कि, वह पसेरी जो रक्खी है, तनिक उठा देना। वह बोली कि, मुझसे तो इतनी भारी वस्तु नहीं उठती, तुम ही उठा लो। इस बात को उसके पति ने मन में रख लिया और मुख से उस समय कुछ न कहा। भुलावा दे कर एक दिन उसी पसेरी के टुकड़े करवा कर उनको सोने में मढ़वा दिया और एक हार में लगवा दिया और वह हार अपनी स्त्री को ला कर दे दिया कि, लो अब सब से भारी गहना तुमको बनवा दिया है। ऐसा भारी हार सोने का किसी स्त्री पर न निकलेगा। तुम बहुत कहा करती थीं कि, अमुक स्त्री पर अमुक गहना बहुत भारी है और अमुक पर अमुक, सो अब सब से भारी तुम पर ही निकलेगा। इतना भारी किसी पर न होगा। अब सब में बड़ी तुम ही रहोगी। यह सुन उस स्त्री ने बड़े ही चाव और हर्ष से वह हार पहिन लिया और दिखाने के लिये कई दिन तक पहिने रही और उतारा नहीं। जब कई दिन हो गये, तब उसके पति ने कहा कि, इस हार को तोलो तो सही कि, कितना भारी है। उसने तोला तो वह छ:सेर का

जिसके घर जाना पड़े और वह यदि आग्रह से भोजनों को कहे, तो बिना कारण नाहीं न करे। नहीं तो वह बुरा मानेगी।

आजकल की स्त्रियों में यह एक अवगुण है कि, वे शील और गुण तो सीखती नहीं हैं, पर गहने को मरी मिटती हैं। गहना शोभा के लिये पहिनते हैं, न कि देह में बोझ डालने के लिये और शोभा को बिगाड़ कुशोभा करने के लिये। स्त्रियाँ बूढ़ी हो जाती हैं; पर गहने का चाव नहीं जाता। मुख में दाँत नहीं, देह में मांस और रुधिर नहीं, काम में निर्जीव, पर गहना पहिनने में युवती से भी अधिक अनुराग। गहने का तो इतना चाव होता है कि, कहीं नातेदारी आदि में जाने पर दूसरों तक के भी गहने माँग कर वे पहिन जाती हैं और जो नहीं मिलता तो राँग और काँसे ही का पहिन लेती हैं। पोत ही के बना कर पहिन लेती हैं। यहाँ तक कि, खरबूजों के बीजों के गजरे इत्यादि बना कर पहिन लेती हैं। गहने से देह चाहे काली ही पड़ जावे और मैल भी जम जाय, पर उन्हें उतारेंगी नहीं। चाहे दस बीस और पहिना दो। एक एक गहने के ऊपर चाहे दो दो, तीन तीन लाद दो, पर वे नाहीं नहीं करेंगी।

और तो एक ओर रहा, मेरी समझ में इनके सोने,

चाँदी की बेड़ी हथकड़ी और गले में तौक तक डाल दो, तो भी वे नाहीं नहीं करेंगी, दुःख न मानेंगी, सुखी ही रहेंगी। क्योंकि मैंने एक स्त्री का समाचार सुना है कि, एक दिन उसके पति ने उस स्त्री से कहा कि, वह पसेरी जो रक्खी है, तनिक उठा देना। वह बोली कि, मुझसे तो इतनी भारी वस्तु नहीं उठती, तुम ही उठा लो। इस बात को उसके पति ने मन में रख लिया और मुख से उस समय कुछ न कहा। भुलावा दे कर एक दिन उसी पसेरी के टुकड़े करवा कर उनको सोने में मढ़वा दिया और एक हार में लगवा दिया और वह हार अपनी स्त्री को ला कर दे दिया कि, लो अब सब से भारी गहना तुमको बनवा दिया है। ऐसा भारी हार सोने का किसी स्त्री पर न निकलेगा। तुम बहुत कहा करती थीं कि, अमुक स्त्री पर अमुक गहना बहुत भारी है और अमुक पर अमुक, सो अब सब से भारी तुम पर ही निकलेगा। इतना भारी किसी पर न होगा। अब सब में बड़ी तुम ही रहोगी। यह सुन उस स्त्री ने बड़े ही चाव और हर्ष से वह हार पहिन लिया और दिखाने के लिये कई दिन तक पहिने रही और उतारा नहीं। जब कई दिन हो गये, तब उसके पति ने कहा कि, इस हार को तोलो तो सही कि, कितना भारी है। उसने तोला तो वह छः सेर का

उतरा । तब उसके पति ने उससे हँस कर कहा कि बतलाओ तो सही, वह पसेरी भारी थी व यह हार भारी है, जो गले में कई दिन से डाले फिरी हो ?

यह सुन वह स्त्री बडी ही लज्जित हुई और खिसियायी कि, हाय ! इस गहने ने मुझे लजाया । सो बहिन ! स्त्रियाँ गहना पहिनना तो बहुत चाहती हैं, पर उनके पहिनने के गुण नहीं सीखतीं । गुणवती स्त्री को गहने की कुछ आवश्यकता नहीं है और न शृंगार की । अपने पति को मोहने के लिये उसके गुण ही शृंगार और गहने बहुत हैं ।

जो स्त्री धनवती है, वे तो बनवा भी लेंगी, पर जिसके धन नहीं है, वह क्या करेगी ? कहाँ से बनवावेगी ? तो क्या वह कुढ़ कुढ ही मर जावे व अपने पति को छोड दे व गहनेवाली स्त्रियों के पास न बैठे व किसी के सन्मुख न आवे और किसी से बातचीत न करे । ठिक, त्यौहार में नातेदारों के न जावे, इस कारण कि, उसके पास गहने नहीं हैं । नहीं, नहीं, उसको अपने मन में भी कभी इस बात का ध्यान व सोच विचार न करना चाहिये कि, मुझ पर गहना नहीं है, मैं इन बातों को कैसे करू ? स्त्री को सदा ऐसा शृंगार रखना चाहिये और गहने पहिनने चाहियें, जो पहिने पीछे न कभी उतरें और न बिगडें न

घिसें, न टूटें फूटें। वरन नित्त नये चमकते रहें। स्त्री को चाहिये कि, वह ऐसा शृंगार करे और गहने पहिने,

मिस्सी–मिस के छोडने की।

पान व मेंहदी–जग में अपनी लाली बनाये रखने की।

काजल–शील का जल आँखों में देने का।

महावर–यह कि वर (पति) महा (बडा) है।

बेंदी–बदी को तजने की।

नथ–मन को नाथने की कि, जिससे बुराई न हो।

नथ का मोती–सबों में मोती की सी आब रखने का।

टीका–कलक का न लगने देने का, यश का लगाने का।

बन्दनी–पति व गुरुजनों की वन्दना करने की।

पत्ते–पत के अथवा अपनी पत रखने के।

कर्णफूल–कानों से दूसरे की बडाई सुन कर फूलने के।

हँसली–सब से हँसमुख रहने की।

मोहनमाला–सब के मन को मोह लेने की।

हार–अपने पति से सदा हारने का।

बाजूबन्द–पति की आज्ञा में हाथ जोडे खड़ी रहने के।

वरा–यह समझने के कि, पति ने मुझको वरा (बिवाहा) जिससे मुझको सुख मिला।

कडे–किसी से कडी न बनने के।

नॉक-किसी से नोंकी तिरछी न रहने की। सीधी चाल चलने की।

चर्री-चोरी न करने की।

दुआ-सब के लिये दुआ (आशीर्वाद) करने के।

छल्ले-छल को छोड़ने के।

आरसी-दूसरे पुरुषों व गुरुजनों से आर रखने की।

पायल-सब बूढ़ी-बड़ियों के पाँव लगने की।

पायजेब-ऐसे काम करने कि, जिससे जेब पावे।

बिछुवे-अपने पति से व घर में विद्रोह न करने के।

सब बजने गहने-स्त्री के अच्छे कामों की ध्वनि सब के कानों में पहुँचाने के।

स्त्री के जो आठ अवगुण कहे हैं, उनको तजती रहे।

चौपाई

नारि स्वभाव सत्य कवि कहहीं। अवगुण आठ सदा उर रहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक अशौच अदाया॥

अपने गुरुजन तथा पति, सासु, ससुर इत्यादि का जो अपने से आयु में बड़े हों, उनके नाम उनके मान और आदर के कारण कभी न लेवे। जो अपने से किसी बात में अधिक हो, उसका भी नाम नहीं लेते है। और स्वामी का नाम तो चाहे वह गुण व आयु में छोटा भी हो, कभी नहीं लेते है। हाँ, अपने से छोटों का नाम तो ले सके

र. व ऐसों का, जिनसे आदर से नहीं बोलते हैं।

स्त्री के लिये पति, इसलोक और परलोक दोनों में बड़ी वस्तु है। इससे अधिक उसके लिये कोई अन्य वस्तु नहीं है। इसलिये स्त्री को तीर्थस्नान व यात्रा करनी उचित नहीं है। उसको तो पतिसेवा ही तीर्थस्नान, यात्रा, दर्शन सब कुछ है।

यदि किसी स्त्री की ऐसी ही इच्छा हो तो उसको चाहिये कि, कभी अकेली यात्रा को न जावे। सदा घरवालों के सङ्ग जावे। यदि ऐसा हो कि, घर में कोई पुरुष न हो और आप ही आप हो, तो जब तक विश्वासपात्र मनुष्य न मिले, कभी यात्रा के लिये प्रस्थान न करे। यात्रा को जब जावे तब राह का पूरा खर्च धर ले। सङ्ग साथ में जावे। राह में कभी अनजाने मनुष्य का विश्वास न करे। क्योंकि बड़े बड़े ठग और ठगिनियाँ मिलती हैं, जिनके विषय में कभी कुछ सन्देह भी नहीं होता है। पर वे एसे ऐसे प्रपञ्च ठगी के रचते हैं कि, अन्त को जान तक जाती रहती है। मैंने इसके विषय में दो पुस्तकें ठगप्रपञ्च और ठगगोष्ठी नामक अलग लिखी हैं। उनमें सविस्तर वृत्तान्त हैं। पर एक वृत्तान्त यहाँ भी तुमको सुनाती हूँ। जो मैंने न्यू इण्डिया (New India) समाचारपत्र में पढ़ा था और जो सन् १८८६ ई० में हुआ था।

एक स्त्री बुलन्दशहर से अपनी ससुराल मथुरा को

जाती थी, बहुत गहना-पाता पहने हुए थी। ठगों ने इ
को भाँपा और रास्ते में एक बुढ़िया को भेजा, जिसने अ
कर यह प्रपञ्च रचा कि, बहुत ही फटे कपड़े पहिन क
जाड़े में सिकुड़ी हुई उसी राह पर जा बैठी और फूट फ
रोने और चिल्लाने लगी। उस स्त्री ने इसकी हीन दश
देखकर अपना रथ ठहरवा दिया और इससे वृत्तान्त पूछा।
तब बुढ़िया बोली कि, मथुरा में मेरी एक बेटी है, उसको
बहुत दिन से देखा नहीं है, अब वह माँदी बहुत है और
मुझको उसने बुलाया है। सो उसके देखने को जाती हूँ,
पर चला नहीं जाता। पास पैसा भी नहीं, जो सवारी कर
लूँ। ओढ़ने को कपड़े नहीं, जाड़े के मारे मरी जाती हूँ।
लड़की वहाँ मर जायगी और मैं यहाँ। यह सुन उस स्त्री
को दया आ गई। उसने अपने रथ में उस बुढ़िया को
बिठा लिया। जब सन्ध्या हुई, तब उस बुढ़िया ने अपने
पास में कुछ लड्डू व मिठाई (नशे के) निकाल कर उस
स्त्री को खाने को दिये और उसके पैर दाबने लगी। इतने में
कुछ नशा आने लगा और उसे झट नींद आ गई। ठगिनीने
कुल गहना-पाता उतार गाँठ बाँधा और उस स्त्री के गले में
ताँत की फाँसी डाल उसे मार गई।

सबेरे जब नौकरों ने देखा कि, शौच आदि के लिये
रथ थाँभने की आज्ञा आज अभी तक नहीं हुई तब उन

बुढ़िया को टेर दी। पर वहाँ वह कहाँ ? जो उत्तर दे। इस पर उस स्त्री को टेरा गया; पर वह मर चुकी थी। बोले कौन ? इस पर पर्दा उघार कर देखा गया तो यह दशा पाई कि, गले में ताँत है और मरी पड़ी है।

बस इसी प्रकार बड़े बड़े बुद्धिमानों को ठग, ठगिनी धोखा दे कर माल ले लेते हैं। जैसे,

(१) स्त्री के सम्मुख नंगे हो कर उसे लज्जित कर दिया। उसने आँख मूँदी व फेरी और माल उठा लिया।

(२) रुपया डालता हुआ आगे को चला गया। जब वह रुपया लेने को माल पर से उठी कि, दूसरे ठग ने पीछे से माल उठाया और वह चम्पत हुआ।

(३) विष पान करा कर।

(४) तम्बाकू में कुछ मादक पदार्थ मिलाकर और बेसुध करके इत्यादि। इसलिये बहुत सावधान रहना चाहिये और अनजाने मनुष्य का कभी विश्वास न करना चाहिये, न दूसरों की दी हुई वस्तु खाने व अन्य कोई लोभ की बात करे।

यात्रा को जब जावे, तब गहना-पाता कभी पहिन कर न जावे। जैसी कि, मूर्ख स्त्रियाँ बहुधा पहिन कर जाती हैं। इसी से ठग पीछे लग लेते हैं और अवसर पा कर लूट मार कर लेते हैं। कभी कभी तो जान से भी मार डालते हैं। गहने को एक पोटरी व सन्दूक में बन्द करा

के भूँकने का शब्द आ रहा हो व आग जलती हुई दृष्टि पड़े, चले। यदि दो राह ऐसी मिलें, जहाँ यह चिह्न दृष्टि पड़ें तो जो पास जान पड़े, उसको प्रथम चले। इस क्रिया से राह मिल जावेगी।

जब ठिकाने पर पहुँच जावे तब अपने मेल में ठहरे। जहाँ ठहरे, वहाँ के स्थान को भली भाँति चिह्नित कर ले। भीड़ में न जावे, जब उछीर हो, तब ही आवे। अतएव या तो सब से पहिले या सब से पीछे हो आवे।

भीड़ में यदि बिछुड़ जावे तो हड़बड़ा कर ढूँढती न फिरे। एक स्थान पर बैठ जावे। वहाँ से अपने सगियों को देखती रहे और ऐसे स्थान पर बैठे, जहाँ से सब निकलते, पैठते हों और आते जाते दीखें। जो स्थान निकट होवे और राह भी मालूम होवे तो डेरे पर चली आवे अथवा जो अपना जानता पहिचानता मिल जावे, उससे सदेशा भेज दे कि, मैं यहाँ बैठी हूँ, आन कर लिवा जावो व उसके सङ्ग आप चली जावे अथवा अपने मनुष्यों को वहाँ बुला भेजे।

स्त्रियों को तीर्थयात्रा में व्यर्थ कष्ट उठाने पड़ते हैं। उनका फल दुःख और निंदा इत्यादि के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता है। मेरी समझ में स्त्री सदा पति-व्रता रह कर पतिचरण में लवलीन रहे। इतना तो तुझ

को बता चुकी, परन्तु थोड़ा सा अभी और भी बताना शेष है। ये शिक्षाएँ स्मरण रखने योग्य है।

(१) जो प्रतिष्ठा बेलाग हो, उत्तम वही है।

(२) शोक दूर करने के लिये काम में लगे रहने से उत्तम कोई दूसरा उपाय नहीं है।

(३) आलस्य और अपराध निनाश की जड है।

(४) चाकर के हाथ से स्वामी की आँख अधिक काम करती है।

(५) सासारिक सुखों से भागता रहे तो वे स्वयं हमारे पीछे दौड़ेंगे।

(६) जीवन ऐसा रखना चाहिये कि, लोग कहें कि, कोई थी।

(७) बुराई करने से बुराई सहना अच्छा है।

(८) प्रत्येक जन का स्वत्व पहिचाने।

(९) जो भेद कहने योग्य न हो, उसको कभी मुख से न निकाले।

(१०) जो स्त्री अपने से बडी हो, उसके संग हँसी कभी न करे।

(११) यदि कभी किसी का भला होता हो तो भाँजी न मारे।

(१२) भलाई करनेवाली भलाई भूल जाती है; पर

जिसके संग भलाई की जाती है, वह कभी नहीं भूलती।

(१३) मूर्ख स्त्री की यह बड़ी पहिचान है कि, वह बिना पूछे बोल उठती है।

(१४) कभी किसी को दूसरे के सम्मुख लज्जित न करे।

(१५) पाहुने से कभी कुछ काम न ले वरन आप उसका काम कर दे।

(१६) किसी काम व लोभ के लिये अपनी प्रतिष्ठा न घटावे।

(१७) कभी झगड़ा न रिसावे।

(१८) बड़ों की सेवा करे और छोटों पर कृपा रक्खे।

(१९) जब तक द्रव्य से काम निकले, प्राण को भय में न डाले।

(२०) धन वही उत्तम है, जिसमे प्रतिष्ठा बनी रहे।

(२१) समय का एक एक क्षण भी बहुमूल्य है, इसलिये उसको व्यर्थ न जाने दे वरन काम में लावे।

(२२) सन्तोषी सदा सुखी और विजयी होता है।

(२३) निरभिमानता से प्रतिष्ठा बढ़ती है और अभिमान से घटती है।

(२४) चतुर वही है, जो दूसरों को देख कर शिक्षा ग्रहण करे।

(२५) मित्रता का निर्वाह चाहे तो मित्र से उसकी वस्तु कभी न माँगे ।

(२६) जीविका की चिन्ता में ऐसी लिप्त न हो जावे कि, ईश्वर को बिसार दे ।

(२७)अपने घर की बात दूसरे घर जा कर कभी न कहे।

(२८) खोटी कुपत्ती स्त्रियों से कभी मेल न रक्खे। काम पड़े पर चतुराई से काम निकाल ले ।

(२९) कलह एक प्रकार की आग है, जो सहने से दबती, शील से बुझती, पर मूर्खता और क्रोध से सुलगती और भभक कर जल उठती है ।

(३०) जो शिक्षा औरों को करे, पहिले उसे आप कर दिखावे ।

(३१) काम पूर्ण हुए बिना मन का भेद कभी किसी से न कहे ।

(३२) कभी किसी के गहने कपड़े की होड़ न करे; किन्तु गुण की होड़ करे ।

(३३) जो औरों की बुराई आन कर अपने से कहेगी, वह तुम्हारी बुराई दूसरों से जा कर अवश्य करेगी ।

(३४) दो की लड़ाई में सदा न्याय की बात कहे, पक्षपात न करे अथवा चुप हो जावे ।

(३५) कपड़ा कहता है कि, जो तू मेरी लाज

रक्खेगी तो मैं तेरी रक्खूंगा।

(३६) पाप करने में जो जी धड़कता व घबड़ाता है, यही लक्षण ईश्वर की ओर से पाप के निषेध का है।

(३७) मेला-ठेला, भाँकी-झाँकी और भीड़-भाड़ में फिरने से धर्म में बट्टा लगता है।

(३८) नाई, मालिन, मोहितानी इत्यादि के भरोसे कभी सगाई न करे।

(३९) बहू को सास के विषय में यह न समझना चाहिये कि, मेरे पति की कमाई खाती है और सास को बहू के खाने पीने की सुध और उसमें प्रेम रखना चाहिये तो दोनों में कभी लड़ाई न होगी।

अब तुझको यह बता कर कि, कौन किससे वश होता है, इस विषय को समाप्त करती हूँ।

(१) मित्र सत्यता से, (२) शत्रु शीतलता से, (३) कृपण धन से, (४) गुरुजन सेवा से, (५) छोटे क्षमा से, (६) विद्वज्जन शिक्षा से, (७) मूर्ख रमणीय कथा से, (८) स्त्री प्यार से, (९) पुरुष सेवा से, (१०) अभिमानी प्रशंसा से, (११) क्रोधी शान्ति से, (१२) अपने और सगे स्नेह से, (१३) पराये उपकार से, (१४) पड़ोसी दया से, (१५) संसार मित्र भाव से और (१६) स्वामी भक्ति से।

अब रात्रि बहुत हो गई है, नींद भी आती है। चल, सो रहें। कल फिर कहूँगी कि, स्त्री को घर के काम धन्धे किस प्रकार करने चाहियें और वर कैसे करना चाहिये। जो चतुर स्त्रियों से सुना और देखा है और जो कुछ मेरे वर्ताव में आया है, वह सब कल सुनाऊँगी। उठ, दिये की बाती निकाल कर सो रहें। भोर उठ कर इसका स्मरण कर लीजो, भूलियो मत।

घर का काम-धन्धा।

— ※ —

अगले दिवस रात्रि को फिर दुर्गा जब घर के धन्धे से निश्चिन्त हुई तब अपनी बहिन मोहनी को पास ले कर बैठी और घर के काम-धन्धे करने की रीति यों बताने लगी कि, हे बहिन ! इसमें बड़ी सुगमता पड़ती है कि, समय का विभाग कर ले कि, उस समय में फलाना काम करना और उस समय में इतने काल तक फलाना काम करना। ऐसा करने से गड़बड़झाला नहीं होने पाता है। सब काम अपने समय पर अच्छे हो जाते हैं और सोचाविचारी भी नहीं करनी पड़ती कि, कौन सा काम कब करें। अपनी अपनी बारी से सब काम होते चले जाते हैं। इसलिये जैसा अपने घर का काम देखे, उसी भाँति समय को बाँट लेवे।

किसी के घर में कोई सा काम अधिक रहता है और किसी के घर में कोई सा। इसलिये मैं नहीं बता सक्ती कि, किस प्रकार के बाँटने से काम सुभीते से हो जायँगे। स्त्री को चाहिये, जैसा देखे वैसा ही कर ले। पर तो भी मैं साधारण रीति समय के बाटने की कहे देती हूँ। समय को यों बाँटे।

(१) भोर ही उठ कर शौच आदि से निपटने, घर की शुद्धता करने, बासन आदि माँजने में दो घंटे, (२) स्नान ध्यान एक घंटा, (३) विद्या की चर्चा तीन घंटे, (४) भोजन बनाना तीन घंटे, (५) सखी-सहेलियों में बैठना एक घंटा, (६) शिल्पविद्या दो घंटे, (७) सन्ध्या का भोजन तीन घंटे, (८) बालशिक्षा और परीक्षा दो घंटे, (९) नौकरों का काम देखना, घर की धराढकी और घर का हिसाब किताब दो घंटे और (१०) शयन छः घंटे।

यह मैंने सब ही के लिये कह दिये हैं। जिसके घर में टहलुये हैं, वे उनके करने का काम आप न करें, उनसे ही करावें। इसप्रकार जो समय बचे, उसे दूसरे लाभदायक कामों में लगावें। जैसे विद्याचर्चा, शिल्पविद्या व बालशिक्षा में। और जिनके यहाँ इतना काम नहीं है, वे इसको घटा बढा कर मनचाहता कर लें। जिसप्रकार

हो, उतना उतना समय नियत कर लें तो सब काम सावधानी से होते हुए चले जावेंगे और भङ्ग न पड़ने पावेगी। बहुत सा समय जो सोचाविचारी में चला जाता है, वह बच रहेगा। बहिन! यह समय बड़ा अमूल्य है। इसके बराबर कोई दूसरी वस्तु महँगी नहीं है। संसार भर की पूँजी और धन एक ओर और तनिक सा समय एक ओर। यदि कोई सगरी पृथ्वी का धन दे और कहे कि, कल की रात्रि का एक पल भर का समय, जो बीत गया है, मुझे ला दो, तो कोई ला सक्ता है? कभी नहीं। जो समय बीत गया, उसके लिये चाहे एक पृथ्वी के पदार्थ क्या, सब विश्व भर का धन मिला कर दो, पर वह बीता हुआ पल भर का समय नहीं आवेगा। समय कभी ठहरा हुआ नहीं है। ऐसा वेग भजता है कि, कोई इसको नहीं देख सक्ता कि, कहाँ हो कर भाग गया? आँखों के सामने भागा हुआ जाता है, पर देखने में नहीं आता है। जो समय तुम्हारे बात करते करते था, वह बात कही नहीं कि, सहस्रों कोस भाग गया और अब हाथ नहीं आवेगा। इसलिये इस अमूल्य समय को सोचाविचारी में कभी न खोना चाहिये। क्योंकि वह समय वृथा जाता है। एक बेर सोच विचार कर अपना समय बाँट लेना चाहिये और फिर उसी के अनुसार काम करते रहना चाहिये। सबेरे उठ,

कर शौच आदि जा, हाथमुख धो, जैसा हो, वैसा करना चाहिये। जो नौकर हों तो घर का काम-काज, झाड़ा-बुहारी, खाट, बिछौने आदि उठाना, धरना उनसे करा ले। पर आप इतना अवश्य करे,

चौपाई

नित उठि देखि लेउ निज धामा। निगरो रनो होइ जो कामा॥

पीछे आप स्नान कर के अपने पढ़ने में लग जाय। पहिले अपना कल का पढ़ा हुआ पढ़ जाय और इसी प्रकार जिनको पढ़ाती हो, उनका भी सुन जाय। फिर अपना आज का नया पाठ पढ़े और याद कर ले, और करा दे। जो नौकर-चाकर न हों, तो आप सब काम करे। विद्या से निश्चिन्त हो भोजन आदि बनावे और भोजन बनाने में इन बातों का ध्यान रक्खे, जिससे बहुत देर न लगे और असावधानी न हो जाय। जितनी सामग्री भोजन की लेनी चाहिये, सब को निकाल कर एक बेर चौका में ले जा धरे। सब वस्तुओं को पहिले याद कर ले कि किसी को भूली तो नहीं है, जिसके लिये पीछे उठना पड़े। पहिले पकाने और आटे गुंदने के बर्तनों को रक्खे। फिर जितने आग पकड़ने और बटले आदि उतारने के हैं और कटोरे, थाली, पत्थर और लोहे के जो बर्तन हों, सब को रख ले। ईंधन जितना जरूरी

की बातें करना अच्छा है व आपस में, हँसी चुहल की बात करे। पर इतना ध्यान रहे कि, वे सब चतुराई की हों। ऐसी न हों कि, जिनमें गँवारपन पाया जाय और फिर आपस में लड़ाई व कहा- सुनी होने लगे। सखी सहेलियों में केवल, मन बहलाने को बैठते हैं। जिस से सब दिन के काम-काज से दो घड़ी मन बहल जाय इसलिये नहीं कि, आपस में वैर बँधे। हँसी वहीं तक अच्छी है, जहाँ तक वह हँसी है। पर जहाँ यह खसी होने लगी, वहीं उसको छोड़ देना चाहिये। क्योंकि 'लड़ाई का घर हाँसी और रोग का घर खाँसी' यह कहावत चली आती है।

जब यह मनबहलाव हो चुके, तब जीविका के लिये शिल्पविद्या को हाथ में लेना चाहिये। शिल्पविद्या से जो कुछ प्राप्ति होती है, उसपर केवल स्त्री ही का अधिकार है। पति का नहीं होता। यह बहुत ही उत्तम बात है कि, स्त्री आप पैदा करे और अपने व्यय के लिये अपने पति से कुछ न माँगे। गहना कपड़ा आप अपने पैदा किये हुए धन से मोल ले, और जो अपने पति पर कभी रुपये की भीड़ परे, तो अपने पास से निकाल कर दे दे, जिस से उसे किसी से उधार न लेना पड़े, और घर की पत और साख न जाय। घर का भेद न खुल जाय और उलटा

ब्याज न देना पड़े। अपने पति की पत रह जाय और लाभ का लाभ हो जाय। जो स्त्री इस प्रकार करती है, वह कभी विपत्ति आने पर दु ख नहीं भोगती। कभी रुपये के लिये दूसरों का मुख उधार लेने को नहीं ताकती और उसका कोई काम पडा नहीं रहता, सब सर जाते हैं। बहुधा या ऐसा देखने में आया है कि, स्त्रियाँ चरखा कातती है व बहुत हुआ,-तो कण्ठी माला व पोत के जंजीरें पोहती है। निदान शिल्पविद्या के ऐसे काम करती है, जिनमें पचावट और परिश्रम तो बहुत होता है, पर दाम थोडे मिलते हैं। महीने भर में डेढ दो रुपये से अधिक नहीं मिलता है। पर शिल्पविद्या की वे बातें सीखनी चाहियें कि, जिनमें कम से कम चार आने व आठ आने नित्त तो मिला करें।

इस समय तो तुझे और और बातें बतानी हैं, नहीं तो थोड़ा सा तुझको इस विद्या का भी हाल सुनाती और बताती कि, इस विद्या में से क्या क्या सीख लेना चाहिये, जिससे जीविका अच्छी हो जाय। अभी तेरी समझ भी ऐसी नहीं है कि, थोडे से समझाने ही से इस विद्या की बातें तेरी समझ में आ जावें। यह अधिकतर हाथ से करा कर बताने से आती हैं। सो भी, जब कि अच्छी भाँति से माथा पचाया जाता है। तो भी कुछ कुछ बातें इसकी तुझको किसी दिन बताऊँगी। अब के थोडे

ही दिन ठहरूँगी सो पूरी बात न बता सकूँगी । जब कभ
अवसर होगा, तब बताऊँगी । शिल्पविद्या के पीछे सन्ध्य
का भोजन उसी प्रकार बनावे जिस प्रकार सबेरे किय
था । इससे छुट्टी पा कर अपने नौकरों का और घर क
जो काम-काज शेष रहा हो, उसे देखें कि, कौन सा काम
बिगड़ा हुआ है और कल किस काम के करने की चिन्ता
करनी होगी व नौकरों ने जो काम किया है, वह किस
भाँति हुआ है । वह अच्छे प्रकार हुआ है कि, नहीं ?
और जो काम कल के लिये चाकरों को बताना हो, वह
इस समय बता दे, जिससे वे बिना पूछे कल उसको
करने लगें । इसके पीछे अपने घर का हिसाब किताब
और घराढकी जो कुछ करनी हो, वह कर ले । फिर
निश्चिन्त हो कर बालकों को अपने पास बैठा कर उनसे
उनका पाठ पूछे और जहाँ भूलें, वहाँ उनको बता दे ।
उनको शिक्षा और उपदेश भरी हुई कहानियाँ सुनावे ।
इस पीछे आप सो रहे । छ घंटे का सोना प्राणी के
लिये बहुत ठीक है । इससे थोड़े व बहुत में हानि है ।
फिर जैसा देखे, एक व दो घंटे और कमती बढ़ती कर
ले । सोते समय इस बात की भी सावधानी रक्खे कि,
द्वार तो कोई खुला नहीं रह गया है । जिसमें ताला
लगता हो, उसमें ताला लगा देना चाहिये । जिसमें

साँकल लगती हो, उसमें साँकल दे देनी चाहिये और दिया ले कर सब अँधेरी कोठरी व पौरी को देख ले कि, कोई चोर तो नहीं दुबक रहा।

यह तो नित्त का काम रहा। अब इनके सिवाय जो और काम करने होते हैं, वह भी तुझे बताती हूं। जब कोई वस्तु घर की निवटने पर आवे, तब उसका कई दिन पहिले से प्रबन्ध करे। जिस दिन अच्छी और सस्ती मिले, मँगाले, जिससे तत्काल न मँगानी पड़े। जिस दिन जो वस्तु आवे, उसी दिन उसे सुधार कर रखवा देना चाहिये। इकट्ठी वस्तु अच्छी सुधारने में आ जाती है और बेर बेर का श्रम नहीं रहता। इसी प्रकार जब मसाला आदि आवे, उन्हें तभी बीन, फटक और कूट कर रख देना चाहिये। सिवाय हल्दी के जो बहुत दिन तक कुटी हुई रखने से बिगड़ जाती है, दाल को बीन छान फटक कर रखवाना चाहिये। दाल इकट्ठी दलना लेनी चाहिये। बाज़ार से अच्छी नहीं आती। नमक को भी पीस कर ही रखना चाहिये, जिससे थोड़े बहुत का भी भय न रहे और तनिक तनिक सा न पीसना पड़े। पर इतना ध्यान रहे कि, पिसा नमक बूरे व मैदा के पास न रक्खा जावे।

आटा जब पिस कर आवे, तभी तुलवा और छनवा लेना चाहिये। पर आटे को आठ दिन से अधिक न

रक्खे, नहीं तो बिगड़ जाता है। आटे में से जो भूसी निकले वह एक बर्तन में भरा दे और इसी प्रकार जो सेहूँ, सरसों आदि नाज में से निकलें, उन्हें भी भरवा दे। यों ही रहने देने से एक तो कूड़ा रहता है, दूसरे हानि होती है, फूहरों का सा घर दीखता है।

जो अपने व अपनी देवरानी, जेठानी व सास, ननँद के बालक हों, उनको स्नान कराना, बाल झाड़ना, मैले वस्त्रों को बदल कर श्वेत स्वच्छ और उज्ज्वल वस्त्र पहिनाना। फटे पुराने को सी देना। मैलों को धोबी के धुलने को डाल देना। बालकों को ऊपर नीचे आते जाते देखते रहना कि, कहीं गिर गिरा न पड़ें व आपस में लड़ न मरें, अथवा ऊधम तो नहीं करते, आपस में गाली तो नहीं देते, पढ़ते हैं कि, नहीं ? मारते तो नहीं हैं, जो बहुत छोटे बालक हों, उनको आग के पास व गढ़े व मुड़गेली पर व द्वार पर व बाहर न जाने दे। हर फसल पर उस फसल की वस्तु का ध्यान रखना। जो वस्तु अचार की हों, उनको मँगा कर उसी फसल में अचार डाल देना। जिस दिन अच्छी और सस्ती मिलें, मँगा लेना। नहीं तो फसल पीछे वस्तु बहुत दाम की भी नहीं मिलती। कचरियों के दिन में कचरी सुखा लेना। जिसकी कचरी करनी हो, उसी की फसल पर याद

रखनी चाहिये। जो इसी प्रकार की और वस्तुएं गृहस्थ के घर में रहनी चाहियें। जैसे बड़ी, मँगोड़ी, पापड, वे भी अपने समय व अवकाश पा कर करते रहना। अपने घर में सब वस्तु इस प्रकार और इतनी रखनी कि, यदि कोई पाहुना आ जाय, तो बाजार हाट से कोई वस्तु न मँगानी पड़े। क्योंकि कोई कोई समय ऐसा होता है कि, बाजार हाट बन्द होता है, तो फिर वह वस्तु उस समय कहाँ से आवेगी और पाहुने के आने का कोई समय नियत नहीं है। न जाने किस समय आ जाय। बहुधा ऐसा होता है कि, रात्रि के दस बजे व आधीरात को पाहुना आ जाता है। जो घर में कोई वस्तु उस समय नहीं है, तो कहाँ से अब मिले। किसके घर माँगती डोले? किसको जगावे? व किसकी दूकान पर जा कर लावे? इधर पाहुने को मालूम हो, वह अपने मन में सकुचे कि, मैंने उनको वृथा इतना कष्ट और श्रम दिया। उधर सब कोई जान जाय कि, फलाने के घर से रात्रि को फलानी वस्तु माँगी आई थी, और यदि न मिली, तो पाहुने का जैसा चाहिये, वैसा आदर-सत्कार न हो सके। इसलिये गृहस्थ को अपने यहाँ सब वस्तु जो नित्त चाहिये, रखनी चाहियें।

जो घर में कोई गौ व भैंस हो, तो उसको नित्त देखता

रहे । चाकरों पर भरोसा न करे । क्योंकि 'आप काज महाकाज' होता है ।

घर को भी देखती रहे कि, कहीं से टूटा फूटा तो नहीं है । जहाँ से हो, वहाँ तुरन्त उसकी मरम्मत करा दे । वर्षाऋतु से पहिले तो अवश्य करा दे, नहीं तो गिरने पड़ने का भय रहता है ।

ईधन भी वर्षाऋतु से पहिले ही ले लेना चाहिये, क्योंकि वर्षा में जाकर एक तो अच्छा नहीं मिलता, दूसरे महँगा मिलता है । कभी कभी मिलता भी नहीं है । वर्षा में अठवारे न पखवारे पीछे जब धूप निकले और बादल खुला हुआ हो तब कपड़ों में धूप लगा देना चाहिये । बिना धूप लगाये उनमें सील आ जाती है । वे फफूंद जाते हैं, बिगड़ने लगते हैं, कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं । ऊनी और रेशमी कपड़ों में कसारी लग जाती है, जो उन्हें कतर डालती है । इसलिये उनको तो एक अलगनी पर वर्षा भर हवा लगाये रहे । ऐसे कपड़ों को वर्षाऋतु में बाँध कर कभी न रक्खे । इन दिनों में जो भभक उत्पन्न हो जाती है, उसीसे हानि पहुँचती है । सो खुले हुए हवादार स्थान में रखने से यह भभक उत्पन्न नहीं होने पाती ।

कपड़ों को सदा तह कर के सन्दूक आदि में रखना

चाहिये। पसीने के कपड़ों को भली भाँति सुखा कर तह करे।

घर की जो बूढ़ी-बड़ी हो, वह बालकों के खिलाने पिलाने और शिक्षा करने का भार अपने ऊपर ले। क्योंकि उनके लिये यही उत्तम और सुगम काम है। परिश्रम का काम उनको न करना चाहिये।

यदि कोई भोज आदि करना हो, जैसे ज्योनार पाँति इत्यादि, तो उसकी तैयारी कई दिनों पहिले से करनी चाहिये, जिससे उस दिन तक सब सामग्री इकट्ठी हो जाय और तत्काल कुछ चिन्ता न करनी पड़े। यदि कोई बहुत बड़ा भोज करना हो, तो उसकी चिन्ता और अधिक दिन व कई महीने पहिले से करनी चाहिये। क्योंकि थोड़ा थोड़ा करने से काम सुगम और अच्छा होता है और बहुत चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

यह भी याद रखने की बात है कि, जिस काम को किया जाय पूरा ही किया जाय। अधूरा काम किसी काम का नहीं होता है। जो काम अधूरा रह जाता है, वह फिर पूरा कभी नहीं होता। अधूरे का अधूरा ही पड़ा रहता है। इसलिये जो काम किया जाय, वह पूरा कर देना चाहिये और मन लगा कर करना चाहिये। जो काम मन लगा कर नहीं होता, किन्तु बेमन होता है, वह अच्छा नहीं होता।

मैंने यह भी देखा है कि, गृहस्थ स्त्रियाँ अपनी अल्प बुद्धि से समझती तो हैं नहीं, छोटे छोटे काम जो नौकरों के योग्य हैं और जिनको अपने हाथों से करने में लाभ थोड़ा सा ही होता है और समय अधिक लगता है और जो नीच व दासीकर्म कहलाते हैं, करने लगती हैं और नौकर-चाकर को नहीं रख लेतीं । यह कहती हैं कि, हम नौकरों के देने को इतना कहाँ से लावें । सो यह उनकी महाभूल है । प्रथम तो दो व तीन रुपये महीने में नौकर मिल सक्ता है, जो सब दिन भर घर का काम कर सक्ता है और दूसरे दासीकर्म अपने हाथ से करने में ओछापन कहलाता है । यदि वे थोड़ा सा विचारें तो उनको ज्ञात हो जायगा कि, जिन कामों को वे स्वयं करती हैं, यदि उनको वे नौकर-चाकर से करावें और आप उस समय में शिल्प का काम करें तो कितना लाभ हो ।

अब मैं तुझे उत्तम और अधम कामों के नाम गिनाती हूँ, जिनके करने और न करने से गृहस्थ को श्रेष्ठता और अधमता मिलती है । उत्तम काम ये हैं,

(१) विद्या पढ़नी और पढ़ानी, (२) सीना-पिरोना और कसीदा आदि काढ़ना, (३) चित्र व पुस्तक लिखना, (४) घर की वस्तु लेनी देनी व सम्हालनी, (५) घर का लेखा जोखा रखना, (६) गोखुरू

पीटना, ठप्प करना, बीज निकालना, कलाबत्तून बटना इत्यादि। अधम काम ये हैं,

(१) आटा पीसना, (२) बुहारी देना, बर्तन माँजना, (३) वस्त्र धोना, सुखाना व रखना, (४) नाज बीनना, फटकना व दाल दलना, छानना, (५) लीपना, पोतना, चौका लगाना, (६) बालकों को खिलाना इत्यादि।

मैं तुझको घर का काम धन्धा तो बता चुकी, परन्तु तो भी कुछ उपदेशमात्र और कह कर समाप्त करती हूँ।

(१) स्त्री को परिश्रमी होना बहुत ही उचित है। परिश्रम को कोई नीच कर्म नहीं कहता। वरन परिश्रम से स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है।

विपत्तिकाल में इसकी टेव बड़े काम आती है।

(२) अपने कपड़े अपने हाथ से सीवें, दर्जी से न सिलावें। क्योंकि बहुत से कपड़े ऐसे हैं कि, जिनको लज्जावश दर्जी से सिलाना उचित नहीं।

(३) जो कपड़े व अन्य वस्तु (जैसे अचार, मुरब्बा) धूप लगाने योग्य हों, उनको आठवें, दशवें दिन धूप दिखा देना चाहिये। विशेष कर वर्षाऋतु में।

(४) फटे हुए कपड़े को सदा सीलेना चाहिये और धोबी को बिना सिये कभी फटा कपड़ा न डालना चाहिये।

(५) जो कपड़े मैले धोबी के भेजने योग्य हों, उन को किसी वस्त्र मे बाँध कर रक्खे। फैले कभी न रहने दे।

(६) धोबी के डालने से पहिले उनको बही में लिख ले। जब धुल कर आवें, बही के लिखे से मिला ले।

(७) ऊनी पश्मीने और रेशमी कपड़ों की बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। उसमें सदा नीम के सूखे पत्ते, व कपूर अथवा इसी हेतु एक विशेष कागज होता है, उसको कपड़ों की तह में रक्खे।

(८) वर्षाऋतु में ऐसे कपड़ों को बाँध कर कभी न रक्खे। सदा खोल कर खूँटी व अलगनी पर इस प्रकार लटका दे कि, उनमें पवन लगता रहे। इससे उनमें कभी कीड़ा व कुमारी नहीं लगती।

(९) ऐसे कपड़ों को भी कभी न रक्खे और विशेष कर वर्षाऋतु में। नहीं तो लाइन उठ कर तुरत गल जाते हैं।

(१०) मिट्टी के तेल से, जो आजकल बहुत प्रचलित हो गया है, सदा सावधान रहे। कहीं कपड़े पर गिर कर कपड़े में अग्नि न लगने पावे व दीपक में खुला हुआ न जलाया जावे, इससे बहुधा स्त्रियाँ मर गई हैं और घरों में आग लग गई है।

(११) अधजली हुई लकड़ी को बुझा कर कभी

ईंधन के ढेर में न रक्खे। इस कारण कि, न जाने उसमें कुछ आग शेष रह गई होवे, तो समस्त ईंधन में आग लग जावेगी।

(१७) जहाँ दीमक लग जाती हो वहाँ कपूर और तम्बाकू को बराबर बराबर ले और पीस सातवें दिन उस स्थान पर व उस वस्तु, किताब, अलमारी व सन्दूक इत्यादिक में डाल दिया करे। ऐसा करने से दीमक वहाँ फिर कभी न लगेगी।

घर का काम धन्धा समाप्त।

व्यय आदि का प्रबन्ध।

—:o:—

अधम काम करने से इतना लाभ नहीं होता, जितना उन कामों को चाकरों से कराने और अपने हाथों से उत्तम कामों को चतुराई के साथ करने में होता है। अब बहिन! इसके संग में तुझे यह भी बताये देती हूँ कि, घर का खर्च किस रीति से उठाना चाहिये। इसको नियम के साथ उठाने से बहुत बचत होती है। जो स्त्री अपने घर का खर्च ऊल जलूल और बेरीति उठाती है, उसका खर्च तो अधिक होता ही है और काम उतना नहीं निकलता।

निकलते हैं। नित्त फिर जाते हैं; पर यहाँ कुछ भाये ही नहीं है कि, कौन आता है। इस प्रकार घर पर आ कर, जिनका उधार चाहता है, नित्त फजीहती करते हैं। लोग हँसते और नाम धरते हैं और फिर कोई उधार नहीं देता।

इसलिये गृहस्थ को अपने घर का व्यय इस रीति से उठाना चाहिये कि, कभी उधार न लेना पड़े। विवाह, ठिक उत्सव में सब काम अपने घर में से ही चल जावें। प्रत्येक वस्तु के खाते डालने से यह ज्ञात और प्रतीत होता रहता है कि, किस मास में किस वस्तु में क्या उठा। अधिक उठा व क्या? यदि एक महीने में, जिस वस्तु में अधिक उठ गया, तो उसकी त्रुटि दूसरे महीने में निकाल देनी चाहिये। यदि एक महीने में न निकल सके, तो दो तीन महीने में निकाल ले। और जो किसी महीने में किसी खाते में बचत रहे, तो उसमें अधिक व्यय न कर डाले। अधिक व्यय होने के तो सौ अवसर आवेंगे, पर थोड़ा उठने का कदाचित् ही कोई होगा। जैसे खाते डालने से व्यय अधिक नहीं उठने पाता, इसी प्रकार अच्छे प्रबन्ध रखने से बचत भी बहुत हो जाती है। जिन स्त्रियों का प्रबन्ध अच्छा है, वे कहती हैं कि, छोटे छोटे व्यय रोकने से उतनी बचत नहीं होती, जितनी अच्छा प्रबन्ध करने और रखने से होती है।

सब व्यय अच्छे प्रकार सोच विचार कर के नियत कर ले और उन में से थोड़ी सी ओत करे, तो एक मूंद्र बन जावे। काम उतना ही हो और बचत की बचत निकल आवे। यह कहावत तो बहुत दिनों से चली आती है कि, 'फुईयाँ फुईयाँ ताल भरे' और 'कन कन जोरे मन जुरे'। सो इसी प्रकार घर का व्यय है कि, जो एक एक पैसा दस वस्तुओं में से बचे, तो सहज में ढाई आना हो जावें। पर यदि इन्हीं दस वस्तुओं में एक एक पैसा अधिक उठ जावे, तो ढाई आना अधिक व्यय हो जाता है। इस प्रकार पाँच आने का अन्तर हो जाता है। जो नित्यप्रति ऐसाही होवे तो दस १०) रुपये महीने का लेखा जुड़ता है और वर्ष भर में सवा सौ रुपये का अन्तर जा पड़ता है। एक एक पैसा तो कुछ नहीं जान पड़ा, पर अन्त में १२५) रुपये जुड़ गये। इसलिये प्रत्येक वस्तु में बचत करनी चाहिये। तो सहज में बड़ी बड़ी बचत निकल आवेगी। यथा,

दो० कौड़ी कौड़ी जोरि के, धनी होत धनवान।
अक्षर अक्षर के पढ़े, पण्डित होत सुजान॥

जब देखे कि, मुझको अपने किसी लड़के व लड़की व अन्य का कोई ठिक न विवाह करना है, तो उसका प्रबन्ध बहुत दिन अगाड़ी से करना चाहिये और उसका

व्यय अपने वित्तानुसार करे । यह न करे कि, एक ही
हो रहे और मर मिटे ।

उधार आदि ले कर धूमधाम से कर डाले और पीं
धूल उड़वावे । उधार ले कर गृहस्थ कभी कारज न करे
उधार गृहस्थ का वैरी है । सदा उसकी जड़ काटता र
हता है और गृहस्थ को जमने नहीं देता । कारज करं
समय यह स्मरण रक्खे,

दो० अपनी पहुँच विचार के, करतब करिये दौर
तेते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर ।
कारज वाही को सरे, करे जो समय निहार ।
कबहुँ न हारे खेल जो, खेले दाँव विचार ॥

इतनी बातों में मनुष्य को ऋण लेना पड़ता है,

(१) अपनी सामर्थ्य से अधिक व्यय कर देने से
(२) ठिक त्यौहार में अधिक व्यय करने से ।
(३) ठीक प्रबन्ध न रख कर आय व्यय का कुछ
ध्यान न करने से ।
(४) किसी की साक्षी (जामिन) हो कर उसके
पलटे आप देने से । इस ऋण में इतने दोष होते हैं,
(१) ऋणी बनना और कहलाना ।
(२) ब्याज देना ।
(३) अपमान और निन्दा सहनी ।

(४) झूँठ बोलने का अभ्यास होना ।

(५) ऋण देनेवाले से दबना ।

(६) बेदियान्ती ।

(७) कुटुम्ब परिवार पर विपत्ति बुलाना इत्यादि ।

ऋण लेना यद्यपि लोग सुगम बतलाते हैं, तथापि मैं तो इसके लेने को भी कठिन ही कहती हूँ । क्योंकि जिससे ऋण लेना चाहते हैं, उससे प्रथम तो माँगना पड़ता है, उसकी लल्लो-पत्तो करनी पड़ती है । इस पर भी कभी आज, कभी कल देने का मिस बनाता है । दस झूँठी प्रशंसा करनी पड़ती हैं । तब कहीं ऋण का डौल बैठता है । पर चुकाना तो इसका बहुत ही कठिन है । जैसे पहाड़ का चढ़ना । सो ऋण में कोई गुण नहीं है । अवगुण ही अवगुण हैं । यदि अपने किसी इष्ट मित्र व सम्बन्धी ही से ऋण लें, तो भी बुराई ही है । क्योंकि इस ऋण के कारण राहरीति और प्यार-प्रीति में बट्टा लग जाता है और मनों में अन्तर पड़ जाता है । अर्बी भाषा में एक कहावत है, 'अल-क़र्ज़ मिक़राज़ुल मुहब्बत' (القرض مقراض المحبت) अर्थात् ऋण प्रीति की कतरनी है । इस देश में भी कहावत है कि, यदि तू बैरी चाहता है, तो किसी को धन दे दे और फिर उससे माँग, वही तेरा बैरी हो जायगा ।

सो इस ऋण को कभी कोई न ले । परन्तु इस देश में तो २,२१,००० दो लाख, इक्कीस सहस्र मनुष्यों का व्यापार ही ऋण देना है, जो महाजन कहलाते हैं ।

यदि देखे कि, ऋण लिये विना सरता ही नहीं है, क्योंकि बहुधा ऐसी दशा और समय गृहस्थ के लिये उपस्थित हो जाते हैं कि, पास पैसा नहीं है और काम व्यय का आ गया, जिसके किये बिन बनती नहीं, तो उस समय ऋण ले कर कार्य निकाल देने में कुछ चिन्ता भी नहीं है ।

गृहस्थों के सैकड़ों काम इस रीति से भी चलते हैं कि, महीने दो महीने व वर्ष भर को उधार ले ले । जब आ जावे तब पहिले चुका दे । अथवा व्यय को कम कर के धीरे धीरे चुकाता रहे । यह नहीं कि, उधार ले कर कार्य तो कर लिया, पर उधार चुकाने की कुछ चिन्ता नहीं । जो स्त्री उधार ले कर निश्चिन्त हो जायगी, वह सदा ऋण में डूबी रहेगी । व्याज ही देते देते पिण्ड न छूटेगा। क्योंकि व्याज और भाड़ा घोड़े की दौड़ दौड़ते हैं। जितना वेग समय चलता है, उतने ही वेग ये चलते हैं। इस कारण कि, यह तो समयरूपी घोड़े पर ही सवार है । व्याज और भाड़ा तो नित्त का नित्त ही निकाल देना अच्छा होता है और जो ऐसा न बन पड़े, तो

महीने के महीने तो अवश्य ही निकाल देना चाहिये। इसके सिवाय मूल धन के निपटाने की चिन्ता और करनी चाहिये। इसका भी मासिक व छःमाही कुछ नियत कर दे कि, लिया, हाथ के हाथ पकड़ा दिया। जो घटा, सोई सही। बोझ जितना हलका होता है, उतना ही सुभीता पड़ता जाता है। यह न देखे कि, सब का सब एक ही समय में चुका दूँगी। थोडा थोड़ा कर के मालूम भी नहीं होता है और सहज ही में निपट जाता है। किसी ने सत्य उपदेश किया है,

दो० जड़ कबहूँ नहिं काटिये, काहू की मनधार।
पापरु ऋण की जड़ कटी, यही भलो निरधार॥

यदि ऋण से उऋण होना चाहे, तो इन नियमों का पालन करे।

(१) जो ऋण सम्पत्ति (जायदाद) व गहने पर होवे अर्थात् वे गहने व गिरवी रक्खी होवें, तो उनको तुरन्त बेच रुपया चुका दे। बेचने में गिरवी रखने से अधिक लाभ होता है।

(२) ब्याज को कभी न बढ़ने दे। नियत समय पर अवश्य ही चुकाता रहे और कुछ मूल में भी देता जावे।

(३) व्यर्थ व्यय को घटाना वरन तुरन्त रोक देना चाहिये।

(४) फुटकर व्ययों का पूरा पूरा प्रबन्ध कर दे
चाहिये। जैसे पान, तम्बाकू, चाट, शराब, मेले, तमा
में जाना इत्यादि कि, जिनके बिना किसी काम व
हानि नहीं होती।

(५) आय व्यय का लेखा रखना और कौड़ी कौ
का लेखा लिखते जाना और फिर देखना कि, को
व्यर्थ व्यय तो नहीं हो गया है।

(६) उधार कोई वस्तु न मँगानी, न किसी से
उचापत रखनी। बरन रोकड़ मँगाना।

(७) हाट घाट में बहुत न जाना। क्योंकि ऐसे
स्थान में जा कर कुछ न कुछ मोल लेना ही पड़ता है।
वस्तु देख कर जी चल आता है।

(८) आलस्य को त्याग मेहनती होना।

(९) नाहीं करना सीखना। क्योंकि यह भी एक
लाभकारी वस्तु है। लज्जा के भय से, जो माँगने को
आता है, उससे नाहीं नहीं कर सके, देना ही पड़ता है। पर
पीछे उससे पटता है नहीं। इसलिये यदि नाहीं करने की
टेव होगी, तो यह न देना पड़ेगा और यही लाभ होगा।
जो किसी का उधार ले कर फिर नहीं चुकाते हैं, उनकी
साख जाती रहती है, उनको कोई पतियाता नहीं है और
न दूसरी बेर उनको कोई देता है। यही कहावत होती है

॰ फेर न ह्वै है कपट से, बनज किये व्योपार।
जैसे हाँड़ी काठ की, चढ़े न दूजी बार॥

और न अधिक ब्याज पर उधार लेना अच्छा है। क्योंकि लेती समय तो इसका कुछ विचार नहीं रहता, र देती समय छाती सी फटती है। मूल से भी अधिक ब्याज हो जाता है और तब बेईमानी सूझती है। इस लिये पहिले ही से इसका विचार कर लेना चाहिये। जो अधिक ब्याज पर लेती देती हैं, वे दोनों बेईमान होती हैं। अधिक ब्याज पर देनेहारी का रुपया कभी रहता नहीं है। अधिकतर नट्टेखाते जाता है और यह कहावत होती है,

दो॰ रहे न कौडी पाप की, ज्यों आवे त्यों जाइ।
लाखन को धन पाय के, मरे न कफ्फन पाइ॥

ऐसे ही एक स्त्री का मैं तुझको समाचार सुनाती हूँ। एक समय एक ठगिनी स्त्री एक ऐसी ही स्त्री के पास से ५०) रुपये दस रुपये सैकडे ब्याज पर ले गयी और ५) रुपय ब्याज के पहिले ही दे गयी। दूसरे दिन आ कर एक रुपया और दे कर उन पाँच ५) रुपयों को भी ले गयी। वह स्त्री अपने मन में बडी प्रसन्न हुई कि, यह आसामी चोखी, जो ब्याज पहिले दे जाय। इसका लेनदेन खरा है। तीसरे दिन आ कर एक टका दे कर उस रुपये को भी ले

(४) फुटकर व्ययों का पूरा पूरा प्रबन्ध कर देना चाहिये। जैसे पान, तम्बाकू, चाट, शराब, मेले, तमाशे में जाना इत्यादि कि, जिनके बिना किसी काम की हानि नहीं होती।

(५) आय व्यय का लेखा रखना और कौड़ी कौड़ी का लेखा लिखते जाना और फिर देखना कि, कोई व्यर्थ व्यय तो नहीं हो गया है।

(६) उधार कोई वस्तु न मँगानी, न किसी से उचापत रखनी। बरन रोकड़ मँगाना।

(७) हाट बाट में बहुत न जाना। क्योंकि ऐसे स्थान में जा कर कुछ न कुछ मोल लेना ही पड़ता है। वस्तु देख कर जी चल आता है।

(८) आलस्य को त्याग मेहनती होना।

(९) नाहीं करना सीखना। क्योंकि यह भी एक लाभकारी वस्तु है। लज्जा के भय से, जो माँगने को आता है, उससे नाहीं नहीं कर सके, देना ही पड़ता है। पर पीछे उसने पड़ता है नहीं। इसलिये यदि नाहीं करने की टेव होगी, तो वह न देना पड़ेगा और यही लाभ होगा। जो किसी का उधार ले कर फिर नहीं चुकाते हैं, उनकी साख जाती रहती है, उनको कोई पतियाता नहीं है और न दूसरी बेर उनको कोई देता है। वही कहावत होती है,

दो० फेर न हुइ है कपट से, बनज किये ब्योपार।
जैसे हाँडी काठ की, चढ़े न दूजी बार॥

और न अधिक ब्याज पर उधार लेना अच्छा है। क्योंकि लेती समय तो इसका कुछ विचार नहीं रहता, पर देती समय छाती सी फटती है। मूल से भी अधिक ब्याज हो जाता है और तब बेईमानी सूझती है। इस लिये पहिले ही से इसका विचार कर लेना चाहिये। जो अधिक ब्याज पर लेती देती हैं, वे दोनों बेईमान होती हैं। अधिक ब्याज पर देनेहारी का रुपया कभी पटता नहीं है। अधिकतर बट्टेखाते जाता है और यह कहावत होती है,

दो० रहे न कौडी पाप की, ज्यों आवे त्यों जाइ।
लाखन को धन पायके, मरे न कफ्फन पाइ॥

ऐसे ही एक स्त्री का मैं तुझको समाचार सुनाती हूँ। एक समय एक ठगिनी स्त्री एक ऐसी ही स्त्री के पास से ५०) रुपये दस रुपये सैकडे ब्याज पर ले गयी और ५) रुपय ब्याज के पहिले ही दे गयी। दूसरे दिन आ कर एक रुपया और दे कर उन पाँच ५) रुपयों को भी ले गयी। यह स्त्री अपने मन में बडी प्रसन्न हुई कि, यह आसामी चोखी, जो ब्याज पहिले दे जाय। इसका लेनदेन खरा है। तीसरे दिन आ कर एक टका दे कर उस रुपये को भी ले

गयी और महीनों मुख न दिखाया । तब तो वह बाँहरी स्त्री
लगी खोजने, पर उसका पता कहाँ ! वह तो ठगिनी थी।
कुछ आसामी थोड़े ही थी । तब तो वह बाँहरी स्त्री मन
ही मन पछता कर यह दोहा बना कहने लगी,

दो० पाँच पचासै ले गयो, पाँचै ले गयो एक।
टका एक कों ले गयो, ताही कूँ तू पेख॥

इसलिये अधिक ब्याज पर लेना देना दोनों बुरे हैं
और छिप कर उधार देना भी बुरा है । बहुत सी स्त्रियाँ
बहू बेटियों से छिप कर उधार ले जाती हैं और उनको
ठगती रहती हैं । ब्याज के लालच में आ कर जो कुछ
उनके पास सास ननँद की चोरीचकोरी से जुड़ता है, व
सब इन ठगिनियों को ठगा बैठती है और वे ठगिनियाँ साफ़
पचा जाती हैं । वे झट कह देती हैं कि, हमें कब दिया था
हम तो जानती भी नहीं हैं । हमारा झूठा नाम लगाते
हैं । कुछ बहू बेटियाँ लाज के मारे प्रकट नहीं करती हैं.
जो घरवालों को मालूम हुआ, तो क्लेश मचेगा और बुरी
भली सुननी पड़ेगी । इसलिये ऐसियों को देना ही भला
नहीं । वह चाहे जितनी बातें बनावें और मिलावें, कभी
उनके धोखे और लालच में आ कर मत दो और न किसी
रसाइनी आदि के लालच में आ जावो कि, फलाना
बाबाजी चाँदी का सोना कर देता है । चलो, हम भी अपना

गहना ले चलें और सोने का करा लावें। जो गाजी ऐसे ही होते, तो घर बैठे ही न पुजते और क्यों घर घर भीख मांगते फिरते। कभी किसी ऐसी स्त्री व बैरागी के छल में मत आवो।

अपने चाकरों की तनख्वाह को भी एक प्रकार का उधार ही समझो। कभी दूसरे महीने के लिये मत चढ़ावो। जिस महीने की तलब हो उसीके अन्त में चुका दो। इस में दो लाभ हैं। एक तो यह कि, बोझ नहीं चढ़ता। दूसरे यह कि, नौकरों को चोरी की टेव नहीं पड़ने पाती। चाकर भूखा रहने और तनख्वाह न मिलने से चोरी सीख जाता है। इसलिये कभी किसी चाकर की तनख्वाह दूसरे महीने को मत चढ़ावो और अपने चाकरों को तनख्वाह औरों से आठ आने व एक रुपया अधिक दो। इस से एक तो चाकर काम को मन लगा कर करता है। क्योंकि वह जानता है कि, यहाँ से जो छूटूँगा तो मुझे इतनी तनख्वाह न मिलेगी और दूसरे यह कि, पूरी तनख्वाह पाने से चोरी करने को उसका मन न ललचावेगा। नौकर के चोरी करने से वस्तु में बरकत नहीं रहती। जब दीखती है, तब उठी ही सी दीखती है। तुझको यह भी बताना मैं इस समय आवश्यक समझती हूँ कि, चाकर कैसा मनुष्य रखना चाहिये। उसमें ये गुण होने चाहियें,

गयी और महीनों मुख न दिखाया । तब तो वह बाहरी स्त्री लगी खोजने, पर उसका पता कहाँ ! वह तो ठगिनी थी कुछ आसामी थोड़े ही थी । तब तो वह बाहरी स्त्री मन ही मन पछता कर यह दोहा बना कहने लगी,

दो० पाँच पचासै ले गयो, पाँचै ले गयो एक
टका एक को ले गयो, लाही कूँ तू सेव ।

इसलिये अधिक ब्याज पर लेना देना दोनों बुरे और छिप कर उधार देना भी बुरा है । बहुत सी स्त्रियें यह बेटियों से छिप कर उधार ले जाती है और उनसे ठगती रहती हैं । ब्याज के लालच में आ कर जो कुछ उनके पास सास ननँद की चोरीचकोरी से जुड़ता है, वह सब इन ठगिनियों को ठगा बैठती है और ये ठगिनियाँ साफ पचा जाती हैं । वे झट कह देती है कि, हमें कब दिया था ! हम तो जानती भी नहीं है । हमारा झूठा नाम लगाती हैं । कुछ बहू बेटियाँ लाज के मारे प्रकट नहीं करती है, जो घरवालों को मालूम हुआ, तो क्लेश मचेगा और बुरी भली सुननी पड़ेगी । इसलिये ऐसियों को देना ही भला नहीं । वह चाहे जितनी बातें बनावें और मिलावें, कभी उनके धोखे और लालच में आ कर मत दो और न किसी रसाइनी आदि के लालच में आ जावो कि, फलाने बाबाजी चाँदी का सोना कर देता है । चलो, हम भी अपने

गहना ले चलें और सोने का करा लावें । जो नागाजी ऐसे ही होते, तो घर बैठे ही न पुजते और क्यों घर घर भीख मॉंगते फिरते । कभी किसी ऐसी स्त्री व वैरागी के छल में मत आवो ।

अपने चाकरों की तनख्वाह को भी एक प्रकार का उधार ही समझो । कभी दूसरे महीने के लिये मत चढ़ावो। जिस महीने की तलब हो उसीके अन्त में चुका दो । इस में दो लाभ हैं । एक तो यह कि, बोझ नहीं चढ़ता । दूसरे यह कि, नौकरों को चोरी की टेव नहीं पड़ने पाती । चाकर भूखा रहने और तनख्वाह न मिलने से चोरी सीख जाता है । इसलिये कभी किसी चाकर की तनख्वाह दूसरे महीने को मत चढ़ावो और अपने चाकरों को तनख्वाह औरों से आठ आने व एक रुपया अधिक दो । इस से एक तो चाकर काम को मन लगा कर करता है । क्योंकि वह जानता है कि, यहॉं से जो छूटूँगा तो मुझे इतनी तनख्वाह न मिलेगी और दूसरे यह कि, पूरी तनख्वाह पाने से चोरी करने को उसका मन न ललचावेगा। नौकर के चोरी करने से वस्तु में बरकत नहीं रहती। जब दीखती है, तब उठी ही सी दीखती है । तुझको यह भी बताना मैं इस समय आवश्यक समझती हूँ कि, चाकर कैसा मनुष्य रखना चाहिये । उसमें ये गुण होने चाहियें,

गयी और महीनों मुख न दिखाया। तब तो वह बाहरी स्त्री
लगी खोजने, पर उसका पता कहाँ! वह तो ठगिनी थी।
कुछ आसामी थोड़े ही थी। तब तो वह बाहरी स्त्री मन
ही मन पछता कर यह दोहा बना कहने लगी,

दो० पाँच पचासै ले गयो, पाँचै ले गयो एक।
टका एक कों ले गयो, ताही कूँ तू पेख॥

इसलिये अधिक व्याज पर लेना देना दोनों बुरे हैं
और छिप कर उधार देना भी बुरा है। बहुत सी स्त्रियाँ
बहू बेटियों से छिप कर उधार ले जाती हैं और उनको
ठगती रहती हैं। व्याज के लालच में आ कर जो कुछ
उनके पास सास ननँद की चोरीचकोरी से,जुड़ता है, वह
सब इन ठगिनियों को ठगा बैठती हैं और वे ठगिनियाँ साफ
पचा जाती हैं। वे भट कह देती हैं कि, हमें कब दिया था!
हम तो जानती भी नहीं हैं। हमारा झूठा नाम लगाती
हैं। कुछ बहू बेटियाँ लाज के मारे प्रकट नहीं करती हैं,
जो घरवालों को मालूम हुआ, तो क्लेश मचेगा और बुरी
भली सुननी पड़ेगी। इसलिये ऐसियों को देना ही भला
नहीं। वह चाहे जितनी बातें बनावें और मिलावें, कभी
उनके धोखे और लालच में आ कर मत दो। और न किसी
रसाइनी आदि के लालच में आ जाओ कि, फलाना
बाबाजी चाँदी का सोना कर देता है। चलो, हम भी अपना

गहना ले चलें और सोने का करा लावें। जो बाबाजी ऐसे ही होते, तो घर बैठे ही न पुजते और क्यों घर घर भीख मुँगते फिरते। कभी किसी ऐसी स्त्री व बैरागी के छल में मत आवो।

अपने चाकरों की तनख्वाह को भी एक प्रकार का उधार ही समझो। कभी दूसरे महीने के लिये मत चढ़ावो। जिस महीने की तलब हो उसीके अन्त में चुका दो। इस में दो लाभ हैं। एक तो यह कि, बोझ नहीं चढ़ता। दूसरे यह कि, नौकरों को चोरी की टेव नहीं पड़ने पाती। चाकर भूखा रहने और तनख्वाह न मिलने से चोरी सीख जाता है। इसलिये कभी किसी चाकर की तनख्वाह दूसरे महीने को मत चढ़ाओ और अपने चाकरों को तनख्वाह औरों से आठ आने व एक रुपया अधिक दो। इस से एक तो चाकर काम को मन लगा कर करता है। क्योंकि वह जानता है कि, यहाँ से जो छूटूँगा तो मुझे इतनी तनख्वाह न मिलेगी और दूसरे यह कि, पूरी तनख्वाह पाने से चोरी करने को उसका मन न ललचावेगा। नौकर के चोरी करने से वस्तु में बरकत नहीं रहती। जब दीखती है, तब उठी ही सी दीखती है। तुझको यह भी बताना मैं इस समय आवश्यक समझती हूँ कि, चाकर कैसा मनुष्य रखना चाहिये। उसमें ये गुण होने चाहियें,

गयी और महीनों मुख न दिखाया। तब तो वह चौहरी स्त्री लगी खोजने, पर उसका पता कहाँ! वह तो ठगिनी थी। कुछ आसामी थोडे ही थी। तब तो वह चौहरी स्त्री मन ही मन पछता कर यह दोहा बना कहने लगी।

दो० पाँच पचासे ले गयो, पाँचे ले गयो एक।
टका एक को ले गयो, ताहीं कूं तू पेख।

इसलिये अधिक व्याज पर लेना देना दोनों बुरे हैं और छिप कर उधार देना भी बुरा है। बहुत सी स्त्रियें बहू बेटियों से छिप कर उधार ले जाती हैं और उनको ठगती रहती हैं। व्याज के लालच में आ कर जो कुछ उनके पास सास ननँद की चोरीचकोरी से जुड़ता है, सब इन ठगिनियों को ठगा बैठती हैं और वे ठगिनियाँ सा पचा जाती हैं। वे झट कह देती हैं कि, हमें कब दिया था हम तो जानती भी नहीं हैं। हमारा झूठा नाम लगात हैं। कुछ बहू बेटियाँ लाज के मारे प्रकट नहीं करती हैं जो घरवालों को मालूम हुआ, तो क्लेश मचेगा और बुरी भली सुननी पडेगी। इसलिये ऐसियों को देना ही भल नहीं। वह चाहे जितनी बातें बनावें और मिलावें, कभी उनके धोखे और लालच में आ कर मत दो और न किसी रसाइनी आदि के लालच में आ जावो कि, फलाने बाबाजी चाँदी का सोना कर देता है। चलो, हम भी अपना

गहना ले चलें और सोने का करा लावें। जो बाबाजी ऐसे ही होते, तो घर बैठे ही न पुजते और क्यों घर घर भीख मांगते फिरते। कभी किसी ऐसी स्त्री व बैरागी के छल में मत आवो।

अपने चाकरों की तनख्वाह को भी एक प्रकार का उधार ही समझो। कभी दूसरे महीने के लिये मत चढ़ाओ। जिस महीने की तलब हो उसीके अन्त में चुका दो। इस में दो लाभ हैं। एक तो यह कि, बोझ नहीं चढ़ता। दूसरे यह कि, नौकरों को चोरी की टेव नहीं पड़ने पाती। चाकर भूखा रहने और तनख्वाह न मिलने से चोरी सीख जाता है। इसलिये कभी किसी चाकर की तनख्वाह दूसरे महीने को मत चढ़ाओ और अपने चाकरों को तनख्वाह औरों से आठ आने व एक रुपया अधिक दो। इस से एक तो चाकर काम को मन लगा कर करता है। क्योंकि वह जानता है कि, यहाँ से जो छूटूँगा तो मुझे इतनी तनख्वाह न मिलेगी और दूसरे यह कि, पूरी तनख्वाह पाने से चोरी करने को उसका मन न ललचावेगा। नौकर के चोरी करने से वस्तु में बरकत नहीं रहती। जब दीखती है, तब उठी ही सी दीखती है। तुझको यह भी बताना मैं इस समय आवश्यक समझती हूँ कि, चाकर कैसा मनुष्य रखना चाहिये। उसमें ये गुण होने च[illegible]

(१) जो मनुष्य विश्वासपात्र हो, (२) चाल चलन का अच्छा हो, (३) परिश्रमी हो, (४) दीन हो, (५) उत्तर देनेवाला न हो, (६) झूँठ बोलने वाला न हो, (७) यहाँ की बात वहाँ और वहाँ की यहाँ न कहता हो, (८) बेअदब न हो, (९) चोर न हो, (१०) ज्वारी न हो, (११) स्वामिभक्त हो, (१२) टहलुआ हो, चाकर के सङ्ग अनुचित कड़ापन न करना चाहिये । उसके दिल को थामे रहे । बेर बेर नौकर को थोड़ी थोड़ी बात पर झिड़के नहीं और क्रोध न करे । जब वह अपराध करे, तब अकेले में उसे समझ देवे व ताडना कर दे, पर सबके सन्मुख न करे । पुराने नौकर को जहाँ तक हो, न निकाले और नौकर जल्दी जल्दी न बदले ।

चटोरपन से भी अधिक व्यय होता है और कभी पूरा नहीं पडता । गृहस्थ की बहू बेटियों को चटोरपन से बहुत ही दुःख भोगना पडता है । सदा नङ्गी बूची ही सी रही आती हैं । कभी शरीर पर न अच्छा कपडा होता है और न गहना पाता ।

चटोरपन तो जब सूझना चाहिये, जब पेटदास और बीबी जीभ के स्वाद से कुछ उभरे । चटोरी स्त्रियों को यहाँ तक देखा है और सुना है कि, गहना-पाता, हाट-

हवेली सब बेच कर खा गई और अन्त को भिखारिन सी हो बैठीं। कहा है,

दो० जीभ न जाके वश रहे, सो नारी मतिहीन।
धन लज्जा आरोग्यता, करे प्रतिष्ठा क्षीन॥
ऋणी दुखी निज को करे, नारि चटोरी जोइ।
झूठ डाह कपटादि सब, औगुण ताके होइ॥

गृहस्थ की लोकलाज गहने और कपड़े ही से है। चाहे घर में धन बहुत न भी हो, पर सौ पचास रुपये का दूम-छल्ला और हुरमत-आबरू का कपड़ा अवश्य हो। जो दस में जा कर बैठे, तो भिखारिनि सी तो न लगे। पर जो चटोरिन होती हैं, वे सदा भूखी और दरिद्रिणी ही रहती देखी हैं। क्योंकि यह किसी ने सच कहा है कि, 'चटोरी जीभ धन को नहीं देख सकी और उसके आगे कुछ नहीं ठहरता।' गृहस्थ जब कोई तीज त्यौहार आता है, तब तो ऐसी वस्तु खाने पीने की बना लेती है, पर नित्त और सदा नहीं खातीं। क्योंकि खाने के आगे कुआँ और खाई तक भी निबट जाती हैं। चटोरपन गृहस्थ को निर्धन कर देता है और निर्धनकी कोई बात नहीं पूछता। जिस पर बीतती है, वही भोगता है। सम्पत्ति में हज़ार सङ्गी हो जाते हैं। विपत्ति में सब दूर भजते हैं। किसी का वाक्य है कि, "वन में फिरना बाघ और हाथी के मुख में पड़ना।

वृक्ष के नीचे निवास करना, फल खा कर जीना, घास पर सोना, छाल और पत्ते पहिन कर अङ्गरक्षा करना अच्छा है, परन्तु निर्धन हो कर बन्धुवर्गों में रहना अच्छा नहीं।" इसलिये सञ्चित धन को व्यर्थ व्यय कर के निर्धन न हो बैठे। परन्तु यह भी न सोचे कि, अधर्म से धन एकत्र करे। नहीं, अधर्म के धन से तो धनहीन ही अच्छा है, इसलिये कोई काम ऐसा न करे, जिससे विपत्ति आवे, क्योंकि उस समय लोगों की यह रीति होती है,

दो० यद्यपि अपनो होय तउ, दुख में करत न सीर।
ज्यों दुखती अँगुरी निकट, दूसरि ताहि न पीर॥

घर की सामग्री कम से कम एक महीने की मँगा कर रख लेनी चाहिये। इकट्ठी आने से ओत पड़ती है और जो फसल पर नाज व दूसरी वस्तु ली जाय, तो और भी ओत होती है और सस्ती मिल जाती है। बाज़ार से आई हुई वस्तु को तोलना चाहिये। जितनी घटे, वह मँगानी चाहिये। क्योंकि प्रथम तो बनिया ही स्याना होता है और फिर 'चोर के भाई गठकटे' चाकर होते हैं। एक रुपये में चौदह आने का लाते हैं। सेर दो सेर राह में ही निकाल कर रख आते हैं। वस्तु जब मँगवाई जाय, तब दो व चार के यहाँ से भाव पुछवा कर मँगवानी

चाहिये। एक ही के भाव पर न मँगवा लेना चाहिये और न किसी से उचापत उठानी चाहिये। उचापत में कुछ तो वैसे ही बाजार के भाव से कम मिलता है। दूसरे ध्यान नहीं रहता कि, क्या उठा और मोदी ने कितने का कितना लिख लिया। जब मँगावे, तब नक़द दाम दे कर मँगवावे। इसमें एक तो वस्तु चार स्थान से देख भाल कर आती है, दूसरे सस्ती आती है। क्योंकि कहा है, 'तुरत दान महाकल्यान।'

जो वस्तु थोड़ी सी भी बचे, उसको उठा कर उसके स्थान पर रख देना। पर एक वस्तु को सात जगह न रखना चाहिये। किन्तु एक वस्तु को एक ही स्थान में रखना ठीक है। क्योंकि इस प्रकार करने से कोई वस्तु फैली व निखरी नहीं रहती और मूसे, बिल्ली के मुख नहीं पड़ने पातीं, जिसमें हानि हुआ करती है। छोटी छोटी वस्तु भी सैंत कर रखना चाहिये। जैसे लकड़ियों के कोइले, जो जाड़े के दिनों में तापने के काम आवेंगे और दाम डाल कर मोल न मँगवाने पड़ेंगे। आटे की भूसी, दाल के छिलके और चूनी। नाज की फटकन, सेहूँ सरसों को सैंत कर रखने से गोबर बहुत सुगमता से आ जाता है अर्थात् अहीर, धोबी व पड़ोसी जिसके यहाँ से गोबर मँगाना हो, इनको दिला भेजे, तो वह

को इसप्रकार भेजती कि, कोई नहीं कहती कि, थोड़ी आई। वह यह करती थी कि, इसका बायना आया, उसके दिला भेजा, उसका आया, इसके दिला भेजा। परन्तु इस चतुराई के संग कि, कभी किसी ने न पहिचाना। उसकी क्या चतुराई थी कि, एक वस्तु इसके घर की धरी, दूसरी दूसरे के यहाँ की धरी। इसी प्रकार चार पाँच में से चार पाँच प्रकार की थाली बना दी और एक आध अपने यहाँ की रख दी, जिससे कोई पहिचान न सके। मैं उसकी यह चतुराई देख कर बड़े अचम्भे में रही और अपने मन ही मन में उसकी सराहना किया करती। जब कभी वह मेले में जाती, तो खाने पीने की वस्तु घर से बना कर ले जाती। वह कहती कि, मेले में वस्तु अच्छी नहीं मिलती और दाम उनके दूने डालने होते हैं। जो घर में नहीं बन सका था, उसे बाजार से मँगवा लेती थी। शेष सब घर में तय्यार कर लेती थी। अपनी आमदनी में से सदा आधा उठाती थी और आधा जोड़ती थी और यह कहा करती थी कि, गृहस्थ को सदा चींटी और कुकुटी (मुर्गी) की भाँति रहना चाहिये। क्योंकि चींटी समय पर प्रत्येक आवश्यक वस्तु को जोड़ कर घर में रखती है। जैसे बैशाख और कार्त्तिक में खेतों में से नाज ला ला कर छः छः महीने के खाने को इकट्ठा कर

ती है और फिर वर्षाकाल तथा शीतऋतु में चैन से कर खाती है। ऐसा नहीं होने देती कि, साख कटने समय तो जब अन्न खेतों में मिल सकता है, आलस्य जावे और पीछे कुसमय में ढूँढती डोले अथवा भूखी। कुकुटी की रीति यह है कि, खाती जाती है और भी डालती जाती है और साथ के साथ ही अपने को भी खिलाती जाती है। इसी प्रकार गृहस्थ स्त्री अपने बाल बच्चों को खिलाते पिलाते थोड़ा थोड़ा सा भी डालते जाना चाहिये, जो किसी समय काम। इस पर मुझे एक छोटी सी कहानी भी याद आ सो सुनाती हूँ।

एक बेर जाड़े की ऋतु में एक टिड्डा मुहार की मक्खियों छत्ते के पास गया और कहने लगा कि, थोड़ा सा द मुझे भी दो। मक्खियाँ बोलीं कि, अब तुम भूख और क्यों ठिठरे जाते हो? गरमी में क्या करते रहे थे, अब इस कष्ट को भोग रहे हो? हमने पहिले ही सोच या था कि, आगे जाड़े के दिन आवेंगे और उस समय न की सामग्री के मिलने में बड़े बड़े कष्ट होंगे और तब किसी समय न मिल सकेगी। इसीलिये सोच कर पूर्व कष्ट और परिश्रम कर के यह शहद इस समय के नों को इकट्ठा कर लिया था और अब बैठे आनन्द

से खाते हैं। तुमको हमने देखा था कि, तुम आनन्द से उस समय निश्चिन्त फिरते थे। सो अब उसका फल भोगो। वह टिड्डा भूख का मारा दो चार घंटे में मर गया। इसलिये जोडने और न जोडनेवाले में इतना ही अन्तर होता है। जोडने के लिये प्रायः लोगों को सहज उपाय यह है कि, बचे हुए धन का गहना बनवा लेते हैं। क्योंकि रोकड के तो उठ जाने का डर भी रहता है। गहना-पाता जो बन जाता है, वह फिर नहीं उठता है। प्रतिष्ठा की तो प्रतिष्ठा और पूँजी की पूँजी हो जाती है।

परन्तु मेरी सम्मति इस प्रकार जोड़ने की नहीं है। क्योंकि इस रीति से जो तुमने १) बचाया तो तुम्हारे पास आठ आने ही जुडेंगे। आठ आने बट्टेखाते, जावेंगे। क्योंकि १) की चाँदी मोल लेने में -) *बदलाई का और =) कम से कम गढ़ाई के देने पडते हैं। एक वर्ष भर में =) भर चाँदी घिस जाती है और कम से कम -) व्याज का टोटा रहता है। इस लेखे से १) में ।=) का टोटा रहता है। अब वर्ष भर पीछे, जब इसको फिर सुनार को दिया तो उसने)॥ आध आना तो टाँके का और

* यह लेखा पहिला है। आजकल कुछ दिनों से चांदी सस्ती हो गई है, इसलिये बट्टा नहीं लगता, किन्तु १) में तोले भर से अधिक चांदी आ जाती है।

॥।॥ पौन आना बदलाई का और ≈) दो आने गढ़ाई के फिर लिये और १) भर बना कर दी। अब देख कि, ।≈) तो पहिले लगे और ≡)॥ अब लगे अर्थात् सब ॥~) लगे। तब ॥।~) तेरह आने भर चाँदी हाथ रही। क्योंकि रुपये भर में से ≈) भर घिस कर और ~) भर जो बेर के टाँके में ≡) भर कम हो गई। इसलिये मेरी अनुमति नहीं है कि, गहने बनाना धन सचय का ठीक उपाय मान लिया जावे। हाँ पुराने विचार से यह ठीक है। परन्तु अब के विचारानुसार रुपये को कम्पनियों में लगा दे, जिनमें बिना परिश्रम के औरों से अधिक ब्याज पड़ जाता है। गहने में यह एक और दोष है कि, जब कभी रुपये की आवश्यकता होवे, तब उलटा इस पर और ब्याज देना पड़ता है।

यदि मैं तुझको समस्त भारतवर्ष का लेखा बताऊँ कि, यहाँ गहने-पातों में कितने रुपये का घाटा बनवानेवालों को पड़ता है, तो मैं समझती हूँ कि, तू काँप जावेगी। यह घाटा इतना है कि, इसमें एक राज्य मोल ले लिया जावे। सुन! इस भारतवर्ष में (४,०१,०००) चार लाख, एक सहस्र सुनार हैं, जो गहना गढ़ते हैं। यदि इन की छः छः रुपये मासिक भी आय मान ली जावे, तो वर्ष भर के २,८८,७२,०००) दो करोड़, अट्ठासी लाख,

बहत्तर सहस्र रुपये होते हैं। समस्त भारतवर्ष में २३ करो
रुपया गहने पाते में लगा हुआ है। यदि रुपये में ≈)ढ
आना भर भी घिसाई और छीजन मान ली जावे
तो तीन करोड के लगभग हो जाता है, जो व्यर्थ है
जाता है और जिसके जाने का किसी को भी कुछ
विचार नहीं होता है। यदि यही २३ तेईस करोड़
रुपया जो गहने में लगा हुआ है, १२) सैकडे साल के
ब्याज पर कम्पनियों में लगाया जावे, तो पौने तीन
करोड रुपये होते हैं। अब तीन और पौने तीन को
जोड़े, तो पौने छः करोड रुपये हुए। पौने छः करोड़
और तीन करोड पौने नौ करोड रुपये गहने-पाते के
बहाने से नष्ट हो जाता है। जो स्त्रियाँ चतुर होती हैं, वे
घर का प्रबन्ध ऐसे प्रकार करती हैं कि, थोडे ही दिनों
में वे धनवानों की गिनती में हो जाती हैं और सदा
आनन्द से रहती हैं। ऐसी स्त्रियाँ घर करनेवाली, गृह-
दक्षा, चतुरा आदि के नाम से भूषित होती हैं। इस
लोक में भी बड़ाई पाती हैं और धन से धर्म कर के
अपना परलोक भी सुधार लेती हैं। मैं तुझको एक
ऐसी ही स्त्री की कथा और सुनाये देती हूं। एक स्त्री,
लकडहारी कैसे धनवान् हो गई और राजा तक उसके
घर आने लगा। रात्रि तो बहुत हो गई, पर आज

जितना मैंने तुझसे कहा है, उसका सार इसमें आ जायगा और तू भली भाँति जान जायगी कि, चतुर स्त्रियाँ घर कैसी करती हैं। ले, सुन! किसी नगर में एक राजा था, उसकी स्त्री का नाम सुविद्या था। वह बड़ी चतुर, पण्डिता, गृहकार्य, प्रबन्ध और व्यय उठाने में महादक्षा थी। जब उसके पुत्र का जन्म हुआ, तब राजा ने पण्डितों को बुला कर ग्रह आदि का विचार कराया। उन्होंने पुत्र को बड़ा तेजस्वी, प्रतापी, ऐश्वर्यवान् इत्यादि गुणवाला बताया। राजा को सुन कर विस्मय हुआ और कहने लगा कि, क्या इस समय संसार में दूसरे का जन्म न हुआ होगा। यह विचार अपने मन में धर समय पा कर दूत देश देश को भेजे कि, जो मनुष्य इसी लग्न और मुहूर्त में उत्पन्न हुआ हो, उसको खोज कर लाओ। दूत ढूँढ़ते ढूँढ़ते किसी एक लकड़हारे महादरिद्री को लाये। राजा ने पण्डितों की सभा करके पूछा कि, इस मनुष्य का भी जन्म इसी लग्न में हुआ है, जिसमें राजकुमार का। फिर यह ऐसा क्यों है? उन्होंने भाँति भाँति के उत्तर दिये, परन्तु राजा की तृप्ति न हुई। इसी सोच विचार में वह रानी सुविद्या के राजभवन में चला गया। रानी ने यथोचित आदर-सत्कार कर के हावभाव कटाक्ष से सदैव की भाँति राजा के मन को

प्रसन्न करना चाहा। पर राजा को उदासीन और विचार में निमग्न जान वह कारण पूछने लगी। राजा ने टालटूल की, पर रानी ने हठ कर के पूछ ही लिया और राजा ने सब वृत्तान्त कह सुनाया। रानी ने उत्तर दिया कि, यह तो अति सुगम बात है। उसके घर में उसकी स्त्री मूर्ख और फूहर होगी, जिस कारण वह निर्धन रहता है। ऐसा उत्तर रानी के मुख से सुन कर राजा को क्रोध आ गया कि, इस रानी को अपनी गृहदक्षता का गर्व है कि, मेरा राजपाट भी सब इसी के बुद्धिबल से है। ऐसी ठान, रानी को देशनिकाला दे दिया। इसमें कोई सन्देह न करे, राजाओं की ऐसी ही दशा होती है। नीति का वाक्य है,

दो० राजा जोगी अग्नि जल, इनकी उलटी रीति।
जो इनके नियरे बसे, थोड़ी पालें प्रीति॥

रानी ने भी ठान ली कि, अब चल कर उसी लकड़हारे के यहाँ रहूँगी और राजा को अपने वचन का परिचय दिखाऊगी। ऐसा विचार वह उसी लकड़हारे के घर चल दी। जब वहा पहुँची, तो उससे निवेदन कर कहने लगी कि, हे पिता! तू मुझे अपने यहा रख ले। तेरी टहल कर दिया करूँगी। जो कुछ मिस्सा-कुस्सा, रूखा-सूखा होगा, खा लिया करूगी। यह कहते कहते उसके

झट झट से लकड़ी बिनवाने लग गई। लकड़हारा बोला कि, हम आप एकादशी करते हैं। जिस दिन लकड़ी बिक जाती हैं, उस दिन आधी-परधी रोटी मिल भी जाती है। जिस दिन नहीं बिकती, उस दिन तो घर के मूसे भी ग्यारस ही करते हैं। तब रानी ने गिड़गिड़ा कर कहा कि, जो कुछ मेरे भाग्य का होगा, वह मुझे भी मिल जायगा। इस पर लकड़हारे को कुछ दया सी आ गई। मन में विचार कर कह दिया कि, अच्छा, जैसे हम रहते हैं, वैसे ही तू भी हमारे सङ्ग दु:खी सुखी रह। परमेश्वर तेरे भाग्य का भी टुकड़ा भेजेगा। क्या जाने, तेरे भाग्य से हमें ही लेना पावना हो। यह चतुर तो थी ही, एक बोझ उसी लकड़हारे की बराबर थोड़ी ही देर में बीन लिया और दिवस तो उसको चार पैसे की ही लकड़ियाँ मिलती थीं, आज उससे दूनी हो गयीं। जब वह लकड़ी रख कर चला, तो यह भी सिर पर लकड़ी रख कर चल दी। उस लकड़हारे की स्त्री का स्वभाव बहुत ही क्रूर था। रात दिन घर में क्लेश और कलह रखती थी और उसका नाम कुबुद्धि था। दूर ही से दूसरी स्त्री को सङ्ग आते देख कर बोली कि, आज इतनी देर लगा दी। हम तो भूखी बैठी हैं, बाल बच्चे प्यारे प्राण खाये जाते हैं। मन में कुछ और भी सन्देह करने लगी।

सुविद्या तुरन्त ताड गई और कहने लगी कि, हे माता! आज और दिन से दूनी लकड़ी भी तो आई है। इसी कारण देर लग गई और मेरे पिता ने मुझ पर दया कर के जीवदान दिया है और तेरी सेवा-टहल करने को मुझ पुत्री को लाया है। उस पर क्रोध मत कर। इस देर होने की कारण मैं हूँ। इस प्रकार मीठे मीठे वचन कह कर उसे शान्त किया और उन लकड़ियों के तीन गट्ठे बना कर आप बेटों पर रख दिये कि बेंच लावो। और दिन तो चार पैसे की लकड़ी बिकती थीं, आज वे ही दस पैसे की बिकीं। क्योंकि तीन बोझ थे। उस दिन छः पैसे का तो भोजन मँगवाया और चार पैसे को बचा रक्खा। दूसरे दिन इस सुविद्या ने उसके दोनों लड़कों को भी पिता के संग बहला-फुसला कर, एक एक पैसे का लालच दे लकड़ी बीनने और बेचने को भेजा और आप एक पड़ोसिन के यहाँ जा कर, उसे अपनी बिनती से मोह कर उसके यहाँ आटे पीसने की युक्ति लगा ली। यह लकड़हारा पकी हुई रोटी लाता था। उस दिन भी, जब एक एक पैसा दे कर चार पैसे बच रहे और घर भोजन बनाने से सब का पेट उसी में भर गया, जिसमें और दिन भूखे रहते थे तब उन बचे हुए पैसों की इसने रुई मँगाई और उसे अपनी पड़ोसिन

के खाली चर्खे से कात कात कर सूत बेचा । इसी प्रकार इन्होंने बीस दिन करने से इसके पास एक रुपया हो गया ।

अब इसने क्या किया कि, लकड़हारे को एक कुल्हाड़ी मोल दिलवा दी कि, बीनने से तो ईंधन थोड़ा आता है । इस कुल्हाड़ी से काट काट कर अच्छी मोटी मोटी लकड़ी लाया करो, जो अधिक दामों की बिकें और शेष दामों की सुई पेचक और कुछ कपड़ा मँगवा लिया । उस पर आप टोपियाँ काढ़ने लगी और उधर दस बीस घरों से मेल-मिलाप डाल लिया । जब कोई वस्तु चाहिये, माँग लावे, काम निकाल कर दे आवे । किसी के लड़के की टोपी सी दे और किसी का कुर्ता । खाँसी और दस्तों की औषध बना कर रख ली और सब को बाँटने लगी । इससे तो यह सब की बहुत ही प्यारी बन गई और बड़ाई होने लगी । लकड़ी अब पाँच छ आने नित्त की बिकने लगीं । दो दो तीन तीन आने की टोपियाँ बिकने लगीं, थोड़े ही दिनों में दस पाँच रुपये जुड़ गये ।

अब इसने चूल्हे आग के बर्तन बिसाह लिये और अपना मकान भी कुछ सुधारा कि, जिससे बाहर से आने-वाले को बैठने का स्थान हो गया ।

आप भी टोपियाँ आदि बनाती थी और पड़ोसिनों की लड़कियों को भी बनाना सिखाती थी । इसके बने

हुए रूमाल, दुपट्टे, चिकनें इत्यादि अधिक अधिक मूल्य को अब बिकने लगे। जब कुछ और धन एकत्र हुआ, तो इसने अपने धर्मपिता को दो गदहे मोल ले दिये और कहा कि, अब लकड़ी इन पर लाद कर लाया करो और बेचो मत, इकट्ठी करते जाओ। जब वर्षा होगी, तब बेचेंगे। जिससे दाम अधिक मिलेंगे और लिये लिये भी बेचने को मत फिरो। एक टाल कर लो। वहाँ बैठे बैठे वर्षा में बेचा करना। अब तो ला ला कर केवल जोड़ते जावो। लकड़हारे ने सोचा, बात तो अच्छी है। जब पेट भर कर खाना मिलने लगा, तो कुबुद्धि भी प्रसन्न रहने लगी और मन में विचारने लगी कि, एक यह भी स्त्री है कि, जो ऐसी चतुर है कि, जबसे हमारे यहाँ आई है, क्या से क्या हो गया और एक मैं हूँ कि, नित्त कलह रखती थी। जिस दिन से यह आई है, उस दिन से हमारे घर में लड़ाई का कोई अब नाम भी नहीं जानता। ऐसे ऐसे विचार करके थोड़े ही दिनों में कुबुद्धि भी बुद्धिमती हो गई। जब इस लकड़हारे के यहाँ इतना हो गया तब सुविद्या ने अपना और वैभव फैलाया। वह क्या था कि, अब स्त्रियों और बालकों की दवाई करने लगी। रानी तो थी ही; सब जानती ही थी। इससे यह नगर भर में प्रसिद्ध होने लगी और घर घर से बुलाने आने

लगे। एक तो इसकी दवाई बहुत अच्छी थी, दूसरे बोलचाल, रहनसहन, शीलस्वभाव, दयानम्रता आदि ऐसी थीं कि, मन हर लेती थीं। जिसके यहाँ एक बेर हो आई, उसके यहाँ से सदा की रीति भाँति जुड गई। तीज त्यौहार कोई ठिक नहीं, जो उनके यहाँ से कुछ न आवे। अब तो इसका घर सब प्रकार से भरा पुरा रहने लगा और एक बात और कि, पडोस की लडकियों को अपने पास ले बैठे और उनको पढ़ाया करे। उनके संग अपने दोनों भाइयों को भी पढ़ा लिया और थोडा सा लेखा-जोखा अपने पिता को भी सिखा लिया। इसका ऐसा नाम नगर में हुआ कि, भले घर की बहू बेटियों के यहाँ भी यह जाने लगी और कुछ मासिक वेतन भी दो चार बडे बडे घरों से पाने लगी। सेठ साहूकारों के घरों में आने जाने से इसकी प्रतीति और भरोसा पड गया। यदि इसको १०० व ५० रुपये की आवश्यकता हो, तो मिलने लगे।

जब इसका ऐसा हाल हो गया, तब इसने दो चार साहूकारों से कह सुन कर अपने नाम का माल उनके रुपये से भरवा और उन्हीं से एक भरोसे का गुमाश्ता नौकर रखवा कर अपने पिता को उसके संग किया कि, इसको जा कर दूसरे देशों में बेच लावो और जो कुछ

वस्तु उन देशों में सस्ती हो, इसके पलटे में भरते लाना। यह कह उनको तो वहाँ रवाने किया और भाइयों से कहा कि, अब तुम सेठ साहूकार और भले मनुष्यों में बैठते उठते हो, तो अब इस प्रकार रहना सहना चाहिये कि, कोई अपने मन में तुमसे ग्लानि न करे और पास बैठने और बैठाने में सकुचे नहीं। सो यह करना चाहिये कि, प्रथम तो रहने का घर उत्तम प्रकार का बनाना चाहिये कि, किसी उच्चकुल की बहू बेटी आवे तो अच्छे प्रकार बैठे उठे।

इसलिये प्रथम फलाने साहूकार की हवेली भाड़े पर ले लें। उनसे हमसे रीति भाँति भी अधिक है और एक दिन बात चलने पर कहा भी था कि, तुम हमारी हवेली ले लो, खाली पड़ी है। सो यों तो नहीं लेना चाहिये। बेभाड़े किसी के मकान में रहने से स्वामी का दवाव तनिक अधिक रहता है। इसलिये भाड़े पर लेना ठीक है। चाहे भाड़ा औरों से थोड़ा हो जायगा। यह विचार कर उस हवेली को भाड़े पर ले लिया और उसी में रहने लगे। दूसरी बात उस ने यह कही कि, हमारा धन्धा सदा से लकड़ी का है। चाहे हैं हम ब्राह्मण, पर जो धन्धा है, उसे न छोड़ना चाहिये। मैं बताऊँ सो करो कि, इस टाल में तो लाभ थोड़ा होता है और लकड़ी बेचनेवाले व टालवाले ही कहलाते हैं। तुम कुछ मिस्तरी रख लो और बड़े बड़े पेट

साल, शीशम, आम, नीम इत्यादि के मोल ले ले कर उनकी कुर्सी, मेज़, सन्दूक ऐसी ऐसी कारीगरी की चीज़ें बनवाओ और रुपया जितना चाहिये, कारख़ाने के लिये उधार ले लेंगे। नदी के तीर व किसी बड़े बन से काट काट कर अच्छी लकड़ी मँगवाओ, जिनकी ये वस्तुएँ सुन्दर बनने में आवें। यह विचार एक साहूकार से दो सहस्र रुपये के लिये उधार दे देने को कहा। उसने भी इनको उद्यमी जान और चालचलन का भी ठीक समझ कर वे टोंके रुपये दे दिये। इस रुपये से इन्होंने लकड़ी मोल ले कर वे वे वस्तुएँ बनवाईं, जो दुगुने, तिगुने दाम की बिकीं। उधर लकड़हारा माल को दुगुने चौगुने मूल्य पर बेच कर और उसके रुपये से भाँति भाँति की वस्तु लाद कर लाया, जो हाथों हाथ यहाँ ड्योढ़े, दूने और चौगुने दामों पर उसी दम बिक गई। जिससे इनको पचगुना, छ:गुना लाभ हुआ। जो रुपया बिकने का आया, उसको सुविद्या ने घर में न आने दिया। उसी समय जिस जिसका लिया था, दाम दाम और कौड़ी ब्याज समेत चुका दिया और जो बचा, उसको अपने घर में धरा।

अब तो थोड़े ही दिन में दस बीस सहस्र की पूँजी इनके घर की हो गई। दूसरों से भी उधार लेने की

कुछ आवश्यकता न रही । पर सुविद्या ने सोचा कि अभी अपने घर के रुपयों से व्यवहार करना अच्छा नहीं है । एक बेर और इसी प्रकार अपने पिता को भेज दूँ और जब अब के लाभ हो, तब उसके पीछे फिर उधार न लेंगे । ऐसा सोच कर एक दो महीने पीछे फिर अपने पिता और उसी गुमाश्ते को पहिले की बराबर माल भरवा कर साहूकारों से लदवा दिया ।

अब तो सेठ साहूकारों में इनकी बड़ी साख हो गई थी । सब ने बेकहे सुने भर दिया । इधर इसने किसी ब्राह्मण के अच्छे कुल में अपने भाइयों के विवाह की सट्ट लगाई और तुरन्त दोनों की सगाई कर के चट्ट विवाह कर लिया । क्योंकि अब तो बहुत से अपनी अपनी बेटी देने को चाहते थे । जब इसका पिता लकड़हारा परदेश से उलट कर आया और पहिले से भी अधिक लाभ हुआ, तब तो इन्होंने हुण्डी की कोठियाँ खोल दीं और दूसरे नगरों में आढ़त डाली और सेठ बन बैठे और सुविद्या के सुबन्ध से जगत्सेठ की पदवी पा गये ।

सुविद्या ने देखा कि, अब अवसर है कि, राजा को अपने वचन का परिचय दिखाऊँ कि, मेरा कहना सत्य था व असत्य । यह विचार वह अपने धर्म पिता से बोली

कि, अब तुम जीगन्सेठ कहलाते हो और देश देश की अलभ्य वस्तुएँ तुम्हारे यहाँ आती हैं । कुछ अच्छी अच्छी वस्तुएँ ले कर राजा से भेंट करना चाहिये । यह हमारा धर्म है कि, अपने देश के राजा को अपने से प्रसन्न रक्खें । अब तक तो हम लोग किसी गिनती में न थे, सो कुछ चिन्ता न थी, पर अब बड़े हो गये । न जाने, किस समय काम पड़े । इस कारण तुम फलाने फलाने कामदार से मिलो । फिर पीछे उनके द्वारा तुम्हारा मिलाप राजा से हो जायगा ।

यह तो रानी थी, सब रीति भाँति राजद्वार की जानती थी । इसके पिता ने कहा कि, मैं क्या जानूँ इन बातों को । मैं तो लकड़हारा हूँ । नहीं जानता कि, राजा से कैसे मिलते हैं । रानी ने उसको इस प्रकार की सब बातें समझा बुझा कर उसे राजा के पास भेज दिया । जिस प्रकार सुखिया ने इसको बताया था । यह उसी प्रकार राजा से मिला और घर आ कर सब वृत्तान्त कहा । थोड़े दिन पीछे सुखिया ने इसे फिर भेजा । इसी प्रकार दो चार बेर की मिलाभेंटी में यह सब बातें जान गया और राजा से अधिक मेलमिलाप होगया । जब इस प्रकार हो चुका तब सुखिया ने कहा कि, हे पिता ! तुम राजा का भोज एक बेर अपने यहाँ करो । कहना कि,

महाराज ! इस दास के घर को भी किसी दिन पधार कर सुशोभित करिये और अपने चरणकमल से पवित्र कीजियेगा । इस प्रकार जब राजा से निवेदन किया, तो राजा ने स्वीकार कर लिया और एक दिन नियत कर दिया कि, फलाने दिन हम पधारेंगे ॥ सुविद्या से जब यह आ कर कहा, तो उसने अपनी चतुराई से घर को ऐसा सुसज्जित किया कि, जैसे राजों महाराजों के होते हैं और वैसी ही सब सामग्री कर ली । अपनी बुद्धिमानी से राजा की रुचि के वे वे भोजन बनवाये कि, जब राजा आया तब घर की शोभा देख कर और भोजन कर के वह अत्यन्त प्रसन्न और आश्चर्य में हुआ । क्योंकि जब से रानी सुविद्या इसके यहाँ से चली गई थी, इसके यहाँ भी ये बातें न थीं । प्रसन्न होकर पूछने लगा कि, कहो, जगत्सेठ ! तुम्हारे सन्तान क्या है ? उसने उत्तर दिया कि, महाराजाधिराज ! आपकी कृपा से दो पुत्र हैं और एक धर्मपुत्री है । वे सब आपके दर्शन की अभिलाषा में बैठे हैं । राजा ने कहा कि, उनको बुलावो । यह सुन कर दोनों लड़कों ने तो आ कर प्रणाम किया और राजा ने जो पूछा, उसका यथोचित उत्तर दिया, जिससे राजा बहुत प्रसन्न हुआ । क्योंकि सुविद्या ने इनको पहिले ही से सब सिखा पढा दिया था कि, राजाओं से

यों बोलते चालते हैं। जब राजा ने पुत्री के लिये पूछा, तो जगत्सेठ ने कहा कि, महाराज! वह उस कोठरी में है। आप वहाँ ही पधार कर उसको कृतार्थ कीजिये। ज्यों ही राजा उठ कर वहाँ गया, त्यों ही सुविधा ने उठ कर, साष्टाग दण्डवत् कर अति आदर और सत्कार किया। राजा को उसकी सूरत देख कर रानी सुविधा का स्मरण हुआ कि, यह तो उसकी अनुहार जान पड़ती है। पर यह जगत्सेठ की बेटी बनती है, वह क्योंकर होगी? पर हाँ, एक बात अवश्य है कि, इसकी आयु सुविधा से अवश्य मिलती है और जगत्सेठ की आयु तो इसके बेटे के बराबर ज्ञात होती है। बेटी बाप से छोटी होनी चाहिये व माता की आयु की सी। यह कदापि इसकी बेटी नहीं है। इसमें अवश्य कुछ न कुछ भेद है। राजा इसी सोचविचार में था कि, सुविधा राजा के चरणों में गिर पडी और कहने लगी कि, आप संदेह न करिये। मैं इस जगत्सेठ की पुत्री नहीं हूँ। मै तो आप ही की दासी हूँ और यह सब अपने वचन का परिचय दिखाने और सत्य करने को किया है। यह वही लकड़हारा है और मैं वही रानी सुविधा हूँ। अपराध इस दासी का क्षमा कीजिये और अपनी सेवा में ग्रहण कीजिये। इतने दिनों आपके विरह में बड़े बड़े

महाराज ! इस दास के घर को भी किसी दिन पधार कर सुशोभित करिये और अपने चरणकमल से पवित्र कीजियेगा । इस प्रकार जब राजा से निवेदन किया, तो राजा ने स्वीकार कर लिया और एक दिन नियत कर दिया कि, फलाने दिवस हम पधारेंगे। सुविद्या से जब यह आ कर कहा, तो उसने अपनी चतुराई से घर को ऐसा सुसज्जित किया कि, जैसे राजों महाराजों के होते हैं और वैसी ही सब सामग्री कर ली । अपनी बुद्धिमानी से राजा की रुचि के वे वे भोजन बनवाये कि, जब राजा आया तब घर की शोभा देख कर और भोजन कर के वह अत्यन्त प्रसन्न और आश्चर्य में हुआ । क्योंकि जब से रानी सुविद्या इसके यहाँ से चली गई थी, इसके यहाँ भी ये बातें न थीं । प्रसन्न होकर पूछने लगा कि, कहो, जगत्सेठ ! तुम्हारे सन्तान क्या है ? उसने उत्तर दिया कि, महाराजाधिराज ! आपकी कृपा से दो पुत्र हैं और एक धर्मपुत्री है । वे सब आपके दर्शन की अभिलाषा में बैठे हैं । राजा ने कहा कि, उनको बुलावो । यह सुन कर दोनों लड़कों ने तो आ कर प्रणाम किया और राजा ने जो पूछा, उसका यथोचित उत्तर दिया, जिससे राजा बहुत प्रसन्न हुआ । क्योंकि सुविद्या ने इनको पहिले ही से सब सिखा पढ़ा दिया था कि, राजाओं से

याँ बोलते चालते हैं। जब राजा ने पुत्री के लिये पूछा, तो जगत्सेठ ने कहा कि, महाराज! वह उस कोठरी में है। आप वहाँ ही पधार कर उसको कृतार्थ कीजिये। ज्यों ही राजा उठ कर वहाँ गया, त्यों ही सुविद्या ने उठ कर, साष्टाग दण्डवत् कर अति आदर और सत्कार किया। राजा को उसकी सूरत देख कर रानी सुविद्या का स्मरण हुआ कि, यह तो उसकी अनुहार जान पड़ती है। पर यह जगत्सेठ की बेटी बनती है, वह क्योंकर होगी? पर हाँ, एक बात अवश्य है कि, इसकी आयु सुविद्या से अवश्य मिलती है और जगत्सेठ की आयु तो इसके बेटे के बराबर ज्ञात होती है। बेटी बाप से छोटी होनी चाहिये व माता की आयु की सी। यह कदापि इसकी बेटी नहीं है। इसमें अवश्य कुछ न कुछ भेद है। राजा इसी सोचविचार में था कि, सुविद्या राजा के चरणों में गिर पड़ी और कहने लगी कि आप संदेह न करिये। मैं इस जगत्सेठ की पुत्री नहीं हूँ। मैं तो आप ही की दासी हूँ और यह सब अपने वचन का परिचय दिखाने और सत्य करने को किया है। यह वही लकड़हारा है और मैं वही रानी सुविद्या हूँ। अपराध इस दासी का क्षमा कीजिये और अपनी सेवा में ग्रहण कीजिये। इतने दिनों आपके विरह में बड़े बड़े

कष्ट से, नीति और धर्म को पाल कर काटे हैं। राजा यह सुन मन में बहुत लज्जा मानी और रानी को ले गया और उस जगत्सेठ को अपना आधा राज दे दिया।

हे बहिन! इसलिये जो स्त्रियाँ ऐसी होती हैं कि घर का प्रबन्ध इस भाँति करती हैं, जैसा इस रानी ने किया, वे सदा सुख और नाम पाती है, जैसा रानी सुविद्या का नाम आज तक चला जाता है। यदि ऐसी चतुर न होती, तो वन में भटक भटक कर ही भूखी मर जाती। बहिन! प्रबन्धविषय में तुझको बता तो मैं बहुत कुछ चुकी हूँ, तो भी कुछ संक्षेप से तुझको प्रबन्ध के गुरु द्वारा और बताना चाहती हूँ। इस प्रकार कि,

(१) आय व्यय का लेखा ब्योरेवार रखना चाहिये।

(२) आय से व्यय यथासाध्य कभी किसी दशा में अधिक न होने दे।

(३) उधार व उचापत में कभी न मँगावे। सदा दाम दे कर मँगावे।

(४) सस्ता समझ कर कभी किसी अनावश्यकीय व व्यर्थ पदार्थ को न खरीदे।

(५) आगे के लाभ पर व आवश्यकता से अधिक मोल न ले।

(६) उस वस्तु को घर से बाहर न जाने दे, जिस को बाहर से घर में नहीं ला सके हैं।

(७) कम से कम १/१० से १/६ तक आय का भाग सदा बचावे। यदि हो सके तो १ से १/४ तक बचावे।

(८) गहनों में घूँघरू व बाजा न डलवावे। इनमें टाँका अधिक लगता है, टूट कर गिर पडते हैं और घिसते भी अधिक हैं।

(९) दुहरे तिहरे गहने न पहिनने चाहियें। इससे बहुत ही शीघ्र वे घिसते हैं और टूट पडते हैं और शरीर भी घिसने से मैला होता है।

(१०) बाहर के मनुष्य के सामने कभी गहने-पाते व रुपये पैसे की धराढकी न करे; किन्तु ऐसे स्थान में और इस प्रकार रक्खे कि, किसी को दृष्टि * मात्र से ही ज्ञात न हो जाये। ऐसे स्थान पर किसी मनुष्य को जाने भी न दे।

(११) गहने-पाते व रुपये पैसे को कभी विना तोले और गिने न रक्खे।

---

* जैसे भीत में धरा है, पर सब भीत तो लिपी हुई नहीं है, उतनी ही लीप दी, जिसमें माल रख दिया है। अथवा वह स्थान समस्त भीत से कुछ उभरा हुआ व नीचा है इत्यादि। ऐसे स्थान पर दृष्टि पड़ते ही भेद प्रकट हो जाता है।

(१२) सोने से पहिले घर को भीतर बाहर से भली भाँति देख ले और ताला कुण्डी जहाँ लगता हो न लगाता हो, लगा कर सोवे।

(१३) व्यर्थ वस्तु मोल न लेवे और ली हुई को बिगडने न दे। इससे कंजूसी का दोष नहीं आवेगा। कंजूस वह है, जो आवश्यकीय वस्तु को भी नहीं लेता और ली हुई को काम में नहीं लाता, किन्तु वृथा कष्ट उठाता है।

(१४) नित्त के गहने कपडे जो पहिनने के हों, उनको तो ऊपर रक्खे, शेष को सुरक्षित स्थान में भले प्रकार रख दे। मूसे, दीमक, कसारी इत्यादि न काट डालें, सावधानी रक्खे।

(१५) घर की प्रत्येक वस्तु को सुरक्षित रक्खे।

(१६) तनिक तनिक सी वस्तु के खो जाने को हानि और थोडे थोडे से भी बचाने को लाभ समझना चाहिये।

(१७) जो वस्तु किसी के यहाँ से माँगी हुई आई हो, उसको बहुत सावधानी से रखना चाहिये और काम हो जाने के पीछे तुरंत ही पहुँचा देनी चाहिये।

(१८) धनी बनना चाहे, तो थोथे काम में पैसा न डाले।



स्त्रीसुबोधिनी

द्वितीय भाग

भोजनसंस्कार।

अगले दिन जब दुर्गा ने घर के धन्धे से छुटकारा पाया, तब मोहनी को संग ले बैठी और बोली कि, बहिन! ले, अब तुझको मैं सब प्रकार के भोजन बनाने की विधि बताती हूँ। इसको यों तो सब ही स्त्रियां जानती हैं। ऐसी स्त्री इस देश में कोई न होगी, जो भोजन बनाना न जानती हो। यह काम इस देश में स्त्रियों पर ही रक्खा गया है और बहुत से पुरुष तो इसी प्रयोजन से स्त्री विवाहते हैं कि, हमको भोजन का सुभीता हो जायगा, अपने हाथ से न बनाना पड़ेगा।

यों तो सब ही स्त्रियाँ इसको जानती हैं, पर जिस प्रकार से जानना चाहिये, वैसे नहीं जानतीं। यह विद्या बहुत बड़ी है। इसको सूपविद्या कहते हैं और स्त्रियों के सीखने योग्य है। चाहे आप बनावें, चाहे दूसरों से बनवावें। यदि आप जानती होंगी, तब तो दूसरे से भी

अपने प्रबन्ध से अच्छा बनवा लेगी; नहीं तो दूसरों के हाथों से भी वही बुरा, भला, कच्चा, पक्का, जला भुलसा पल्ले पड़ेगा।

भोजन बनाने का भार स्त्रियों पर ही रहना अच्छा है। इस कारण कि, यह आठ पहर घर ही में रहती हैं। जब स्त्रियाँ चतुर होती थीं, तब तो इस देश के बराबर यह विद्या कहीं नहीं थी। 'छप्पन भोग' और 'छत्तीस व्यंजन' अब तक प्रसिद्ध चले आते हैं। एक एक वस्तु में नाना प्रकार की सामग्री बनाती थीं; पर अब बनाना कठिन हो गया है। क्योंकि स्त्रियाँ क्रियाहीन हैं। इस विद्या को जानती ही नहीं हैं। नहीं तो एक एक अन्न में से वे वे पदार्थ बनते थे कि, बस कुछ कहा ही नहीं जाता। जीभ ही चाखा और जीभ ही ने जाना, कहने में कुछ नहीं आ सक्ता।

स्त्री को यह विद्या अवश्य ही सीखनी चाहिये। नहीं तो भूखी ही मर जायगी। बहुत से घर तो ऐसे होते हैं कि, जहाँ नौकर-चाकर तो रख नहीं सक्ते और मोल ला ला कर बाजार से खाते हैं, जिससे दाम तो अधिक उठते हैं और काम कुछ भी नहीं सरता।

यदि स्त्री भोजन बनाना जानती है, तो यह दुःख फिर नहीं रहता कि, बाजार से लाने में दाम डालने,

हैं। उतने ही दाम में उससे ड्योढ़ा दूना भोजन घर पर बन सक्ता है।

भोजन बनाने की विधि तनिक पीछे से बताऊँगी। इससे पहिले थोडी सी बातें, जिनका ध्यान भोजन बनाने में रखना चाहिये, बताती हूँ।

सुंदर भोजन इतने सकारों सहित होना चाहिये अर्थात् उसमें स्वरूप, स्वच्छता, स्वाद और सुगन्ध अच्छे होने चाहियें। इनके होने से भोजन में रुचि उत्पन्न होती है और इन्हीं के न होने से उसी भोजन में अरुचि और ग्लानि हो जाती है। भोजन बनाने में चार बातों का ध्यान रक्खे (१) रसोइया को मैला कुचैला न रहना चाहिये, स्वच्छ और पवित्र हो, कुरूप भी न हो, कोई सक्रामक (छूत व उड कर लगनेवाला) रोग उसके न हो। जैसे खाज, कोढ व गरमी, (२) जिन वस्तुओं का भोजन बनावे, उनको पहिले बीन फटक कर सुथरा कर ले। कूड़ा, कर्कट, बाल, मिट्टी न रहने दे, (३) जिन पात्रों में भोजन रक्खे, वे बहुत अच्छी तरह से मॅजे धुले हों। मैले कुचैले न हों, (४) स्थान भी रसोई का बहुत ही सुथरा स्वच्छ और पवित्र हो।

भोजन बनाने में व भोजन के स्थान में कोई बात ग्लानि की न करे और भोजनों को आपस में मिलने न

दे। मीठे को नमकीन में व नमकीन को मीठे में। न भोजन के सने हुए पात्र में दूसरा भोजन धरे, जब तक उसे धुलवा, मँजवा न डाले। ऐसा करने से एक तो स्वाद बिगड़ जाता है, दूसरे कुछ स्वरूप भी और हो जाता है। नमक, मसाला भी थोड़ा बहुत न पड़ने पावे, यथारुचि होना चाहिये। भोजन कहीं से कच्चा भी न रहना चाहिये और न कहीं से जल जाना चाहिये, वरन सिक जाना चाहिये। खटाई की वस्तु को सदा पत्थर, काँच, मिट्टी, काँसी व फूल इत्यादि के बासन में रखना चाहिये। ताँबे व पीतल के बासन में कभी न रक्खे। नहीं तो पितला जाती है।

गरमियों में भोजन सदा ठंढा करके रक्खे। वर्षाऋतु में पवनीक स्थान में रक्खे व किसी ऐसी वस्तु से ढक कर रक्खे, जिसमें हो कर वायु आती रहे। जैसे कपड़ा व डला, टोकरा। इस ऋतु में दाबने से भोजन बहुत ही शीघ्र बिगड़ जाता है व बुस जाता है। पर जाड़ों के दिनों में भोजन को दाब कर रक्खे, नहीं तो तुरन्त ठंढा हो कर कड़ा और सूखा सा हो जाता है। इस बात का ध्यान रहे कि, भोजन को उघारा व खुला हुआ कभी न रक्खे। जब रक्खे तब किसी न किसी से ढका रक्खे। कभी दूसरे स्थान को भोजन खुला हुआ न ले जावे और न ऐसे

न में हो कर दूसरे स्थान को ले जाय, जहाँ [illegible]
पवित्र स्थान पडे । अपवित्र मनुष्य के हाथ भी [illegible]
भेजे । इन बातों से खानेवाले को अरुचि और [illegible]
जाती है । यह ऊपरी बातें तो बता चुकी, अब [illegible]
वि बताऊँगी ।

भोजन इतने प्रकार के हैं, प्रथम खाने की रीति [illegible]
कार के । जैसे स्वाद के लेखे से छ॰ रस हो [illegible]
ये हैं ।

१) पेय (जो पी कर खाया जावे) जैसे [illegible]

२) लेह्य (जो चाटा जावे) जैसे [illegible]
इत्यादि ।

३) चोष्य (जो चोंख कर खाया जावे, [illegible]
अनार, ईख इत्यादि ।

४) चर्व्य (जो चाब चाब कर खा [illegible]
दाल, सेव इत्यादि ।

५) भक्ष्य (जो निगल कर खाया [illegible]
मोहनभोग इत्यादि ।

६) भोज्य (जो रींध रींध कर [illegible]
जैसे दाल, रोटी इत्यादि ।

अब बनाने की रीति से [illegible]

१) निखरा वा पक्का–जिसमें [illegible]

आ गये। जो घी व तेल मे पका कर बनते हैं।
पक्वान आदि।

(२) सखरा या कच्चा—जिसमें वे सब भोजन हैं जो घी व तेल में पका कर नहीं बनते, वरन ... सहारे अग्नि पर सेंक आते हैं। जैसे रोटी, दाल, भात इत्यादि।

(३) फलाहार या सागाहार—जिसमें वे सब भोजन हैं, जो दूध, बूरा व कुट्टू और सिंघाड़े के चून के बनते हैं।

(४) चबैना—जो भून कर, तल कर व छौंक कर बनाये जाते हैं, परन्तु इनमें से बहुत से तो भरबों के यहाँ भुने हुये बिकते हैं; उनकी क्रिया बताने की कोई आवश्यकता नहीं है।

(५) फुटकर—जैसे अचार, मुरब्बा, रायता और साग इत्यादि।

अब इनके बनाने की रीति क्रम से कहती हूँ, सुन।

बहुत से भोजन खाँड से बनते हैं और खाँड में बहुधा मिट्टी मिली रहती है, इसलिये उसे गला कर उस मिट्टी को अलग करना होता है। सो पहिले उसी को बताती हूँ। जितनी खाँड हो, उससे आधा पानी खाँड में डाल, भट्टी के ऊपर कड़ाही में चढ़ा दे और काठ की बनी हुई मुसदी से

ने डाल कर खूब मिला ले और लड्डू बांध ले अथवा मीठे की चाशनी कर के भुने चून को इसमें डाल कर और खूब मिला कर लड्डू बाँध ले।

बेसन का लड्डू–बेसन के बराबर घी ले कर कड़ाही में चढ़ा दे और धीमी धीमी आग से भूने। जब भुन जाय और कच्चा न रहे और न जलने पर आवे (भुने की पहिंचान यह है कि, उसमें से सुगंधि आने लगेगी, कच्चे में से सुगन्धि नहीं आवेगी और जलते हुए की सुगन्धि जले की सी आवेगी) उसको उतार ठंढा कर ले। सवायां व ड्योढ़ा बूरा मिलाने, पर कहीं गरम में न मिला दे। बूरे और बेसन को एकरस कर के, मेवा डाल लड्डू बाँध ले।

इसी भाँति बरते के लड्डू बनते हैं अर्थात् छिले हुए चनों के छिलके उतार कर बहुत ही महीन पीसले और इसी भाँति भून ले। पर बहुत ही मन्दी आग से भूने। क्योंकि यह तनिक ही देर में तेज आग से जल जाता है और काला पड़ कर बिगड़ जाता है। बूरा मिला कर उसी प्रकार बना ले।

सूजी वा मगद का लड्डू–सूजी के बराबर घी कड़ाही में चढ़ा कर मन्दी मन्दी आग से भूने। कोंचा ...ाय। जब उसका रङ्ग कुछ बदलने पर

वह जो झाग बचे है, उनको भी खाँड ही की निथार कर चोखा कर ले ।

पहिले लड्डू बनाने की रीति कहती हूँ, जो इ प्रकार के होवे है । मोतीचूर का, मूँग की पिट्ठी का, का, उडद की पिट्ठी का, सूजी का, बेसन का, बल्ले क मुठिया का, चूरमें का, चून का, तिल का, गुरधानी मुरमुरों का, मेथी का, कँगनी का इत्यादि ।

बहिन ! मै तुझको इन सब के बनाने की रीति ब लाती हूँ, परन्तु स्त्री को इनसे बहुत कम काम पड़ता और इनके बनाने के लिये खटराग अधिक करना प है और ये बने बनाये भी बाजार में हलवाई की दूका पर अच्छे से अच्छे जितने चाहो, मिल सक्के हैं । मैं तु को केवल वे ही भोजन बनाना बताना चाहती हूँ, ि से स्त्री को नितप्रति काम पड़ता है और जो बाजार मोल नहीं मिल सक्के और जिनके बनाने में अ बखेड़ा भी नहीं करना पड़ता है ।

मूँग का लड्डू-मूँग को मोटी मोटी छाँट कर भ में भुनवा ले । दल कर उसको फटक लेवे कि, छिलका अलग हो जावे । तब चक्की से पीस लेवे । के चून से आधा घी डाल कर थोड़ा भून ले श फिर सेर आटे पीछे तीन पाव व ढाई पाव बूरे के हिस

में डाल कर खूब मिला ले और लड्डू बांध ले अथवा मीठे की चाशनी कर के भुने चून को इसमें डाल कर और खूब मिला कर लड्डू बाँध ले।

बेसन का लड्डू–बेसन के बराबर घी ले कर कड़ाही में चढ़ा दे और धीमी धीमी आग से भूने। जब भुन जाय और कच्चा न रहे और न जलने पर आवे (भुने की पहिचान यह है कि, उसमें से सुगंधि आने लगेगी, कच्चे में से सुगन्धि नहीं आवेगी और जलते हुए की सुगन्धि जले की सी आवेगी) उसको उतार ठंढा कर ले। सवाया व ड्योढ़ा बूरा मिलावे, पर कहीं गरम में न मिला दे। बूरे और बेसन को एकरस कर के, मेवा डाल लड्डू बाँध ले।

इसी भाँति चरले के लड्डू बनते हैं अर्थात् खिले हुए चनों के छिलके उतार कर बहुत ही महीन पीसले और इसी भाँति भून ले। पर बहुत ही मन्दी आग से भूने। क्योंकि यह तनिक ही देर में तेज़ आग से जल जाता है और काला पड़ कर बिगड़ जाता है। बूरा मिला कर उसी प्रकार बना ले।

सूजी वा मगद का लड्डू–सूजी के बराबर घी कड़ाही में चढ़ा कर मन्दी मन्दी आग से भूने। कोंचा से चलाता जाय। जब उसका रङ्ग कुछ बदलने पर

वह जो भाग बचे हैं, उनको भी खाँड ही की निथार कर चोखा कर ले।

पहिले लड्डू बनाने की रीति कहती हूँ, जो इतने प्रकार के होते है। मोतीचूर का, मूँग की पिट्ठी का, का, उडद की पिट्ठी का, सूजी का, बेसन का, मुठिया का, चूरमे का, चून का, तिल का, गुरधानी का, मुरमुरों का, मेथी का, कँगनी का इत्यादि।

बहिन! मै तुझको इन सब के बनाने की रीति बतलाती हूँ, परन्तु स्त्री को इनसे बहुत कम काम पड़ता और इनके बनाने के लिये खटराग अधिक करना पड़ता है और ये बने बनाये भी बाजार में हलवाई की दूकानों पर अच्छे से अच्छे जितने चाहो, मिल सके हैं। मैं तुझ को केवल वे ही भोजन बनाना बताना चाहती हूँ, जिन से स्त्री को नितप्रति काम पड़ता है और जो बाजार में मोल नहीं मिल सके और जिनके बनाने में अधिक बखेड़ा भी नहीं करना पड़ता है।

मूँग का लड्डू—मूँग को मोटी मोटी छाँट कर भाड़ में भुनवा ले। दल कर उसको फटक लेवे कि, सब छिलका अलग हो जावे। तब चक्की से पीस लेवे। उस के चून से आधा-घी डाल कर थोडा भून ले और फिर सेर आँटे पीछे तीन पाव व ढाई पाव बूरे के हिसाब

र इसका चून पीसे। चाहे निरा इसी का चून, चाहे
ा इसका और आधा गेहूँ का मिला कर घी में
लेवे और बूरा डाल कर लड्डू बाँध ले। चाहे
शनी कर के बाँधे, पर पहिले अच्छे होते हैं।
शेष लड्डू चूरमें के, तिल के, गुरधानी के, और
मुरों के रहे। उनका बनाना तो कुछ कठिन नहीं है।
में के तो पूरी व रोटी व बाटी को महीन मीड कर बूरा व
मिला कर बाँध लेते हैं। शेष तीन के लिये गुड़ वा
की चाशनी कर के इनको उसमें मिला कर बाँध लेते हैं।
चाशनी एक और प्रकार की भी होती है, जिसकी
ज वा चकती बनती हैं। उसकी रीति यह है कि, जैसे
ड्डू की चाशनी बनाते हैं, वैसे ही इसको बनाते हैं।
में तो तार देखते हैं, इसमें यह देखते हैं कि, डालने
जमती है वा नहीं।
हलुवा वा मोहनभोग—यह इतनी चीजों का बनता
। (१) सूजी, (२) मैदा, (३) आटा, (४) कद्दू,
) गाजर, (६) काशीफल, (७) आम इत्यादि।
घी, मैदा और आटे के में बराबर से तनिक ही कम
डालने से अच्छा बनता है, परन्तु यथाशक्ति वा रुचि
भी डाल कर बनाते हैं, पर अच्छा वही है, जो खाने
मुख में चिपके नहीं।

आवे और बादामी होने लगे और भुनने की उसमें से सुगन्धि उठने लगे, तब उतार, ठंढा कर के, सवाया बूरा डाल कर मिलावे और मेवा डाल कर लड्डू बाँध ले।

चुटिये का लड्डू—सेर पीछे आध पाव घी मैदे में डाल कर सूखी मसले और गुनगुने पानी से उसन कर उसकी छटाँक छटाँक भर की मुठिया बना ले और घी में उतार ले। इसके पीछे उन्हें कूट कर छान ले और जो कड़ाही का बचा हुआ घी है, उसी में इसे उसन ले। पर घी बराबर से अधिक न होजाय। बराबर का बूरा डाल कर खूब मिला ले और मेवा व कन्द डाल कर लड्डू बना ले।

मेथी के लड्डू—इसके बीज को ले कर एक आठ चार तक पानी में भिगोदे। जब भीग जावें, तब दूसरे दिन खूब मसल कर कई पानी से धो डाले। जब धुल जावें, तब सुखा लेवे। फिर चक्की से पीस कर इसके चून में आधा गेहूँ का चून मिला कर घी के साथ भून लेवे और बूरा डाल कर लड्डू बाँध लेवे।

कँगनी के लड्डू—इसको दल कर खूब फटक ले। इस पर से छिलका बहुत उतरता है। अथवा ओखली में पानी डाल कर इसको खूब कूट लेवे और फटक कर साफ कर ले ऐसा कि, भीतर की मींगी निकल आवे।

ने। कौंचे से कुचलता रहे। जब एक सा हो जावे, तब रा डाल कर चलाता रहे और किशमिश डाल कर तार लेवे।

दूसरी रीति-छिली हुई गाजर को कद्दूकस में कस ने। इन कसी हुई गाजरों को कलई की देगची में भर र, ऊपर से मुख बन्द कर के आटे से बन्द कर दे ौर कोइलों की आग पर रख कर गला ले। जब गल ावे, तब उतार लेवे। इसको कलछी वा हाथ से मसल र महीन कर ले। फिर घी में भून कर और मिश्री लि कर खूब मिला ले। मेवा, जो डालना चाहे, डाल , परन्तु किशमिश अवश्य ही डाले।

काशीफल को दोनों ओर से छील कर और ीज निकाल कर टुकडे कर लेवे। चौडे मुख के बटले पानी भर कर उसके मुख पर कपडा बाँधे और आग र रख कर इन टुकडों को उस बँधे हुए कपडे पर रख । किसी बासन वा सरपोश से इनको ढक दे, जिससे ाफ लग कर जल्दी सीज जावें। जब सीज जावें, उतार । काशीफल से दूनी मिश्री ले कर उसकी एक तार ी चाशनी कर ले। इस चाशनी में उस सीजे हुए द्दू को डाल कर मन्दी आग पर कौंचे से चला चला र पाव घंटे तक मिलावे। एक सेर कद्दू को चार माशे

सूजी के बराबर घी डाल कर कड़ाही में उसे भूनले जब भुन जावे तब खौलता हुआ गरम पानी वा सूजी से तिगुना उसमें डाल दे और सूजी से ड्यो‌‍ढ़ा बूरा डाल कर चला दे। ऊपर से कतरी हुई मेवा डाल दे।

दूसरी रीति–मैदा वा सूजी एक सेर, मिश्री दो सेर, घी एक सेर, बादाम छिली पाव भर, पिस्ता कतरे हुए आध पाव, किशमिश आध पाव, गुलाबजल चार तोले। पहिले मिश्री की चाशनी कर ले और भूभल पर अलग रख ले। फिर मैदा और घी को कड़ाही में चढ़ा कर मध्यम आँच से भूने और कोंचे से चलाता रहे। जब मैदा में कुछ कुछ सुर्खी आ जावे, तब बादाम छिली हुई और कतरी हुई डाल दे। जब थोड़ी देर पीछे बादाम में भी सुर्खी आ जावे, तब चाशनी डाल कर कोंचे से चलाता रहे। थोडी देर पीछे पिस्ता और किशमिश भी डाल दे और गुलाबजल का छींटा देता रहे। जब हलुवा गाढ़ा हो जावे, उतार ले। यदि केसरिया करना चाहे तो एक सेर मैदा के हलुवे में एक तोला केसर पीस कर उस समय, जब चाशनी डाले, डाल दे।

गाजर का हलुवा–मोटी मोटी गाजर लवे। उन को ऊपर से खूब छील डाले। बीच की लकडी भी निकाल दे। कतले कर के उबाल ले और फिर घी में

हाथ से बेल कर। पिछली रीति अच्छी है।

नागौरीपूरी—पाँच सेर मैदा में डेढ़ सेर घी और डेढ़ छटाँक नमक और एक छटाँक अजवाइन डाल कर, तिगुने पानी में उसन, लोई बेल कर, घी में सेंक, उतार ले।

प्रसनपूरी—चने की दाल को उबाल कर उसमें आधा गुड़ डाल दे। जो पानी बहुत हो, तो पहिले ही निकाल ले। फिर दोनों को सिलबट्टे में महीन पीस ले। पीछे उसमें इलायची, गोला डालकर और आट की लोई बना कर कचौरी की भाँति भर कर बेल लेवे और कड़ाही या तवे पर सेंक ले। गरम गरम ही में घी डाल कर खाय। बहुत स्वाद लगती है। यह सखरी भी मानी जाती हैं। परन्तु पूरी के नाम के कारण यहा बता दिया है। नहीं तो रोटी में बताती।

कचौरी—यह भी एक प्रकार की पूरी है। परन्तु इसके भीतर पिट्ठी इत्यादि कुछ भरा जाता है। इसलिये इसका नाम कचौरी होगया है। इसके भीतर इतनी वस्तुएँ भरी जाती हैं। (१) उड़द की पिट्ठी, (२) आलू की पिट्ठी, (३) ... (४) बेसन की पिट्ठी। कचौरी ... (१) खस्ता और (२) सादा। ... कहते हैं। इसकी पिट्ठी जितनी

केसर; डेढ़ तोले पानी में चार घंटे पहिले से भिगो रक्ख अब इस पानी को इसमें डाल दे। फिर मन्दी मन्दी आग से सेंक कर हलुवा तय्यार कर ले।

आमका–मीठे मीठे आमोंका रस तीन सेर, खाँड एक सेर, गौ का घी आध सेर, गौ का दूध १ सेर, शहद पाव भर, बहमन दोनों, सोंठ, सेमल की मूसली एक एक तोले, बादाम छिली हुई चार तोले, सालम मिश्री चार तोले, सिंघाड़े का आटा चार तोले, पीपल छः माशे, खोलनजान छः माशे, कतरे हुए पिस्ता चार तोले।

पहिले बादाम, पिस्ता और सिंघाड़े को घी में भून ले। फिर आम का रस, खाँड, शहद और दूध को कलई के बर्तन में मन्दी आग पर पका ले और सब बाकी की वस्तुओं को डाल कर हलुवा बना ले।

पूरी–यह कई प्रकार की होती है। फीकी, मीठी, नमकीन, मैदा की, पूरनपूरी, लुचुई, नागौरी इत्यादि। पहिली चार तो तू जानती है। पूरनपूरी और नागौरी पूरी बनाने की रीतियाँ ये हैं।

पूरी का आटा गूँदने में, जो तनिक ढीला रक्खा जाता है, तो घी बहुत और कड़ा रक्खा जाता है, तो कम लगता है। पूरी की लोई को दो प्रकार से बेल कर कड़ाही में डालते है। (१) परोथन लगा कर, (२) घी

के हाथ से बेल कर। पिछली रीति अच्छी है।

नागौरीपूरी–पाँच सेर मैदा में डेढ़ सेर घी और डेढ़ छटाँक नमक और एक छटाँक अजवाइन डाल कर, गुनगुने पानी में उसन, लोई बेल कर, घी में सेंक, उतार ले।

पूरनपूरी–चने की दाल को उबाल कर उसमें आधा गुड़ डाल दे। जो पानी बहुत हो, तो पहिले ही निकाल डाले। फिर दोनों को सिलबट्टे से महीन पीस ले। पीछे उसमें इलायची, गोला डालकर और आटे की लोई बना कर कचौरी की भाँति भर कर बेल लेवे और कड़ाही या तवे पर सेंक ले। गरम गरम ही में घी डाल कर खाय। बहुत स्वाद लगती है। यह सलगी भी मानी जाती है। परन्तु पूरी के नाम के कारण यहां बता दिया है। नहीं तो रोटी में बताती।

कचौरी–यह भी एक प्रकार की पूरी है। परन्तु इसके भीतर पिट्ठी इत्यादि कुछ भरा जाता है। इसलिये इसका नाम कचौरी होगया है। इसके भीतर इतनी वस्तुएँ भरी जाती हैं। (१) उड़द की पिट्ठी, (२) आलू की पिट्ठी, (३) भुनी पिट्ठी और (४) बेसन की पिट्ठी। कचौरी दो प्रकार की होती हैं। (१) खस्ता और (२) सादा। इनको कोई कोई बेढ़ई भी कहते हैं। इसकी पिट्ठी जितनी

केसर; डेढ तोले पानी में,चार घटे पहिले से भिगो रक्खे। अब इस पानी को इसमें डाल दे। फिर मन्दी मन्दी आग से सेंक कर हलुवा तय्यार कर ले।

आमका—मीठे मीठे आमोंका रस तीन सेर, खाँड एक सेर, गौ का घी आध सेर, गौ का दूध १ सेर, शहद पाव भर, वहमन दोनो, सोंठ, सेमल की मूसली एक एक तोले, बादाम छिली हुई चार तोले, सालम मिश्री चार तोले, सिंघाडे का आटा चार तोले, पीपल छ माशे, खोलनजान छः माशे, कतरे हुए पिस्ता चार तोले।

पहिले बादाम, पिस्ता और सिंघाड़े को घी में भून ले। फिर आम का रस, खाँड, शहद और दूध को कलई के वर्तन में मन्दी आग पर पका ले और सब बाकी की वस्तुओं को डाल कर हलुवा बना ले।

पूरी—यह कई प्रकार की होती है। फीकी, मीठी, नमकीन, मैदा की, पूरनपूरी, लुचुई, नागौरी इत्यादि। पहिली चार तो तू जानती है। पूरनपूरी और नागौरी पूरी बनाने की रीतियाँ ये हैं।

पूरी का आटा गूँदने में, जो तनिक ढीला रक्खा जाता है, तो घी बहुत और कड़ा रक्खा जाता है, तो कम लगता है। पूरी की लोई को दो प्रकार से बेल कर कड़ाही में डालते हैं। (१) परोथन लगा कर, (२) घी

के हाथ से बेल कर । पिछली रीति अच्छी है।

नागौरीपूरी–पाँच सेर मैदा में डेढ सेर घी और डेढ़ छटाँक नमक और एक छटाँक अजवाइन डाल कर, गुनगुने पानी में उसन, लोई बेल कर, घी में सेंक, उतार ले।

पूरनपूरी–चने की दाल को उबाल कर उसमें आधा गुड़ डाल दे। जो पानी बहुत हो, तो पहिले ही निकाल डाले। फिर दोनों को सिलबट्टे से महीन पीस ले। पीछे उसमें इलायची, गोला डालकर और आटे की लोई बना कर कचौरी की भाँति भर कर बेल लेवे और कड़ाही या तवे पर सेंक ले। गरम गरम ही में घी डाल कर खाय। बहुत स्वाद लगती है। यह सखरी भी मानी जाती है। परन्तु पूरी के नाम के कारण यहां बता दिया है। नहीं तो रोटी में बताती।

कचौरी–यह भी एक प्रकार की पूरी है। परन्तु इसके भीतर पिट्ठी इत्यादि कुछ भरा जाता है। इसलिये इसका नाम कचौरी होगया है। इसके भीतर इतनी वस्तुएँ भरी जाती है। (१) उड़द की पिट्ठी, (२) आलू की पिट्ठी, (३) भुनी पिट्ठी और (४) बेसन की पिट्ठी। कचौरी दो प्रकार की होती हैं। (१) खस्ता और (२) सादा। इनको कोई कोई बेढ़ई भी कहते हैं। इसकी पिट्ठी जितनी

अच्छी होगी, उतना ही स्वाद इसमें अच्छा होगा । पिट्ठी अच्छी तब होगी, जब दाल खब धुली हुई हो और महीन पिसी हो । उसमें मसाला भी अच्छा महीन पिसा हुआ हो । मसाला यह है, धनियाँ, मिर्च और गरम मसाला। जब पिट्ठी को लोई में भरे, तब हींग के पानी के हाथ से भरे, तो कचौरी बहुत फूलती है । हींग का पानी यों बनाते हैं। १ माशे हींग पाव भर पानी में घोल कर मिट्टी के बासन में रख ले । पहिले इस पानी में हाथ बोर ले तब पिट्ठी को तोडे और लोई में भर दे ।

आलू की पिट्ठी यों बनाते हैं कि, आलुओं को उबाल कर छील ले और खब महीन पीस ले । इसमें पिसे मसाले के संग थोड़ा सा पिसा हुआ अमचूर और डाल दे तो स्वाद और भी अच्छा हो जाता है ।

भुनी पिट्ठी यों बनाते है कि, उडद की पिट्ठी को घी डाल कर कडाही में भुन लेते हैं, फिर मसाला मिलाकर लोई में भरते हैं ।

बेसन की मीठी पिट्ठी–बेसन में इतना मीठा डालकर उसन ले कि, बहुत पतला न हो जावे और मीठा भी कम ज़्यादे न हो जावे ।

कचौरी का आटा–पूरी के आटे से तनिक ही ढीला अर्थात् पतला रहता है । सादी कचौरी में तो कुछ कठि

नता नहीं है, तू बनाती ही है। खस्ता कचौरी तुझ पर नहीं आती हैं, सो बताये देती हूँ। इसको भी फीकी और नमकीन दोनों प्रकार की बनाते हैं, पर नमकीन अच्छी होती हैं। ये कई दिनों तक नहीं बिगडतीं।

रीति।

पाँच सेर मैदा में सेर भर घी, आध सेर तिली का तेल, दो सेर गुनगुना पानी, पौन पाव पिसा नमक डाल कर तीनों को उसन ले। पर हाथों में तेल लगा ले, तब लाईं तोंडे। उडद की पिट्ठी सवा सेर महीन पीस कर उसमें ये मसाले महीन कूट कर डाले। सोंठ, धनियाँ, मिर्च छटाँक छटाँक भर, लौंग और जीरा तोला तोला भर। पहिले पिट्ठी को कडाही में घी डाल कर खूब भून ले। हींग के पानी के हाथ से भरती जावे और हाथ से चपटा कर कर के कडाही में छोड़ती जावे। अब खूब मन्दी आग पर सिक कर लाल हो जावें, पौना से उतार ले। जो कम खस्ता बनानी हों, तो घी और तेल मैदा में कम डाले। चकले से बेल कर भी कडाही में छोड़ सके हैं। पर हाथ की बढ़ाई हुई अच्छी होती हैं।

परॉंठे–इसके कई नाम हैं। फीना, टिकडा, ढेबरा, उलेटा, कटोरा, पलेटा इत्यादि।

इसमें घी कम भी लगता है, और पूरियों से दुगुना,

तिगुना भी लग जाता है। जैसा चाहे, वैसा बना ले। आटे को मलाई वा दूध में गूँदने से अच्छे बनते हैं और बहुत ही खस्ता हो जाते हैं वा इस भाँति बनाने से कि, लोई की पूरियाँ बेल कर और घी अच्छी भाँति उनपर लगा कर तह जमा ले और फिर इन सब की चार तह करके लोई बना ले और बेल डाले। फिर घी का पर्त पहिले की भाँति लगा दे और फिर चार तह करके लोई बना ले। इसी भाँति जितनी बेर करेगी, उतने ही पर्त खस्ते के से हो जावेंगे। अब इसको कड़ाही वा तवे पर डाल कर थोड़ा थोड़ा घी कलछी से ऊपर नीचे डाल कर खूब सेंक ले। कच्चा न रहने दे। क्योंकि इसके सिकने में तनिक देर लगती है। सादा बनाना चाहे, तो एक दो पर्त ही लगा कर सेंक ले और इसी प्रयोजन से इसको निकाला है कि, थोड़ा घी लगे और निखरा गिना जावे, सखरा न होने पावे।

पूआ—यह मीठा होता है। छोटे को पूआ और बड़े को मालपूआ कहते हैं। नानखताई भी इसी का भेद है परन्तु जो नमकीन भी इसमें गिनी जावें (जो पकौड़ी कहलाती हैं) तो फिर कई प्रकार हो जाते हैं। जैसे बेसन की, मूँग की, मोठ की, पोदीना की, मेथी की, पान की, पालक की, पोई की, कनकौआ की, अरवी

के पत्ते की, रतालू के पत्ते की, मूली के पत्ते की, बथुआ की, काशीफल के फूल की, मूली की इत्यादि।

मीठे पूए में सौंफ डाल देने से अच्छा स्वाद होता है और फूलते भी अच्छे हैं। इसके फैन को जितना हाथ से अधिक मथा जावेगा, उतने ही पूए फूलेंगे। पूओं की रीति तो जानती ही हो। मालपूओं की इस प्रकार है। आध पाव सौंफ को ढाई पाव पानी में औटा कर छान ले-उस पानी को पाँच सेर गुड वा बूरे में घोल कर छान ले। फिर आठ सेर मैदा और सेर भर दही को इस मीठे पानी में घोल कर खूब मथ ले। पर इसका ध्यान रक्खे कि, गुड वा बूरे में पानी इतना डाले जो कि आठ सेर ही मैदा को हो।

तई (जो चौड़ी कड़ाही सी होती है) में घी चढा कर कुल्हड़े वा लोटे में इस घोल को भर कर फैलाता हुआ डाले। उलट-पलट कर खूब सेंक ले। क्योंकि ये कच्चे बहुधा रह जाते हैं और पौने वा थापी से निचोड कर रखता जाय।

नानखताई-मैदा, घी और बूरा इनको बराबर ले कर उसन ले। पानी न डाले। थोडा सा समुद्रफेन भी सेर पीछे तीन माशे के हिसाब से डाल दे। इसकी गोल लोई बाँध बाँध कर आधे आधे दो टुकड़े कर ले। पक्के

कोइले सुलगा कर तीन ईटें रख ले। एक तवेंगे में कोइले और अलग सुलगा रक्खे । एक थाली में कागज़ जमा कर कुछ थोडी थोडी दूर पर इन आधे टुकडों को बराबर रखता जावे । फिर थाली को तीनों ईंटों के ऊपर रख कर सुलगे हुए कोइलों का तवगा इस थाली के ऊपर रख दे । इससे जब यह सिक कर बादामी रंग की हो जावें, तब निकाल ले और दूसरी थाली कोइलों पर रखने को पहिले से तय्यार रक्खे और इसी भाँति करती जावे। सिक जाने की पहिचान यह है कि, जब नान-खताई का रंग बादामी हो कर नानखताई गिल जावे तो जान लेवे कि, सिक गई।

पकौडी–इसमें भी फैन को जितना अधिक मथा जावेगा, उतनी ही अधिक फूलेंगी, और जितना पतला फैन होगा, उतना ही अधिक घी लगेगा और स्वाद होगा। यहाँ तक कि, बराबर से भी अधिक घी लग जावेगा।

पहिले बेसन की पकौडी बताती हूँ। बेसन अच्छा महीन ले कर नमक, मिर्चे पिसा हुआ और अजवाइन डाल कर पतला फैन कर ले। जितना फैन को मथेगी उतनी ही फोकी बनेंगी। पीछे कड़ाही में घी वा कडुवा तेल चढ़ा कर जब बोलने से बन्द हो जावे, पकौडियाँ

तोड तोड कर उतार ले। जो इस फेन में पोदीना, मेथी बीन बनार कर डाल दे, तो और स्वाद हो जायेगा और जो पोई, पालक, पान, मूली के पत्ते, कनकौआ के पत्ते ले कर, दोनों ओर से बेसन में खूब लपेट कर घी में उतार ले तो इनकी पकौड़ी कहलावेंगी।

अरवी व रतालू के पत्तों की पकौड़ी यों होती हैं कि, इनका फेन गाढ़ा रहता है और पत्तों में लपेट कर और डोरे से बाँध कर घी में पूरी की भाँति उतारी जाती है। इनकी भाजी भी रसेदार इस रीति से बनती है कि, गरम मसाले को घी में डाल कर और इन पकौड़ियों के कतले कर के वा साबित ही उसमें छौंक कर पानी डाल देते हैं और नमक, मिर्च और मसाला डाल देते हैं। थोड़ी देर में जब पानी पक जाता है तब उतार लेते हैं।

कासीफल के फूल की-इसका बेसन न गाढ़ा, न पतला, बरन बीच का रहता है। एक फूल को बेसन में लपेट कर दूसरे फूल के भीतर रखते हैं। फिर तीसरे फूल को लपेट कर इसके भीतर रखते हैं। फिर तीनों फूलों को बेसन में लपेट कर घी वा तेल में पूरी की भाँति उतार लेते हैं।

मूली व बथुआ की-इनकी रीति यह है कि,

मूली के कतले कर के वा बथुए के साग को बीन बनार कर उबाल ले। जब उबल जावे, तब निचोड़ डाले। पीछे सिलबट्टे से पीस डाले। इतना महीन कि, गुद्दी न रहने पावे। इसमें छिले चने का चून मिलावे और गरम मसाला और नमक मिलावे। इसकी अब गोलियाँ बाँध कर पूरी की भाँति मन्दी आग से सेंक कर उतार लेवे।

केले की फली को ले कर उबाल ले और छील डाले। पीछे खूब मथ ले। छिले चने का आटा, गरम मसाला और नमक मिला कर पूर्ववत् पूरी की भाँति उतार ले।

चन्द्रसेनी (जिनको लखनऊ में बैंगनी बोलते हैं)। यह बैंगनी आलू और काशीफल की बनती है। इस प्रकार कि, बेसन में नमक, मसाला डाल कर उनके गाढा फैन कर ले और इनके टुकडे उस बेसन में लपेट लपेट कर और पकौडियों की भाँति घी वा तेल में उतार ले।

चीला–यह दो प्रकार के मीठे और नमकीन होते हैं। मीठे इस प्रकार से बनते हैं कि, गेहूँ के आटे में गुड़ व बूरा मिला के बनाते हैं। इसका फैन भी पूओं की भाँति पतला रहता है। इसका फैन भी जितना मथा जावेगा, उतने ही अच्छे चीले होंगे।

ऊपर की ओर से भली भाँति सेंके। क्योंकि इधर कच्चे रह जाने का भय रहता है; वरन लोढ़ी इत्यादि वस्तु ऊपर से रख कर सेंके, तो कच्चे रह जाने का डर न रहेगा।

बड़े—ये मूँग और उड़द दोनों की पिट्ठी के होते हैं, पर उड़द के अधिक होते हैं और सुस्वाद भी होते हैं। बड़े एक तो साधारण होते हैं, जो पिट्ठी की लोई बना कर चपटी कर के कड़ाही में तल लिये जाते हैं, चाहे घी में, चाहे सरसों के तेल में। (जो निरा सरसों का ही हो, दुआँ आदि का मेल उसमें न हो।) घी वा तेल कड़ाही में जब खूब गरम हो जावे कि, बड़े डालने से झाग न उठें, तब बड़े डालने चाहियें। इस से पहिले न डालने चाहियें। नहीं तो कड़ाही के तेल में झाग उठ उठ कर कड़ाही भर जावेगी, वरन उफन कर तेल आग में निकल जावेगा। इसकी पहिचान यह है कि, पहिले थोड़ी सी पिट्ठी कड़ाही में डाल कर देख ले कि, झाग उठते हैं या नहीं। जो उठें, तो जाने कि, तेल अभी कच्चा है, जो न उठें, तो जाने कि, पक गया। इसलिये तेल में जब कभी कोई वस्तु पकावे, तो पहिले इसी भाँति तेल को देख लेवे।

मेवा का बड़ा—उड़द की महीन पिसी हुई पिट्ठी को

ने, चकले पर वा औंधी थाली पर भीगा कपडा बिछा कर, पानी के हाथ से लोई को उस पर चपटावे। जब वह चौड़ी हो जावे, तब उसमें मसाला बुरक दे, जो आगे बतलाती हूँ। जब मसाला बुरक चुके, तब दूसरी चपटाई हुई लोई को इस कपडे पर से हाथ की हथेली पर उठा ले और इस मसाले बुरकी हुई के ऊपर ऐसी जमा दे कि, दोनों के किनारे ठीक मिल जावें। अब इन किनारों को पानी लगा कर दोनों को ऐसा चिपका दे कि, एक हो जावें। इसी भाँति जब दस पाँच तय्यार हो जावें, तब घी में पूरी की भाँति उतार उतार कर रख लेवें। जब सब उतर आवें, तब अच्छा मीठा जमा हुआ दही ले कर कपडे में छान लेवे और उसमें नमक, काली या लाल मिर्च, भुना हुआ जीरा पीस कर मिला देवे और इन बड़ों को उनमें डाल कर दही दोनों ओर लपेट लेवें, बहुत ही स्वादिष्ट होते हैं।

मसाला,-जो बड़े के भीतर भरा जाता है, इस प्रकार बनता है कि, सफेद भुना और कुटा हुआ जीरा, कुटा हुआ गरम मसाला एक बड़े में एक माशे बुरके, चार साबित कालीमिर्च, कतरे हुए गोला, बादाम और पिस्ते चार पाँच, चिरौंजी और धुली हुई किशमिश रक्खे।

करारा-यह भोजन भरतपुर में विशेष कर बनता है।

ऊपर की ओर से भली भाँति सेंके। क्योंकि इधर कच रह जाने का भय रहता है; वरन लोई इत्यादि वस्तु ऊपर से रख कर सेंके, तो कच्चे रह जाने का डर न रहेगा।

बड़े–ये मूँग और उड़द दोनों की पिट्ठी के होते हैं। पर उड़द के अधिक होते हैं और सुस्वाद भी होते हैं। बड़े एक तो साधारण होते हैं, जो पिट्ठी की लोई बना कर चपटी कर के कड़ाही में तल लिये जाते हैं, चाहे घी में, चाहे सरसों के तेल में। (जो निरा सरसों का ही हो, दुआँ आदि का मेल उसमें न हो।) घी या तेल कड़ाही में जब खूब गरम हो जावे कि, बड़े डालने से झाग न उठें, तब बड़े डालने चाहियें। इस से पहिले न डालने चाहियें। नहीं तो कड़ाही के तेल में झाग उठ उठ कर कड़ाही भर जावेगी; वरन उफन कर तेल आग में निकल जावेगा। इसकी पहिचान यह है कि, पहिले थोड़ी सी पिट्ठी कड़ाही में डाल कर देख ले कि, झाग उठते हैं या नहीं। जो उठें, तो जाने कि, तेल अभी कच्चा है, जो न उठें, तो जाने कि, पक गया। इसलिये तेल में जब कभी कोई वस्तु पकावे, तो पहिले इसी भाँति तेल को देख लेवे।

मेवा का बड़ा–उड़द की महीन पिसी हुई पिट्ठी को

दे, चकले पर वा औंधी थाली पर भीगा कपडा बिछा कर, पानी के हाथ से लोई को उस पर चपटावे। जब वह चौडी हो जावे, तब उसमे मसाला बुरक दे, जो आगे बतलाती हूँ। जब ममाला बुरक चुके, तब दूसरी चपटाई हुई लोई को इस कपडे पर से हाथ की हथली पर उठा ले और इस ममाले बुरकी हुई के ऊपर ऐसी जमा दे कि, दोनों के किनारे ठीक मिल जावें। अब इन किनारों को पानी लगा कर दोनों को ऐसा चिपका दे कि, एक हो जावें। इसी भाँति जब दस पाँच तय्यार हो जावें, तब घी में पूरी की भाँति उतार उतार कर रख लेवें। जब सब उतर आवें, तब अच्छा मीठा जमा हुआ दही ले कर कपडे में छान लेवे और उसमें नमक, काली वा लाल मिर्च, भुना हुआ जीरा पीस कर मिला देवे और इन बडों को उनमें डाल कर दही दोनों ओर लपेट लेवे, बहुत ही स्वादिष्ठ होते हैं।

मसाला, जो बडे के भीतर भरा जाता है, इस प्रकार बनता है कि, सफेद भुना और कुटा हुआ जीरा, कुटा हुआ गरम मसाला एक बड़े में एक माशे बुरके, चार मानित काली मिर्च, कतरे हुए गोला, बादाम और पिस्ते चार पाँच, चिरौंजी और धुली हुई किशमिश रक्खे।

करारा—यह भोजन भरतपुर में विशेष कर बनता है।

यहाँ तक कि, ज्योंनारों में भी परोसा जाता है । बनता इस प्रकार है कि, मूँग की पिट्ठी को महीन पीस कर और नमक, मिर्च, मसाला डाल कर या तो मोटे मोटे चीले कर लेन या, बड़े बड़े मुँगोड़े तोड़ लेन । पीछे इनको हाथ से तोड़ तोड़ कर और महीन कर के रख ले । कड़ाही में थोड़ा सा घी गरम कर के और गरम मसाले का छाक दे कर इसको छौंक दे और कुछ पानी भी डाल दे, जिससे कुछ नरम हो जावें और जलने न पावें । जो मुँगोड़ों में नमक, मिर्च, मसाला थोड़ा डाला होवे, तो इस समय और डाल देवे कि, ठीक हो जावें।

यहाँ तक तो मैंने तुझको निखरे भोजन बनाना बताया, जो घी या तेल के संयोग से अग्नि पर पकाये जाते हैं । अब तुझको दूसरे प्रकार के बताती हूँ, जो सखरे कहलाते हैं ।

(२) सखरा वा कच्चा ।

कच्चा भोजन वह कहलाता है, जो केवल अन्न, पानी और अग्नि के संयोग से बनाया जाता है । ऐसे भोजन को चौके से बाहर नहीं ले जाते है और न चौके में से दूसरी वस्तु को छूते हैं, जो चौके से बाहर रक्खी हुई होती है । नहीं तो छुई हुई वस्तु भी सखरी गिनी जायगी । यदि बाहर से कोई चौके में की वस्तु को छू लेवे, तो चौका

बिगड जाता है, ऐसा मान रक्खा है। इस बात का बहुत बडा विचार हम लोगों में हैं। इसका मूल कारण कुछ ही हो, परन्तु प्रचार ऐसा ही हो रहा है और ऐसी रीति हो गई ह कि, ब्राह्मण की बनाई रसोई के अतिरिक्त एक जाति दूसरे के हाथ की बनाई हुई रसोई को नहीं खाती। चाहे वह उससे ऊँच हो या नीच और कहीं कहीं तो इसमें भी विचार और भेद है कि, बहुत से केवल गौड ब्राह्मण ही की बनाई खाते हैं, अन्य ब्राह्मण की नहीं। जैसे गौतम, सारस्वत, कान्यकुब्ज इत्यादि की। और कोई कोई केवल कान्यकुब्ज ही के हाथ की बनाई हुई को खाते है। जैसे पूर्व के श्रीवास्तव व अन्य कायस्थ। कोई कोई अपनी स्त्री तक के हाथ की बनाई हुई को भी नहीं खाते, अपने ही हाथ की बनाई हुई को खाते हैं। इस चौके की रसोई ही ने हम लोगों का खान, पान एक नहीं होने दिया है। नहीं तो सब का एक ही है, जैसे पक्की वा निखरी सब की सब कोई खाता है। यहां तक कि लोधे, जाट, गूजर की बनाई हुई पूरी को ब्राह्मण खाते हैं।

हलवाई की दूकान की पूरी, कचौरी सब खाते हैं। यहाँ तक कि, चौसेनी और बारहसेनी बनियों की दूकान की (जिनके हाथ का छुआ कोई कोई पानी भी नहीं पीता है) बनी हुई पूरी, कचौरी सब कोई खाते हैं।

इस खान पान और सखरे निखरे के भेद का मूल कारण कुछ भी हो, परन्तु अब कोई सिद्धान्त ज्ञात नहीं होता। किसी ने किसी प्रकार सखरा माना है, किसी ने किसी प्रकार । जैसे कोई कोई जब तक दाल में नमक न पड़े, तब तक उसको सखरा नहीं मानते । वैसे भरभूँजे के दाल, भात तक को कोई सखरा नहीं मानते । जैसे धान की खील, चौहरी (जो उबाल कर भूनते हैं), परमल (जो ज्वार, मक्का इत्यादि को उबाल कर बनाये जाते हैं), चने (जो हल्दी का पानी मिला कर भूने जाते हैं), मुरमुरे के लड्डू (जिनमें भरभूँजे के घर का पानी पड़ता है), नमक, मिर्च की पीली दाल, (यह भी पानी पड़ कर बनती है) । कोई सिद्धान्त आज कल इस सखरे का समझ में नहीं आता; पर प्रचार के अनुसार मान लिया जाता है । अब इस थोथे झगड़े को छोड़ कर तुझको बनाने की रीति बताती हूँ । इसमें सब से पहिले रोटी है ।

रोटी—सब से अच्छी गेहूँ के आटे की होती है । पर बाजरा, मक्का, ज्वार, जवार, उड़द, चना इत्यादि की भी बनाते हैं । यह कई प्रकार से बनती है । जैसे पनपथो, चपके बेलन की, खमीरी, डबलरोटी, पावरोटी । आटे को जितना माँड़ा जावेगा और लोच दिया

ावेगा, रोटी उसकी उतनी ही अच्छी होगी।
पनफती उसे कहते हैं, जो परोथन लगाये विना
वल पानी के हाथ से पोई जाती है। दूसरी को परो-
न लगा कर चकले बेलन से बनाते हैं।

खमीरी—एक सेर गेहूँ के आटे वा मैदा में एक छटांक
मीर रोटी का या मामूली खमीर बताशों का या
लेबियों का डाल कर पाव भर पानी में भिगो कर
ख दे। जब थोड़ी देर हो जावे, तब ठण्डे पानी में इस
ाटे को गूँद ले। पर आध सेर वा पाँच-छ: छटाँक
ानी दे कर खमीर तय्यार कर ले। जो जाड़ा हो तो
स आटे को गरम स्थान में रक्खे और जो गरमी हो
ी ठंडी जगह में रक्खे। दो घटे पीछे, जब खमीर
य्यार हो जावे तब लोई तोड़ तोड़ सूखी मैदा से
पेट कर बना बना कर रखता जावे। पीछे इस लोई
ी हाथ से बढ़ा बढ़ा कर, आध अंगुल से कुछ कम
ोटी रख कर तवे पर डाल दे। जब कुछ सिक जावे
ब फिर उलट कर दूसरी लग से डाल देवे। इसी
ाँति सेंक लेवे। जब बादामी रंग रोटी का हो जावे,
ब उतार कर अंगारों पर चारों लग से सेंक ले और
ब सिक जावे अर्थात् पूरी की भाँति फूल जावे, तब
ठा कर कपड़े से पोंछ डाले और घी से चपड़ कर रख

दे । खमीर के बनाने की रीति यों है कि, छटाँक भर औटे हुए दूध में, जब ठंढा हो जावे, छः माशे बताशे और तीन माशे कुटी हुई सौंफ आध पाव गेहूँ के आटे में सब को गूँद ले । थोड़ी देर तक हथेली से खूब गूँदती रहे । पीछे कपड़े वा बर्तन में रख दे । चार पहर पीछे इस आटे के भीतर का आटा ले ले । ऊपर का कुछ नोच कर छोड दे और थोड़ा सा आटा और दूध और ले कर इसमें और गूंद डाले । इसको भी चार पहर तक रक्खा रहने दे। बस खमीर तय्यार हो गया । यह गरमी के मौसम में हो सक्ता है । जाड़ों में आठ पहर में आटा बदले, तब होगा।

डबलरोटी और पावरोटी—यह अंग्रेजी भोजन है । इन्हों ने हम लोगों में अभी तक कम प्रचार पाया है । इनके बनाने में झगडे भी बहुत करने पड़ते हैं, इसलिये इनको छोडे देती हूँ ।

अगा तो जानती ही है कि, कड़ा आटा गूँद कर, मोटे मोटे, जो रोटी की भाँति निन तवे के आग पर सेंके जाते हैं, पर जो छोटी छोटी बनाई जाती हैं, वे अँगाकरी कहलाती हैं, जो ऐसे ही कडे आटे की बनती हैं और उनको मट्ठे (जो छाँछ से बनाये जाते हैं) की भाँति गूँद कर, कोइलों पर सेकते हैं । यह अगों से स्वादिष्ठ होती है ।

दाल—कई नाज की होती है । मूँग, उडद, अरहर,

अरहर, चना, मसूर, मोठ इत्यादि की। छिलके की और धुली हुई दो प्रकार की होती है और धुली हुई भी दो प्रकार की होती है। (१) तुरन्त पानी में डाल कर,भीज जावे और फूल आवे उसका छिलका पानी में धो कर अलग कर लेते है, (२) तेल पानी का हाथ लगा कर रात भर ढक कर रख देते है और सबेरे धूप में सुखा देते है और जब सूख कर छिलका अलग हो जाता है, उसको ओखली में डाल कर मूसल से कूट लेते है। सब छिलका बिलकुल उतर जाता है। यही प्रकार अच्छा भी है। क्योंकि इसमें स्वाद भी अच्छा रहता है और पकाने में सौंधापन रहता है।

उड़द की दाल–पानी में भिगो, धो और छिलका उतार कर रख ले। एक बटले में अदहन औटा ले और उतार ले। दूसरे बटले में (सेर भर दाल के लिये) एक छटाँक घी में गरम मसाले का बघार दे और उस अदहन को उसमें उलट दे और दाल को डाल दे। पानी इतना डाले कि, दाल से एक अंगुल ऊँचा रहे। ऊपर से टके भर नमक डाल दे। जब गल जावे, तब उतार कर नीचे अंगारों पर रख दे। जो घी अधिक डालना होवे, तो पाव भर दही वा मलाई डाल दे। नहीं तो सादी बना ले। ये मसाले कूट कर डाल दे। सोंठ और धनियाँ

पैसे पैसे भर, दालचीनी छदाम भर, दो इलायची सा (कूट कर), कालीमिर्च जितनी खावे, राई और जी का बघार पीछे से और दे दे । जो इसकी बादी दूर करना चाहे, तो पचीस दाने कड अर्थात् कसूम के बीज की एक पोटली कपडे की बाँध कर रँधती समय डाल दे, पीछे निकाल लेवे ।

दूसरी रीति—उड़द की दाल को धो कर छिलके उतार ले । पहिले गरम पानी कर रक्खे । एक बटले में घी चढ़ा कर, पानी में पिसी हल्दी, धनियाँ और लालमिर्च भून ले । जब मसाला भुन जावे अर्थात् हल्दी की हल दाइन जाती रहे तब दाल को डाल दे । दाल से एक अंगुल ऊँचा पानी रक्खे । नमक रुचि अनुसार डाल कर ढाँप दे । जब दाल गल जावे, तब उतार अगारों पर रख दे । अब इसमें सोंठ, दालचीनी, कालीमिर्च, इलायची पीस कर डाल दे और कलछी से मिला दे ।

उडद की दाल धुली हुई आध सेर, अदरक कटा हुआ दो तोले, मलाई आध सेर, केसर तीन माशे, नमक, मिर्च जितना चाहिये, जीरा चार माशे, इलायची छोटी दो माशे, बादाम छिली हुई आध पाव, डेढ़ सेर पानी में धनियाँ, मिर्च पीस कर मिला दे और आग पर चढ़ा दे । जब पानी उबलने लगे, तब दाल उसमें डाल दे ।

भाप बैठे पै, जब पानी दाल की बराबर आ जावे तब उसमें अदरक और नमक डाल दे और आग से नीचे से निकाल ले। इस समय के लिये केसर और बादाम को पहिले ही से पीस छान कर तय्यार रक्खे जिसमें मलाई मिलाकर और थोड़ा गरम कर के तुरन्त उस समय डाले, जब और निकले, और आध घंटे तक उसको मुंह बन्द कर के अंगारों या कोइलों की आग पर रक्खा रहने दे। अब दाल तय्यार हो गई। इस समय घी को खूब गरम कर के इलायची और जीरा उस में डाल कर दाल को बघार दे और खूब चला दे।

मूँग की दाल भी इसी भाँति होती है। जैसे उड़द की। परन्तु उसमें कभी कभी पालक या मेथी का साग भी डाल देते हैं। इसमें सोंठ नहीं डालते। शेष मसाले धनियाँ इत्यादि डालते हैं। इसमें हींग और जीरे का छौंक मुख्य कर देते हैं।

मूँग की दाल। मुगली जाफरानी सेर भर धुली हुई दाल ले, धनियाँ बिना छिलके का दो तोला ले, मिर्च जितनी खावे, डेढ़ सेर पानी में पीस कर कलईदार बर्तन में आग पर चढ़ा दे। मन्दी मन्दी आग लगने दे। जब पानी दाल की बराबर हो जावे, तब आग पर से उतार ले और आधे घंटे तक मुख बन्द कर के अंगारों

ठंढी होने पर गुलाब वा केवड़े का जल डाल दे, तो और भी अच्छी हो जाती है।

इसको कोई निखरी और कोई सखरी मानते हैं, पर अधिकतर लोग भुने चाँवलों की खीर को निखरी और घी में के भुनों की को सखरी मानते है। कोई कोई तवाखीर डाल कर खीर बनाते है। कोई कोई चॉवलों के बदले में खाने डाल कर बनाते हैं और उसको फलाहारमें समझते हैं।

मुसल्मान खीर तो कम पकाते हैं, परन्तु वे चाँवलों का आटा पीस कर दूध मे डाल कर खीर की भाँति पका लेते हैं, जिसे वह 'फीरनी' कहते है।

छेना की खीर–दो सेर दूध कड़ाही में औटावे। एक उफान जब आ जावे, तब उसमें छटाँक भर खट्टा दही वा दूसरी कोई खटाई डाल दे और खूब मिलादे। इससे दूध फट जावेगा। जब सब दूध फट जावे, तब कपड़े में छान कर पानी निकाल दे और कपड़े में लटका दे। पानी निकल कर जो कपड़े में बच रहे, वही छेना कहलाता है। अब चाशनी तय्यार करनी चाहिये। पाव भर चाशनी में जब वह खूब गरम हो, छेना डाल कर खूब चला दे और आध घंटे तक ढका रहने दे। फिर दो सेर दूध कड़ाही में चढ़ावे और जब अधऔटा अर्थात् आधा दूध जल जावे, तब उसमें यह छेना डाल दे; पर यह ध्यान रहे कि, दूध

माँगने में मलाई न पड़ने पावे, न किनारों पर जमने पावे। इसलिये कौरे से सब चलाती रहे और दूना दूध में सब एकदम से न गेर दे, थोड़ा थोड़ा गेर कर डालती जावे और चलाती रहे। जब इसमें मिले हुए पिस्ते एक तोला, छिले और कतरे बादाम एक तोला, किशमिश छ माशे, छोटी इलायची का चूरा छ माशे डाल कर मिला दे। जब थोड़ा गरम रहे, तब एक छटाँक गुलाबजल डाल कर मिला दे। यह बंगाल देश का भोजन है।

तहरी—यह कई प्रकार की होती है। (१) चाँवल बड़ी की, (२) चाँवल मँगोड़ी की, (३) चाँवल आलू की, (४) चाँवल घुट (हरे छिले हुए चने) की इत्यादि। इसमें भी चाँवल महीन और पुराने होने चाहियें। मँगोड़ी या बड़ियों को कुछ फोड़ कर और घी को बटले में डाल कर भून लेवे। पीछे इन भुनी हुई मँगोड़ी या बड़ी को चाँवलों के संग गरम पानी में चढ़ा दे और आग पर रख दे। जब पानी जलने पर आ जावे, तब नमक, मसाला डाल कर अंगारा पर रख दे। आध घंटे पीछे उतार ले।

बड़ी या मँगोड़ी या नानौरी—पहिले इससे कि, मैं इनके पकाने की रीति बताऊँ, इनके बनाने की क्रिया बताती हूँ। बड़ी उड़द की दाल की, मँगोड़ी मूँग की दाल,

की और चनौरी चने की दाल की होती है। यह सर (टटकी) और सूखी दो प्रकार की होती हैं।

दाल को ले कर पानी में रात को भिगो दे। जब फूल कर भीग जावे, तब उसको धो कर उसका छिलका उतार लेवे और ऐसा धोवे कि, निरी दाल निकल आवे और सब छिलके दूर हो जावें। अब इसकी महीन पिट्ठी सिलबट्टे पर पीस लेवे। जब पिट्ठी पिस जावे, तब इसमें मसाला महीन कूट कर डाल दे। चाहें तेज, चाहे मन्दा; जैसा खाना हो। मसाला यह है—धनियाँ, मिर्च, (उड़द की पिट्ठी में सोंठ और तेजपात और डाले) हींग, जीरा सफ़ेद, लौंग और इलायची। पिट्ठी को जितनी हाथ से पानी डाल डाल कर घई वा फेंटी जावेगी; बड़ी, मँगोड़ी उतनी ही हलकी और फोकी होंगी। जब इस भाँति पिट्ठी तय्यार हो जावे, तब चटाई वा सिरकी पर इसकी बड़ी वा मँगोड़ी तोड़ देवे और धूप में सुखा लेवे। जब बिल्कुल सूख जावें, उतार कर रख ले। सद पिट्ठी की मँगोड़ी अच्छी होती है, पर बड़ियों की पिट्ठी को बहुधा खट्टा कर के बनाते हैं अर्थात् पिट्ठी को पीस कर एक रात भर और कोई कोई एक रात और एक दिन रक्खी रहने देते हैं। इतने ही में खट्टी हो जाती है। फिर बड़ी तोड़ते हैं। तीन दिन से अधिक पिट्ठी को नहीं रखते हैं।

...ी भी जाड़ों में; गरमियों में एक दिन में ही उतनी खट्टी ... जाती है। वर्षाऋतु में पिट्ठी शीघ्र ही खट्टी पड़ जाती ...। इसलिये इस ऋतु में बड़ी मँगोड़ी नहीं बनाते। यह ... कारण है कि, इस ऋतु में बादलों के कारण सूखने ... भी अवसर नहीं मिलता, इसलिये वे सड़ घुस जाती हैं।

... चनौरी को चने की दाल भिगो कर और उसकी ...ही पीस कर मँगोड़ी की भाँति तोड़ कर बना लेते हैं। ...ब इनके राँधने की क्रिया यह है कि, इनको लोढ़ी से ...ड़ कर कुछ महीन कर ले और एक बटले में कुछ घी ...ल कर आग पर रख दे और हौले हौले भून डाले। ...ब भुन जावें और कची न रहें; तब पानी डाल कर ...साला और नमक डाल दे और आग ही पर रक्खा ...ने दे। जब गल जावें, तब जाने कि, रँध चुकीं और ...तार ले।

... मद या टटकी मँगोड़ी—यह मूँग की पिट्ठी की बहुधा ...ती है और विशेष कर रोगी के लिये। (भले मनुष्य ... लिये भी यद्यपि निषेध नहीं है।) इस भाँति कि, ...१) या तो पिट्ठी को महीन पीस, मसाला इत्यादि ...ला कर, कड़ाही में घी चढ़ा पूरी की भाँति तल ले, ...थवा (२) एक बटले में पानी भर कर आग पर चढ़ा ... ऊपर से गाढे का कपड़ा मुख पर बाँध दे। जब पानी

बोल उठे, तब छोटी छोटी बड़ी इस कपड़े पर तोड़ते जावे । आग को नीचे से जलने दे । ये बड़ियाँ पानी की भाफ से सिकती जावेंगी । उनको उतारती जावे दूसरी और तोड दे । जब यह सिक जावें तब इनको उतार ले । फिर और तोड दे । इसी प्रकार करती जावे जब तक सब न हो चुकें । बटला वा तसला जितने, चौड़े मुख का होगा, उतनी ही शीघ्रता इस कार्य में होगी।

मॉड़िया—यह अरहर की दाल के पानी का बनता है और चॉवलों के सग खाया जाता है । क्रिया यह है कि, अरहर की दाल को रॅधने के लिये आग पर चढ़ा दे, पर पानी तनिक अधिक रक्खे । जब दाल दो तिहाई गल जावे, तब उसमें से पानी निकाल लेवे और दाल को अलग कर ले । दाल को तो नमक, घी डाल कर अङ्गारों पर दम दे कर (ऊपर एक कटोरे में पानी भर कर रख दे) बहुत ही मन्दी आग से गला लेवे फिर मिर्च, मसाला और डाल देवे । एक एक खिल जावेगी ।

इस पानी को अब घी में (जितना डालना चाहे) गरम मसाले का बघार दे कर छौंक दे । मिर्च मसाला खटाई और डाल दे । कोई कोई इसमें चॉवलों का माँड भी डाल देते हैं । कोई थोड़ा सा बेसन मिला देते हैं, तब बघारते हैं । कोई कोई इसमें खटाई अधिक डालते

हैं और थोड़ा सा बेसन भी मिला कर डालते हैं।

कढ़ी—यह बहुधा तो बेसन की बनती है, पर कोई कोई मूँग की दाल की पिट्ठी की भी बनाती हैं। इसमें पकौड़ी वा बेसन की टेटी भी डालती हैं। यह जितनी पकाई जाती है, उतनी ही अच्छी होती है। पहिले पकौड़ी वा टेंटी बना कर तय्यार रक्खे। पीछे मठे में बेसन वा मूँग की पिट्ठी को घोल लेवे। कड़ाही में घी डाल कर जीरे का छौंक देवे। जब छौंक तय्यार हो जावे, तब इस मठे के घोल को इस कड़ाही में डाल देवे। जब मठे में बेसन इत्यादि घोले, तब उसमें नमक, मसाला भी पीस कर डाल देवे। पकौड़ी बनाना तो तुझको पहिले बता चुकी हूँ। टेंटी इस भाँति बनाते हैं कि, बेसन को थोड़ा सा नमक डाल कर बहुत कड़ा माँड लेवे और उनकी टेंटियाँ बना लेवे। इन टेंटियों को बटले वा कड़ाही में कुछ घी डाल कर आग पर भून लेवे और कढ़ी में डाल दे।

मूँग की पिट्ठी की कढ़ी जो बनाई जाती है, उसमें बेसन की पकौड़ी नहीं डालते हैं। मूँग की पिट्ठी ही के मँगोड़े डाले जाते हैं।

भोर—यह भी एक प्रकार की कढ़ी ही है। परन्तु मथुरा के चौबों में इसको भोर कहते हैं। इसी के एक

प्रकार को गुजरातियों में ओसावन, महाराष्ट्रों में कड़ी और ओसवालों में मॉडिया कहते हैं। परन्तु यह कढ़ी से बहुत ही पतला बनाया जाता है। चौबों के प्रत्येक भोज में झोर अवश्य होता है। क्रिया वही कढ़ी की है, परन्तु इसका घोल बहुत ही पतला रक्खा जाता है। यहाँ तक कि चौबों में कहावत है कि, 'दमड़ी को तोर (दही का पानी) और भर कठौता झोर।' यह इतना स्वादिष्ट होता है कि, इसके विषय में यह कहावत है कि, 'खुरखुरमुण्डा * तनला चोर, खाय पकौड़ी माँगे झोर।' इस घोल को निरा पानी सा रक्खे और मिर्च मसाला खूब देवे। जब तक इक्कीस उफान न आवें तब तक यह अच्छा नहीं बनता है। कम उफान भी देते हैं, पर स्वाद उतना ही कम रहता है। यह भोजन चौबे लोगों का है। क्योंकि वे लोग ही इसको ठीक बनाते हैं।

चौबे लोग आलू का भी झोर बनाते हैं। यह भी बहुत स्वादिष्ट बनता है, परन्तु वह निरे आलुओं ही

---

* यह कहावत किसी मुसलमान के विषय में है कि, उसका सिर घुटमुण्ड था। उसको किसी सयोग से किसी चौबे के यहाँ झोर खाने को मोनजों म मिला। वह उसको इतना स्वादिष्ट लगा कि, सिवाय झोर के और कोई भोजन उसने न माँगा

का बनता है। बेसन या पिट्ठी नहीं डाली जाती है। आलुओं के भाग में छः गुना या अठगुना पानी डाल कर उफान देते हैं और आलुओं को घोट कर पानी में मिला देते हैं। इसमें नमक, मिर्च और गरम मसाले का छौंक अच्छा होना चाहिये। विशेष कर लौंग अधिक डाली जावें।

यह झोर आम की गुठलियों का भी बनता है अर्थात् आम का रस निकाल कर छिलके और गुठलियों को पानी में धो डाले और नमक, मिर्च, मसाला डाल कर गरम मसाले का छौंक दे कर दो तीन उफान से झोर की भाँति पका ले। परन्तु इसको मिट्टी की हाँडी में बनावे। पीतल या काँसे के बर्तन में कभी न बनावे। क्योंकि उन में यह पितला जाता है और कड़ाही में काला पड़ जाता है। यह चावलों के संग खाने में बहुत स्वादिष्ठ लगता है।

संवई–इनको तू जानती ही है कि, सावन के महीने में हर कोई बनाता है। परन्तु इनके राँधने और बनाने की क्रिया इस प्रकार होनी चाहिये तो अति श्रेष्ठ है। क्योंकि जैसे अब पकाई जाती है, उस प्रकार ये कच्ची और गरिष्ठ होती हैं। (१) संवई को पूरी की भाँति घी में उतार ले। खाँड़ व बूरे की चाशनी कर के पाग ले

व पीछे पानी में उबाल ले और बूरा डाल कर खावे। कभी कच्ची न रहेगी और न गरिष्ठ होगी, (२) सेवें कई प्रकार से बनती है, यह तुझको फिर कभी बताऊँगी। क्योंकि अभी तुझको बहुत व्यञ्जन बताने हैं ।

(३) फलाहार ।

यहाँ से अब तुझको फलाहार, जिसको सागाहार भी कहते हैं, बनाना बतलाती हूँ । इनका अर्थ तो यह है कि, फल का व साग का भोजन, परन्तु ऐसे कई प्रकार के भोजन हैं, जो इनमें गिने जाते हैं । जैसे दूध के सब भोजन और कूटू, सिंघाड़ा, पसाई, सामाँ, कँगनी इत्यादि के । फलाहार में सेंधा (लाहौरी) नमक और कालीमिर्च और सफेद जीरा है । दूसरा मसाला नहीं है ।

दूध के इतने भोजन बन सकते हैं—दूध, दही, रबड़ी, खोआ, शिखरन, रायता, पेड़ा, बर्फी, खीर, खुर्चन इत्यादि । कूटू के भोजन—पूरी, फलौरी, हलुवा ।

सिंघाड़े के भोजन—उबले हुए सिंघाड़े, साग, पिठौर, हलुवा, पूरी इत्यादि जिनकी विधि यह है ।

दूध—इसको निपनिया ले कर और बराबर का पानी मिला कर मन्दी आग पर सवेरे से साँझ तक मिट्टी की हाँडी में औटावे, चलाती रहे ब मलाई न पड़ने पावे । चिरौंजी, गोला, बादाम और मिश्री डाल दे । जब पानी

जब जल जावे और दूध भी आधा रह जावे, तब उतार ले। थोड़ा गुलाब व केवड़ा डाल दे। मथुराजी के पास जो गोकुल है, वहाँ के मन्दिरों में यह दूध बहुत ही अच्छा बनाया जाता है, जो लोटी के नाम से प्रसिद्ध है।

दही-निपनिया दूध ले कर औटावे। जब ¼ भाग जल जावे, तब उतार ले। औटते में मलाई इसमें भी न पड़ने दे। औटते में बराबर कलछी से चलाता रहे। जब कुछ ही गरम रहे तब दही (निचुड़े हुए) का जामन दे कर हाँडी (कोरी हो तो बहुत ही श्रेष्ठ है) में जमा दे। जाड़े हों तो हाँडी के नीचे थोड़ीसी भूभल रख दे। गरमी हो तो ठंडे स्थान में रक्खे। वर्षाऋतु में पवनीक स्थान में रक्खे। यदि जाड़ों में दही न जमे तो थोड़ी सी भूभल हाँडी के नीचे और रख दे। गरमी हो तो रुपया डाल दे। बड़ के दूध के छींटे दे दे। जंगली अंजीर का वा ढाँक का हरा पत्ता डाल दे तो थोड़ी ही देर में जम जावेगा। जामन * ऐसा होना चाहिये कि, दही मीठा हो और उसको कपड़े में लटका कर निचोड़ डाले। क्योंकि जामन में जितना कम पानी होगा, उतना ही दही गाढ़ा जमेगा। निलारी का दही प्रसिद्ध है कि, छः छः महीने तक नहीं बिगड़ता। यदि दूध अच्छा औटा होवे और

* सहेजा अथवा जमानवाला।

कूटू-इसकी पूरी और फलौरी बनती हैं । पूरी फलौरी अच्छी बनती हैं । आलू, काशीफल, अरवी वा केवल आटे ही की बना ले । इस प्रकार कि, आलू वा अरवी को तो पहिले उबाल ले । पीछे छील कर बनार ले । काशीफल को चाहे कच्चा ही बनार ले । अब कूटू के चून को पानी में सेंधा नमक डाल कर और काली मिर्च पीस कर घोल ले और खूब गढ़ डाले । जितना गढ़, उतना ही अच्छा । इस फेन में आलू, अरवी वा काशीफल के टुकड़े को लपेट लपेट कर कड़ाही में चढ़े हुए घी में उतार ले । पूरी का चून कड़ा गुंदता है ।

सिंघाड़ा-इसका पिटौर अच्छा बनता है । इस प्रकार कि, चून की लेही पकावे । इस लेही को परात वा थाली में एक जौ की बराबर मोटा चौरस जमा दे । पीछे उसको शकरपारे की भाँति चक्र से काट ले । दही को कपड़े में छान कर मठा सा कर ले वा टटकी छाँछ ले कर उसमें नमक, मिर्च और भुना जीरा पीस कर डाल दे और मिला ले और इन कतलों को डाल कर आध घंटे पड़ा रहने दे ।

सीरा-सिंघाड़े के चून का सीरा भी बनता है । इस प्रकार कि, गुड़ को वा बूरे को, जिसमें बनाना होवे, पानी में घोल कर छान लेवे और सिंघाड़े के चून को

इसमें मिला कर पका लेवे । परन्तु यह पतला बनता है, इसमें घोटने की चतुराई है कि, गुठले न पड़ने पावें । क्योंकि इकट्ठा आटा डालने से गुठले पड़ना बहुत सम्भव है । इसलिये थोड़ा थोड़ा आटा डाला जावे और चला दिया जावे ।

अरवी—यह चार भाँति की होती है ।(१) रसदार, (२) नरम, खुश्क, (३) भर्ता, (४) तली हुई ।

यह गरिष्ठ बहुत होती है, परन्तु अजवाइन इनको अच्छी भाँति पचा देती है अथवा अरवी के पानी को जितना सुखा लेवे, उतनी ही शीघ्रतर पचती है । अजवाइन इसका मुख्य मसाला है ।

(१) मोटी मोटी अरवी ले कर छील डाले । उनको अजवाइन का छौंक दे कर छौंक ले । उनमें मसाला डाल कर पानी बराबर का डाल दे । जब सीझ जावें तब उतार लेवे ।

(२) नई होवें तो छील लेवे । यदि पुरानी होवें तो उबाल लेवे, पीछे छीलें । अजवाइन का बघार दे कर इनको घी में भुन ले । जब भुन जावें तब मिर्च, मसाला और नमक डाल दे और जब गल जावें, उतार लेवे ।

(३) मोटी मोटी अरवी ले कर भूभल में दाब कर

भर्ता कर ले (पर यह पकी अरवियों का होता है।) और छील कर मथ ले । उसमें गरम मसाला, धनियाँ, नमक, मिर्च इत्यादि पिसा हुआ मिला कर घी में छौंक ले ।

(४) यह अरवी वृन्दावन में मौनीदास की टट्टियों (राधाअष्टमी पर) में अच्छी बनती हैं, प्रसिद्ध हैं। रीति यह है कि, मोटी मोटी अरवी ले कर उबाल ले। उनका छिलका उतार कर नमक मिले हुए मठे में तीन वा चार दिन भिगो रक्खे, ताकि उनमें मठा भिद जावे। चौथे पाँचवें दिन निकाल कर फरफरी कर के घी में पूरी की भाँति तल कर उतार ले। थोड़ा नमक और कालीमिर्च पीस कर इनमें लगा दे ।

शिखरन—मीठा और टटका चका दही ले कर कपड़े में बाँध कर निचुड़ने दे । जब पानी निचुड़ जावे, तब उसको कपड़े में से निकाल कर पत्थर व काँच के पात्र में रक्खे । उसमें मिश्री, कालीमिर्च, बड़ी इलायची पीस कर मिलावे । कोई कोई थोड़ा सा कच्चा दूध और तवा हुआ घी भी इसमें डाल देते हैं ।

खुर्चन—यह मथुराजी में अच्छी बनती है और गुसाईं पेड़ेवाले की दूकान की प्रसिद्ध है । यद्यपि अन्य और दूकानों पर भी बनती है और रुपये की ऽ१॥ तक

जाती है और दूर दूर तक मथुरा से जाती है, तथापि रखने से उसका वह स्वाद नहीं रहता है। बनने से तीन चार दिन तक ही स्वाद रहता है। पीछे बहुत ही कम हो जाता है। इसकी रीति यह है,

मैंने जैसे तुझको रबड़ी में लच्छे डालने की विधि बतलाई, उसी भाँति दूध के लच्छे बना ले। पीछे इन लच्छों को कड़ाही में डाल कर आग पर फिर भूने। पर इस बात का ध्यान रक्खे कि, लच्छों को टूटने न दे। जब ये लच्छे खूब भुन जावें अर्थात् उनकी नमी जाती रहे और सूखे से जान पड़ें (पर यह भी न हो कि, निपट जला ही दे कि, भुनते भुनते सूखे कर डाले। नहीं, थोड़ी सी नमी जरूर रहने दें), तब उन में पिसा हुआ कन्द, पिसी हुई इलायची डाल दे और थोड़ा सा गुलाब व केवड़े के इतर की दो चार बूँदें डाल देवे।

कच्चे सिंघाड़े की पूरियाँ–छील कर और तराश कर धूप में सुखा दे। जब कुछ खुश्क हो जावें तब उन को पीस लेवे और कपड़े में रख कर खब निचोड़ लेवे कि, पानी सब निकल जावे। उसको फिर धूप में सुखावे। जब कुछ और खुश्क हो जावें तब फिर सिलबट्टे से पिट्ठी की भाँति महीन पीस लेवे और थोड़ा सा सिंघाड़े

का खुश्क आटा मिला कर अथवा उन पर ख़ुश्क घी में पूरियाँ उतार लेवे । बहुत स्वादिष्ठ होती है ।

(४) चबेना ।

बहुत से तो भाड पर भुन कर बनते हैं, जो भुर्जी की दूकान पर बिकते हैं । जैसा पहिले बता चुकी हूँ । पर बहुत से घर में भी बनाये जाते हैं, जैसे चने व मूँग की दाल अथवा मूँग, मोठ व मसूर तली हुई सेव, कचरी इत्यादि ।

मूँग व चने की दाल व मसूर को मोटी मोटी ले लेवे । घुनी हुई को निकाल देवे । जाड़ों में छः पहर और गरमी में दो प्रहर पानी में भिगो रक्खे । मिट्टी की नाँद में डाल कर दस अंगुल ऊपर तक पानी भर दे । जब फूल जावे, तब एक मोटे कपड़े पर पानी निचोड़ निचोड़ कर रखता जावे । पीछे एक कपड़े से, इसको रगड़ कर तनिक फरेरी कर ले । पीछे घी कड़ाही में चढ़ा कर जब घी खूब बोल उठे तब इस भीगी हुई दाल व मसूर को हाथ से फैलाता हुआ कड़ाही में डाले । एक ही जगह इकट्ठा न डाल देवे और पौनी से उस को उछाल दे । जब तल तल कर ऊपर आ जावे तब पौनी में ले कर और घी को निचोड़ कर एक परात वा थाल में रखता जावे । इसी भाँति सब को तल ले ।

इसमें से कुछ कड़ाही के नीचे तलने में रह जाती है। जो डर्रा होती है, उसको निकाल कर अलग रखता जावे (यह समोसों के काम आती है, जो पीछे बताऊँगी) इसमें नमक, कालीमिर्च महीन पीस कर और बुरक कर मिला दे। तनिक सा पिसा हुआ महीन अमचूर भी मिला दे। चने की दाल को बहुधा कर अधिक तलते हैं और मूँग मोठ को कमतर।

सेव अच्छे तो पँच में बनते हैं। क्योंकि बहुत पतले होते हैं। पतले ही घी अधिक सोखते हैं और उतने ही स्वादिष्ट होते हैं। इनकी रीति कठिन नहीं है। थोड़ा सा मोयन डाल कर बेसन को तनिक कड़ा उसन लेवे और कड़ाही में घी चढ़ा कर पौनी में बेसन की लोई रख कर हाथ से माँड़ती जावे तो नीचे को सेव गिरते जावेंगे। जब सब गिर जावें तब लकड़ी से उछाल देवे और दूसरी पौनी में सिकने पर निकाल लेवे। परन्तु इस बात का ध्यान रक्खे कि, कड़ाही के ऊपर एक टिखटी इस प्रकार की बनी हुई रख कर पौनी से छाँटे, नहीं तो कड़ाही के किनारे पर से पौनी के हट जाने का भय रहेगा और हाथ गरम घी में जा पड़ेगा। बेसन में उसनते समय नमक, पिसी हुई मिर्चे, हल्दी इत्यादि डाल दे। दाल, सेव आगरे के प्रसिद्ध हैं।

कचरी–देहली से छिली हुई सानित बहुत
आती है। उनको ले कर, खाली कड़ाही को आग पर
कर मन्दी आग से खूब भूनती जावे। हाथ में कपड़ा
ले, उससे चलाती रहे कि हाथ न झुरसे और न क
जलें। जब खूब भुन जावें तब उन पर कलछी
थोड़ा थोड़ा सा घी डालना आरम्भ करे और कौंचे
चलाती जावे। ज्यों ज्यों घी पड़ेगा, कचरी फूलती
रेंगी। जब सब फूल जावें तब उतार कर पिसा हु
नमक मिला दे। घी में जो पूरी की भाँति तलते हैं,
अच्छी नहीं होती है। क्योंकि फूलती नहीं है। इ
प्रकार अन्य कचरियों को तले। जो देहली की कच
न मिले तो इस प्रकार करे कि, कातिक के महीने में ज
कचरी अधपकी हों, बड़ी बड़ी ले कर छील डाले औ
उनको मठे में नमक डाल कर चार या पाँच दिन तक प
रहने दे। पीछे धूप में सुखा लेवे और समय पर का
में लावे। बहुत अरमुरी होंगी।

ग्वार की फली–जब तक बीज न पड़ा हो, तो
कर सुखा लेवे। आवश्यकता पर ऊपर की भाँति त
कर नमक, मिर्च लगा कर काम में लावे।

टेंटी–छोटी छोटी जेठ के महीने में ले। बड़ी बड़ी
जिनमें बीज पड़ गये हों, न लेवे। उनको मिट्टी के बर्त

भर कर पानी भर दे और धूप में रख दे। तीसरे दिन
ी को फेंक कर फिर सर्द पानी भर दे और पूर्ववत्
में तीन दिन तक रक्खी रहने दे। पानी फिर फेंक
और एक वेर फिर ऐसा ही करे । तीसरी वेर टेंटी
काल कर धूप में सुखा ले और जब निपट सूख जावें, तब
छोड़े। इनमें कडुवापन नहीं रहता है। इस क्रिया को
टी उठाना' कहते हैं। जब कभी आवश्यकता हो, क-
री की भाँति भून कर नमक, मिर्च मिला लेवे।

खरबूजे के छिलके–जो खरबूज़ा खरखरा होने
र्थात् जिसका छिलका बहुत मोटा होवे, उसका गूदा
से उतार के खाने में लावे। छिलके के छोटे छोटे
कड़े कर के सुखा ले। इनको कचरी की भाँति भून कर
मक, मिर्च बुरक दे।

करेलों को ले कर नमक लगा कर थोड़ी देर रख
दे। पीछे हाथों से मसल कर निचोड़ डाले। कडुवा
नी निकल जावेगा। पीछे चाकू से कतर कर धूप में
खाले। जब आवश्यकता हो, कचरी की भाँति भून लेवे।

काशीफल, तरबूज, खरबूज़ा, पेठा–इत्यादि के
जों को छील कर और मिगी निकाल कर, कचरी की
ाँति भुन नमक, कालीमिर्च मिला दे, चाहे थोड़ा सा
क वा पिसा अमचूर बुरक दे।

पिस्ते और सेम के बीजों को भी इसी प्रकार का में लाते हैं। इनमें चूक या अमचूर (बहुत ही मही पिसा, छना) अवश्य ही लगाना चाहिये।

पापर-सेर भर उडद के आटे में छटाँक भर लोटा सज्जी पीस कर डाले। छटाँक भर नमक, गरम मसा कालीमिर्चे, जीरा डाल कर उसने ले और ओखली मूसलों से खूब कूटे। (जितना कूटेगी, उतने ही खस्त होंगे।) पीछे लोई तोड कर, तेल के हाथ से चक पर बेलन से बेल कर तनिक धूप में सुखा ले। इनके शकरपारे की भाँति कतर ले तो मिरचोनी हो जायँगी इनको घी में तल ले। यदि लोटका सज्जी अच्छी न मिले तो सवा तोले सोडा (Soda) डाल दे।

तिलमँगोडी—उडद की दाल की पिट्ठी को खूब महीन पीस और पानी डाल पिट्ठी को खूब गहे। जितना गहेगी, उतनी ही फोकी होंगी। इनमें थोडे से सफेद धुले हुए तिल मिला दे और खूब मिलावे। थोडा सा नमक, मिर्च, मसाला मुआफिक से इसमें और मिलावे। फिर मँगोडी तोड कर सुखा लेवे। जब चाहे तब घी में तल लेवे। यदि नमक मिर्च पहिले कम डाला था तो अब थोडा सा और लगा देवे।

(५) फुटकर ।

साग उसको कहते हैं, जो हरे पत्तों का बनता है और भाजी उसको कहते हैं, जो अन्य वस्तु की अर्थात कन्द, मूल, फल, फूल की बने । जैसे आलू, गाजर आदि । साग में से प्रथम गले सड़े पत्ते निकाल डाले। तिनका डेरा वा अन्य वस्तु हो, उसे बीन डाले । पीछे पानी में दो तीन बेर रख धो डाले, जिससे मैल मिट्टी सब घुल कर निकल जावे । पीछे जो बनाने की आवश्यकता हो तो दगन्त वा चाप से बनार ले ।

अरवी के पत्ते–बेसन में नमक, मिर्च (जैसी खानी हो) और गरम मसाला पीस कर डाले । बेसन को गाढ़े पानी में घोल ले और अरवी के पत्तों के एक ओर लपेट कर उनको बदले और चार चार अंगुल के टुकड़े चाकू से काट ले । उनको डोरे से बाँध ले । कड़ाही में घी चढ़ा कर इनको पूरी की भाँति उतार ले या यों करे कि बटले में पानी भर कर आग पर रक्खे, मुख पर कपड़ा बाँध कर इन टुकड़ों को उन पर रख दे, ऊपर से सरपोश रख दे । आध घंटे में सिक जावगे । अब घी में इलायची का बघार दे और धनियाँ, लाल-मिर्च पानी में पीस कर इस घी में डाल दे और भून ले । इन पत्तों के टुकड़ों को भी डाल ले और अन्दाज

का पानी डाल कर पाव घंटे तक आग पर रक्खा रहने दे । नमक और गरम मसाला डाल कर बटले को उतार ले ।

पालक एक सेर, सोआ का साग ऽ=, मेथी का साग ऽ।, आलू ऽ॥, बड़ी ऽ=, आलू को छील ले । साग को धो कर रख ले—बड़ी को घी में भून ले । पीछे ऽ। घी में जीरे का छौंक दे । साग आलू और बड़ियों को बटले में डाल कर उलट-पलट करती रहे । अब पिसा हुआ नमक, मिर्च डाल दे । जब आलू और साग गल जावें, उतार ले ।

सरसों के पत्ते वा गाँडर ले कर उबाले । फिर ठंढा कर के निचोर डाले । एक सेर निचुरी हुई ले कर उसमें पाँच तोले सोंठ, नमक, लालमिर्च पीस कर मिलावे । आध सेर घी में दो माशे जीरा डाल कर छौंक दे । उसमें इस उबली और निचुरी हुई गाँडरों को डाल दे । खूब मिला दे और थोड़ी देर में उतार ले । पत्तों के साग अनेक प्रकार के और भी हैं, परन्तु अभी बहुत कुछ भोजनविषय में बताना है, इसलिये अ नहीं बता सकी हूँ ।

भाजी—यह इतने प्रकार की हो
(१) मूल की, (२) फल

शिमीकन्द—यह कई प्रकार से बनता है। लोग अपनी अपनी रीति को अच्छा और सुगम बताते हैं। परन्तु सुगम नहीं है, जिसमें खुजली न रहे और घी कम लगे। क्योंकि इसमें घी ही मुख्य है। बराबर तक का घी, बरन सवाया ड्योढ़ा तक लग जाता है। सेर आध सेर तो इसको हर कोई बना लेता है। पर मनों बनाने की क्रिया किसी को नहीं मालूम। वह मैं बताऊँगी। इसके चेंप में खुजली होती है। यदि किसी प्रकार चेंप को दूर कर दिया जावे तो खुजली न रहेगी।

(१) हाथ में घी वा तेल चुपड़ कर इसके छिलके को चाकू से छील कर कतले कर ले। पूरी की भाँति कड़ाही में घी चढ़ा कर उतार ले। इसकी सुगम रीति यह है।

(२) कपरौटी कर के भाड़ में भर्ता करा ले तो बहुत ही अच्छा है। ऊपर का छिलका छील डाले और नमक, मिर्च, धनियाँ, आँवले, गरम मसाला मिला कर जितने घी में चाहे, छौंक ले।

(३) हाथों में घी वा तेल चुपड़ कर चाकू से छील ले और छोटे छोटे कतले कर के पिसा नमक उनमें रगड़ मिला दे और एक परात में टेढ़ा कर के धूप में रख दे। दो घंटे तक रक्खा रहने दे। सब चेंप निकल कर परात

केले की फली–इनको कच्ची छील कर और उबाल कर दोनों भाँति बनाते हैं। खादर के केले की फली अथवा बहुत कच्ची अच्छी नहीं बनती। अधपकी फली अच्छी बनती है। एक सेर छिली हुई फलियों को आधी छटाँक धनियाँ, डेढ़ डेढ़ तोला हल्दी और लालमिर्च पीस ले। छटाँक भर से लेकर पाव भर तक घी बटले में डाल कर चूल्हे पर चढ़ा दे। पाँच रत्ती हींग और दस लौंग उसमें भून कर डाल दे और पिसा हुआ मसाला भी डाल दे। जब हल्दी की हलदाइन जाती रहे, तब कतलों को निचोड़ कर डाल दे। जब भुन जावें, तब ऊपर से थोड़ा सा पानी डाल दे और ये मसाले डाल दे। नमक छटाँक भर, सोंठि डेढ़ तोला, लौंग, जीरा, इलायची तीन तीन माशे, जायफल, जावित्री इनसे आधे आधे। थोड़ी देर को ढक दे। खटाई जितनी खावे, डाल ले और मन्दी आग से पकावे।

(२) अथवा यों करे कि, फलियों को उबाल कर छील डाले। फिर उनकी पकोड़ी बना कर जैसे पहिले बता चुकी हूँ, बना ले। पीछे गरम मसाले को घी में छौंक दे कर और हल्दी, मिर्च, मसाला डाल कर रसेदार बना लेवे।

करेले ऐसे ले, जो पके न हों। ऊपर से चाकू से

छील ले । चाकू से पेट चीर देवे । इसमें पिसा हुआ नमक भर कर थोड़ी देर को रख दे । जब नमक भिद जावे, तब दोनों हाथों से खूब मसल डाले और जितना पानी निकले, निकाल डाले और निचोड़ कर रख दे । सौंफ, धनियाँ, नमक बराबर, उनसे आधी आधी लालमिर्च, अमचूर और आँवले ले । पाँचवें हिस्से का जीरा । सब को कूट कर इनमें भर दे । घी में हींग और जीरे का बघार दे कर करेलों को इसमें भून ले । जब भुन जावें, तब कुछ पानी डाल कर ढक दे । जब पानी जल जावे और करेले सीज जावें, उतार लेवे । भुनते समय कलछी से चलाती रहे ।

टेंडस वा टिंडे—ये साबित भी बनते हैं और कतले कर के भी । इनको भी पके हुए न ले, किंतु कच्चे ले कर छील डाले । या तो करेले की भाँति मसाला भर कर बना ले वा कतले कर के हल्दी, मिर्च, धनियाँ डाल दे । हींग में छौंक ले । जब गल जावें, तब उतार ले ।

भिंडी—ये साबित अच्छी बनती हैं । दही इसमें मुख्य है । जहाँ तक हो सके, सूखी रक्खे । चिपकाहट न रहने दे । इनके दोनों सिरों को काट डालते हैं । चाह कतले कर के बना ले, चाहे साबित । जो साबित

बनानी होवें तो चाकू से फॉक कर कर के इनमें कुटा हुआ मसाला भर दे। घी में हींग का बघार दे कर इनको डाल दे और थोडा सा पानी डाल कर कलछी से उलट-पुलट कर भून ले। पीछे थोडा सा दही डाल कर चला दे। ऊपर से पानी का कटोरा भर कर रख दे और मन्दी आग से सीझने दे। जब गल जावें तब उतार ले।

(३) साबित भिंडी कच्ची कच्ची एक सेर ले। पाव भर घी में भून ले और निकाल कर अलग रख ले। छः माशे हल्दी, दो दो तोले धनियाँ और लालमिर्च को पानी में पीस ले। घी में जीरे का बघार दे कर मसाले को इसमें भून ले। अब, भिंडी, नमक और थोडा सा पानी डाल कर पका ले। इसमें पिसा हुआ तीन तोले अमचूर डाल दे और छः माशे पिसा हुआ गरम मसाला। जब गल जावे और पानी सूख जावे तब उतार लेवे।

(४) फूल में कचनार और गोभी आदि ही मुख्य हैं, वैसे तो अनेक हैं। सन, सेमल आदि।

गोभी (१) ताजा फूल गोभी एक सेर, घी और दूध पाव पाव भर, कालीमिर्च तीन माशे, नमक मिर्च अन्दाज का। पहिले फूल को उबलते हुए पानी में

डाल दे। जब गल जावे सब निकाल कर, कपडे में लपेट कर अलग रख दे। जब पानी कपडे में सोख जावे, तब एक सेर तोल ले। अब बटले में गोभी को डाल कर कलछी से खूब महीन कर ले। फिर आग पर रख कर दूध डाल दे और कलछी से चलाती रहे। जब दूध मिल जावे, तब नमक और मिर्च पिसा हुआ इस में डाल दे और घी डाल दे और खूब चला दे। थोडी देर पीछे उतार ले।

(२) एक सेर गोभी ले, आधी छटॉक धनियॉ, छः माशे हल्दी, मिर्च (जितनी चाहे) पानी में महीन पीस लें, पाव भर घी में जीरे का बघार दे कर इस पिसे हुए मसाले को भून ले।

अब फूल गोभी की डॉडियॉ को अलग अलग कर, के डालती जावे और कलछी से चलाती जावे। पीछे से एक सेर पानी डाल दे और बीस मिनट तक पका ले। जब पानी सोख जावे तब दो दो तोले अदरक और हरा धनियॉं बनार कर इसमें डाल दे और चला दे। ऊपर से ढॉप दे। पीछे गरम मसाला पिसा हुआ छः माशे डाल कर और मिला दे। थोडी देर पीछे उतार ले।

(३) इसके फूल ही की भाजी होती है, पर इस की डंडी को भी जो नरम नरम होती है, इसके संग

बनार लेते हैं। जो कड़ी होती हैं, उनका छिलका उतार कर भीतर से गूदा निकाल लेती हैं। गोभी को धो कर रख ले। घी में हींग और गरम मसाले का बघार दे कर गोभी को उसमें डाल दे। धनियाँ, नमक, मिर्च पीस कर इसमें डाल दे। मुख बन्द कर थोड़ी देर तक आग पर रक्खा रहने दे। इसी में सीझ जायगी।

कचनार की बन्द बोंडियों को ले कर उनके डंठल तोड़ डाले। फिर उनको गरम पानी में जोश देवे। जब गल जावें, तब उतार कर और ठंढा कर के निचोड़ डाले। ताकि पानी न रहने पावे। इसके पीछे इनको खूब हाथ से मसल कर वा पीस कर बारीक कर लेवे पीछे हींग का छौंक दे कर इनको छौंक लेवे। नमक, मिर्च, मसाला डाल दे। थोड़ा सा दही भी अवश्य डाले।

भुजिया—मेथी, मूली, पालक, सरसों, राई इत्यादि की बनती है। हींग का छौंक इसमें मुख्य है। साग को बीन छाँट कर और बनार कर छौंक देते हैं। नमक मिर्च और पानी डाल कर ढक दे। जब पानी जल जावे, उतार ले। परन्तु सरसों, राई और मूली को पहिले उबाल कर और ठंढी कर के जितना कूट कर निचोड़ डाले कि, खार निकल जावे, उतना ही अच्छी होती है। मूली में अजवाइन का छौंक दिया जाता है।

भर्ता—एक सेर आलू को छील छील कर पानी में डालता जावे। पीछे उनके कतले कर ले और पिसा हुआ नमक उनमें मल देवे। थोडी देर पीछे जब कतले नरम हो जावें तब कपडे में रख कर निचोड डाले। घी कडाही में चढा कर इनको पूरी की भाँति उतार ले और पीछे इनको घी में गरम मसाले का बघार दे कर और हल्दी, धनियाँ, मिर्च इत्यादि को घी में भून कर आलू उसमें डाल दे। पानी डाल कर नमक डाल दे। पीछे उतार ले। यह भी एक प्रकार का भर्ता है।

(२) बडे बडे आलू एक सेर ले। उनको छील कर पानी में डाल दे। पीछे उबलते हुए पानी में डाले। जब गलने लगें, तब उतार ले और पानी निकाल कर रात में ठंडे कर ले। जब कुछ खुश्क हो जावें, तब दो दो टुकडे कर ले। अब कडाही में घी चढा कर इन आलुओं को पूरी की भाँति उतार ले और पिसा हुआ नमक, मिर्च इनमें मिला दे।

(३) एक सेर आलू छिले हुए लेवे, जिनको छील छील कर पानी में डालती गई होवे। पीछे बहुत सा पानी उबाले, उसमें इन आलुओं को तेज आँच से उबाल लेवें। अब इनका सब पानी निकाल डाले और कलछी से तोड डाले। इनमें दो तोला पिसा अमचूर,

नमक, मिर्च के साथ मिला दे। अब पाव भर घी को जीरे और इलायची से बघार आलू डाल दे और कलछी से खूब मिला दे। जब खूब भुन जावें और कच्चे न रहें, तब आठ माशे पिसा हुआ गरम मसाला और थोड़ा सा पोदीना (यदि हरा हो तो बहुत ही अच्छा है) और दो तोले केसर पिसी हुई डाल कर, खूब मिला दे और थोड़ी देर पीछे बटले को उतार ले।

(४) बड़े बड़े आलू भाड़ में भुनवा ले। छिलका उतार कर नमक, मिर्च, अमचूर, धनियाँ पिसा हुआ मिला कर घी को हींग से बघार दे कर भून ले।

बैंगन–मारू का भर्ता अच्छा होता है। इसका भर्ता भाड़ में ही अच्छा होता है। पर जहाँ भाड़ न होवे, वहाँ यह बहुत सुगम रीति है कि, जिधर को बैंगन का डठल होता है, उस ओर को तनिक सा गहरा छेद चाकू से कर के उसमें तनिक सी हींग और घी भर दे और बन्द कर दे। बीस वा पचीस छेद सब बैंगन में सींक से कर के अंगार के ऊपर औंधा कर के रख दे। थोड़ी ही देर में भर्ता हो जावेगा। यदि चारों ओर एक वा दो अंगार और रख दे तो बहुत ही शीघ्र हो जावेगा। पीछे इसको छील कर मथ डाले और महीन मसाला धनियाँ, मिर्च, नमक मिला कर रख ले।

घी में हींग या जीरे का छौंक दे कर, इसको उसमें डाल कर कनछी से खूब चला दे। यदि थोड़ा सा पिसा अमचूर डाल दे तो स्वाद अधिक हो जाता है ।

करेले और कद्दू इत्यादि का भी भर्ता होता है ।

दूध की तरकारी–भैंस के दूध को आग पर चढ़ा कर औटे और चलाती रहे । मलाई न पड़ने दे । जब खूब औट जावे तब उसमें खट्टा दही डाल कर जोश देती रहे । इससे दूध फट जावेगा । इस फटे हुए दूध को छान कर और कपड़े में बाँध कर लटका दे । जब पानी सब निचुर जावे और लोंदा सा बँध जावे तब उसको चाकू से काट काट कर धीमी आँच से घी में तल ले । पीछे घी में हल्दी, मिर्च, मसाला भून कर इन तले हुए टुकड़ों को भी भून ले। थोड़े से मेथी के पत्ते डाल दे । अटकल का नमक डाल कर पानी डाल दे और पकने दे । जब कुछ पानी जल जावे तब उतार ले । पानी सब न जला देवे, नहीं तो चमचोड़ हो जावेगी ।

नमक का साग–साम्हर नमक की बड़ी बड़ी ककड़ी ले कर थूहर के दूध में भिगो दे । जब खूब भीग जावें तो दूध को पोंछ डाले और घी में बघार दे कर और सागों की भाँति मसाला डाल कर छौंक देवे । इसमें जबतक ऊपर से और नमक न डाला जावेगा, नमक का स्वाद ही

न आवेगा। इसलिये और मासों की अपेक्षा इसमें नमक कम से और डालना चाहिये।

राइता—यह दो प्रकार का बनता है। (१) मीठा और (२) नमकीन। मीठा राइता बुंदी, बूँदी, बताशे और किशमिश का बनता है। बुंदी आदि का राइता बनाना तो कुछ कठिन नहीं है, तू जानती है। परन्तु बताशों का राइता सुन कर तुझे आश्चर्य होगा कि बताशे क्योंकर दही में साबित रह सके हैं। सो ले, उसकी सहज क्रिया तुझको बताती हूँ। बताशों को ले कर गरम घी में डाल दे, परन्तु न इतने गरम में डाले कि वे गल जावें, न इतने कम गरम में कि घी उनमें छिदे नहीं। घी को आग पर रख कर खरा कर ले। पीछे उतार कर नीचे रख ले। उसमें बताशे डाल दे और पोनी से निकाल ले। इन बताशों को दही में डाल दो, कभी नहीं गलेंगे। दही को मथ और छान कर मीठा मिला लेवे और बताशे डाल दे। राइता हो गया।

नमकीन—बथुआ, काशीफल, ककड़ी, कद्दू, बैंगन, आलू, गाजर, मूली, कचनार की बोंडी आदि का बनता है। नमकीन राइते में भुना जीरा और धुँगार मुख्य है। जीरे को नमक मिर्च के साथ न पीसे। अलग पीस कर रक्खे। जितना चाहे रुचि अनुसार डाल लेवे। धुँगार हींग

और राई का इस प्रकार देते हैं कि, जिस बर्तन में राइता बनाना चाहे, उसको खूब साफ कर ले। पर वह छोटे मुख का होना चाहिये।

आग के अंगार पर थोड़ी सी राई वा हींग रख कर थोड़ा सा घी डाल दे और इस धुने हुए बासन को उसके ऊपर औंधा रख दे। जब जाने कि, हींग वा राई जल चुकी होगी, तब उठा ले और उठाते ही तत्काल मठा वा पानी में घुला हुआ दही इसमें डाल कर मुख ढक दे। ताकि धुआं न निकलने पावे। पीछे इसमें जिसका राइता बनाना चाहे, मिला दे। नमक, मिर्च और भुना जीरा पिसे हुए, मुवाफ़िक़ से डाल कर राइता बना लेवे।

ककड़ी को छील कर कद्दूकस में महीन कस के निचोड़ डाले और कच्चा ही डाल दे।

गाजर और कद्दू को कस कर तनिक जोश दे लेवे तब डाले।

कद्दू का बहुत ही अच्छा राइता इस प्रकार बनता है कि, कच्चा लौका ले कर उसको छील डाले। फिर कद्दूकस में कस लेवे और फिर तनिक जोश दे लेवे और निचोड़ डाले। दूध को खूब औटा कर, उसमें दही का जामन दे कर, इस कसे हुए कद्दू को इस दूध

में डाल कर रात को दही जमा दे। सवेरे इस दही को रई से चला दे और फिर नमक, मिर्च, भुना हुआ जीरा अटकल का डाल दे, तो अत्युत्तम बनेगा। बथुआ, काशीफल, कचनार की बोंडियों को उबाल कर और निचोड़ कर खूब महीन मथ ले, तब डाले। आलू, बैंगन आदि को भी उबाल कर और मथ कर डाले।

यह क्रिया तो मैंने तुझको उन भोजनों की बताई, जो नितप्रति तत्काल बनते हैं। अब अचार, मुरब्बा और चटनी इत्यादि, जो एक ही बेर बना कर रख दिये जाते हैं और महीनों तथा बरसों काम में आते हैं, उनकी क्रिया बताती हूँ।

अचार प्राय प्रत्येक वस्तु का पड़ सकता है और मुरब्बा भी। परन्तु तुझको केवल मुख्य मुख्य वस्तुओं को, जो नितप्रति के काम में आती हैं, बता कर इस विषय को समाप्त करती हूँ, क्योंकि यह बहुत बढ़ गया।

अचार अनेक प्रकार और अनेक रीति से पड़ते हैं। उनमें से कुछ तुझको बताये देती हूँ। क्योंकि अचार कितने ही प्रकार के होते हैं। अचार का गुण यह है कि, जितना अधिक नमक इसमें डाला जावेगा, उतने ही दिन तक अचार ठहरेगा। जितना कम नमक डालेगी,

उतना ही जल्दी गल जावेगा। अचार इतने प्रकार के होते हैं,

(१) पानी का अचार। जैसे गाजर, गट्टे, लभेरे इत्यादि।

(२) तेल का अचार। जैसे आम, लभेरे इत्यादि।

(३) तेल पानी का–पानी के अचार में ऊपर से तेल भर देना।

(४) केवल नमक का। जैसे नींबू, अदरक, टेंटी, बैंगन इत्यादि।

(५) सिरके का। जैसे सहँजने की फली, हरे बाँस के कल्ले और आम इत्यादि।

(६) मीठा नमकीन। जैसे नींबू का।

(७) अर्कनाना का। जैसे मिर्च इत्यादि।

(१) पानी के अचार में राई मुख्य है। इसी से खटाई आती है। गाजर, गट्टे आदि को छील कर व लभेरों के डठल तोड कर उबाल लेवे। ठंढा कर के नमक, मिर्च, राई, हल्दी को पानी में खूब पीस कर बहुत से पानी में घोल ले और मिट्टी के बासन में भर कर ऊपर से बारह अंगुल पानी मसाले का भर दे। धूप में दो तीन दिन तक रख दे। पर जाड़ों के दिनों में छः वा सात दिन तक रक्खे। तब उठेगा। (अर्थात् खट्टा हो

नींबू–साबित ले कर चौफंके चीर ले। उनमें मसाला कुटा हुआ भर भर कर, एक चिकने बासन में चुनती जावे, जब सब चुन कर भर जावें, तब ऊपर से थोडे से नींबुओं का रस निचोड कर, बासन को आग जला कर चूल्हे पर रख दे। मन्दी मन्दी आग लगने दे। जब एक उफान आ जावे, तब बर्तन को नीचे उतार लेवे और एक रात दिन तक ठंढा होने दे। पीछे इनको निकाल कर, अचार के बर्तन में भर कर रख ले। स्वाद भी अच्छा हो जावेगा और ऐसा अचार कभी फफूंडता नहीं है, चाहे जितने वर्ष रक्खा रहे और एक दिन ही में तुरन्त तय्यार हो जाता है। जिस दिन डालो, उसी दिन से खाने लगो।

बताशे का अचार–शहद ले कर उसमें थोडा चूक मिलावे। जब खूब मिल जावे तब उसमें बताशे लपेटे। (पानी कुछ न डाले) जब बताशों में खूब लग जावे, उस वक्त उन पर खूब बारीक पिसी हुई कालीमिर्च बुरक देवे अथवा शहद और चूक में पहिले से मिला देवे।

आक के पत्तों का अचार–आक के अधपके पत्ते लेवे। ऐसे, जो पीले होने लगे हों, निरे पीले वा निरे हरे न लेवे। इन पत्तों को खौलते हुए पानी में डाल कर थोडी देर तक ढके रक्खे। फिर निकाल कर

पोंछ लेवे और फरेरे कर डाले। फिर यह मसाला दरदरा पीस कर और उसमें सिरका (श्रेष्ठ तो यह है कि, सिरके का मुअमर होवे) मिला कर पत्तों पर बुरक दे और दोनों ओर लगा कर, धूप में रख तनिक फरेरे कर ले। पीछे अचारी में भर कर रख दे। सौंफ, सोंठ, धनियाँ बारह बारह भाग, हींग तीन भाग, बड़ी इलायची पाँच भाग, छोटी इलायची एक भाग, कालाजीरा एक भाग, सफ़ेद भुना जीरा दो भाग, दालचीनी छः भाग, कालीमिर्च आठ भाग, पीपल तीन भाग, पोदीना दो भाग, लौंग एक भाग, जावित्री छ भाग, जायफल चार भाग, साम्हर नमक नव्वे भाग।

(५) सिरके में नमक डाल कर, जिसका अचार डालना चाहे, डाल ले। वही अचार है। सहँजने की कची कची फली बनार कर डाल दे। बाँस के कच्चे कुले या मूली के फनले कर के डाल दे।

पके हुए टपके आम, हरी मिर्च, अदरक इत्यादि, चाहे सो डाल दे। थोड़े दिन में वे ही सिरके के अचार हो जावेंगे।

(६) साबित नींबू ले कर उनमें सेर पीछे पाव भर गुड़, पाव भर नमक डाल कर किसी बर्तन में भर दे, नित्त हिला दिया करे। एक महीने में बहुत ही अच्छा

नींबू-साबित ले कर चौफके चीर ले। उनमें मसाला कुटा हुआ भर भर कर, एक चिकने बासन में चुनती जावे, जब सब चुन कर भर जावें, तब ऊपर से थोड़े से नींबुओं का रस निचोड़ कर, बासन को आग जला कर चूल्हे पर रख दे। मन्दी मन्दी आग लगने दे। जब एक उफान आ जावे, तब बर्तन को नीचे उतार लेवे और एक रात दिन तक ठंढा होने दे। पीछे इनको निकाल कर, अचार के बर्तन में भर कर रख ले। स्वाद भी अच्छा हो जावेगा और ऐसा अचार कभी फफूंदता नहीं है, चाहे जितने वर्ष रक्खा रहे और एक दिन ही में तुरन्त तय्यार हो जाता है। जिस दिन डालो, उसी दिन से खाने लगो।

बताशे का अचार-शहद ले कर उसमें थोड़ा चूक मिलावे। जब खूब मिल जावे तब उसमें बताशे लपेटे। (पानी कुछ न डाले) जब बताशों में खूब लग जावे, उस वक्त उन पर खूब बारीक पिसी हुई कालीमिर्च बुरक देवे अथवा शहद और चूक में पहिले से मिला देवे।

आक के पत्तों का अचार-आक के अधपके पत्ते लेवे। ऐसे, जो पीले होने लगे हों, निरे पीले वा निरे हरे न लेवे। इन पत्तों को खौलते हुए पानी में डाल कर थोड़ी देर तक ढके रक्खे। फिर निकाल कर

पोंछ लेवे और फरेरे कर डाले। फिर यह मसाला दरदरा पीस कर और उसमें सिरका (श्रेष्ठ तो यह है कि, सिरके का मुअत्तर होवे) मिला कर पत्तों पर बुरक दे और दोनों ओर लगा कर, धूप में रख तनिक फरेरे कर ले। पीछे अचारी में भर कर रख दे। सौंफ, सोंठ, धनियाँ बारह बारह भाग, हींग तीन भाग, बड़ी इलायची पाँच भाग, छोटी इलायची एक भाग, कालाजीरा एक भाग, सफेद भुना जीरा दो भाग, दालचीनी छ भाग, कालीमिर्च आठ भाग, पीपल तीन भाग, पोदीना दो भाग, लौंग एक भाग, जावित्री छः भाग, जायफल चार भाग, साम्हर नमक नब्बे भाग।

(५) सिरके में नमक डाल कर, जिसका अचार डालना चाहे, डाल ले। वही अचार है। सहॅजने की कच्ची कच्ची फली बनार कर डाल दे। बॉस के कच्चे कुले वा मूली के कतले कर के डाल दे।

पके हुए टपके आम, हरी मिर्च, अदरक इत्यादि, चाहे सो डाल दे। थोड़े दिन में वे ही सिरके के अचार हो जावेंगे।

(६) मावित नींबू ले कर उनमें सेर पीछे पाव भर गुड़, पाव भर नमक डाल कर किसी बर्तन में भर दे, नित हिला दिया करे। एक महीने में बहुत ही अच्छा

अचार हो जावेगा--

(७) अर्कनाना का--यह भी सिरके का बनता है पर बना बनाया गन्धियों की हाट पर बिकता है। वहाँ से ला कर अचार इसमें डाल दे।

मिर्च--बड़ी बड़ी हरी मिर्च ले कर चाक़ू से पे चीर दे और खलबलाते हुए पानी में डाल थोड़ी दे को ढक दे। फिर निकाल तनिक फरफरी कर लेवे इनमें मसाला भर कर डोरे से बाँध देवे। बोतल में भर कर ऊपर से अर्कनाना भर दे और नमक डाल दे।

भसींड़े--जिसको कमलककड़ी भी कहते हैं। मोटे मोटे सफेद ले कर छील डाले और कतले कर के जोश दे लेवे। फिर फेरें करे। तिस पीछे बोतल आदि में भर कर सेर पीछे आठ तोले साम्हर, तीन तोले लाल मिर्च, छ: तोले लौंग, दो माशे हींग पीस कर डाल दे। उसके ऊपर अर्कनाना भर दे।

मुरब्बा-यह भी बहुत सी वस्तुओं का डाला जाता है, पर मुख्य मुख्य की रीति तुझे बताये देती हूँ। जैसे,

आम का--दो सेर अच्छे अच्छे आम गूदेदार ले, जिनमें रेशा वा तूस न हो। छिलका छील कर सीपी से साफ़ कर ले और गुठली के ऊपर से तेज़ चाक़ू से

रे, पीछे अचारी में भर कर रख दे ।

व अन्त में तुझको कुछ फुटकर भोजन की सामग्री
बताती हूँ । जैसे चटनी, समोसे, गुझियाँ, पानी
डे ।

टनी—यों तो नमक, मिर्च, धनियाँ, जीरा, हींग,
र डाल कर पानी में पीस कर चटनी हो जाती है ।
ये बहुत अच्छी अच्छी बनती है । उनमें से कुछ
ताती हूँ ।

ठी चटनी—एक तोला सूखा अमचूर, नमक,
हरा पोदीना सब को सिरके में पीस लेवे । नमक,
ाज रखनी चाहिये । अब दो तोले किशमिश इसमें
कर दुबारा पीसे । अब इसमें एक तोला मिश्री,
रका और नमक, मिर्च डाल कर फिर पीसे ।

नींबू का मुरब्बा जो डालना चाहे, तो यह क्रिया है कि, पके नींबुओं को ले कर भसा से छील डाले और कॉटे से खूब गोद डाले । पीछे उनको मिट्टी की हॉडी में पानी भर कर आग पर रक्खे । इस पानी में सेर भर नींबू पीछे एक तोला खरी और वेबुभी कलई डाल कर जोश देवे और तीन मर्तबे इसी प्रकार जोश देवे । फिर चख कर देखे कि, कुछ खटाई बाक़ी तो नहीं है, जो बाक़ी होवे तो एक जोश उसी भाँति फिर देवे । जब खटाई न रहे, तब उतार कर खूब निचोड डाले और तनिक फरफरे कर के चाशनी में डाल दे, मुरब्बा बन गया । कोई पहिचान नहीं सकी कि, नींबू का है या नहीं ।

सेब, अनन्नास, बिही आदि को भी ऊपर से छील कर और उबाल कर । पर पहिले कॉटों से खूब गोद कर आम वा ऑवलों की भॉति डाल देते हैं ।

अदरक की मोटी मोटी गॉठ ले कर गरम पानी में हलका जोश देवे । फिर ठंढे पानी से धो डाले और छिलका छील डाले । कॉटे से गोद देवे । चाशनी कर के इन पर डाले और दो वा तीन दिन तक ढक कर रख दे–फिर चाशनी गरम करे और इन पर डाले और दो तीन दिन तक फिर ढक दे । इसी प्रकार तीन वा चा

र करे, पीछे अचारी म भर कर रख दे।

अब अन्त में तुझको कुछ फुटकर भोजन की सामग्री ौर बताती हूँ। जैसे चटनी, समोसे, गुझियाँ, पानी त्यादि।

चटनी—यों तो नमक, मिर्च, धनियाँ, जीरा, हींग, मचूर डाल कर पानी में पीस कर चटनी हो जाती है। रन्तु ये बहुत अच्छी अच्छी बनती हैं। उनमें से कुछ क बताती हूँ।

मीठी चटनी—एक तोला सूखा अमचूर, नमक, मिर्च, हरा पोदीना सब को सिरके में पीस लेवे। नमक, मिर्च तेज रखनी चाहिये। अब दो तोले किशमिश इसमें ाल कर दुबारा पीसे। अब इसमें एक तोला मिश्री, छ सिरका और नमक, मिर्च डाल कर फिर पीसे। क माशे इलायची और छ माशे गुलाबजल डाले। मक, मिर्च इतना डाले कि, खटाई, मिठाई, नमक, मिर्च चारों के स्वाद बराबर हो जावें।

नौरतन चटनी—एक सेर आम को छील कर गूदा उतार ले और यह मसाला डाल कर चटनी पीस लेवे। सेंधा और साम्हर नमक छटाँक छटाँक भर, धनियाँ एक तोला, बड़ी इलायची छ माशे, लौंग, जायफल, जावित्री और दालचीनी एक एक माशे, पोदीना डेढ़ तोला,

अदरक आधी छटाँक, बादाम की मींगी एक तोला, पिस्ता छः माशे, किशमिश आध पाव को घो पोंछ कर घी में तनिक भून ले । आध पाव छुहारे, आध सेर खाँड की चाशनी कर के उसमें इसे खूब मिलावे और उतार कर किसी अमृतबान वा चीनी आदि के बर्तन में भर दे ।

खूबी चटनी–धनियाँ दो तोला, सूखा पोदीना एक तोला, हींग दो माशे, सोंठ एक माशा, इलायची छः माशे, कालाजीरा दो माशे, सफेद जीरा दो माशे, कालीमिर्च दो माशे, लालमिर्च छः माशे, अदरक दो तोला, चूक एक तोला, नींबू का रस दो तोला, अनार-दाना दो तोला, दालचीनी छः माशे सब को कूट पीस कर अदरक और नींबू के रस में भिगोवे और चूक मिला कर सुखा ले । फिर पीस कर रख ले जब खानी होवे, नींबू के रस वा पानी में घोल लेवे, चटनी तय्यार हो जावेगी ।

जिमीकन्द की चटनी–कच्चा जिमीकन्द ले कर ऊपर से छील डाले । उसके टुकड़े कर, उसीके बराबर भुने हुए खिलगाँ चना का आटा मिला, नमक, मिर्च, मसाला गेर कर पीस लेवे । खुजली नाम को भी न रहेगी ।

आम की चटनी–सेर भर आम को छील कर गूदा तार ले और यह मसाला गेर कर खब महीन पीस दे । साम्हर और सेंधा नमक छटॉक छटॉक भर, अद-क छटॉक भर, लौंग दो माशे, लालमिर्च एक तोला, कालीमिर्च एक तोला, धनियाँ एक तोला, जायफल, जावित्री, दालचीनी तीन तीन माशे, सूखा पोदीना एक तोला, नींबू का रस छटॉक भर ।

अमलतास की चटनी–एक छटॉक अमलतास को पाव भर नींबू के रस में दो दिन रात भीगा रक्खे । पीछे छान कर साफ कर ले । एक छटॉक मुनक्का, नव नव माशे सोंठ, जीरा सफेद, बड़ी इलायची, दालचीनी, पीपल, एक तोला कालीमिर्च, तीन तोला नमक सेंधा वा काला और तीन माशे भुनी हींग डाल कर पीस लेवे, पीछे धूप में रख दे । बू बिलकुल न रहेगी । रात को सोते समय वा खाने के बाद खाने से सुबह दस्त साफ आवेगा ।

दूसरी रीति–अमलतास को गुलाबजल में दो दिन रात तक भिगो दे । पीछे रुई लगा कर टपका ले । इस में दो तोले शीरखिस्त मिला दे और ऊपर का मसाला मिला दे तो बू न रहेगी ।

समोसे–इनको त्रिकोण भी कहते हैं । यह कई

प्रकार के बनते हैं । इन्हीं में गुझियाँ हैं । (१) मीठी (२) नमकीन । मीठों में मावा (खोवा) व बूरा मिला कर कूर भरते हैं या निरवन (बेरों का चून) बूरा मिला कर भरते हैं ।

नमकीन आलू और दाल के बनते हैं ।

आलू उबाल कर छील लेवे और पीस डाले । उसमें नमक, मिर्च, गरम मसाला, अमचूर पीस कर मिला देवे अथवा ठर्री दाल, जो कि तलते में कड़ाही के तले में रह जाती है । (जैसा कि मैं पूर्व बता चुकी हूँ ।) सिल बट्टे पर पीस लेवे । उसमें नमक, मिर्च, मसाला, अमचूर मिला कर भर दे और गुझियों की भाँति घी में तल लेवे ।

पपरी इनकी यों बनाते हैं कि, मैदा को ले कर मोइन डाल कर उसन लेवे और पूरी की भाँति बेल डाले । इसके दो टुकड़े कर ले । इनको गाजर की भाँति कर के यह कूर भर कर गोंठ देवे तो त्रिकोण बन जावेगा । इनको गोंठ गोंठ कर पहिले रख लेवे और फिर तल लेवे वा बनाती जावे और तलती जावे ।

गुझियों को भी इसी भाँति बनाते हैं । पर उसकी पपरी साबित रहती है । टुकड़े नहीं होते हैं । गोंठन अच्छी लगनी चाहिये कि, तलते में खुल न जावे । नहीं तो गुझियाँ बिगड़ जाती हैं ।

नारियल की बर्फी–यह कच्चे नारियल की अच्छी बनती है। पर जो गोला सूखा होवे तो चाकू से ऊपर के काले भाग को पहिले छील कर साफ कर ले। पिसा हुआ आध सेर नारियल लेवे। इसमें आध सेर खोवा डाल कर भूने। पीछे इसमें एक तोला पिसी इलायची मिला कर, एक सेर चाशनी में डाल कर खूब मिला दे और थाली में घी चुपड कर उसमें बर्फी जमा कर चाकू से काट ले।

बादाम की बर्फी–बादामों को फोड कर मिंगी को गर्म पानी में भिगो कर छील डाले। यह और नारियल की एक ही भाँति बनती है। भेद केवल इतना ही है कि, बादाम की पिट्ठी पहिले घी में भुनती है पीछे खोवे के संग भूनी जाती है और पीछे आधी छटाँक घी डाल कर चाशनी में मिला कर जमा देते हैं। इसका अन्दाज यों है कि, बादाम की गिरी एक सेर, खोवा आध सेर, घी डेढ़ छटाँक, चाशनी आध सेर, छोटी इलायची का चूरा तीन माशे।

कुलफी–दूध को खूब औटा कर और मिश्री मिला कर गुलाब वा केवडे के इतर के बूँद डाल दे। टीन की कुलफियों में भर कर, ऊपर से ढकन बन्द कर के आटे से खूब बन्द कर दे और एक बर्तन में चुन कर रख दे।

ऊपर नीचे से बरफ भरदे। दो घंटे पीछे निकाल लेवे

सोंठ—पकी इमली वा अमचूर को भिगो दे। पी॰ इसमें बूरा, नमक, कालीमिर्च, जीरा मिला कर पीस ले। धो कर किशमिश, छुहारे के टुकड़े, सोंठ के कतरे हुए वर्क मिला दे। स्वाद खटाई, मिठाई, नमक, मिर्च सब का बराबर रहे। कम ज्यादह न हो जावे। मीठा तनिक ही अधिक रहे।

प्याज का लच्छा—प्याज को बारीक तराश लेवे, उसको चूने के पानी में थोड़ी देर तक डाल देवे। जब उसमें बू न रहे तब निकाल कर निचोड़ डाले। पीछे नींबू का रस निचोड़े और नमक, मिर्च, मसाला पिसा हुआ मिला लेवे। बू नाम को न रहेगी।

नमकीन पानी—यह पोदीना, भुने जीरे और भूनी आमी का बनता है। इस प्रकार कि, पोदीना, जीरा, नमक, मिर्च, खटाई, भुनी हींग को पीस कर पानी में छान लेवे। जो पोदीने का बनाना चाहे तो पोदीना अधिक, जो जीरे का बनाना चाहे तो जीरा अधिक रक्खे। जीरे को भून कर डाले। आमी का बनाना चाहे तो आमी का भर्ता कर के पानी में घोल लेवे और ऊपर के मसाले पीस कर डाल दे और कपड़े में छान ले।

चाय—खौलते हुए पानी में चाय को डाल कर दो

मिनट तक आग पर रक्खा रहने दे। पीछे उतार ले। यह सब से उत्तम और सहज रीति है।

काफी–इसको कड़ाही वा तवे में डाल कर, आग पर रख कर इतनी भून ले कि, भूरी स्याही लिये हुए हो जावे। इससे हलकी होकर सुगन्धित हो जाती है। फिर इसको खरल में कूट कर चूर्ण सी कर लेवे और भर कर रख छोड़े। जब चाहे, तब इसमें से ले कर इस रीति से तय्यार कर ले कि, पहिले ठंढे पानी में डाल कर निथार ले कि, मलीन भाग निकल जावे, जो शेष रहे, उसको चाय की भांति बना ले।

बहिन! अब तुझको बहुत बता चुकी। यद्यपि पूरी रीति से तो नहीं, पर काम के योग्य बता दिया। मुझको अन्य मांस, मछली की भोजनप्रक्रिया भी आती है, परन्तु वह सर्वग्राह्य भोज्य नहीं है। इसलिये उसको नहीं बताया, छोड़ दिया है।

भोजनसंस्कारसमाप्त।

सीना-पिरोना।

—:o:—

बहिन मोहनी! अब तक मैंने घर के काम धन्धे बताए, अब तुझे कुछ इसी के संग सीना पिरोना भी बताती हूँ।

माता पिता को चाहिये कि अपनी पुत्रियों को गुड़ियाँ खिलाते समय ही से इस उत्तम काम को सिखलावें। पहिले आप सी कर के उनको दिखावें। फिर उसीतो उधेर उनसे सिलवावें। जिससे वे उन्हें डोरे के चिह्नों स देख कर सी लेवें। जब इस भाँति कुछ हाथ सध जाय तब पुराने कपड़ों में से काट काट कर आप दे दें और लड़कियों से सिलवावें। फिर पीछे फटे पुराने कपड़े उनको दे दें, जिनमें से वे आप काट कर सीवें। इसके पीछे उनको पुराने कपड़ों में से टोपियाँ, कुर्ते, थैले व इसी भाँति के सहज सिलाई के कपड़े, जिनकी सिलाई सीधी और लम्बी हो, सीने को दें। जब सीना आ जाय, तब तुरपना बतावें। जब तुरपने में हाथ जम जावे, तब नये कपड़े सीने को दें, जो सीधी सिलाई के हों। जैसे रजाई, सौर, गद्दा, दोहर और दुपट्टे, चद्दर इत्यादि। जब इनकी सिलाई अच्छी भाँति आ जावे, तब उनको कपड़े का काटना बतावें। सीना-पिरोना कई भाँति का है। सीना अलग है और पिरोना अलग है। सीना इतनी प्रकार का है (१) साधारण जैसे अँगरखे, कुर्ते, पाजामे, दुपट्टे, चोली, दामन और बटुवे, (२) जाली पर काढ़ना, (३) रेशम, डोरे व कलाबत्तून का काम करना, (४) सुजनी का काम करना, (५) सलमे सितारे का

काम करना, (६) कटाव का काम करना और इसी भाँति के और काम करना।

पिरोने से यह अभिप्राय है कि, जिससे डोरे को पिरो कर कोई काम करें, जैसे मोज़े व दस्ताने बुनना, फीता, बेल, कमरबन्द, बटुवे की डोरी गूँदना, बटुवे की भाँति भूषण पो लेना। जैसे माला, कण्ठी, बाज़, पहुँची व गुलीबन्द इत्यादि। फूलों की माला, हार वा अन्य गहने बनाना इत्यादि। इसके सिवाय यह और भी इस सीने-पिरोने के मग है कि, गोखरू मोडना, चम्पा वा किरन बनाना, ठप्पा वा उप्पू करना।

अब तुझे इनकी कुछ रीति भी बताती हू। सीने के लिये बहुत सी वस्तु नहीं चाहनी हैं। केवल सुई, धागा, कतरनी, बेडा और एक गज। इतने ही से काम हो जाता है।

सुई को दायें हाथ के अँगूठे और बीच की अगुली से थाँभते हैं और तर्जनी से अर्थात् अँगूठे और बीच की अगुली की बीचवाली अगुली मे सुई को दाब कर चलाते है। अनामिका अर्थात् कन्नी और बीच की अगुली की बीचवाली अगुली में बेडा पहिनते हैं। कोई कोई बीच की ही में पहिन लेते हैं।

कपडे में हो कर जो सुई नहीं निकलने में आती है, तो इस बेड़े से सुई को आगे को दबा कर निकाल देते

है बिना इसके सुई का हाथ में छिद जाना सहज है। यह बेहा एक छोटी पीतल वा तांबेकी टोपी सी होती है, जो अंगुली के पहिले पोरुए को ढक सकी है। इसमें बहुत खोंटे (छेद) होते हैं। जिससे सुई उनमें दाबने के समय जम जाती है और फिसलने का डर नहीं रहता और अंगुली में सुई के कारण ठेक भी नहीं पड़ने पाती। कोई कोई इस बेहे का काम नख की पीठ से ले लेती है। सुई और डोरा कपड़े के अनुसार लिया जाता है। गज़ी, गाढ़ा, लुगी, रेजा, घोतर इनके कपड़े सीने में तो चर्खे के कते हुए डोरे काम में लाने चाहियें और सुई भी मोटी लेनी चाहिये। लकलाट, डचमार, सीटन, डनलज़ीन, कमीज़ की छींट, इनके सीने में रील का डोरा लगाना चाहिये और सुई भी तनिक महीन लेनी चाहिये। खासा, मल-मल, अद्धी, चिकन और जाली इनको पेचक से सीना चाहिये और सुई और भी महीन होनी चाहिये। गोटा, गोखरू, ठप्पा आदि को बाने वा बहुत ही महीन पेचक और सुई से सीना चाहिये।

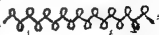
मिलाई कई भाँति की होती है। जब कपड़े के दो टुकड़ों के छोर मिला कर सीते हैं, जैसे अँगरखे वा कुर्ते के ठडा करने में, तो उसे पिसूज कहते हैं। जब इसीको गोल कर के भीतर की ओर उलट कर सीते हैं,

तब उसे उलटना वा तुरपना कहते हैं। यह दो प्रकार का है। एक तो गोल, जो पिसूज की सिलाई के बराबर ही तुरपी जाती है और दूसरी चौड़ी, जिसे अमलपत्ती कहते हैं, जो पिसूज से थोड़ी सी दूर पर जा कर तुरपी जाती है। वह भी दो भाँति की है। एक तो जिसमें दोनों सिरे एक ही ओर को उलटे जाते हैं, दूसरी जिस में पिसूज की दोनों ओर को एक एक छोर उलटा जाता है।

तीसरी सिलाई बखिया की होती है। जो इस प्रकार की जाती है कि, जहाँ से सुई चुभो कर निकाली, वहाँ से फिर पिछाड़ी को ले जा कर आधी दूर पर चुभोई और पहिले की बराबर दूर पर जा निकाली। फिर पीछे को ला कर जहाँ से पहिली सुई निकाली थी, उसी छेद में इसको पिरो कर उतनी ही दूर पर जा निकाली। इसी भाँति करती रहे तो ऊपर की सिलाई एक दूसरी के बराबर चली जायगी और नीचे की ओर दुहरी होती जावेगी। जैसे,



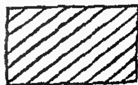
बखिया भी दो प्रकार का होता है। एक साधारण जैसा अभी बताया, दूसरा काँटेदार। जैसा इसमें लहरिया



जो पड़ता है, वह नीचे को भीतर की ओर रहता है। और बखिया दो ओर हो जाते हैं। इसको आगे मैं और बताऊँगी। एक तेपची की सीमन और होती है। इसके सिवाय एक जाली की सीमन और भी होती है। वह बहुत मजबूत डोरे से सिलती है और काँटेदार बखिया की भाँति होती है। जहाँ यह सिलती है, वहाँ उस कपड़े के दोनों छोरों को उलट कर तुरप देते हैं। जिस से यह चमकने लगती है। जैसे, 

साधारण सीने में तो पिसूज और तुरप ही का काम पड़ता है, पर गोट या मगजी टाँकने में बखिया का। जहाँ फलीता लगाना होता है, वहाँ भी बखिया ही लगाते हैं। फलीता लाल, काले व नीले, पीले रङ्ग का डोरा होता है, जो मगज़ी व सजाफ़ के किनारे पर लगता है।

सजाफ और गोट को दो भाँति की लगाते हैं। एक सुदरेन, जो सीधे कपड़े में से सीधी पट्टी कतर कर बन जाती है, दूसरी औरेब, जो दो प्रकार से कतरी जाती है। एक तो इस प्रकार से कि, कपड़े में से टेढ़ी काट ली। जैसे यह और फिर सब कतर एक



साथ सीकर लम्बी गोट कर ली। दूसरी का औरेबी थैला

बना कर कतरते हैं, जिसमें टूक टूक नहीं जोडने पडते। किन्तु एक लम्बी सीधी धजीर उतरती चली आती है और उसके सीने की यह रीति है,

कपडे को अर्ज में से मोड कर, दोनों छोर मिला आधा कर ले और बखिया की सीमन दे दे। अब इसका नाप कर फिर आधा करे और इस आधे की बराबर कपडे के लम्बाव में से नाप कर चिह्न कर दे और यहाँ से फिर एक शिकन मोड कर वहाँ तक डाल दे, जहाँ से अर्ज का आधा करके सिलाई की थी। जैसे अब इस शिकन पर से कतरनी से काट ले तो ऐसी सूरत हो जायगी। फिर इसी रीति से दूसरे छोर पर कर ले तो ऐसी सूरत हो जायगी।

इसको फिर जितनी चौडी गोट वा मगज़ी चाहे, उतना ही एक सिरे पर छोड कर दूसरे को सी देवे, तो दूसरी लग को भी थैला सिल जाने पर, उतना ही सिरा बच रहेगा और सूरत थैले की यह हो जावेगी। फिर इसको कतरनी से काट लेवे तो एक लम्बी धजीर हो जायगी। दोहरा कर के और सिलाई को भीतर की ओर कर के गोट हो जावेगी वा मगज़ी। वैसे इकहरा हो और मजाफ रही आवेगी।

सुजनी में भी बखिया ही करनी होती है, जो तीन प्रकार की है। (१) एक तो बेभरत की, जिसमें रुई भी होती है वा दो तह केवल कपड़े ही की रहती हैं, रुई नहीं होती। उसी ही में फूल पत्ते बखिया द्वारा निकाल लेते हैं। (२) दूसरे भरती की अर्थात् जिसमें काला वा दूसरे रंग का फ़लीता भर कर फूल पत्ते व बेल बूटे छाँटते हैं। जैसी कि मेरठ में टोपियाँ बनती हैं। इसके बनाने की यह रीति है कि, जैसी फूल पत्ती व बेल डालनी चाहो, वैसी ही छाप-लो वा पेंसिल से काढ़ लो और उस पर दुहरा बखिया कर दो। इतना बीच छोड़ कर जितना मोटा फलीता भरना चाहो। फूल को गोल वा नोकदार जैसा चाहो, वैसा रख लो। जब सब सीमन दे चुको तब एक मोटे नकुए की सुई ले कर उसमें जैसे रंग का फलीता चाहो, पो लो और फिर नीचे के कपड़े की तह में (जो कुछ झिरझिरा सा होना चाहिये) चुभो कर भर दो। क्योंकि यह दुहरे कपड़े की सिलाई है। फूल में कई [illegible] बेर फलीता भरो, [illegible] बखिये का बीच अच्छी तरह [illegible] और [illegible] हो। धागा जितना भरपूर [illegible] अधिक होगी, (३) [illegible] की बखिया काँट- [illegible] में टोपियाँ

बनती है। गोट लगाने की दो रीति है। (१) एक तो दुहरी लगती है और यह भी दो प्रकार से। (१) दुहरे कपड़े में, (२) इकहरे कपड़े में।

१ दुहरे कपड़े में इसके लगाने की रीति यह है कि, जिन कपड़ों में लगानी चाहो, उनके दोनों छोरों को उलट सी ओर बराबर मिला लो। सीमन भीतर की ओर कर के गोट को भी दुहरा कर लो। दोनों कपड़ों के दोनों छोर और गोट के दोनों छोर मिला लो। पर गोट को कपड़ों की तह के बीच में भीतर की ओर कर लो। फिर बखिया से सिलाई कर दो। दोनों कपड़ों को उलटने पर गोट सीधी निकल आवेगी और सिलाई भीतर को चली जावेगी। इकहरे कपड़े में यों लगाते हैं कि, गोट को पहिले की भाँति उलट कर दोनों छोरों को कपड़े के साथ बखिया सी देते हैं और फिर उसे तुरप देते हैं।

दूसरी इकहरी गोट जो लगती है, उसे यों लगाते हैं। गोट को उलट कर, सीमन ऊपर की ओर कर के जिस कपड़े पर लगानी हो, उसके सिरे में से गोट की चौड़ाई भर पैन लेकर जिधर लगाना चाहो, सी दो। चाहे मज से, चाहे बखिया से और फिर उस कपड़े की दूसरी ओर को उसी छोर में गोट को उलट कर, जिससे कि सि- लाई बीच में हो जाय, तुरप दो।

संजाफ भी दो प्रकार से लगाते हैं । एक तो इकहरी गोट की भाँति, दूसरी उसी संजाफ में से मगजी या गोट भी निकाल ली जाती है । दुहरी गोट की भाँति और बाकी जो रहती है, उसे संजाफ के तौर पर लगा देते हैं । संजाफ की मगजी में लाल व काला फलीता भी लगा देते हैं और उस पर बखिया कर देते हैं ।

गोट या मगजी में कोने निकालने पडते हैं । उसकी यह रीति है कि, जब यह मिलती सिलती कोने पर आ जाय तब गोट या मगजी को, जो उलटी हुई अब लग रही है, उसे उलट कर चौडाव की लग से सिंघाडे की भाँति सी दो और फिर सुई की नोक से उलट कर कोना निकाल लो । यहाँ अब चौतह गोट हो जायगी, उसको कपडे के कोनों में गोट की भाँति टाँक ले । चार पाँच टाँके मजबूत लगा दे । जब कपडा उलट कर सीधा किया जायगा तब कोना निकल आवेगा । जहाँ कहीं चुन्नट अथवा चीन डालनी हो, जैसी कमीज में या दामन में, उसकी यह रीति है कि, पहिले एक मजबूत डोरे में सी लो और मिलवट अर्थात् चीन जितनी लम्बी रखनी चाहो, उतने डोरे में एक गाँठ दे दो और इस चुन्नट को हाथ से एक सी कर लो कि, कहीं थोडी बहुत न रहे । फिर सधे हाथ से इसमें बखिये की सीमन दे दो । पीछे इन

पर कफ, गोट वा नेफा लगा लो। अब तुझको कपड़ों के टुकड़ों के नाम बताती हूँ।

अँगरखे में छ कली होती है। एक पीछे और दो आगे, एक पर्दा वा चाक, दो बाँह (अस्तीन), दो बगल, दो चौंबगले, एक ग्रहबान, जो नार पर एक पट्टी सी लगती है और एक कमरपट्टी।

अँगरखे के ब्योंतने की रीति यह है कि, जितनी चौड़ी कमर हो, उतना कपड़ा अर्ज में से नाप कर और उसी में पर्दे के लिये दो वा ढाई गिरह (अथवा कम जियादे जैसी दशा हो) और बढ़ा कर फाड़ ले। फिर हाथ में से पर्दे का कपड़ा छोड़, बाकी के दो बराबर टूक कर ले और फिर जिसमें पर्दा छोड़ा है, उस आधे को पर्दा छोड़ कर दो टूक और कर ले। ये दोनों आगे हो जायँगे और वह एक पीछा। एक आगे में पर्दा रह जायगा, जिस के काटने की यह रीति है कि, उस पर शिकन डाल कर कतर ले। इस भाँति कि, यह दो टूक अलग अलग हो जायँ। (अ) तो पर्दा हो जायगा और (इ) बायें हाथ का आगा हो जायगा। (उ) को जितनी



नीची चोली रखना चाहे, नीचा नाप कर कतर ले। बायें

हाथ के आगे में से (उ) की सी सूरत का थोड़ा सा कतर डाले। जैसी (इ) की सूरत है। जितनी नीची चोली रक्खे, उतना अँगरखे के निचार में से घटा कर कली ब्योंत ले। जिसकी रीति यह है कि, कपड़े के लम्बान में से टेढ़े दो कोनों की ओर थोड़ा थोड़ा सा छोड़कर टेढ़ी ओर से इस भाँति कतर ले। इनके सीने की भी यही रीति



है कि, पहिले दो दो कली अलग अलग विसूज ले। फिर इनको 'पीछे' में एक एक ओर जोड़ दें। इसके पीछे दायें हाथ को (इ) को जोड़े और फिर एक कली और जोड़ दे। बायें हाथ को एक आगा जोड़ दे और फिर एक कली जोड़ दे और इसके पीछे अन पर्दा जोड़ दे। पर्दे में से थोड़ा सा दूज के चन्द्रमा की भाँति गला कतर ले। बीच की दो दो कलियों के ऊपर चौंगले लगा दे। जिनकी सूरत ऐसी होती है। पर यह चीनदार अँगरखे में नहीं लगते हैं। उसमें इस जगह



चुन्नट पड़ती है। इन चौंबगलों के ऊपर बगल लगती है, जिनकी सूरत ऐसी होती है, जिससे चौंबगलों में ठीक सिल जावें। अब बाँह सी देवे। बाँह को



चीर कर बगल की नोक गुलाई तक सी देते हैं। बाँहों के मुड्ढे छाँट कर जोड़ते हैं। 'पीछे' के ऊपर गहचान जोड़ते हैं।'

अचकन में एक गलानर बायें हाथ को और जोड़ा जाता है। यसीर की कली भी इसी में आ जाती है। अलग नहीं जुड़ती। पर अचकन दो भाँति की होती हैं। एक गोल पर्दे की, दूसरी सीधे पर्दे की।

कुर्ते में केवल चार ही कली होती हैं और एक आगा, एक पीछा और बाँह। इसमें आगे में से गला फटता है। कंधों की ओर को खुलाव रहा आता है। इसमें कली निचाव से उतनी ही छोटी रहती है, जितने बाँहों के उनीते होते हैं। इसमें मुड्ढे तनिक चौड़े रहते हैं। मुड्ढे उनको कहते हैं, जो तुरपाई कि, कन्धे और नार के बीच तक होती है। अँगरखे में यह बहुत पतले रहते हैं।

चुगा इसमें एक पीछा दो आगे छ: कली और दो बाँहें होती हैं। पर्दा नहीं होता। इसके सीने की रीति वही है, जैसी अँगरखे की। भेद इतना ही है कि, इसके दोनों सिरों पर एक एक कली रहती है, जो उतनी नीची होती है कि, जितना नीचा ग्रहबान लगता है। उतना ही निचाव में से घटा देते हैं।

पाजामे दो भाँति के होते हैं। एक सुदरेब, दूसरा औरेब। औरेबी पाजामे के सीने की वही रीति है, जैसी औरेबी गोट थैले की। केवल भेद इतना ही है कि, उसमें गोट की चौड़ाई को छोड कर सीते हैं, इसमें नहीं छोड़ते हैं।

जब थैला सिल जावे तो कतरते इस रीति से हैं अर्थात् जितना पांचा रखना चाहे, उतना (उ) को दोनों ओर से नाप कर, जितना नीचा आसन रखना चाहे, उतना उतना दोनों सिरों पर (क) नापे। फिर (उ) ओं को काट कर, एक (उ) से दूसरे (उ) तक यों टेढ़ा काट दे। इससे (अ) और (इ) दोनों अलग हो जायँगे। फिर (क) दोनों को मिला-कर सी देवे, तो यह सूरत हो जावेगी। फिर इनका नेफा उलट कर भीतर को सी देवे और मोहरी पर गोट दुहरी कर, के, इकहरे कपड़े की रीति से लगा दे।





सुदरेव पाजामे की रीति यह है कि, उसके आसन में एक मियानी और जोड़नी पड़ती है, जिसे चार कलियों में सी कर इस प्रकार कर लेते हैं। ये कलियाँ आसन की लंबाई की बराबर होती है। बाकी इसको औरेब के छोंट की भाँति ही सुदरेब कपड़े में से काटते हैं। इन कलियों के बीच में एक चौखूँटा आसन भी सिलता है।



कुर्ता यह बाँहदार वा आधीबाँह वा बिना बाँह की

होती है। इसको कोई कोई फतोही, सलूका वा नीमास्तीन इत्यादि भी कहते हैं। इसमें आगा पीछा और दो चौवगले पड़ते हैं। आगा पीछा फाड कर, चौवगलों को कलियों की जगह सी देते हैं। पर स्त्रियों के लिये इसको अगाडी से छाती के नीचे तक पर्दे की गोलाई की भाँति दोनों लग से छाँट कर भी सीते है और बिना काटे भी सीते है।

दामन जिसको लहँगा भी कहते है। यह बहुत सहज है। इसमें कली और पाट ही होते है, जिनका सीना बहुत ही सुगम है। इसमें एक ओर को नीचे गोट वा मगजी लगती है और मजाफ टँकती है। ऊपर की ओर को चीन डाल कर नेफा लगा लते हैं और नार को भी नेफा के संग ही उसमें भीतर को करते हुये सीते हैं, जिससे संग का संग टँकता जाता है। नहीं तो पीछे कठिनाई से पडने में आता है।

चोली इसके कई नाम है। अँगिया, कञ्चुकी, कँचुली इत्यादि। यह प्रत्येक देश और जाति में अलग अलग भाँति की होती हैं और इतनी प्रकार की होगई हैं कि, जिनका यदि पूरा वर्णन किया जावे तो एक पुस्तक अलग ही बन जावे। सो इस झगडे को छोड कर यहाँ पर केवल उसी प्रकार की चोली का सीना बताऊँगी, जो पश्चिमोत्तर देश की उच्च जाति ब्राह्मण, बनियों इत्यादि

में प्रचलित है ।। चोली का अच्छा बुरा होना उसकी सिलाई और अङ्ग में ठीक वा बेठीक बैठने से होता है अर्थात् जो अङ्ग में ठीक मिल कर आ जावे, वह अच्छी और जो कहीं से ढीली वा तङ्ग अथवा भोल देने लगे, वह ठीक नहीं । इसलिये प्रथम यह देखना चाहिये कि, बाँह और वह स्थान, जिसमें स्तन रहते हैं, अङ्ग में ठीक हैं अर्थात् बाँह कन्धे से चार चार अंगुल आगे तक रहनी चाहिये और खूब चुस्त रहनी चाहिये । पीठ पीछे, जहाँ तनी बँधती है, वहाँ चारों तनियों के बीच में पान की सी आकृति बन जानी चाहिये । ऊपर की तनी आपस में और नीचे की आपस में बँधने पर मिल जानी चाहिये ।

गोटे को भी दो भाँति से टाँकते हैं । एक तो इस भाँति कि, पहिले एक लंग से सी दिया और फिर दूसरी ओर को । उसकी सीमन यों लगती है कि, जहाँ गोटे के सिरे का डोरा होता है, उसीके बराबर सीते चले जाते हैं । दूसरी काँटेदार होती है कि, दोनों सिरे एक ही सीमन में आ जाते हैं ।। सो इसकी सीमन काँटेदार बखिया की सी होती है, जिसको पहिले बता चुकी हूँ ।

गोखुरू पट्ठा व लचका भी इसी भाँति टँकता है; पर कोई कोई ऐसा भी करती है कि, गोखुरू को, जो बहुधा पट्ठे के बराबर ही टँका करता है, दोनों को एक

ही साथ, एक ही बेर में एक ही डोरे से सी लेती हैं और फिर पट्टे की दूसरी ओर एक सिलाई और कर देती हैं । गोटे व गोखुरू को बहुत तान कर न लगाना चाहिये और न कहीं से ढीला रहने देना चाहिये, किन्तु बराबर इकसार लगाना चाहिये ।

बहिन ! अब आगे बताने को जी नहीं करता । देह अकड़ी जाती है और अँगड़ाई आती है और आलस्य भरा आता है । आँखें भी मिची जाती हैं । सोने की वेला बहुत देर हुई कि, हो गई ।

सीना पिरोना समाप्त ।

शिल्पविद्या ।

— ० —

चौथे दिन जब दुर्गा को कोई काम करने को नहीं रहा, सब से निबट चुकी, तब मोहनी उससे बोली कि, बहिन ! अब कल की भाँति फिर बता । इस पर दुर्गा बोली कि, अच्छा शिल्पविद्या आज तुझे बताऊँगी । पर इसके विषय में यदि कहा जावे तो विस्तार बहुत बढ़ेगा और अन्त न आवेगा । क्योंकि जो थोड़ा सा भी कहूँगी तो भी कई दिन लग जावेंगे । इसलिये ब्याजमात्र कुछ

(३०) पुस्तक वाचन=इस भाँति पुस्तक बाँचना कि सुननेवाले को रुचि हो और प्रीति माने ।
(३१) नाटकाख्यायिकाप्रदर्शन=नाटक और आख्यायिका (कहानी) जानना ।
(३२) समस्या=काव्य-रचना करना ।
(३३) पट्टिकावेत्रवाणविकल्प=कुर्सी इत्यादि बुनना।
(३४) तक्षकर्माणि वर्तिकर्म=एक में से दूसरे को खींचना, जैसे प्रसन्न समय बालक को।
(३५) तक्षण=घर को शय्या, कुर्सी, मेज, दीपक इत्यादि से शोभायुक्त सजाना ।
(३६) वास्तुविद्या=घर के पदार्थों का प्रबन्ध और रक्षा।
(३७) रूप्यरत्नपरीक्षा=चाँदी, सोने का खरा-खोटा जान लेना।
(३८) धातुवाद=धातु (जिनके बासन बनते हैं) के स्वभाव और प्रकृति आदि को पहिचानना, जिससे धोखा न खा बैठे ।
(३९) मणिरागज्ञान } =मणियों व नगों को रखकर
(४०) आकरज्ञान } अधिक शोभायमान बनाना तथा उनकी पहिचान का ज्ञान । जैसे सच्चे हीरे की यह पहिचान है कि, कागज में छेद कर के उस छेद को हीरे में से देखे । जो एक ही छेद देखे तब तो हीरा सच्चा,

रहा तो झूँठा है। (२) हीरे के नीचे अंगुली रख कर देखने से जो अंगुली की रेखा देख पड़े, तब तो झूँठा है। यदि न दीखे तो सचा है।

(४१) वृक्षायुर्वेद=घर में जो पौधे लगाये जाते है, उनको किस समय बोवे, कैसे सींचे और उनकी कैसे रक्षा रक्खे।

(४२) मेष, कुक्कुट, लावक युद्धविधि=भेड़ा, मुर्गा और तीतर, बटेर इत्यादि की लड़ाई की बातें जानना।

(४३) शुकसारिकालापन=तोता, मैना आदि को पाल कर पढ़ाना।

(४४) उत्सादन=संवाहन अर्थात् पति के पाँव दाबना आदि क्रिया। श्वेत बालों को कल्प लगा कर श्याम करना।

(४५) केशमार्जन=बालों में सुगन्धि आदि लेपन करना।

(४६) अक्षरमुष्टिकाकथन=थोड़े अक्षर वा शब्दों में अधिक अर्थ प्रकटाना।

(४७) म्लेच्छ भाषा=अन्य देशों की भाषा का ज्ञान; जो म्लेच्छ देश के नाम से प्रसिद्ध हैं।

(४८) देश भाषा=देशान्तर की भाषा जानना और स्वदेशी में प्रवीण होना।

(४६) पुष्पशकटिका=पुष्प के निमित्त (कारण से) पति के अधीन होना या पति को अधीन करना ।

(५०) धारणमातृका=धारणाशक्ति को बढ़ाना अथवा चाहे जिस वस्तु को तोल लेना । जैसे हाथी, पर्वत इत्यादि ।

(५१) यन्त्रमातृका=गाड़ी आदि अन्य यंत्रों के उपयोग को जानना वा साँचे इत्यादि ढालना ।

(५२) संवाच्य कर्म=मिल कर गीत गान करने की क्रिया वा विद्या ।

(५३) मानसकाव्य=मन में सोचा हुआ दोहा इत्यादि बता देना वा चाहे जिस विषय पर नवीन कविता तत्काल रचना ।

(५४) कोषछन्दोविज्ञान=कोष और छन्द का ज्ञान होना ।

(५५) क्रियाविकल्प=सिद्ध किये हुए पदार्थ कैसे हैं अथवा किसी पदार्थ में विषादि मिला हो तो उसे बहुत से पदार्थों में से पहिंचान लेना और यह जानना कि, कौन सा पदार्थ कितने समय तक अच्छा बना रह सक्ता है, बिगड़ता नहीं है ।

(५६) छलितयोग=छल की युक्तियों को जानना कि, ठगाई में न आवे अथवा वेष बदलना कि, कोई पहिंचान न सके ।

(५७) वस्तुगोपन=गुप्त वा गडी हुई वस्तु को पहिंचान लेना कि, कहाँ गड़ी हुई है अथवा ऐसे वस्त्र पहिने कि, लज्जा न जाती रहे अथवा कई वस्त्र पहिने रहे। परन्तु वे दूसरों को ज्ञात न होवें। जैसे द्रौपदी ने पहिने थे कि, सभा में जब उसको नग्न करना चाहा था तो वस्त्रों का अन्त न आया और लज्जा बनी रही।

(५८) द्यूत=चौसर, गंजीफा, शतरञ्ज वा अन्य जुओं के खेलने में क्या क्या दाँव-पेच होते हैं, उनको जानना।

(५९) आकर्षक्रीड़ा=कसरत, कुश्ती इत्यादि के दाँव-पेंच जानना, अथवा भाव दिखा पति के चित्त को खींच लेना।

(६०) बालक्रीडन=खेल ही खेल में बालकों को उन के कर्तव्य कर्म सिखाना, जैसे गुडिया खेलाने में गृहस्थी की सब बातें बता देना, अथवा Kindergarten System अर्थात् खेल द्वारा शिक्षा देना।

(६१) वैनायिकी विद्या=बाजीगरों इत्यादि की ठगाई आदि को जान लेना अथवा विनय दर्साने में प्रवीण होना।

(६२) वैजयिकी विद्या=विजय प्राप्त करने की विद्या।

(६३) व्यायाम की विद्या=कसरत करना।

(६४) विद्याज्ञान=सामान्य चतुराई।

इन प्रत्येक को तुझे विस्तारसहित तो नहीं, बता सकी, केवल नाममात्र ही बता दिये हैं, नहीं तो विस्तार बहुत फैल जावेगा ।

तुझको इस शिल्प में कुछ ऐसी बातें बताऊँगी, जो तेरे नित काम आवेंगी । शिल्प में अधिकतर तो ऐसे विषय हैं कि, जो जब तक स्वय कर के न दिखाये व बताये जावें, समझ में नहीं आ सके । सो यह तो बहुत कठिन बात है, वरन असम्भव है क्योंकि एक एक के करने और बताने में महीनों लग जावेंगे । इसलिये कुछ कुछ मुख्य बातें बताये देती हूँ। जैसे रॅगाई, चिनकारी, कलई चढाना इत्यादि, जो तेरे काम की अधिकतर है ।

जीविकासम्बन्धी जो शिल्पविद्या है, वह कर के दिखाये बिना नहीं आ सकी । सब से पहिले तुझको रॅगाई बताती हूँ कि, तू अपने दुपट्टे इत्यादि यदि कभी आवश्यकता हो, तो आप रॅग लिया करे । रग एकसौपचपन प्रकार के हैं, पर ये सब केवल चार रगों के मेल से बन जाते हैं । लाल (१), पीला (२), काला (३) और आसमानी (४) । ये ही चार रग मुख्य हैं; जो उत्पन्न होते हैं । शेष इन्हीं को न्यूनाधिक मिलाने से बन जाते हैं, पर ये भी कई भाति से बनाये जाते हैं अर्थात् जैसा प्रयोजन देखा जाता है, वैसा बनाना होता है । जैसे-

(१) कपड़े रँगने को, (२) चित्र में भरने को, (३) भीत पर की चित्रकारी को, (४) लकडी पर रंग चढ़ाने को इत्यादि । सो इनमें से तुझको वस्त्र रँगने के बताती हूँ क्योंकि इन्हीं से तुझको प्रयोजन पडेगा । चित्र में भरने के रंग बनाना बहुत कठिन है । इसलिये उनको बताना व्यर्थ होगा । इसके अतिरिक्त यह भी है कि, चित्रोंमें भरने के लिये रंग वलायती बना हुआ बहुत अच्छा बिकता है । वही काम में लाना चाहिये । बिकता तो पसारियों के कपडे रँगने का भी रंग है, पर जो रीति कपडे रँगने की इस देश में पुरानी प्रचलित है, वह तुझको बताती हूँ । रंग इतने प्रकार के मुख्य हैं (१) कालाउदा, (२) नीला, (३) सुरमई, (४) फालसई, (५) आबी, (६) आसमानी, (७) सब्ज कपासी, (८) लाजवर्दी, (९) नाफरमानी, (१०) लाल, (११) गुलेनार, (१२) कसूमा, (१३) गुलाबी, (१४) बसन्ती, (१५) केसरिया, (१६) नारंगी, (१७) कपासी, (१८) अरगवानी, (१९) बादामी, (२०) अमउवा, (२१) अमउआ किशमिशी, (२२) ऊदा, (२३) अंगूरी, (२४) पिस्तई, (२५) जीलानी, (२६) जंगाली, (२७) जमुर्रदी, (२८) सब्ज, (२९) धानी, (३०) सब्ज

काही, (३१) सरदई, (३२) शरवती, (३३ सानरी, (३४) तूसी, (३५) अब्बासी, (३६ उन्नावी, (३७) फाखतई, (३८) सावी, (३९ फ़ीरोजई, (४०) काही, (४१) कासनी, (४२ काकरेजी, (४३) काफ़ूरी, (४४) करजवी, (४५ दूधिया करजवी, (४६) कोकई, (४७) मूँगिया (४८) चप, (४९) कोच और (५०) चन्दनी इनमें वे सब प्रकार हैं कि, जो कपड़ों को डोरे से बाँध बाँध कर भी रँगते है, जिनके नाम चूँदरी, लहरिया, धनकपोमचा इत्यादि हैं ।

रंग इन इन वस्तुओं से इस प्रकार बनते हैं,

पीला–हल्दी, हरसिंघार की डंडी, केसर, टेसू के फूल, पीली मिट्टी इत्यादि से ।

काला–माजू, कसीस और लोहे इत्यादि से ।

नीला–नील, लाजवर्दी की पुड़िया इत्यादि से ।

लाल–पतंग, कसूम, आल, शिंगरफ़, लाख, हिरमिच, गेरू, मेंहदी, कत्था, मँजीठ, महावर इत्यादि से ।

जंगाली–तूतिया, नीलाथोथा इत्यादि से ।

इनके सिवाय, इतनी वस्तु रँगने के काम में और भी आती हैं । जैसे आमला, बबूल की फली, बबूल और बेर का बक्कल, तुन, काकड़ासींगी, हर्रा, अनारका छिलका इत्यादि ।

चूना-सज्जी रंग काटने में और अमचूर, खट्टा, नींबू, फिटकरी, सुहागा इत्यादि रंग को गहरा करने के प्रयोजन से बर्ते जाते हैं। कभी कभी यों भी करते हैं कि, बन्द या तूल (हरी या लाल) बानात इत्यादि का रंग काट कर भी कपड़ा रँगते हैं।

कपड़े चार प्रकार के होते हैं। सूती, ऊनी, सनी, रेशमी। सो, ऊनी और रेशमी कपड़ों का रँगना सहज नहीं है। कठिन और बड़ी सावधानी का है। इसलिये तुमको केवल सूती कपड़े रँगने की क्रिया अब बताती हूँ।

जब कपड़े को रँगे तो पहिले यह देख लेवे कि कपड़ा अच्छी भाँति धुला हुआ है वा नहीं। दाग धब्बा तो नहीं लग रहा है, अथवा मैला तो नहीं है। कपड़ा जितना अच्छा धुला होगा, उतना ही रंग चोखा चढ़ेगा। रँगने से पहिले कपड़े पर कस चढ़ाना होता है। सो सूती कपड़े पर हर्रा, माजूफल, अनार की छाल वा कसीस का कस चढ़ाया जाता है। ऊनी कपड़े पर शखराव वा नौसादर का और रेशमी कपड़े पर फिटकरी, कत्था वा अनार की छाल का।

रंग को गहरा करने के लिये खटाई का वा फिटकरी का बोर देते हैं, पर रंग बदलने के लिये लोहे का कट लगाते हैं, जो इस प्रकार से बनता है कि, लोहे के टो

सेर चूर्ण में पन्द्रह सेर पानी डाल कर मिट्टी के बासन में भर दे। दस पन्द्रह दिन में पानी का रंग काला सा हो जावेगा और यही कट कहलाता है। ऊपर जो जो वस्तु रंग की बताई हैं, सो उनका रंग इस प्रकार से बनाते हैं वा निकालते हैं। (१) पीस कर, जैसे सिंगरफ़, हिरमिच, केसर, गेरू, हल्दी, तूतिया इत्यादि को, (२) रेनी बनाने वा टपकाने से, जैसे कसूम, आल, पतंग, तुन इत्यादि को, (३) औटाने से, जैसे हरसिंघार की डंडी, बबूर वा नर का बकल, (४) पानी में भिगोने से, जैसे मेंहदी, टेसू के फूल, लाख, महावर (अलता), कत्था, आमला, बबूल की फली इत्यादि, (५) खमीर उठाने से, जैसे लील इत्यादि। इन पाँचों प्रकार में से रेनी काटना तू नहीं जानती, सो बताये देती हूँ। जिस की रेनी बनानी हो, उसको कूट कर महीन कर लेवे, पर कसूम को अधिक कूटने की कुछ आवश्यकता नहीं है। आल, पतंग ही अधिकतर कूटे जाते हैं।

चार पावों की एक टिखटी लो। उसमें एक कपड़ा चारों कोनों से ऐसा बाँधो, जो नीचे को हाथ भर, वरन अधिक लटका रहे कि, झोली सी बन जावे। इसके नीचे एक नाँद रख दो वा कोई दूसरा बासन, जिसमें रेनी टपकाना चाहो। इस झोली में उस वस्तु को जिसकी

रैनी काटना चाहो भर दो। इसमें ऊपर से पानी डालते जावो। फिर थोड़ी पिसी सज्जी (सेर-भर रंग में आधी छटाँक) डाल दो। पानी रंगदार हो हो कर टपकता रहेगा। जब पानी बेरंग का आने लगे, तब जान लो कि,रैनी कट चुकी। अब टपकाने की आवश्यकता नहीं। लील का खमीर इस प्रकार उठाते हैं,

सेर भर पवाँर के बीज भाड में भुनवा कर दाल सी दल डाले। इसी की बराबर इसमें लील डाले, जो गट्टी बनी हुई बिकती हैं। इन दोनों को किसी मिट्टी के बासन में भर दे और उसमें इतना पानी डाल दे कि, लील से एक अंगुल ऊपर तक हो जावे।

एक सप्ताह या दस दिन तक धरा रहने दे, पर दिन में चार पाँच बेर लकडी से खूब चला दिया करे। यही खमीर कहलाता है और पहिचान इसकी यह है कि, जब बीज और लील आपस में घुल मिल कर एक हो जावें और अत्यन्त दुर्गंधि देने लगें तब जान ले कि, खमीर उठ आया। इसकी और भी क्रियाएँ हैं, उनको छोड़े देती हूँ।

जो किसी कपडे से रंग काटना होवे तो यों करे कि, पानी किसी धातु के बासन में औटावे और कपडे को (जिसका रंग काटना चाहे) इसमें डाल दे कि, कपड़े

से ऊपर पानी हो जावे। इसमें थोड़ी सी पिसी फिटकरी और डाल दें और औटाता रहे। रंग कट कट कर पानी में आ जावेगा। कपड़ा रंग कटने से और रंग का हो जाता है, पर केवल कच्चा ही रंग कट सक्ता है। पक्के रंग नहीं कट सक्ते हैं। कपड़ा जब रँगे तो उसमें पानी का हिसाब अच्छी भाँति देख लेवे। प्रथम जितना रंग कपडे को देना चाहे, उतना रंग पानी में मिला दे। हलका देना चाहे तो थोड़ा, गहरा रँगना हो तो पूरा, पर पानी भी इतना होना चाहिये कि, जिसमें कपड़ा अच्छी भाँति डूब जावे, वरन कपड़े से चार अंगुल पानी ऊपर रहा आवे।

कपड़े को भी पानी में इस प्रकार डाले कि, सब कपड़े पर एक सा रंग आ जावे। धब्बे न पड़ने पावें या कहीं थोड़ा और कहीं बहुत रंग न चढ़ जावे और कहीं कोरा न रह जावे। महीन कपडे में थोड़ा रंग और पानी लगता है। गाढ़े कपड़े में अधिक लगता है। जब कपड़ा रँग चुके तब सबसे पिछले डोब में या तो पिसी फिटकरी या अमचूर का भीजा हुआ पानी या नींबू या खट्टे का रस पानी में मिला कर एक डोब और दे दे कि, रंग खिल उठे और पक्का भी हो जावे। यदि कलप देना चाहे तो थोड़ा सा कलप भी पिछले डोब के पानी में खूब घोल कर कपड़े

को डोब दे और निचोड डाले। जो रंग कचे हैं, उनमें रँग कर कपडे को छाया में और जो पक्के हैं, उनको चाहे तो धूप में भी सुखा सक्ते हैं, पर कचे को धूप में कभी नहीं सुखावे, क्योंकि कचा धूप में फीका पड़ जाता है।

कलप के बनाने की विधि यह है कि, चाँवल पीस कर वा गेहूँ के चून को सोलहगुने पानी में घोल कर गाढ़े कपड़े में छान ले। पीछे आग पर लेही सी पका ले, पर बहुत गाढ़ी न होने दे, पतली ही रक्खे।

कपडे को जब पानी में रँगने के लिये डाले तो खोल कर डोवे, पर रँगने में डोबने से पहिले उसको एक बेर निरे पानी में डोब कर निचोड डाले। फिर रंग में डोवे। इससे धब्बे नहीं पड़ते, किसी किसी रंग में तो एक ही रंग से रँगना होता है, पर बहुत से रंग ऐसे हैं, जो कई कई रंग से मिल कर रँगे जाते हैं। इसलिये कपडे को ओसरे ओसरे से कई रंग में डोबना होता है। इसकी रीति यों है कि, पहिले एक रंग के पानी में डोब कर निचोड डाले और सुखा ले फिर दूसरे में डुबोवे और निचोड़ कर सुखा ले। इसी प्रकार अन्त तक करे। यह न करे कि, एक रंग में रँग लिया और गीला ही फिर दूसरे रंग के पानी में डोब दिया। गीला डोबने से रंग अच्छा नहीं चढ़ता। अब तुझको रँगनेसम्बन्धी आवश्यक बातें

तो बता चुकी । अब रँगने की विधि बताती हूँ कि, किस रंग को किस भाँति रँगते हैं ।

(१) आबी–थोड़े से कच्चे लील को पीस कर, बहुत से पानी में मिला कर कपड़ा रँग ले और निचोड़ डाले और सुखा ले । यह बहुत ही हलका रंग है, जैसा निर्मल पानी का होता है ।

(२) आसमानी–जितने रंग में आबी रँगा जाता है, उससे चौगुने में आसमानी रंगा जाता है, पर आसमानी भी हलका और गहरा दो प्रकार का होता है । जो गहरा करना चाहे तो इतना ही वा इससे आधा लील पानी में और घोल कर दूसरा डोब अथवा तीसरा डोब और दे दे । हलका रखना चाहे तो लील थोड़ा कर दे । यह नीले बादल के सदृश होता है ।

(३) जमुर्रदी–अनार का छिलका और मजीठ बराबर ले कर रात को पानी में भिगो दे । सबेरे औटा कर दोनों का रंग एक संग ही निकाल ले । कपड़े को फिटकरी के पानी में पहिले तर कर ले । पीछे लील के पानी में डोब दे, इसके पीछे मजीठ और अनार के पानी में डोब दे कर सुखा ले ।

(४) सब्ज–पहिले कपड़े को पक्के लील के पानी में डोब दे । फिर हल्दी के जोश दिये हुए पानी में इसको

थोड़ी देर तक पड़ा रहने दे। पीछे निरे पानी से धो डाले। सब से पीछे फिटकरी के पानी में डोब दे।

(५) सरदई–हरी बानात का रंग काट कर सरदई अच्छा रँगा जाता है। जो बानात न मिले तो मूँगिया या काहीकन्द का रंग काट कर रँगे, यही रीति है।

(६) अब्बासी–पहिले लील के हलके पानी में डोब दे। फिर कसूम के पानी में डोब दे। पीछे नींबू की तुरसी पानी में डाल कर डोब दे।

(७) सब्जकाही–पहिले हल्दी के पानी में रँगे। फिर हल्दी के औटाये हुए पानी में डोब दे। इसके पीछे काकड़ासींगी के जोश दिये हुए पानी में रँगे। इसके पीछे फिटकरी के पानी में रँगे।

(८) काही–रात को अनार के छिलके भिगो दे। पहिले कपड़े को लील के पानी में डोबे। फिर पानी से धो डाले। इसके पीछे अनार के पानी में डोब दे। पीछे फिटकरी के पानी में धो डाले। कलप लगाना चाहे तो कलप दे दे।

(२) पाव भर झड़बेरी की जड़ को सवा सेर पानी में रात को भिगो कर सवेरे औटा ले और छान ले इस में थोड़ा सा कसीस (हीराकसीस नहीं) पीस कर मिला दे। फिर कपड़ों को रँग ले। जितना कसीस दिया जावेगा,

उतना ही गहरा रंग आवेगा ।

(९) कासनी—दो तोले लील को तीन सेर पानी में डाल कर कपड़े को पहिले उसमें रँग के सुखा ले । पीछे कसूम के फूलों के रंग में रँग दे । (जो रेनी काट कर बनाया जाता है) और खूब रंग चूसने दे । पीछे खटाई के पानी में धो डाले । कलप देना हो तो कलप भी इसी पानी में डाल दे ।

(१०) कोकई—कपड़े को पहिले हलके लील के पानी में रँग ले । पीछे कसूम के फूलों के दूसरे पानी में रँग कर खटाई के पानी में रँग ले ।

(११) नाफरमानी—पहिले लील के पानी में हलका लीला करे, फिर कसूम के दूसरे रंग में रँग ले । पीछे कसूम की गाद में डोब दे । पीछे इसी गाद के पानी में खटाई का पानी दे कर रँग ले ।

(१२) लीला—पकी लील को पानी में घोल कर कपड़े को रँग ले । थोड़ी लील डालोगे, कम रँग आवेगा, बहुत लील दोगे, गहरा रंग आवेगा । इसके पीछे दूध, वा मेंहदी के पत्तों के रंग में रँग दे तो लील की दुर्गन्धि जाती रहेगी ।

(२) लील के खमीर में रँगने से भी रंग अच्छा होता है ।

(१३) पीला–हल्दी को पीस के उसमें थोड़ी सी सज्जी मिला दे। पीछे कपड़े को उसमें रँग ले। फिर पानी डाल डाल कर, कई बेर मल मल कर धो डाले। जब हल्दी की गन्ध जाती रहे तब फिटकरी के पानी में डोब दे कर सुखा ले।

(२) हरसिंघार के फूलों को (जो पसारी के बिकते हैं) पानी में औटावे और छान कर तनिक सा चूना डाल दे। कपड़े को इसमें रँग ले। पीछे फिटकरी के पानी में डोब दे कर सुखा दे।

(१४) केसरिया–मजीठ को पानी में औटा कर रग निकाल ले। अनार के छिलके और हरसिंघार की डंडी को संग सग औटा कर छान ले। कपड़े को पहिले फिटकरी के पानी में डोब ले। पीछे इन दोनों रगों के पानी को एक सग मिला कर कपड़े को रँग ले।

(१५) नारगी–हरसिंघार के फूलों को पानी में औटा ले। इसमें कपड़े को रँगे पीछे कसूम के दूसरे पानी में रँग कर खटाई के पानी में रँग ले।

(१६) कपासी–दो भाँति का होता है। (१) बहुत ही थोड़ा अर्थात् इतना कि, जिससे कपड़े पर रग नाम-मात्र ही को आवे। थोड़े से लील के पानी में घोल कर कपड़ा रँग ले, पर रात को टेसू के फूल भिगो रक्खे।

उनका रंग इस समय निथार कर, तनिक सा चूना डाल कर फिर निथार ले। अब इसमें लील के डोबे हुए कपडे को रँगे। जब रंग चढ़ जावे, तब खटाई के पानी में डोब दे। पड़ते ही रंग बदल कर कपासी हो जावेगा।

(२) दूसरे के रँगने की भी यह रीति है, पर उसमें लील का रंग कपड़े पर नहीं चढ़ाते। सफ़ेद कपडे ही को टेसू के रंग में रँगते हैं।

(१७) कपूरी–हरसिंघार के फूलों के रंग में कपड़े को रँग कर खटाई के पानी में धो डाले तो कपूरी हो जावेगा।

(१८) अंगूरी–टेसू के औटाये हुए पानी में कपडा रँगे। फिर बहुत ही हलका लील का रंग दे। पीछे खटाई के पानी में डोब दे कर सुखा दे।

(१९) शर्बती–तीन भाग हरसिंघार के फूलों का रंग, एक भाग कसूम का रंग (जो रेनी बनाने के पीछे निकाला जाता है) मिला कर रँग ले।

(२०) बादामी–पाव भर तुन के चावलों को सेर भर पानी में औटा लेवे। पहिले गेरू में कपड़े को रँग ले। पीछे तुन के आध सेर पानी में इसको डोब दे। यदि रुचि के अनुसार न हुआ होवे तो बाक़ी पानी भी

डाल कर डोब दे लेवे।

(२१) गुलाबी–कसूम की थोड़ी सी गाद को पानी में मिला कर कपड़े को रँग ले।

(२२) लाल–इसमें कसूम की गाद गुलाबी से चौगुनी, छःगुनी दे कर रँगना चाहिये। पीछे खटाई के पानी में डोब दे कर सुखा ले।

(२३) गुलेअनार–पहिले कपड़े को कसूम के फूलों के दूसरे रंग में डोब लेवे। पीछे गाद के पानी के रंग में रँगे। पीछे इसी गाद के पानी में थोड़ी सी हल्दी पीस कर मिला दे और कपड़े को उसमें रँगे, पीछे खटाई के पानी में डोवे।

(२४) पिस्तई–पहिले कपड़े को पक्के नील के पानी में बहुत हलका रँगे। फिर हल्दी के पानी में एक डोब दे कर पानी से धो डाले। अब इसको दही के टपकाये हुए पानी में थोड़ी देर को भिगो दे कि, हल्दी की गन्ध जाती रहे। इसके पीछे खटाई के पानी में धो डाले। कलप देना चाहे तो इसी पानी में वह भी घोल दे।

(२) पहिले कपड़े को हल्दी में रँगे, फिर साबुन के पानी में। इसके पीछे नींबू की खटाई दे कर सुखा ले।

(२५) जँगारी–कपड़े में हलका सा पहिले चूने के पानी का डोब दे ले। पीछे जँगार के पानी में रँगे,

जो जँगार न मिले तो तूतिया के पानी में रँगे।

(२६) तूसी—छाल बबूल पाव भर, कायफल छः तोले रात को पानी में भिगो कर सवेरे औंटा लेवे। कपड़े को पहिले फिटकरी के पानी में डोब दे कर सुखा ले। फिर छाल और कायफल के रंग में रँगे। फिर डेढ़ तोले कसीस इसी रंग में मिला कर दो डोब दे कर सुखा लेवे।

(२७) उन्नाबी—पहिले कपड़े को हर्रे के पानी में रँगे। फिर दो तोले कट के पानी में रँगे। फिर छटाँक भर पतंग के औंटाये हुए पानी में डोब दे। फिर दो तोले फिटकरी के पानी में डोब दे कर सुखा ले।

(२८) फाख़्तई—दो भारी और बड़े बड़े माजूफल का चूर्ण कर के पानी में भिगो दे। तीन घंटे पीछे पीस डाले। इसको पानी में घोल कर कपड़े को इसमें रँगे, पीछे कट को इसमें डाल कर दूसरा डोब दे दे।

(२९) फीरोज़ई—पहिले कपड़े में चूने का हलका अस्तर दे ले। फिर तूतिया के पानी में रँग कर सुखाती जावे। जब तूतिया के पानी में डोब दे तभी निचोड़ कर सुखा लिया करे। पाँच व छः बेर में फीरोज़ई हो जावेगा।

(३०) काकरेज़ी—पतंग पाव भर, महावर दो दाम, हिरमिच और माजूफल एक एक दाम। इन सब को डेढ़

सेर पानी में औंटा कर छान ले। इसमें रँगने से काकरेजी हो जावेगा।

(३१) करजवी—पाव भर अनार के छिलके और इतने ही आँवले पानी में औंटा कर और छान कर निकाल ले। इसमें कपड़े को पहिले रँगे, फिर सुखा कर और दो माजूफल को पीस कर इसके पानी में रँगे। इसके पीछे काले कत्थे के पानी में रँगे। अब इसको डेढ़ तोले फिटकरी के पानी में डोब दे कर निचोड़ डाले और सुखा ले।

(३२) किशमिशी—कपड़े को पहिले हर्रे के पानी में डोब दे। फिर कट के पानी में। इसके पीछे हल्दी के पानी में। फिर कसूम के उस पानी में, जो रंगी के पीछे निकलता है। अब अनार के छिलकों के पानी में डोब दे कर फिटकरी के पानी में धो डाले, पर ध्यान रहे कि, जब डोब दिया जावे, सुखा कर दिया जावे।

(३३) अद्भुत दुरंगा—सीप और मूँगे की जड़ और सफेद गोंद इन सब को बहुत महीन पीस कर गुड़ और पानी के साथ खूब औंटावे। जब औंट जावे तब उतार कर सर्द करे। बाबरलेट या महीन मलमल ले कर उसके एक लग इस रंग का लेप करे। जब सूख जावे तब पहिले पक्के रंग में इस कपड़े को डोब देवे। जब सूख जावे तब दूसरे कच्चे रंग में डोब देवे। जैसे लीन्न का रंग पक्का है, पहिले

उसमें, फिर कसूम में डोने, जो कच्चा है तो एक ओर आधी और दूसरी ओर नाफ़रमानी हो जावेगा अथवा पहिले लील में रँग कर और सुखा कर हल्दी में डोब दिया जावे तो एक ओर पीला और दूसरी ओर हरा रंग दिखाई देगा ।

यह तो मैंने तुझे सूती कपडे रँगने की रीति बताई । ऊनी और रेशमी अलग रहे, क्योंकि उनका रँगना सूती कपडे की अपेक्षा कठिन है । कपडे के बिगडने, सुधरने का भय रहता है । इसलिये जो मनुष्य इस क्रिया में चतुर और दक्ष हो, उसीसे रँगवावे । नहीं तो कपडा कदाचित् बिगड़ जावेगा ।

कपड़ों के धब्बे छुड़ाना ।

लोहू का धब्बा—नमक के पानी में धो डालने से जाता रहता है ।

फलों के रस के दाग वा मेहँदी के रंग का व लील का दाग } पानी में कबूतर की बीट औटा कर धोवे । लील का दाग ताजे दूध को गरम कर के धो डाले ।

स्याही का दाग—पुराने सिर्के को पानी में गरम कर के धो डाले ।

चिकनाई का दाग—नोन और चूना पीस कर पहिले मले। फिर इसीको पानी में घोल कर धो डाले। घी की चिकनाई पर तेल लगा कर रख दे और तेल की चिकनाई पर घी लगा कर रख दे, पीछे पानी में इस कपडे को डाल कर औटा लेवे तो छुट जावेगा।

पशमीने की चिकनाई—जौ की भूसी को पानी में औटा के धोवे। फिर गन्धक का धुआँ देवे। साफ हो जावेगा।

रेशमी कपडे की चिकनाई—सूखा चूना और नोन पीस कर उस पर डाले। पीछे अलसी पीस कर उस पर डाले और इतनी देर रहने दे कि वह सब चिकनाई को सोख ले।

सब भाँति के दाग—ऊट की मेंगन को पीस कर पानी में घोले और उसमें कपडे को भिगो दे। एक दिन रात पड़ा रहने दे। दूसरे दिन धो डाले। हींग और साबुन के पानी मे धो डाले। सब दाग छुट जावेंगे।

शिल्पविद्या समाप्त।

चित्रकारी।

यह विद्या भी स्त्रियों को बहुत ही उपयोगी और उपकारी है। पूर्व समय में इस विद्या में भी स्त्रियों ने बडी

बडी दक्षता प्राप्त की है कि, तैंने ऊषा की सखी चित्रलेखा का वृत्तान्त सुना ही है कि, जब ऊषा ने स्वप्न में अनिरुद्ध को देखा और सबेरे उसका नाम न बता सकी कि, जिसको स्वप्न में देखा था, तब उसकी सखी चित्रलेखा ने सब मनुष्यों के चित्र लिख लिख कर ऊषा को दिखाये कि, इनमें से किसको तैंने स्वप्न में देखा है ? जब काढते काढते अनिरुद्ध का चित्र सखी ने खींचा तो ऊषा ने झट पहिचान लिया कि, यही पुरुष था और फिर उस का पता लग गया कि, वह श्रीकृष्णचन्द्रजी का पौत्र है। आज कल के बडे बडे चित्रकार देख देख चित्र खींचते हैं, पर हमारी सखी ने सहस्रों कोस पर बैठे हुए बात की बात में चित्र खींचे थे। यह तो बहुत बडी, वरन असम्भव सी बात है, पर अब भी ऐसे ऐसे चतुर चितेरे हैं कि, देखते देखते बात की बात में एक मनुष्य का क्या, जनसमूह का चित्र यों ही खींच देते हैं। कोई कोई तो ऐसे होते हैं कि, रंगभूमि में नाटक करते करते बाजे की ताल पर खडिया वा लेखनी से दर्शकों में से चाहे जिस का चित्र खींच देते हैं और उसी खडिया से ताल भी देते जाते हैं और नाट्य भी करते जाते हैं। ताल को नहीं बिगडने देते हैं और तीन चार बेर ऐसा कर के चित्र पूरा कर देते हैं।

बहुत से चित्रकारों के चित्र तो लाखों ही रुपयों के बिके हैं। ई मिसानियर चित्रकार का एक चित्र ९८८०००) रुपये को और दूसरा १५०००८) रुपये को बिका था। रैफेलकृत "सिस्टिन म्याडाना" नामक चित्र दस लाख, अस्सी हजार रुपये को बिका था। यह चित्र पृथ्वी भर में सब से बढ़ कर है। (देखो सरस्वती भाग ३ संख्या १०) यह बात तो अलग रही कि, हमारे यहाँ की स्त्रियाँ ऐसी निपुणता इस विषय में प्राप्त करें, जब कि मनुष्य ही कुछ नहीं करते हैं, परन्तु स्त्रियों से चित्रकारी का सम्बन्ध पुरुषों की अपेक्षा अधिक तर है क्योंकि तू देखती है कि, स्त्रियाँ दिवाली, अहोई अष्टमी, सलूनो, देवोत्थान इत्यादि त्योहारों पर अपने अपने घर में लिखना काढ़ती हैं वा विवाहोत्सव में घर को चित्र बना बना कर सजाती हैं। सो यह क्या है? उसी चित्रकारी का अंग तो है, परन्तु अब नाममात्र को रह गया है। मैंने देखा है कि, ग्राम तक की स्त्रियां इनको काढ़ती हैं, पर बुराई यह हो गई है कि, काढ़ना किसी पर नहीं आता है। चतुर स्त्रियाँ तो कुछ काढ़ भी लेती हैं, पर वे भी इतना भोंडा कि, चित्रकार उनको देख कर घृणा से नाक, भौंह सिकोड़ कर देखता भी नहीं है। इसी कारण तुझको इस विषय में कुछ बताना चाहती हूँ।

है तो यह विषय बहुत ही सूक्ष्म । बिना अभ्यास के नहीं आ सक्ता, परन्तु इसके स्थूल स्थूल विषय तुझको कुछ कुछ बताये देती हूँ, जिससे चित्रकारी का तुझको ज्ञानमात्र हो जावे ।

यह विद्या द्वितीय ईश्वरता के तुल्य है, क्योंकि इसमें कागज़ या भीत पर आकृति बना कर वा मिट्टी की मूर्ति बना कर जीवित देह के चिह्न दर्शा दिये जाते हैं ।

चित्रकारी कई प्रकार की हैं । (१) जो यन्त्रद्वारा खिंचती है, वह फ़ोटोग्राफी कहलाती है, (२) चित्र का चित्र खिंचता है, (३) अपने सन्मुख बिठा कर चित्रपट पर आकृति खींचते हैं, (४) पत्थर या मिट्टी की मूर्ति ऐसी बनाते हैं, जो ठीक अनुहार हो जाती है, (५) कल्पना से चित्र बना लिया जाता है, (६) बेल, बूटा, फूल, वृक्ष, पशु, पक्षी इत्यादि के चित्र कल्पित; परन्तु यथार्थ बनाये जाते है ।

इनमें से पाँचवाँ और छठा प्रकार तनिक सुगम हैं और इन्हींका स्त्रियों को अपने घर, कोठे इत्यादि को शोभित करने के लिये अधिकतर प्रयोजन पड़ता है । सो तुझको वही बताती हूँ, क्योंकि पहिले चार प्रकार तो प्रायः जीविकानिमित्त हैं और बहुत परिश्रम से आते हैं, यों तो परिश्रम इनमें भी करना पड़ता है कि, महीनों

और वर्षों के अभ्यास से कुछ भान होता है। मैंने देखा है कि, स्त्रियाँ जो पुरुष या स्त्री का चित्र भीत पर खींचती हैं, वे बहुत ही बेढगे होते हैं। कोई तो मस्तक को पेट से भी बड़ा, कोई नाक को माथे से बड़ी, कोई कानों को आँखों से भी छोटे और पैरों को हाथों से छोटे बना देती हैं अर्थात् जो अङ्गों का यथावत् परस्पर सम्बन्ध है, उसका कुछ ध्यान नहीं रखतीं। इसीसे अत्यन्त घृणोत्पादक मूर्ति बना देती हैं।

चित्र खींचने के छः अग हैं। (१) तरह तरह के रंग बनाना, (२) देह के अवयवों का प्रमाण जानना, (३) भाव और लावण्य मजिष्ट करना, (४) तादृश्य अर्थात् निपट वैसी ही छवि बनाना, (५) पीछी अर्थात खींचने की कुची या लेखनी बनाना, (६) चित्र का आकार। सो पहिले इसके विषय ही तुमको बताती हूँ। पर हाँ, इससे पूर्व जो और बताना चाहिये, वह भूल गई। वह यह है कि, चित्रकार को अपनी कुची अर्थात चित्र खींचने की क़लम बहुत ही अच्छी रखनी चाहिये और यह बालों की बनी हुई होनी चाहिये। मैंने देखा है कि, स्त्रियाँ परे की डंडी को कुचल कर कुची बना लेती हैं। कुची ऊँट, गिलहरी इत्यादि के बालों की होनी चाहिये, जो बनी बनाई बिकती हैं, पर इनको

छोड दो, क्योंकि यह बहुत महँगी आती है ।

भीत पर चित्र काढ़ने के योग्य तो घोडे के बालों से भी बन सकती है । सूअर के बालों की भी बनाते हैं, परन्तु उसका छूना निषिद्ध माना गया है । इसलिये घोडों के बाल की ही अच्छी है ।

भीत जिस पर चित्र काढ़ा जावे, वह बहुत चिकनी और श्वेत होनी चाहिये । रंग अच्छे बने हुए होने चाहियें । रंग बनाने की रीति तनिक पीछे बताऊँगी । पहिले चित्र खींचने के नियम बताती हूँ । सो, भी मनुष्यदेह के चित्र खींचने के नियम इसलिये नियत किये गये हैं कि चित्र सुडौल और सुघड खिंचे और दीखे । बेढब न खिंच जावे । मनुष्य के चित्र खींचने में बडे बडे चित्रकारों में बहुत मतभेद हैं, पर उनको छोड कर जो मेरी एक सखी ने लिखे हैं और सुगम भी हैं, जिनको उन्होंने बडे बडे प्रसिद्ध चितेरों के सिद्धान्तों और अपने अनुभवों से निश्चित किया है, बताती हूँ । किसी विशेष मनुष्य का चित्र खींच कर आकृति मिलानी तो बहुत ही कठिन बात है । मैं तुझको केवल मनुष्यमात्र की देह का सुडौल चित्र खींचना बताती हूँ, सो ध्यान से सुन ।

जितना बडा चित्र खींचना चाहे, उसके आठ भाग बराबर के करे, इस प्रकार—

न्धे तक दो सिर के बराबर चौड़ाई होती है और इसी
ारण यदि नाभि से कन्धों को दो लकीरें खींची जावें
ार एक तीसरी लकीर से मिला दी जावें तो एक
सा त्रिकोनिया बन जावेगा कि, जिसकी तीनों भुजा
ौर कोने बराबर के होंगे। जैसा देख (चित्र न० १)
खींच कर बताती हूँ।

बगलों के बीच में डेढ़ (१½) भाग सिरकी बराबर
ड़ाई होती है। कमर सवा (१¼) सिर की बराबर चौड़ी
ती है। जाँघ ऊपर पौन (¾) सिर चौड़ी होती है।
घुटनों के ऊपर चौड़ाई आधे (½) सिर की बराबर
र घुटनों के नीचे आधे सिर से थोड़ी कम होती है।
डली की चौड़ाई सवा दो नाक की बराबर होती है।
टखने के ऊपर पैर एक नाक की बराबर चौड़ा होता
। जैसा (चित्र न० २) के नापने से तुमको ज्ञात

दूसरे में ऊपर का होठ, जो थोड़ा पतला बनना और तीसरे में नीचे का होठ होगा।

कान नाक बराबर लंबे होते हैं।

कानों के ऊपर का चेहरा अपने और सब भागों से चौड़ा होता है और जैसा कि, मैं ऊपर बता चुकी हूँ, इस चौड़ाई के पाँचवें भाग की बराबर आँखें होती हैं।

दोनों आँखों के बीच में एक आँख की लम्बाई की बराबर दूरी होती है। यदि अ आ लकीर की बराबर बराबर ऐसे फासिले से आँखों के कोए छूती हुई दो लकीरें खींची जावें तो नाक की चौड़ाई, जो एक नथने से दूसरे नथने तक होती है, निकल आवेगी। मुख नाक की चौड़ाई से तनिक ही अधिक चौड़ा होता है। इस में तुझे बहुत सा बखेड़ा मालूम पड़ेगा, परन्तु झगड़ा कुछ नहीं है। यह इसलिये तुझको बता दिया है कि, कान, नाक, आँख, मुख इत्यादि इनका आपस में क्या क्या सम्बन्ध रहना चाहिये।

जब अभ्यास कर लेगी तब इतने आडम्बर की कुछ आवश्यकता नहीं। अभ्यास करते करते सम्बन्ध आप ज्ञात हो जावेगा कि, कौन कितना बड़ा वा छोटा रहना चाहिये।

अब नार से आगे का लेख बताती हूँ। नार आधे (½) सिर की बराबर चौड़ी होनी चाहिये। कन्धे से

कन्ध तक दो सिर के बराबर चौड़ाई होती है और इसी कारण यदि नाभि से कन्धों को दो लकीरें खींची जावें और एक तीसरी लकीर से मिला दी जावें तो एक ऐसा त्रिकोनिया बन जावेगा कि, जिसकी तीनों भुजा और कोने बराबर के होंगे। जैसा देख (चित्र न० १) में खींच कर बताती हूँ।

बगलों के बीच में डेढ़ (१½) भाग सिरकी बराबर चौड़ाई होती है। कमर सवा (१¼) सिर की बराबर चौड़ी होती है। जांघ ऊपर पौन (¾) सिर चौड़ी होती है। घुटनों के ऊपर चौड़ाई आधे (½) सिर की बराबर और घुटनों के नीचे आधे सिर से थोड़ी कम होती है। पिंडली की चौड़ाई सवा दो नाक की बराबर होती है। टखने के ऊपर पैर एक नाक की बराबर चौड़ा होता है। जैसा (चित्र न० २) के नापने से तुमको ज्ञात हो सक्ता है।

नेत्र इस प्रकार से रखना चाहिये कि, आँख की पूरी लंबाई के अर्थात् एक सिरे से दूसरे सिरे तक जैसे अ-क (चित्र न० ४) के तीन भाग बराबर के करने चाहियें। जैसे ख ग-घ बीच के भाग की बराबर पुतली की चौड़ाई होती है, जैसी यह खींच कर दिखाती हूँ। इसी प्रकार जो एकाक्षी चित्र में खींची जाने अर्थात् एक ओर

से आँख खींची जावे, उसमें भी पुतली तिहाई की बराबर रहती है। आँख का चित्र बहुत विचित्र और कठिन है। सहस्रों प्रकार से खिंचता है और चित्र का मुख्य अंग है। इसके विषय में अधिकतर अब के बताऊँगी।

अब तुझको मुख का लेखा बताती हूँ। पहिले बता चुकी हूँ कि, ऊपर का होठ नीचे के होठ से कुछ कम चौड़ा बनाना चाहिये। नीचे का होठ प्रत्येक मनुष्य का ऊपर के होठ से अधिक चौडा होता है।

सामने के मुख की लम्बाई का लेखा यों है कि, मुख के चार बराबर के भाग होते हैं। बीच की लकीर होठों के बीच में होगी। बीच के दो भाग वे होंगे कि, जहाँ पर ऊपर और नीचे के दोनों होठ खूब भरे हुए और मोटे होते हैं और इधर उधर के वे भाग होंगे, जहाँ पर दोनों होठ पतले होते हैं। जैसे देख, इस चित्र में (चित्र न० ६) हाथों की लंबाई समस्त देह की लंबाई का जहाँ पाँचवाँ भाग हो, वहाँ तक होनी चाहिये अर्थात् जैसे (चित्र न० १) में मैंने खींची है।

अभी तुझको इतना ही बताती हूँ कि, तू इसका अभ्यास कर लेवे। अब के जब फिर आऊँगी तब इस विषय में विशेष बतलाऊँगी।

चित्रकारी समाप्त।

फुटकर ।

यह तो दो बडे विषय तुझको बताये । अब कुछ [illegible]कर बातें जो नितप्रति के काम में आती हैं, बताती हूं ।

(१) ताँबे या पीतल के बासन साफ करना—थोडा सा शोरे [illegible] तेज़ाब किसी वस्तु से बर्तन पर मल कर पानी से धो डाले, [illegible] तेज़ाब से हाथ न लगने पावे, नहीं तो घाव हो जावेगा ।

(२) ताँबे के बर्तन पर कलई करना—जिस बर्तन [illegible] कलई करनी हो, पहिले ईंटोरे से उसे खूब माँजे । खटाई [illegible] पानी डालती जावे । जब मैल निकल छुट जावे और [illegible]न चमकने लगे, तब आग पर रख कर इतना अधिक [illegible]म करे कि, राँग डालने से गल जावे । अब राँग डाल [illegible]र और उसमें पिसा हुआ नौसादर डाल कर जहाँतक [illegible] कलई करना चाहे, कपडे से खूब रगड दे, पीछे उतार ले ।

(३) काँच पर कलई करना—जितना बडा काँच हो, उतना ही बडा ताव सीसे की पन्नी का ले । इसको थाली पर फैला कर और उस पर पारा डाल कर कपडे की पोटली [illegible]से रगड दे कि, सब में एक सा हो जावे । इसके ऊपर काँच को एक ओर से सरका दे और पीछे पन्नी सहित उठा ले । यह पन्नी काँच पर जम जावेगी और मुख दीखने लगेगा ।

(४) बर्तनों पर चाँदी का पानी चढ़ाना—चाँदी के पाँच वर्क, भुनी फिटकरी पन्द्रह रत्ती, नौसादर पन्द्रह रत्ती

सेंधा नमक पन्द्रह रत्ती, तीनों को खरल कर के किसी शीशी में भर ले। जिस बर्तन पर चाँदी चढ़ाना चाहे, उसे पहिले खूब माँज कर के चमका ले। पीछे इस शीशी के चूर्ण को खूब मल दे। चाँदी का झोल चढ़ जावेगा, परन्तु यह कच्चा है। थोड़े दिनों ही रहेगा।

(५) साफ तेजाब शोरे का ले। उसमें चाँदी के वर्क डाले और गला ले। उत्तम हो, जो तनिक आग पर इस तेज़ाब के बर्तन को रख कर गरम कर ले, क्योंकि इससे शीघ्र घुल जाता है। फिर दो सेर पानी में एक छटाँक नमक घोले और उस तेज़ाब में, जिसमें चाँदी पड़ी है, डाले। इस क्रिया से चाँदी उज्ज्वल दही सी पेंदे में बैठ जावेगी। अब हौले हौले ऊपर के पानी को निथार ले और दो तीन बेर पानी डाल डाल कर इस चाँदी के चूरे को धो डाले। फिर इस चूरे में सायानाइड आफ पुटाश डाल कर हिला दे और जब तक इस चाँदी का फिर पानी सा न बन जावे, थोड़ा थोड़ा इस औषध को डाल डाल कर हिलाती रहे। जब पानी बन जावे तब इसमें कुछ साफ पानी मिला दे। यहाँ तक कि, एक तोला चाँदी में एक बोतल अर्क बना ले।

१–यह औषध डाक्टरों की दूकान पर मिलेगी, परन्तु इसका बड़ी सावधानी से बर्तना चाहिये। इसलिये कि, यह विष है। मुख में न चला जावे अथवा किसी और स्थान पर शरीर में न लग जावे।

फिर थोड़ी साफ खरिया मिट्टी, कलई चूना और नासा-र लेकर और पानी में घोल कर एक बोतल में भर ले। अब इस खड़िया मिट्टी के पानी को उस चाँदी के पानी डाल कर हिलावे और सूँघे। यदि तीक्ष्ण गंध आवे तो जाने कि, वह अच्छा बन गया। नहीं तो चूना और नौसा-र का पानी उसमें थोड़ा सा और डाले। इस प्रकार चाँदी का अर्क जब बन जाय तब उसे एक शीशी में रख छोड़े। जब आवश्यकता हो तब ताँबे वा पीतल के बासन में इसे मले। एक बेर मल कर सुखा ले। फिर दूसरी बेर मले तो चाँदी का पानी चढ़ जावेगा। जब यह पानी बासन से कुछ घिस जावे तब फिर इसी भाँति चढ़ा लेवे। ताँबे, पीतल के गहनों पर चढ़ाने में बहुत काम आती है।

नथ वा बाली के मोती उजालना—मोतियों को चाँवलों के पानी में दो चार घंटे पड़ा रहने दे। पीछे उन्हीं चाँवलों से धो डाले, साफ उज्ज्वल हो जावेंगे।

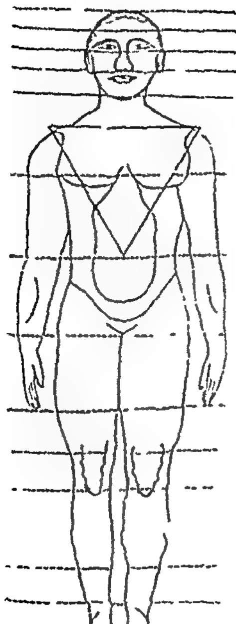
(६) फूलों का गुच्छा—जिस बर्तन में गुलदस्ते को रखना हो, उसमें लकड़ी के कोइलों को कूट कर भर दे। ऊपर से पानी भर दे। फूलों की डंडी को कोइलों में गड़ी रहने दे, यदि फूल एक दिन ठहरते तो इस प्रकार करने से एक सप्ताह तक टटके बने रहेंगे।

(७) काँच और चीनी के टूटे बर्तन जोड़ना—काला

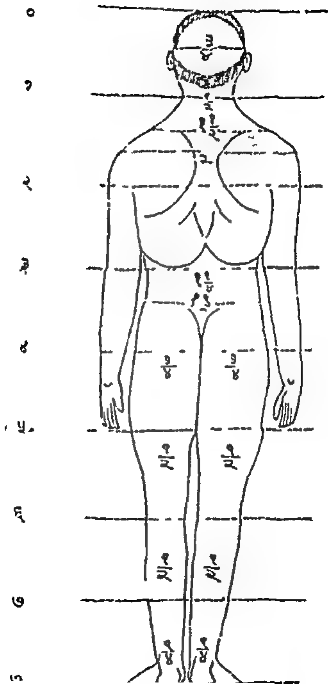
गन्दाबीरोज़ा दो भाग, इण्डियारबर एक भाग, दोनों को धीमी आँच पर पिघला कर ख़ूब मिला लो। गरम गरम टूटे बर्तनों के किनारों पर लगा कर दोनों सिरे आपस में जोड़ दो और ठंढा होने दो। जब ठंढा हो जावे तब जो मसाला किनारों से इधर उधर लग गया है, चाक़ू से छुटा दो। (२) चपड़ा लाख दो भाग, तारपीन का तेल एक भाग ले कर मंदी आँच में ख़ूब पिघला कर मिला लो और काम में लावो। सर्दी गर्मी का इस मसाले पर कुछ असर नहीं होता है।

काँच में पीतल इत्यादि की वस्तु जोड़ना, जैसे लैम्प में पीतल का फूल—राल तीन भाग, कास्टिक सोडा एक भाग, पानी पाँच भाग। इन तीनों को आग पर रख कर ख़ूब उबाल लो। साबुन सा हो जावेगा। इसमें इन सब का आधा भाग फुका हुआ जस्त मिला कर ख़ूब रगड़ो। इसको लैम्प के मुँह पर लगा कर पीतल का फूल जमा दो और धूप में सुखा लो।(२) कीकर के गोंद को पानी में उबाल कर गाढ़ा कर लो। पीछे उसमें पारे की खाक मिला कर सख़्त कर लो और काम में लावो। यह सूखता तो दो तीन दिन में है, पर मज़बूत पत्थर के बराबर हो जाता है।

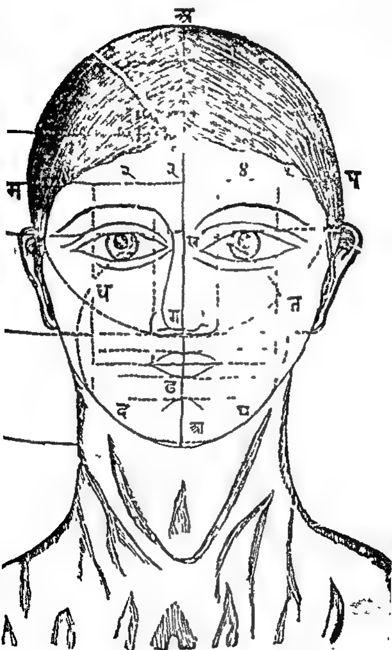
कल रात्रि को अबेरी सोने से आज अभी से औंघ आती है, सो अब अधिक नहीं बताया जाता। फुटकर समाप्त।


१ सिर
२
३
४
५
६
७

चित्र न० २ पीठ पीछा

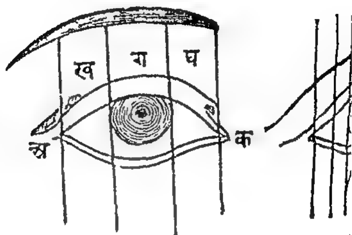


चित्र नं० ३

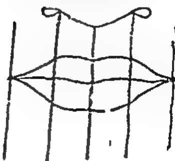


चित्र आँख सामने से
चित्र नं० ४

चित्र आँख बगलसे
चित्र नं० ५



चित्र मुख नं० ६



स्त्रीसुबोधिनी

तृतीय भाग

— ० —

गर्भाधान।

पाँचवें दिवस दुर्गा काम काज कर के मिठासी निवट गई। अपनी बहिन मोहनी को भावज के शयनभवन में ले जा कर और इस दिन अपनी भावजों को भी अपने पास बिठा कर इस प्रकार से समझाने लगी कि, बहिन! अब तुझको कुछ बात गर्भ के विषय में बताती हूँ, जिन्हें स्त्रियों को मुख्य कर जाननी चाहिये, क्योंकि इनके जानने से सन्तान में बड़े बड़े गुण और न जानने से बड़े बड़े अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं। पूर्व काल की स्त्रियाँ इस विषय से ऐसी अभिज्ञ होती थीं कि, वे जैसे गुण व स्वरूप, स्वभाव की सन्तान चाहती थीं, उत्पन्न कर लेती थीं। यह बात उनकी सामर्थ्य में थी, पर आज कल की स्त्रियाँ इस विषय से निपट अनजान हैं। तभी तो अच्छे अच्छे माता पिता के कुसन्तान और स्वरूप वती माता के महाकुरूप बालक जन्म लेते हैं। इसके कारण गर्भावस्था के दोष ही हैं, जो तुझको अब बताना चाहती हूँ।

गर्भ के दो अङ्ग है । (१) गर्भाधान, (२) गर्भ रक्षा । सो पहिले तुझको गर्भाधान के विषय ही में उपदेश करती हूं, क्योंकि यही पहिले मुख्य है । पूर्व काल में सब क्रिया शास्त्रोक्त होती थीं इसलिये सब भाँति भली थीं । जब से शास्त्र की रीति मिट गई और बुढियापुराण ने अपना अधिकार कर लिया, तभी से यह दशा हो गई है कि, सन्तान में बडे बडे अवगुण उत्पन्न हो जाते हैं । पुरुष मैथुन को केवल सन्तानोत्पत्ति निमित्त समझते थे, न कि सुख व आनन्द हेतु । जैसा कि, आज कल के स्त्री पुरुष मान बैठे हैं । यह इसी का कारण है कि, बहुतों के सन्तान ही नहीं उत्पन्न होती है, क्योंकि अनुचित मैथुन से स्त्री पुरुष निर्बल हो जाते हैं । गर्भ रहता नहीं अथवा उचित आहार, विहार, आचार, विचार, भोजन, काल, स्वास्थ्य, वृत्ति, चेष्टा, ऋतु इत्यादि के विचार से सन्तान उत्पन्न नहीं की जाती है । वही सन्तान के अवगुणों के हेतु हो जाते हैं । गर्भस्राव वा पात हो जाता है । सन्तान कुरूप और कुचाली उत्पन्न होती है ।

पहिले समय में पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन कर के स्त्री पुरुष गृहस्थाश्रम में प्रवृत्त होते थे । शास्त्रविधि को जानते थे अर्थात् जब तक पूर्ण यौवन को प्राप्त नहीं हो

लेते थे, विवाह नहीं करते थे। स्त्री सोलह वर्ष से और पुरुष पच्चीस वर्ष से पूर्व विवाहादि सन्तानोत्पत्ति की इच्छा के कर्मों को स्वीकार नहीं करते थे।

परन्तु अब तो तू देखती है कि, छोटे छोटे बालकों के विवाह हो जाते हैं, जिनके मुख से माँ का दूध भी नहीं छूटा और विवाह हो गया और थोड़े ही दिनों पीछे गौना भी हो गया, सो यह महाअनुचित है।

इसी से यह हीन दशा हो रही है कि, माता पिता के आगे ही सन्तान मर जाती है। कारण यही है कि, निर्बल माता पिता से उनकी उत्पत्ति होती है।

सन्तान की उत्पत्ति के लिये पहिले समय में बड़े बड़े विचार होते थे। पुत्रेष्टियज्ञ किये जाते थे, पर अब कुछ नहीं होता है। अब तो कामवश हो कर लोग अन्धाधुन्ध कर रहे हैं।

सन्तान की उत्पत्ति में इतनी बातों का विचार होना परमावश्यक है।

आयु (माता, पिता युवा हों), काल (शास्त्रोक्त जो आगे बताऊँगी), स्वास्थ्य (माता, पिता की नीरोगदशा), देश (शयनागार, जहाँ स्त्री पुरुष गर्भाधान करें), देह-बल (माता, पिता निर्बल न हों), भोजन (जो गर्भाधान के पूर्व करें और माता गर्भावस्था में नित्यप्रति करती

रहे), आचार, विचार (जो गर्भाधान से पूर्व समय किये जायं और गर्भावस्था तक बराबर रहे), ऋतुकाल (अर्थात् स्त्री के कौन से रजदर्शन में और कौन सी तिथि या कौथे दिन गर्भाधान होना चाहिये) । पहिले तुझको यह बताती हूँ कि, गर्भाधान कब हो सक्ता है और किस प्रकार से होना चाहिये । बहिन ! जिन स्त्रियों का विवाह हो जाता है और जो बड़ी हो जाती है, वे महीने में एक बेर स्त्रीधर्म मे होती हैं, जिसे 'अलग बैठना' या 'छूती होना' या 'कपड़ों से होना' या 'नहानी होना' कहते हैं। इसका कोई नियत समय नहीं है कि, कितनी अवस्था में हो । गरम देशों में सिदांसी और ठंढे देशों में अबेरी होता है । इस देश में जो गरम है, यहाँ बारह-चौदह वर्ष की अवस्था में रजदर्शन हो जाता है । किसीको इससे तनिक पहिले, किसी को इससे तनिक पीछे भी होता है । सीधी लड़की को अधिक अवस्था में और भोगवृत्तिवाली को सिदांसी होता है । तीस वर्ष से पैतालीस वर्ष की आयु तक रहता है । कहीं कहीं ठंढे देशों में तीस वर्ष की आयु में प्रथम ही होता है और कहीं कहीं इससे कुछ पूर्व भी हो जाता है । जैसे यहाँ इस देश में प्रतिमास होता है, वैसे ठंढे देशों में कभी कभी दो दो, तीन तीन महीने में एक ही बेर होता है । महीने

महीने नहीं होता, पर ठीक समय उसका अट्ठाईस दिन का है। कोई स्त्री इकीस दिन ही में हो जाती है। तू देखा करती है कि, माँ और भावज चार दिन तक किसी काम से हाथ नहीं लगातीं है, न किसी को छूती है। अलग बैठी रहती है। इसी से मेरे कहने का प्रयोजन है। इसीको 'स्त्रीधर्म' वा 'रजस्वला' वा 'ऋतुरोना' वा 'ऋतुकाल' अथवा 'रजदर्शन' कहते हैं।

जो स्त्री नीरोग होती है, वह ठीक एक महीने में रजस्वला होती है। उसकी पहिचान यह है कि, पाँच दिन तक मैला रुधिर बहे और कोई दर्द आदि न होवे। रुधिर कम या बहुत न निकले। रुधिर निकलने से चित्त प्रसन्न होता जावे और रुधिर इस प्रकार का होवे कि, वस्त्र को धोने पर रंग न लगा रहे। अथवा उसका न जमे। जैसे और रुधिर का जम जाता है, क्योंकि वास्तव में यह रुधिर नहीं है, यद्यपि उसके सदृश रूप रंग में है। इसीसे तो इसको रज कहते हैं।

जिस स्त्री का रज जमता है, उसके पीड़ा भी अवश्य होती है और गर्भ भी उसके नहीं रह सका। जो रंग फीका वा पीला हो और रज थोड़ा वा बहुत हो तो भी गर्भ न रहेगा।

जब रज में कुछ विकार होता है तो महीने महीने उसका

रंग बदलता रहता है। कभी काला, कभी लाल और कभी हराई लिये हुए होता है। यह रजदर्शन तीस वर्ष तक रहता है अर्थात् जब से प्रथम हुआ था, उस समय से तीस वर्ष तक होता है। यों भी कहते हैं कि, पहलौठी की सन्तान की आयु जब सत्ताईस वर्ष की हो जाती है, उस के पीछे नहीं होता है। यह सामान्य समय है। विशेष का कुछ नियम नहीं है। जब यह रज समाप्त होने को होता है तब स्त्री को ये लक्षण प्रतीत होते हैं। (१) स्त्री मोटी होती चली जाती है, (२) मास में हाड छुप जाते हैं, (३) ठोड़ी मुटा जाती है, (४) मेद मक्खन सा शरीर में छा जाता है, (५) रज अधिक होता है मानो गर्भस्राव हो गया है। यह समय स्त्री को दुःखदायक है। इस रज की समाप्ति में बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

गर्भ रहने से भी रज बन्द हो जाता है। इसी कारण तुझको वृद्धावस्था में गर्भ और रजसमाप्ति की पहिचान बताती हूँ। समाप्ति में तो ऊपर के बताये हुए लक्षण होते हैं, परन्तु गर्भ में इसके विरुद्ध अर्थात् देह लटती जाती है, केवल पेट ही मोटा हो जाता है और नाक, ठोड़ी सिकुड़ती जाती हैं। मुख सूखता जाता है, पर ये बातें रजसमाप्ति में नहीं होती हैं।

जिस स्त्री के कोई रोग हो जाता है अथवा यही रोग

है, तो वह महीने से कमती बढ़ती में भी स्त्रीधर्म से होती है और ऐसी दशा में उपाय करना चाहिये। कमती दिन में हो जाने में तो कोई डर नहीं है, पर अधिक दिन के हो जाने में गरमी बढ जाती है। ऐसी दशा निर्बलता से होती है वा भीतर रुधिर के सूख जाने से वा देह में रुधिर कम होने से। इसलिये पुष्ट और बल करनेवाली तथा रुधिर को तर करनेवाली औषध खावे।

कोई कोई स्त्री जन्म भर स्त्रीधर्म से नहीं होती है। वे बाँझ वा पुष्पवन्ध्या कहलाती है। उनके गर्भ कभी नहीं रहता और न ऐसी की कोई औषध हो सक्ती है।

जो स्त्री कि, अपने महीने के महीने स्त्रीधर्म से होती रहै, उसको चाहिये कि, उन चारों दिनों में बड़ी सावधानी से रहे, क्योंकि यह रजदर्शन ही गर्भ के रहने का कारण होता है, जिससे बालक उत्पन्न होता है। इन चार दिनों में अञ्जन वा काजल न लगावे। उबटना न मले। नदी वा तालाब में स्नान न करे। दिन में न सोवे। आग न छुवे। रस्सी न बटे। दाँत न माँजे। मास न खावे। आकाश के नक्षत्रों को न देखे। हँसे नहीं। घर का काम-धन्धा न करे। दौड़े नहीं। जो स्त्री इन चार दिनों में सावधानी से नहीं रहती, उसके देह में भी दुःख उत्पन्न हो जाते हैं और उसके गर्भ में भी भग-

पड जाती है। बालक का स्वभाव, सूरत, देह, अंग सब इन्हीं चार दिनों की सावधानी के अनुसार विशेष कर होते हैं। जैसे विचार, काम और सुख, दुःख से स्त्री रहेगी, वैसे ही गुण उसके बालक में आ कर पड़ेंगे। इसका लेखा तसवीर खींचनेवाले कॉच का सा है। जैसी परछाहीं उस पर पडती है, वैसी ही तसवीर खिंच जाती है। इसी भाँति स्त्री का हाल है। जो स्त्री इन दिनों में रोती है, उसके बालक के नेत्र विकृत होते हैं। जो अपने नख काटती है, उसकी सन्तान कुनखी होती है। तेल या उबटना लगाने से कोढ़ी, अञ्जन या काजल लगाने से अन्धी, दिन में सोने से बहुत सोनेवाली, दौड़ने से चचल, हँसने से दॉत और तालू, होठ आदि काले होते हैं। अति बोलने से प्रलापी, तीव्र शब्द सुनने से बधिर और स्नान से शुष्कवपु।

रजस्वला स्त्री को चाहिये कि, ठंड से बचे। स्नान न करे। ठंढी वायु में न रहे। जाडों में ठंढे पानी में हाथ पाव न दे, वरन पूरे गरम कपडे पहिने। आजकल की नाईं न करे कि, एक कम्मल ही में जाडे निकाल दे। इन्हीं कारणों से हमारे यहाँ शास्त्रों ने एकान्तवास रक्खा है। वह इस प्रकार से करना उचित है कि, रजदर्शन से तीन दिन तक स्त्री एकान्त और अँधेरे में कुशशय्या पर

बैठी वा लेटी रहे। किसी को न देखे। न कुछ काम करे और भोजन खीर का करे। मिट्टी वा तांबे के बर्तन में अथवा अपने दोनों हाथों के चुल्लू में पानी पीवे।

चौथे दिन जब स्नान करके शुद्ध हो, तब स्त्री निर्मल वस्त्र धारण करे। सुगन्धि लगावे। शृङ्गार करे। पति का दर्शन करे अथवा अपना ही पुत्र अपनी आरसी वा दर्पण में देखे अथवा किसी गुरुजन वा श्रेष्ठ, विद्वान, तेजस्वी, प्रतापी पुरुष का मुखावलोकन करे वा ध्यान धरे।

रजदर्शन से चौथे, छठवें, आठवें, दसवें, बारहवें और चौदहवें दिन के गर्भ में पुत्र और शेष दिनों में पुत्री होती है। रजदर्शन से सोलह दिन पर्यन्त सन्तान हो सकती है अर्थात् गर्भाधान हो सकता है। सत्रहवें दिन गर्भ नहीं रहता है और रजदर्शन से जितने दिन पीछे गर्भाधान किया जाता है, उतनी ही श्रेष्ठ सन्तान होती है। यहाँ तक कि, सोलहवें दिन की सन्तान अत्यन्त गुणवाली होती है। कारण यह है कि, दिन दिन रज अधिक शुद्ध होता चला जाता है। कहते हैं कि, सोलहवें दिन की सन्तान राजा केसे गुणवाली होसकती है।

पहिले चार दिनों में सहवास करने से गर्भ नहीं रहता है। उलटा और रोग हो जाता है। पति की आयु क्षीण होती है। स्त्री के रोग हो जाते हैं। गर्भ ठहरता

नहीं है क्योंकि जैसे नदी के प्रवाह में बीज नहीं जमता, वैसेही रजप्रवाह में गर्भ स्थिर नहीं रहता है। यदि रह भी जाता है तो प्रथम दिवस का तो होते ही मर जाता है; दूसरे और तीसरे दिवस का सौर में मर जाता है। इसी कारण इन चार दिनों में एकान्तवास की विधि रक्खी है कि, स्त्री को अपने पति का मुख तक न देखना चाहिये।

स्त्री जब चौथे दिन स्नान करके शुद्ध हो और पति भी उसका उसके पास हो अर्थात् परदेश आदि न गया हो और स्त्री पुरुष दोनों की इच्छा सन्तानोत्पत्ति की हो तो उस दिन की रात्रि को इच्छापूर्वक गर्भाधान शास्त्रोक्त विधि से करें। इसप्रकार कि, एक महीने पूर्व से दोनों ब्रह्मचर्य से रहें और यह तो बहुत ही श्रेष्ठ है, जो पूर्व सन्तानोत्पत्ति से इस गर्भाधान तक दोनों ने कभी प्रसंग न किया होवे। जैसा कि, न करना चाहिये। जब ऐसी इच्छा हो तो पुरुष संध्या को घी में भुने चॉवल और दूध और घी में बनी हुई खीर का भोजन करे और स्त्री उड़द का भोजन करे। यदि सपत्नीक दोनों वस्तुओं का भोजन करें तो और भी अच्छा है। दोनों तैल * मर्दन करें। हल्दी,

* तैल-कफ और वायु के कोपको रोकता है। धातुओं को पुष्ट करता है। शरीर के रक्त को शुद्ध करता है। बल देता है। उबटना वात को हरता है।

गों का चून, केसर इत्यादि से उबटना करें। कान में तेल डालें। नमक का भोजन न करें। केसरिया बागा पहिनें। वह दिन, जिसकी रात्रि को ऐसा करने की इच्छा होवे, अष्टमी, अमावास्या वा पौर्णमासी न हों। एकादशी व त्रयोदशी भी न हो। रजदर्शन से युग्म दिवस हों। समय रात्रि का तीसरा प्रहर हो क्योंकि शास्त्र में इसीका विधान है। अन्य समय गर्भाधान के लिये यथासाध्य वर्जित किये हैं। उस रात्रि को घटा वा मेघ भी न हों। आकाश निर्मल और स्वच्छ हो। स्त्री पुरुष दोनों में परस्पर प्रेम हो और दोनों का चित्त भी प्रसन्न हो। कोई रोग देह में न हो।

शयनभवन चित्र इत्यादि से सुसज्जित हो। उस दिन अच्छे अच्छे पुरुषों का ध्यान रहा हो। विचार भी अच्छे अच्छे रहे हों। कुविचारों ने मन में प्रवेश न किया हो और गर्भाधान के समय भी अच्छे अच्छे पुरुषों का

है और मर्दों को शुद्ध करना है। हल्दी त्वचा व रोगों को दूर करती है। इसी कारण विवाह में यह रीति अब तक प्रचलित है। यह व्यवहार शास्त्रोक्त है क्योंकि विवाह में जो रीति पलंगाचार की है, वह गर्भाधान का अपभ्रंश है क्योंकि रात्रि में इसी कारण पाणिग्रहण होता है (दिन में कभी नहीं) क्योंकि पहिले यथाविधि पुरुष व ब्रह्मचर्य कर के रात्रि में गर्भाधान करते थे। जिनको अब हल्दी तेल चढ़ते हैं और विवाह करते हैं और पलंगाचार मान रक्खा है।

ध्यान और विचार हो । जिस व्यक्तिविशेष की आकृति और स्वभाव की सन्तान उत्पन्न करनी हो, उसीका ध्यान विशेष रहना उचित है । जब तक प्रसव न होले तब तक बराबर उसीका ध्यान करती रहे और जैसे गुणवाली सन्तान उत्पन्न होने की भावना हो, वैसे ही विचार बराबर करती रहे । कभी कोई दूसरा विचार और भाँति का वा विपरीत न करे क्योंकि सन्तान का देहमात्र माता ही के रुधिर अर्थात् रज से बन कर पोषण होता है । पिता का तो केवल वीर्यमात्र ही होता है ।

तू देखती है कि, जो वस्तु जिस क्षेत्र वा पृथ्वी में उत्पन्न होती है, उसमें वैसे गुण, स्वभाव वा रूप रंग अन्य पृथ्वी में बोने से नहीं रहते । दो एक बेर के हेर फेर से सब बातें निपट बदल जाती हैं । मैंने देखा है कि, लखनऊ के खरबूजों का बीज मैंने अपने यहाँ बोया । पहली बेर तो रूप रंग कुछ वैसा ही रहा, कुछ ही अन्तर पड़ा; पर गुण अर्थात् उनका वह स्वाद सबमें न रहा । कोई कोई तो मीठे, बरन सब फीके हो गये । दूसरी बेर जो इनके बीज बोये तो बहुत ही अन्तर हो गया और तीसरी बेर में तो निपट बदल गया । कुछ भी बात लखनऊ की सी न रही । कारण यया था कि, उस बीज में अब अपना गुण कुछ नहीं रहा था । पृथ्वी का

गुण आ गया था। सोई बात श्री पुरुष की है कि, माता का गर्भ पृथ्वी और पिता का वीर्य बीज है, सन्तान फल है। जैसे अच्छे बीज और पृथ्वी में अच्छा फल और बुरे में बुरा लगता है, वैसे ही माता, पिता के अनुसार सन्तान होती है।

माता के गर्भ में सन्तान का देह नौ महीने तक माता ही के रज से बनता रहता है और मांस, रुधिर, मेदा (चर्बी), मज्जा (हड्डी की मींग), हृदय (दिल), यकृत् (जिगर), प्लीहा (तिल्ली), गुर्दा इत्यादि निपट माता के रज से बनते हैं। इसी कारण यह मातृज कहाते हैं। पर हाँ, सन्तान के ये अंग अर्थात् दाढ़ी, मूँछ, रोंगटे, हड्डी, लोहू बहनेवाली नाड़ी, सन्धिबन्धन नाड़ी, रसवाहिनी नाड़ी और शुक्र पिता के वीर्य अनुसार बनते हैं, इसी कारण ये पितृज * कहाते हैं, क्योंकि हृदय इत्यादि माता ही के रज से बनता है। इसीलिये माता को अपना रज इस प्रकार रखना चाहिये कि, उसमें वैसे ही गुण आ जावें, जैसे वह सन्तान में चाहती है। यह माता के आहार तथा विचार ही से उसमें उत्पन्न हो सक्ते हैं। इस प्रकार से कि, माता अपने चित्त में न्याय, क्षमा, सत्य, ज्ञान, बुद्धि, ईश्वरोपासना, देवता व सत्पुरुषों का ध्यान, [illegible]-

* सुश्रुत के शारीरक अध्याय ३ को देखो—

धर्म, पतिप्रेम, अपने में रति, धर्मोपदेश श्रवण, ईश्वर में विश्वास, श्रद्धा और ईश्वर का भय रक्खे। जो सतोगुण वृत्ति है तो सन्तान में शील, शौच, स्मृति, दान, शूरता, उत्साह, मृदुभाव, गम्भीरता आदि गुण हो सके हैं।

यदि दुःख मानना, अधिक डोलना, अधैर्य, अहंकार, मिथ्या, निर्दयता, दम्भ, मान इत्यादि वृत्तियाँ रक्खे, जो रजोगुण की हैं तो सन्तान में द्वेष, मात्सर्य, क्रोध, तीक्ष्णता इत्यादि स्वभाव होंगे। यदि अधर्म, अन्याय, अज्ञान, अधिक सोना, ठाली रहना, नास्तिकता इत्यादि तमोगुण वृत्तियाँ रहेंगी तो सन्तान में भय, तन्द्रा इत्यादि गुण उत्पन्न होंगे।

इसी प्रकार माता के आलस्य से कुरूप, हर्ष से सुन्दर, सुशील, शोक से कादर, टेढी-मेढी और भोंडी वस्तु देखने से कुरूप और अगहीन सन्तान होती है। गर्भावस्था में रति की इच्छा करने से सन्तान कामी होती है।

पित्त बढानेवाली वस्तु सेवन करने से गजा और कफकारी वस्तु सेवन करने से पीतवर्ण सन्तान होती है।

गर्भवती यदि रात्रि में देर तक सोती रहे तो बालक की छाती तंग हो जाती है और बालक क्षुधा होता है।

यह तो विचार का प्रभाव रहा। इसी प्रकार आहार का भी होता है कि, अधिक आहार करने से सन्तान

कुबड़ी, अन्धी, गूँगी और ठिंगनी होती है। अधिक चरपरी वस्तु खाने से सन्तान बलहीन और कड़वी वस्तु खाने से बहुत ही कृशतन उत्पन्न होती है।

जो चाहे कि, सन्तान सुरूप उत्पन्न हो तो गर्भाधान से ले कर प्रसव काल तक सदा प्रसन्नचित्त और शृङ्गार-मयी रहे। सुन्दर वस्त्र धारण करे। देवता, ब्राह्मण और गुरु की भक्ति करे। स्वस्ति और मंगल करे। मलीन न रहे।

विकृत और हीन अंग के दर्श, स्पर्श से, भयोत्पादक बात के सुनने अथवा भयानक दृश्य वा चित्र देखने से, दुर्गंध सूँघने से, दूर की वस्तु देखने से, रातदिन कलह (लड़ाई) करने से, चित्त में दुःख मानने से अथवा रोने पीटने इत्यादि से सन्तान कुरूप होती है।

कहावत चली आती है कि, सन्तान ननसाल के या ददसाल के अनुहार होती है अर्थात् कै तो पिता के कुटुम्ब में से किसी की आकृति सन्तान में होगी वा माता के पीहरवालों में से किसी की आकृति होगी। इसका यही कारण है कि, माता के चित्त में अधिक प्रेम वा अन्य किसी कारण से, जिसकी आकृति का ध्यान रहेगा, वही आकृति सन्तान में आ जावेगी।

पर अब यह बात नहीं रही कि, ननसाल वा दद-साल में ही से किसी की अनुहार सन्तान में हो क्योंकि

स्त्रियों के चित्त अब वैसे स्थिर नहीं हैं कि, जो ध्यान अडिग बना रहे। इस ध्यान का ऐसा प्रभाव है कि पति के शत्रुओं तक की आकृति सन्तान में आ गई है, इस कारण कि, माता को इस शत्रु का ध्यान बँध गया था।

इस वृत्ति ने स्त्रियों के अन्दर और पशु आकृति तक की सन्तान उत्पन्न करदी हैं। इसके तुझे अब कुछ दृष्टान्त भी सुनाती हूं, जिससे तेरे चित्त पर यह विषय भली भांति जम जाने क्योंकि यह बहुत ही सूक्ष्म विषय है।

१–एक उच्चकुल की स्त्री जब गर्भिणी थी, रसभरी खाने को उसका बहुत ही मन चला, पर रसभरी मोल न मिली; परन्तु पास ही में एक पुरुष के यहां रसभरी की वाड़ी थी, जिसमें कुछ पकी रसभरी लग भी रही थीं। इस स्त्री के मन में रसभरी खाने की ऐसी तीव्र इच्छा हुई कि, न रहा गया। दिन भर यह सोचती रही कि, कब रात्रि हो और मैं चुरा कर खा आऊं। अन्त को रात्रि में चोरी से जा कर और वाड़ी में से तोड़ कर कुछ रसभरी वह खा आई और इसका ऐसा चसका पड़ गया कि, दिन भर यही विचार रहता कि, कब रात्रि हो और मुझको चुरा कर रसभरी खाने का अवसर मिले। जब रात्रि होती तब नित्त जा कर चोरी से रसभरी वाड़ी में से तोड़ तोड़ कर खा-आया करती थी।

एक दिन पकड़ी गई तो उस समय इसको अपार ही भय और लज्जा हुई । यहाँ तक कि, गर्भ में बालक भी धड़क उठा ।

जब वह बालक जन्म ले बड़ा हुआ, उसकी भी टेव चोरी करने की पड़ गई । कभी कभी जब वह पकड़ जाता था, तब बहुधा बहुत पछताता परन्तु चोरी करना नहीं छोड़ता था ।

३—एक स्त्री के दो लड़कियाँ थीं । बड़ी लड़की महा कुटिल, दगाबिन और दुष्टा थी, पर छोटी भोली, सुशील और हँसमुख थी । बड़ी लड़की अपनी छोटी बहिन से बिना कारण भी लड़ती । ईर्षा मानती, दिक करती, नोच लेती, काट खाती, आँख में धूल डाल देती, अड़ोसी-पड़ोसियों के बालकों को भी छेड़ती । पासवाले इसकी दुष्टता से तंग थे । जब इसका कारण खोजा गया तब जान पड़ा कि, जब बड़ी लड़की अपनी माँ के पेट में थी, तब इसकी माँ को अपनी सौत से, जो उसके पति ने दूसरी स्त्री कर रखली थी, बहुत ही ईर्षा और डाह थी । यहाँ तक कि एक दिन तो इसने अपनी सौत को जान से मार डालना चाहा, पर वह मिली नहीं । यही कारण था कि, इस लड़की में ईर्षा इत्यादि ऐसे ऐसे अवगुण थे । छोटी लड़की के गर्भ समय वह सपत्नी

नहीं रही थी । कहीं को चली गई थी । इसकी माँ का चित्त प्रसन्न और शान्त था । इसी कारण छोटी लड़की में ऐसे गुण थे ।

३–एक स्त्री पढ़ी-लिखी थी । उसके जितनी सन्तान हुई, वे सब महाकुरूप । कोई उनमें से सुन्दर व सुरूप नहीं थी । एक बेर ऐसा हुआ कि, जब यह स्त्री गर्भ से थी, एक व्योपारी कुछ वस्तु और पुस्तकें बेंचता हुआ आया । इस स्त्री ने उसकी पुस्तकें देख कर एक कविता की पुस्तक, जिसमें उस पुस्तक की रचयिता स्त्री का चित्रपट भी था, जो अतिसुन्दरता की खान थी, पसन्द की और मोल लेना चाहा । व्योपारी ने दो रुपये मोल माँगा और इस स्त्री के पास भी उस समय दो ही रुपये थे, जिसमें घर का भी खर्च चलाना था । इसने सोचा कि, जो पुस्तक मोल लेती हूँ तो रोटियों का दुःख रहेगा । यह सोच उस समय मोल न ली, पर वह पुस्तक उसके चित्त पर ऐसी चढ़ गई थी कि, रात्रि भर इसको नींद न आई । ज्यों त्यों कर के रात्रि काटी । भोर होते ही व्योपारी को ढूँढ़ कर उससे पुस्तक मोल ले ही ली और बड़े चाव तथा प्रेम से उसको नित्त पढ़ती रही । वह घंटों तक उस चित्रपट को निहारा करती थी ।

इसका गुण और प्रभाव गर्भ में यह हुआ कि, इसकी

पुत्री जो इस गर्भ में से उत्पन्न हुई, इस ग्रन्थकर्त्ता की थे निरन्तर अनुराग हुई। बड़ी सुन्दर, साक्षात् मोहनी, लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्ति थी।

इसका एक प्रसिद्ध दृष्टान्त तुमको प्रह्लाद का और सुनाती हूँ। उसे सुन तू जान सकेगी कि, दैत्यकुल में ऐसा ईश्वरभक्त क्योंकर उत्पन्न हुआ। इसका भी कारण यही था कि, प्रह्लाद की माता के विचार जब प्रह्लाद गर्भ में थे, ईश्वरभक्ति में अधिकतर रहे थे। उन्हीं के प्रभाव से प्रह्लाद में ऐसे गुण भक्ति के आ गये थे। इसका वृत्तान्त पुराण में यों लिखा है कि, प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु दैत्यासुर संग्राम में जब देवताओं से हार गये तब तपस्या वन में चले गये, रनिवास इत्यादि का कुछ प्रबन्ध न कर गये।

प्रह्लाद की माता, जिसका नाम कयाधु था, इस समय आधान में थी और प्रह्लाद उसके गर्भ में थे। इन्द्र यह सोच कर कयाधु को रथ में चढ़ा कर अपने संग ले चले कि, उसकी सन्तान को उत्पन्न होने पर वध कर डालेंगे, जिससे दैत्यकुल का अन्त और नाश हो जावे क्योंकि अन्य कोई रानी गर्भवती न थी, यही केवल आधान से थी। कयाधु चिल्लाने पुकारने लगी। इसको सुन नारदजी आप और राजा इन्द्र से कयाधु के ले जाने का वृत्तान्त पूछ कर बोले कि, इसकी सन्तान दानवकुल हानि की न

होगी, वरन बड़ी भक्त और धार्मिक होगी, जिससे कुल का उद्धार होगा। आप इसको छोड़ दीजिये। राजा इन्द्र ने नारदजी के वचन में विश्वास कर कयाधु को छोड़ दिया और नारदजी कयाधु को अपने आश्रम में ले गये और नित्त साँझ-सकारे धर्मोपदेश करते रहे। कयाधु के मन में इन उपदेशों का गुण ऐसा हुआ कि, गर्भ में पहुँच कर प्रह्लाद को ऐसा भक्त बना दिया कि, पिता के इतने कष्ट देने पर भी उसने ईश्वरभक्ति से मुख न मोड़ा।

सो बहिन! गर्भ के दिनों में बहुत ही आचार, विचार से स्त्री को रहना चाहिये, जिससे कि, सन्तान अच्छी और श्रेष्ठ उत्पन्न हो।

जिस स्त्री के गर्भ रह जाता है, उसके पहिचानने के चिह्न यह है कि, किसी का तो उसी रात्रि के दूसरे दिन भोर को उठते ही जी मिचलाता है, मुख का रंग और ही हो जाता है, देह भारी भारी सी जान पड़ती है, स्त्रीधर्म फिर नहीं होता है, भोजन में अरुचि हो जाती है, पुरुष के संग से मन हट जाता है, शृंगार करने को मन नहीं चलता, उबकाई व उलटी आने लगती है, पेट बढ़ने लगता है और देह में आलस्य सा हर समय भरा रहता है। जी लेटने को किया करता है, नीचे के शरीर में सुस्ती

अधिक रहती है, मस्तक में कभी कभी दर्द हो जाता है। खट्टी व सोंधी वस्तु खाने को जी बहुत चलता है, दस्त खुल के नहीं होता, नींद अच्छी नहीं आती, स्तनों के मुख छोटे हो जाते हैं और उन पर श्यामता छाती जाती है। इसके पहिचानने का सहज उपाय यह भी है कि, थोड़े शहद को पानी में मिला कर स्त्री पी लेवे। जो थोड़ी देर पीछे टूँडी में कुछ दर्द सा जान पड़े तो गर्भ अवश्य ही है, यदि दर्द नहीं होवे तो गर्भ कदापि नहीं है। यह पहिचान बहुत ही ठीक है। और लक्षणों से तो भ्रम भी हो जाता है, परन्तु इससे निश्चय हो जाता है।

गर्भ में पुत्र, पुत्री के पहिचानने के ये चिह्न हैं। स्त्री के पेट में बालक पहिले ही महीने में गोल जान पड़ता है। दाहिनी आँख कुछ बड़ी सी दीखती है। दाहिनी जाँघ मोटी और भारी जान पड़ती है, कुछ दर्द भी होता है। पहिले दाहिने स्तन में दूध आता है। मुख का रंग अच्छा रहता है। स्वप्न में पुलिङ्ग फूल, फल दीखते हैं। यदि गर्भवती के दूध में जूँआ या चींटी डाल कर देखे कि, वे जीती हैं और चलती हैं तो अवश्य ही पुत्र है। यदि मर जावे तो पुत्री है।

पुत्री होने के ये भी लक्षण होते हैं। स्त्री का मस्तक भारी रहता है। स्तनों का दूध पतला रहता है। मुख

का रंग पीला होता है । चलने में दाहिने पैर को उठाती है और दाहिने हाथ को टेक कर उठती है ।

पर जिस स्त्री का पेट दोनों कोखों को नीचा कर के बीच में ऊँचा होवे और कुछ लक्षण पुत्र के और कुछ पुत्री के जान पड़ें तो सन्तान नपुंसक होगी ।

जिसका पेट बीच में नीचा और दोनों ओर ऊँचा हो अर्थात् मशक के समान हो तो दो बालक उत्पन्न होंगे।

अब तुझको यह भी बताती हूँ कि, गर्भ में किस प्रकार का बालक है अर्थात् अच्छा वा बुरा। उसकी पहिचान यह है कि, यदि गर्भवती स्त्री को राजा के दर्शन की इच्छा हो तो महाभाग्यवान् और धनवान् सन्तान होगी। जो रेशम, टसर तथा भूषण धारण करने की इच्छा हो तो भूषणस्नेही और सुन्दर सन्तान होगी । यदि मुनियों के आश्रम वा देवमन्दिरों में दर्शननिमित्त इच्छा होती है तो शान्तस्वभाव और धर्मात्मा सन्तान होगी।

साँप, सिंह आदि पशुओं के देखने की इच्छा से हिंसक सन्तान होगी । इनमें तो कुछ कुछ सन्देह भी रह जाता है, परन्तु पाँचवें महीने में जो गर्भवती की इच्छा होती है, उससे अच्छी बुरी सन्तान ठीक प्रकारसे ज्ञात होजाती है क्योंकि सन्तान में इसी पाँचवें महीने में जीव अर्थात् आत्मा पड़ता है । पहिले से तो केवल देह ही बनता है

और घट्ता रहता है, जीव नहीं होता । इसी कारण इस इच्छा को अवश्य पूरी करनी चाहिये और यही सोच कर शास्त्र में पुंसवन संस्कार रक्खा गया है और उसी के अनुसार अब सातवें महीने में गर्भवती की साध या नौक या फेरई होती है ।

शास्त्रोक्त रीति तो की जाती है, पर ठीक प्रकार और प्रयोजन से नहीं, जैसी कि विधि है । इसको दौहृद (दोहद) कहते हैं अर्थात् दो हृदय की इच्छा । एक बालक की, दूसरी माता की । ऐसा लेख है कि, गर्भवती की इस समय की इच्छा यदि पूरी न की जावे तो संतान लँगडी, लूली, बहिरी, गूँगी इत्यादि हो जाती हैं । इस कारण भोजन वस्त्र व अन्य वस्तु जो गर्भवती अपनी इच्छा से माँगे, वह उसको अवश्यमेव देनी चाहिये और इसी कारण अब इस रीति का नाम साध हो गया है कि, गर्भवती के मन की साध पूरी की जावे ।

अब तुझको यह भी बताये देती हूँ कि, बालक गर्भ में कैसे रहता और बनता है और कब और कैसे उत्पन्न होता है । दो दो, तीन तीन बालक एक ही गर्भ में कैसे हो जाते हैं । इनको वहाँ क्योंकर भोजन पहुँचता है और कैसे पलते पोषते हैं ।

हे बहिन ! ईश्वर ने अपने अनेक चमत्कारी कार्यों

में इस गर्भ को अति ही अद्भुत रक्खा है । ईश्वर के अतिरिक्त ऐसे असहाय प्राणी को गर्भ में कौन भोजन पहुँचा कर पाल सक्ता है ? यह उसी की शक्ति है कि, उस परम पिता ने माता का रज वा रुधिर, जो प्रतिमास गर्भ रहने से पूर्व में बह कर निकल जाता था, इस गर्भ के बालक का भोजन बना दिया है । उसीसे इसका देह पाँच महीने तक बनता और पाँचवें महीने उपरान्त जब जीव पड जाता है तब उसीसे पलता रहता है ।

गर्भाधान से पूरे दो सौ पचहत्तर दिन में गर्भ में से बालक उत्पन्न होता है । जब से रजदर्शन हो कर बन्द हो गया हो, उसके पन्द्रह दिन पूर्व से इसके दो सौ पचहत्तर दिन का लेखा लगाया जाता है, जो नौ महीने और कुछ दिन होते हैं । जब से बालक गर्भ म फडके वा चले, उससे उन्नीस-बाईस सप्ताह में बालक उत्पन्न होता है ।

पैंतीस दिन से कुछ न्यूनाधिक में बालक का पिण्ड गर्भ में बनता है; जिसका वर्णन आगे बताऊँगी । जितने दिन में बनता है, उससे दूने (७०) दिन में चलने-फिरने लगता है और उसी से छ गुने (२१०) दिन में उत्पन्न होता है । गर्भाधान से चार महीने तक गर्भाशय का मुख निपट बन्द रहता है । जैसे जैसे गर्भ बढ़ता

ाता है, वैसे ही वैसे गर्भाशय भी बढ़ता जाता है और
ाण्डाकार हो कर नीचे को कुन्द धसकता आता है ।

छठे महीने गर्भाशय की नार बहुत ही छोटी, मान
पट्टी सी हो फैल जाती है । आठवें महीने में निपट चपटी
। जाती है । नवें महीने में और कभी कभी सातवें
हीने में गर्भाशय का मुख खुलने लगता है ।

जब बालक उत्पन्न होने को होता है, तभी यह मुख
ुलता है । यह तो मैंने तुझको बता दिया कि, गर्भ
वल तभी रहता है, जब रजदर्शन होता है । परन्तु
भी किसी स्त्री को बिना रजदर्शन भी गर्भाधान हो
ाता है और किसी किसी स्त्री को गर्भाधान होता ही
ीं है । उसकी दो दशाएं हैं । प्रथम तो यह कि, यह
ो रजस्वला ही नहीं होती होगी, पुष्पवन्ध्या होगी;
ूर स्त्री पुरुषों के अगों का दोष हो । वह इस प्रकार है,
(१) स्त्री हिजड़ी हो, (२) स्त्री मोटी अधिक हो,
३) किसी रोगवश स्त्रीधर्म से स्त्री न होती हो या कम
ोती हो, (४) धरनि में सूजन हो, (५) प्रदर रोग हो,
(६) धरनि में फोड़ा व रसौली हो, (७) पैरजारी
रहना अर्थात् स्त्रीधर्म बराबर रहना, (८) धरनि का
सूख वा ढीला पड़ जाना ।

जो इन दोषों में से किसी के कारण गर्भ न रहता

होने तो यह औषध करे, अवश्य रहेगा। (१) स्त्रीधर्म होने के दिन से सात दिन तक दो दो माशे हाथीदांत का चूर्ण बराबर की मिश्री मिलाकर खाय। (२) काले धतूरे के फूल शहद और घी में मिलाकर खाय। (३) एक समुद्रफल को दही में रख कर निगल जाय। (४) हथेली भर अजवाइन फाँक जाय। (५) अरण्ड के बीज चाब ले। (६) दुद्धी रुखडी को छाया में सुखाकर तीन दिन तक एक एक तोले दूध के संग फाँकले। (७) खरेटी, गंगेरन की छाल, महुआ, बड के अंकुर, नाग केसर; इन सब को बराबर एक एक टंक ले, महीन पीस, पाँच टक शहद में मिला, गौ के दूध के संग, पन्द्रह दिन तक पीने तो बाँझ के भी पुत्र हो। (८) असगन्ध के काढ़े में गौ का दूध और घी मिलाकर स्त्रीधर्म के दिनों में भोर ही पाँच दिन तक पीवे। (९) बिजौरे के बीज को गौ के दूध में पकावे। उसीकी बराबर नागकेसर और गौ का घी डाल कर मिश्री मिलाय स्त्रीधर्म के दिनों में सात दिन खाय तो अवश्य ही गर्भ रहे। (१०) अरण्डी और बिजौरे के बीज एक एक माशे गौ के घी में पीस दूध के संग स्त्री धर्म के दिनों में तीन दिन तक पीवे। (११) पीपल, सोंठि, मिर्च, नागकेसर इनको महीन पीस ऋतुकाल में स्त्री तीन दिन घी के संग पीवे। (१२) धेलाभर नाग

सर सात दिन तक गौ के दूध के संग पीवे। (१३)
वर्च, पीपल, सोंठ, नागकेसर, दोनों कटाई बराबर
कर गौ के दूध में पीवे तो तत्काल गर्भ रहे। तुमको
हुत से नियम तो गर्भवती के पहिले बता चुकी हूँ, थोड़े
और भी बताती हूँ कि, यदि स्त्री इनके अनुसार वर्ते
तो बहुत लाभ हो।

यदि स्त्री का मन किसी वस्तु पर चले और वह न
मिल सके तो स्त्री को चाहियें कि एक गिलास ठंढा पानी
पी लेवे। और जब उसकी इच्छा किसी ऐसी वस्तु पर हो
हो तो उसको चाहिये कि, अपने मन को मारे जिससे गर्भमें
जो सन्तान है, उसमें भी मन मारने के गुण उत्पन्न हो जावें।
गर्भाधान से पहिले महीने में वीर्य जमता है। दूसरे में
किया चढ़ती है। तीसरे में शरीर बनता है। चौथे में
समस्त शरीर बन चुकता है। पाँचवें महीने में हृदय बनता
है और जीव पड़ता है। छठे और सातवें महीने में
शरीर पुष्ट हो कर बालक उत्पन्न हो जाता है। जो बालक
सातवें महीने में पुष्ट नहीं हो लेता, वह आठवें या
नवें महीने में उत्पन्न होता है। कभी कभी निर्बल
बालक भी सातवें महीने में उत्पन्न हो जाते हैं, परन्तु सब
जीते नहीं रहते। जो बालक पुष्ट हो कर उत्पन्न होते हैं,
वे तो जीते रहते हैं, पर आठवें महीने का उत्पन्न हुआ

बालक कदाचित् ही कोई जीता है, वरन सब ही हो जाते हैं। कारण यह है कि, सातवें महीने में जो बालक ने उत्पन्न होने की चेष्टा की थी और वह निष्फल गई अर्थात् गर्भ से बाहर न हो सका और आठवें महीने में फिर उत्पन्न होने की चेष्टा की तो पहिली चेष्टा उसको निर्बल कर डालती है। इसी से वह मर जाता है, परन्तु जो बालक नवें महीने में उत्पन्न होता है, उसके दो कारण होते हैं। एक तो शरीर पूर्ण पुष्ट हो जाता है, दूसरे सातवें महीने की चेष्टा के पीछे आठवें महीने में उसको विश्राम मिल जाता है।

बालक माँ के पेट में उकरू बैठा हुआ हाथों को पावों से मिलाये हुए, दोनों घुटनों को छाती और पेट से लगाये हुए और घुटनों के बीच में माथा टेके (यदि पुत्री है तो माँ की पीठ की ओर मुख होता है और जो पुत्र है तो माँ के पेट की ओर मुख होता है।) अपने हाथों की उँगलियों से आँख, कान, नाक, मुख सब मूँदे हुए रहता है। इस मूँदने का कारण यह है कि, जिन सात झिल्लियों के भीतर गर्भाशय में बालक रहता है, उनमें एक प्रकार का ऐसा पानी होता है कि, यदि आँख से छू जावे तो अन्धा, कान में चला जावे तो बहिरा, मुख में चला जावे तो गूँगा, पेट में चला जावे तो मुर्दा और

मस्तक में चला आवे तो बावला बालक हो जाता है। इसीलिये ईश्वर ने बालक को अपने मन स्थिर मूँद रखने की शक्ति दी है।

किसी किसी स्त्री के दो या तीन अथवा चार पाँच बालक एक उत्पन्न हो जाते हैं। मैंने अपनी एक सहेली को देखा कि उसके तीन बेर बराबर दो दो बालक उत्पन्न हुए। ऐसे बालक जोड़ले वा युग्म अथवा यमज कहाते हैं। कारण यह है कि, गर्भाधान के समय वायु के कोप से पुरुष का वीर्य जितने खण्ड हो कर स्त्री के रज से मिलता है, उतनी ही सन्तान गर्भ में स्थिति पाती है। यहाँ तक कि किसी किसी के पाँच पाँच वा सात सात बालक तक हो गये हैं।

गर्भाधान समाप्त।

गर्भरक्षा।

— ० —

यहाँ तक तो मैंने तुझको गर्भाधान के विषय में बताया। अब तुझको गर्भरक्षा के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ। स्त्री के जब गर्भ रह जाने, तब उसको कौन कौन से नियम पालने योग्य हैं और जो उन नियमों को न पाले तो उसको क्या हानि हो सक्ती है।

स्त्री जब गर्भवती हो तो उसको चाहिये कि इस से रहे, जिससे भले प्रकार गर्भ की रक्षा हो सके। उस को चाहिये कि, कभी दौड़ कर न चले। न कहीं से धम्म कर उतरे या चढ़े। गाड़ी या रथ में बैठ कर कहीं को न जावे और दूर तो कभी न जाय। अपने किसी प्यारे के मरने का समाचार न सुने। कोई भयानक रूप का दृश्य न देखे। इससे पेट का बालक कभी कभी मर जाता है। न कोई बात डर की देखे वा सुने और इसीसे सूने घर में न रहे। मरघट में न जावे। कुरूप स्त्री के पास न बैठे। कोई चोट अपने पेट में न लगने दे। इससे भी गर्भ नष्ट हो जाता है। जुल्लाब न लेवे। फ़स्त न खुलावे, जोंक न लगवावे और न वमन करे।

गर्भिणी को कूदना-फाँदना कभी न चाहिये। इनकी धमक लगने से बहुत ही हानि होती है। गर्भ गिर पड़ता है वा उलटा-सुलटा हो जाता है या आड़ा पड़ जाता है। फिर स्त्री दर्द होने से कभी कभी मर भी जाती है। किसी दूसरी स्त्री के बालक पैदा होता हुआ भी न देखे। भय, लज्जा और क्रोध से भी बची रहे। इनसे भी गर्भ गिर पड़ता है। जल में न तैरे। पत्थर, ऊखली वा मूसल पर न बैठे। वृक्ष के नीचे बहुत न ठहरे। फिसलने के स्थान में न सोवे। न बहुत सोवे। न बहुत जगे। कुआँ

वा दूर की वस्तु को टकटकी लगाकर न देखे। कोई वस्तु ऐसी न खावे, जिससे स्त्रीधर्म का रुधिर बह निकले। इससे बालक गर्भ ही में सूख जाता है। क्योंकि गर्भपोषण को रुधिर तो रहता ही नहीं है, जिससे बालक माँ के पेट में पलता है।

कोई वस्तु गरम वा तीखी, जैसे लाल मिर्च न खानी चाहिये। अजीर्ण में भोजन न करना चाहिये। जिमींकन्द का साग न खावे। (इससे बालक फटी सी देह का होता है) मास, मदिरा का सेवन न करे। उपवास न करे। सूखी और रूखी वस्तु जैसे चने अथवा वासी वा पीड़क जैसे गुड़, सड़ा बिगड़ा अन्न भोजन न करे। बहुत भी भोजन न करे; किन्तु रुचि अनुसार भोजन करे, पर वह हानिकारक न हो। विषम आसन वा उकरू न बैठे। पुरुष का सङ्ग न करे। मल, मूत्र के वेग को न रोके। मैले कपड़े न पहिने। बहुत चिल्ला कर न बोले। अपने

न खावे न पीवे । तोप वा विजली का शब्द न सुने । न दिन में बहुत सोवे और न रात्रि में बहुत जगे । सो कर जब उठे तो बहुत सावधानी से उठे । क्योंकि इससमय बालक का लौट जाना सम्भव है ।

स्त्री को चाहिये कि, गर्भ रहते ही उत्तम उत्तम काम करे। शरीर को शुद्ध रक्खे । स्वच्छ वस्त्र पहिरे । आसन तथा बिछौना कोमल और ऋतु के अनुसार रक्खे । रहने का स्थान गर्मी और वर्षा में पवनीक, जाड़ों में गरम और सुसज्जित रक्खे ।

भोजन कोमल, मधुर, सलोना, मीठा और चिकना होना चाहिये । सेब और आँवलों का मुरब्बा, गुलकन्द, हरी गिलोय, पान, इलायची कभी कभी किंतु बहुधा खा लिया करे ।

चन्द्र वा सूर्यग्रहण को कभी न देखे, वरन अपने ऊपर परछाँहीं तक ग्रहण की न पड़ने दे । ग्रहण पड़ने से एक पहर पूर्व किसी कोठरी में जा बैठे और जब तक उग्रहण न हो जावे वहाँ ही बैठी रहे और किसी काम में हाथ न लगावे । इस समय की असावधानी से बालक का देह अङ्गभङ्ग हो जाता है ।

गरमी में कपड़े ठढे और ढीले पहिने । जाड़ों में रुईदार वा ऊनी कपड़े पहिने । कपड़ा तंग वा कस कर न पहिने ।

भींगा वा गीला कपड़ा न पहिने और न लाल रंग का कपड़ा पहिने । किन्तु नीले रंग का पहिने और स्वच्छ वस्त्र पहिने । मैले, कुचैले न पहिने । चन्दन, इतर और सुगन्ध लगावे । प्रसन्न, भूषित और पवित्र रहे ।

गर्भिणी को चाहिये कि, अपनी समस्त बातों में क्रम का नियम रक्खे अर्थात् क्रम से खाय । क्रम से सोवे । क्रम से काम करे । क्रम से विश्राम करे । क्रम से मन बहलावे अर्थात् सर्वप्रकार क्रम से रहे । क्रम और नियम के बिगड़ने ही से हानि हो जाती है और जापे (प्रसव) में पीड़ा अधिक हो जाती है । गर्भस्राव और गर्भपात हो जाते हैं । पर क्रम और नियम के बनाये रखने से जापे में पीड़ा बिल्कुल नहीं होती सुख से प्रसव हो कर स्त्री निचट जाती है ।

गर्भवती को नित परमेश्वर, पति वा किसी अन्य विद्वान् और रूपवान् पुरुष वा स्त्री का ध्यान रखना चाहिये । बूढ़े, बड़े वा अपने सास, ससुर की टहल और सेवा करनी चाहिये । मैं तुझको पहिले बता चुकी हूँ कि, जो स्त्री नियम से इन दिनों में नहीं रहती, उसके गर्भ में हानि पड़ जाती है, सो अब तुझको बतलाती हूँ कि, इनके पालन न करने से किसी स्त्री का गर्भस्राव और किसी का गर्भपात हो जाता है ।

गर्भस्राव तो वह दशा है कि, गर्भाधान से चार महीने

के भीतर गर्भाशय से रुधिर बह निकले और गर्भ का बालक गिर पड़े और जो चार महीने के पीछे, पर सात महीने के पूर्व ऐसी दशा हो तो वह गर्भपात होता है।

इन दोनों रोगों से स्त्री को फूलने फलने की आशा आगे को टूट जाती है। गर्भस्राव चार महीने तक जब चाहें, तब हो सक्ता है अर्थात् जब कारण प्रस्तुत हो तभी, परन्तु तीसरे महीने में अधिक भय रहता है। जिस स्त्री को यह रोग एकबेर हो जाता है तो उसको बेर बेर हो जाने में कुछ अचम्भा नहीं है।

इनके लक्षण ये होते हैं। (१) शरीर में अचानक अशक्ति और मन में अकबकाई वा व्याकुलता सी जान पड़े। (२) जी डूबा सा जाता हो। (३) खड़े होने से मस्तक घूमे और चक्कर आवे। (४) पेट के ऊपर और दोनों जाँघों में रह रह कर वेदना हो तो जानना चाहिये कि, स्राव होनेवाला है। (५) यदि कुछ तरबूज का सा पानी भी झरने लगे तो निश्चय जानना चाहिये कि, स्राव होगा। (६) यदि कमर और जाँघों वा गुदा में अधिक पीड़ा ज्ञात हो, शूल सी चले और रुधिर वा रुधिर के चकत्ते बाहर आने लगें तो इस बात के जान लेने में पूरा विश्वास कर लेना चाहिये कि, गर्भाशय से गर्भ अलग हो गया है।

जब यह निश्चय हो जावे कि, स्राव के लक्षण उपस्थित हैं और आरम्भ ही की दशा है अर्थात् पीड़ा ही हो और रुधिर जब तक न निकला होवे, तब यह उपाय करे कि,

(१) मुलहठी, देवदार, दुद्धी इनके सग दूध को पीवे।
(२) शतावर और दुद्धी का काढ़ा पीवे।

जब इस भाँति रुक जावे तब पीछे गौ के दूध में गूलर के पके फल खिलावे अथवा कमर में कहरुवा, मोती अथवा याकूत बाँधे।

गर्भवती को ठंडे स्थान में लिटा दे। ठंढा पानी पिलावे। ठंढा भोजन करावे। ठंडे जल से प्रसव स्थान को धोवे अथवा धुनी हुई रुई की बत्तियाँ बना बना कर और पानी में भिगो भिगो कर डोरे से (इस प्रयोजन से कि, उनके फिर निकालने में सुविधा रहे और बत्ती भीतर चली न जावे अथवा रह न जावे) बाँध कर भीतर रक्खे।

जो रुधिर निकल ही आया होवे तो यह औषध करे कि, दूध के सग कसेरू वा सिंघाड़ा वा कमल औटा कर और ठंढा कर के पिलावे अथवा दो तीन चाँवल भर अफीम का सत किसी सूखी वस्तु में खिला देवे। जो रुधिर अधिक निकले तो घए की मिट्टी, मँजीठ, धाय के फूल, गेरू, राल, रसौत सब को पीस कर मीठा मिला कर चटावे।

पीवे। (२) दूध में अण्डी का तेल और मीठा मिला कर विरेचन दे।

नवें महीने में (सोंठ), मुलहठी, देवदारु, दूध में पका कर पीवे।

दशवें " (सोंठ), दुद्धी, दूध में पका कर पीवे।

कमल की जड, कमल की नाल और फूल तीन तीन माशे ले कर दूध में औटा कर पीवे अथवा महीने महीने में निम्न लिखित औषध दे।

मुलहठी, सालवृक्ष के बीज, देवदारु, लोनियासाग, काले तिल, राल, शतावरी, पीपल, कमल की जड, जवासा, गौरीसर, वायसुरई, दोनों कटेली, सिंघाडा, कसेरू, दाख, मिश्री सब औषध तीन तीन माशे लेवे और सात महीने तक सात सात दिन पीवे तो कभी गर्भस्राव वा पात न होगा।

गर्भवती को नित नित मलत्याग भले प्रकार होना चाहिये। जो न आता हो तो थोडा सा अण्डी का तेल, दूध में बूरा मिला कर पी लेवे। इस विरेचन से कुछ हानि की सम्भावना नहीं है।

भोर उठते ही जो भूख लगे तो थोड़ा सा हलका भोजन खा लेवे। जो जी मिचलावे वा उलटी आती हो तो थोड़ा सा दूध पी लेवे वा चिरायते का अर्क पीवे वा नींबू का

शरबत अथवा केवल नींबू के रस को ठंढे पानी में मिला कर पी लेवे। जो छाती में दर्द या जलन होती हो तो चिरायते का अर्क पीना चाहिये अथवा राई का पलस्तर दस या पन्द्रह मिनट तक कोड़ी से नीचे के स्थान पर लगा दे, और उलटा लगावे अर्थात् कपड़े पर जिस ओर पिसी राई लगाई हो, उसको ऊपर रक्खे। कपड़े की ओर से शरीर पर लगावे।

अपने चित्त को न चढ़ने दे। ढूँढी, पेड़, जाँघ वा पेट में कहीं दर्द जान पड़े तो थोड़ासा नारियल का तेल गरम कर के मल देना चाहिये। कोई कोई स्त्री गर्भ के दिनों में मिट्टी भून भून कर या टूटे हुए मिट्टी के बासनों के टुकड़े घर में से निकाल कर या कुम्हार के यहाँ से मँगा कर खाया करती हैं। सो यह बहुत ही बुरी बात है। इससे गर्भ को बहुत ही हानि पहुँचती है और इसी दशा से किसी किसी स्त्री को तो यह मिट्टी खाने की टेव सदा के लिये रह जाती है और देह पीली पड़ जाती है। देह में रुधिर कम उत्पन्न होने लगता है। कारण इसका यह है कि, इन दिनों में स्त्री के मुख का स्वाद फीका और सीठा रहता है। सोंधी वस्तु के खाने को मन चला करता है। सो फूहर स्त्रियां मिट्टी वा ठिकरों को एक दूसरे की देखादेखी खाने लगती हैं, सो न करना चाहिये। इसके पलटे वंशलोचन

वा जहरमोहरा खताई खावे। इन दोनों से गर्भ भी पुष्ट होता है और सोंधी वस्तु भी खाने में आ जाती है। गरी और मिश्री खाना इन दिनों में बहुत ही उपयोगी होता है और बालक की आँखों को बड़ी करता है

स्त्रियों को देखा है कि, किसी के गर्भ प्रतिवर्ष होत है, पर यह स्त्री और सन्तान दोनों को बहुत ही हानि कारक होता है। इसके कारण से स्त्री अतिदुर्बल हो जाते है और सन्तान भी रोगी होते हैं। वरन सन्तान बहुधा म जाती है। और स्त्री पर दो तीन सन्तान ही में बुढ़ापा छ जाता है। गाल बैठ जाते है। आँखें गड जाती है। नाि उठ आती है। स्तन ढरक पडते है और देह में सौ रो उत्पन्न हो जाते है। बीस वर्ष ही की आयु में दूनी आ जॅचने लगती है। इसका कारण यही है कि, स्त्री क देह एक जापे से पनपने नहीं पाती कि, दूसरा गर्भ र जाता है। देह का सब अंश गर्भ में चला जाता है और दे जर्जर हो जाती है। इसलिये स्त्री को चाहिये कि, जब त बालक दूध पीना न छोड दे, दूसरे गर्भ की आशा न करे

कमसे कम पाँच वर्ष पीछे दूसरा गर्भाधान हो चाहिये। इसलिये इतने समय तक स्त्री अपने पुरुप पास न जावे। सास, ननँद वा अन्य किसी बूढ़ी-बड़ी पास रात्रि को सोया करे।

यदि स्त्री को नीरोग और स्वास्थ्य रखना अभीष्ट हो तो पहलौठी का ही गर्भाधान सोलह वर्ष की आयु से पूर्व कदापि न करना चाहिये। क्योंकि इस आयु से पूर्व गर्भाशय अपनी पूर्ण दशा को प्राप्त नहीं हो चुकता है। जिन स्त्रियों को इस आयु से पूर्वही (जैसा कि बहुधा हो रहा है) गर्भाधान हो जाता है, वह और उसकी सन्तान निर्बल और रोगी ही रहती है और इसी कारण अब बालक बहुत छीज जाते हैं और स्त्रियां बांझ हो जाती हैं।

गर्भरक्षा समाप्त।

धात्रीशिक्षा।

अब मैं तुझको कुछ बातें धात्रीशिक्षा की बताना चाहती हूँ जिसको दाई का काम कहते हैं अर्थात् जो दाई न मिले तो प्रसूता को भले प्रकार जना लेवे। इसलिये प्रथम यह बताना चाहिये कि, दाई अथवा धाय को क्या जानना चाहिये और धाय कैसी होनी चाहिये। दाई के क्या क्या कार्य हैं और धाय कौन होती है। जो बालक को दूध पिलाती है, उसी को बहुधा धाय कहते हैं। अतएव माँ भी जबतक बालक को दूध पिलाती रहे तबतक धाय की संज्ञा में गिनी जाती हैं। इसलिये समस्त शिक्षा इस धात्रीशिक्षा में बतानी चाहिये।

सो सुन ! पहिले समय में तो बहुधा स्त्रियों को इस विषय की शिक्षा दीजाती थी । जैसे अंग्रेजों में अब भी। परन्तु हमारे इस देश में इस कामको परमाधम समझ कर, निकृष्ट श्रेणी के लिये छोड दिया है अर्थात् भंगिन, चमारिन, कोरिन, धोबिन इत्यादि ऐसी जाति की स्त्रियाँ ही इस दाई के काम को करती हैं । पर उनको कुछ शिक्षा नहीं दी जाती है। जो कुछ उन्होंने अपने अनुभव से अथवा किसी अन्य अनपढ़ दाई से सुन कर सीख लिया है उसीके अनुसार काम करती हैं । चाहे किसी प्रसूता को हानि हो, चाहे अपने भाग्य से वह भली भाँति निवट कर बच जाय । परन्तु इन दाइयों को शिक्षा कुछ नहीं। पहिले समय में वैद्यलोग इस क्रिया को कराते थे । जैसे अन्य चीडफाड़ को अपने सम्मुख कराते थे । परन्तु उन्हों ने इस कार्य को जब से नीचवर्ग की स्त्रियों को और चीडफाड के कार्य को साथियों * को दे दिया है तब से ये ही इस कार्य को करती हैं।

---

* साथिये वे हैं, जो अपने को हकीम कहते हैं। बालकों के छारुए निकालते हैं । फोड़े फुंसी की चिकित्सा करते हैं । आँख बनाते हैं । जाला तथा फूली काटते हैं । फस्द कराते हैं । कान का मैल निकालते हैं इत्यादि और अपने को एक प्रकार का कायस्थ बतलाते हैं, जो कानमें लिये और अन्य कामों से भी कहीं कहीं प्रसिद्ध हैं ।

इसी कारण जो कुछ मुझको स्वय अनुभव हुआ है और प्राचीन ग्रन्थों तथा डाक्टरी पुस्तकों में अवलोकन किया है, तुझको बताती हूँ कि, तू तो जानकार हो जावे। क्योंकि इससे स्त्री को सदैव काम पड़ता है। जो इस विषय को जानती होगी, वह उन रोगों और दु:खों मे तो बची रहेगी, जो मूर्ख दाई या सौर में असावधानी के होने से स्त्री को हो जाते हैं और फिर जन्म भर दु:ख देते रहते हैं। यदि प्रसूता अपने हाथ पाँव से कुशल हो कर आप से उठ बैठे तो उसका नया जन्म जानिये। नहीं तो अनेक रोग, प्रसूत, लुन वा शरीर (योनि) का बाहर निकल कर बढ़ आना आदि हो जाते हैं। यह तो मैं बता चुकी हूँ कि, गर्भ से पीछे कितने दिन में बालक उत्पन्न होता है, इसलिये जब देखे कि, दिन पूरे हो गये हैं तब किसी चतुर दाई को बुलावे। जो न मिल सके तो आप ही इस प्रकार काम कर ले। प्रथम सौर के लिये घर अच्छा ठीक निश्चय करे, जिसमें बास न आती हो। सील भी न हो। किसी मोरी वा पाखाने के पास न हो। जैसी कि, इस देश में रीति है कि, घर भर में सबसे बुरा स्थान इस प्रयोजन निमित्त लिया जाता है। यदि जाड़े हों तो उस घर में कोइलों की निर्धूम आग दहकती रक्खे। (क्योंकि धुआँ बालक और जचा दोनों को हानि करता

है)जिससे ठंढ उस घर में न आने पावे और वायु भी शुद्ध होता रहे । उस घर की धरती और भीत लिपी पुती और सूखी होनी चाहिये । द्वार दक्षिण वा पूर्व को हो । कम से कम बत्तीस हाथ वर्ग उस घर का क्षेत्रफल हो अर्थात् आठ हाथ लम्बा और चार हाथ चौड़ा हो। जाड़ों में सांझ-सकार पवनद्वार रोक दिये जावें और दुपहर को खोल दिये जावें। ग्रीष्मऋतु में बराबर खुले रहें। वर्षा में यदि घटा घिरी हुई हो तो बन्द करके थोड़ा सा खुला रहने दे । जो आकाश निर्मल हो तो पवन को न रोके, किन्तु आने दे । सौर में सर्दी वा ठढ होने से बालक को मसान आदि रोग हो जाते है । सौरगृह में पहिले से यह वस्तु प्रस्तुत रक्खे । (१) खूब कसाहुआ पलँग, जिस पर गुदगुदा बिछौना हो और उस पर मोमजामा बिछा हो । (२) पेट में लपेटने को गाढे का कपड़ा । (३) पुराने धुराने चीथड़े । (४) रेशम । (५) पैनी कतरनी । (६) गुनगुना पानी । (७) आग । (८) तेल । (९) बेसन वा साबुन ।

जनते समय इस पलँग का सिरहाना पँगात से एक फुट ऊँचा रहना चाहिये। यदि चौकी वा तख्त हो तो और भी अच्छी बात हैं। दीपक ऐसे स्थान में रक्खा जावे, जो जच्चा के सन्मुख न हो। सिरहाने की ओर रखना अच्छा होता है । सामने रखने से बालक और जच्चा दोनों को

ि को चमक मारने का भय है।

सौर में बहुत मनुष्य न रहने चाहियें और स्त्री के पति को तो वहाँ कदापि न जाना चाहिये। उस स्थान पर किसी ऐसी स्त्री को न रखना चाहिये, जो पीर देख कर घबड़ावे या बच्चा के अगाड़ी औरों के जापे की चर्चा कर कर के उसे डरावे अथवा कोई अशुभ समाचार सुनावे। प्रसूता की माँ तथा सखी-सहेलियों का वहाँ पर रहना बहुत ही आवश्यक है, परन्तु दो तीन स्त्रिया से अधिक न हों।

जब जाने कि, गर्भिणी के पीर उठी, उसी समय किसी गुणी दाई को बुलावे, जो अपने काम में चतुर और दक्ष होवे। जच्चा से स्नेह और मधुर वचन से बोले। उसको ढाढ़स बँधावे। टहल करके उसका क्लेश मिटावे। बहिरी, गूँगी न हो। दाई को पहिले यह ज्ञान लेना चाहिये। कि, गर्भिणी को पीर जनने की है वा किसी और कारण से हैं अथवा सच्ची पीर हैं वा झूँठी क्योंकि यह पीर दो प्रकार की होती है।

इनकी यों पहिचान मर्म हैं कि, प्रसूत की पीर के लक्षण ये होते हैं:-(१) कोख शिथिल हो जाय। (२) हृदय बन्धनरहित जान पड़े। (३) दोनों जांघों में पीड़ा हो। कमर वा पीठ के चारों ओर पीड़ा हो। (४) बारबार मूत्र त्याग की इच्छा हो, पर तु उतरे नहीं। (५) योनि में से कफ सदृश पानी निकले।

परन्तु यह भी दो प्रकार की होती हैं। एक पेट की, दूसरी पीठ की। जब यह निश्चय हो जावे कि, पीर प्रसव ही की है तो स्त्री को उस कमरे हुए पलँग वा चौकी पर लिटावे। जो पीठ की पीर हो तो पीठ के पीछे तकिया रख कर दाई हौले हौले तकिया को दबावे। जो कपड़ा चोली, लहँगा वा धोती जचा पहिन रही हो, ढीली करा दे, पर छाती में एक और कपड़ा लपेट दे। तेल मल कर गरम पानी से स्नान करा दे और गरम दूध वा दूध लपसी कण्ठ तक पिला दे वा गुनगुनी चाय पिला दे। यदि पीने को जी न करे वा न पीना चाहे तो न पिलावे। इसको पिला कर हौले हौले टह लावे, शौच (पाखाने) हो आने दे, पर मूत्र त्याग न करने दे क्योंकि इससे प्रसव में बहुत सहायता मिलती है।

दाई को सौर में भेजने से पूर्व उसके कपड़े बदलवा दे और हाथ की अँगलियों के नख कटवा दे। नख बढ़े रहने से गर्भस्थान में चोट लग जाने का भय रहता है।

जब जाने कि, पीर कुछ अधिक हो गई तो देखना चाहिये कि, बालक पेट में किस प्रकार से है। मूँह नीचे को है वा पैर नीचे को है अथवा आडा पड़ा है। इनकी पहिचान यह है कि, प्रायः सभी बालकों का मूँह नीचे

ो होता है और इसी मूँड़ के बल से उत्पन्न होते हैं।
इसमें जचा को भी थोड़ा कष्ट होता है और कोई बात
की नहीं रहती। जब बालक का मूँड़ नीचे को होता
तब बालक बाईं ओर से दाईं ओर घूमता है और बाईं
र स्त्री की भारी रहा करती है, पर जिस स्त्री की दाईं
र भारी रहे और बालक दाईं ओर से बाईं ओर घूमे
बालक पाँव के बल होता है, जिसको विष्णुपद
ते हैं।

यदि दोनों ओर भारी है और घूमता नहीं है, तो
लक आड़ा पड़ा हुआ है और हाथ के बल उत्पन्न होता
। इसमें स्त्री को महाकष्ट होता है। यहाँतक कि, बीस
में उन्नीस मर जाती हैं।

यदि बालक अपने आप ही घूम घाम कर पाँव या
तक के बल आ गया तो भला जानों अथवा दाई ने
डाल कर चतुराई से बालक के हाथ तो ऊपर को
र कर दिये और पाँव को खींच कर निकाल लिया
भी बालक उत्पन्न हो जायगा और स्त्री को कष्ट ही
होगा, प्राण बच जावेंगे।

इन तीनों बातों के निश्चय करने के लिये दाई को
हिये कि, नारियल का तेल हाथ में चुपड़ कर और भीतर
कर देख ले कि, बालक मस्तक के बल है या पाँव के

इस दशा में दाई को चाहियें कि, इस प्रकार काम करे कि, सिवाय टहलाने के प्रसूता से और काम न लेवे। ताकि पीर मन्दी न पड़ें वरन अधिक होती जावें और प्रसव शीघ्र तर हो जावे ।

अक्सर दाइयाँ कमर का नीचे की ओर सूतने लगती हैं सो कदापि न सूतना चाहिये और स्त्री से नीचे को साँस भी न लिवाना चाहिये। इन बातों से स्त्री हाँफ जाती है और निर्जीव हो जाती है ।

जो पीर मन्दी पड़ जायँ तो स्त्री को तत्ता दूध पिलाना चाहिये । इससे जरायु का मुख शीघ्रतर खुल जाता है। कोई कोई स्त्री के दो दो, तीन तीन दिन तक पीर रहती है तो उसमें उसको भोजन नहीं देते हैं तो यह भी नहीं चाहिये । तत्ता दूध वा साबूदाना वा अरारूट अथवा दूसरा हलका भोजन देना चाहिये । जिससे आहार और बल दोनों हो जायें, पर इससे पहिली दशा में सदा तत्ता भोजन दे, कभी ठण्ढा न दे । क्योंकि ठण्ढा भोजन हानि करता है । मल त्याग करा दे, नहीं तो पीछे यह बाधा देता है । किसी किसी स्त्री का मुतहड नहीं टूटता और प्रसव की दूसरी दशा हो आती है अर्थात् बालक जरायु के मुख में आ जाता है । ऐसी दशा में दाई को चाहिये कि, उस मुतहड़ की थैली को जिसमें बालक है।

जब दाँतों में दर्द जान पड़े तब रुई से दोनों कान मूँद
। यदि इससे चैन न पड़े तो लौंग के तेल में रुई भिगो
र दाँत में रक्खे या मसूढ़ों पर लगावे, यदि मसूढ़ों
दर्द हो तो।

मसूढ़ों में दर्द हो और पेट में गड़बड़ हो तो इस दशा
औषध खानी चाहिये अथवा पोस्त के डोरे और बा-
ना को औटा कर कुल्ले करे और सोते समय पुलटिस
ाँध ले। कागज को ब्राण्डी शराब में भिगोकर और ऊपर
र पिसी हुई कालीमिर्च बुरक कर दो तीन घण्टे तक
लपटे पर लगा रहने दे।

गर्भिणी के लिये भेदी (अर्थात् हलका जुल्लाब)

इस दशा में दाई को चाहिये कि, इस प्रकार का, कि, सिवाय टहलाने के प्रसूता से और काम न लेवे। ताकि पीर मन्दी न पड़ें वरन अधिक होती जावें और प्रसव शीघ्र तर हो जावे।

अक्सर दाइयाँ कमर का नीचे की ओर सूतने लगती हैं सो कदापि न सूतना चाहिये और स्त्री से नीचे को साँस भी न लिवाना चाहिये। इन बातों से स्त्री हाँफ जाती है और निर्जीव हो जाती है।

जो पीर मन्दी पड जायँ तो स्त्री को तत्ता दूध पिलाना चाहिये। इससे जरायु का मुख शीघ्रतर खुल जाता है। कोई कोई स्त्री के दो दो, तीन तीन दिन तक पीर रहती है तो उसमें उसको भोजन नहीं देते हैं तो यह भी नहीं चाहिये। तत्ता दूध वा साबूदाना वा अरारूट अथवा दूसरा हलका भोजन देना चाहिये। जिससे आहार और बल दोनों हो जायँ, पर इससे पहिली दशा में सदा तत्ता भोजन दे, कभी ठण्डा न दे। क्योंकि ठण्डा भोजन हानि करता है। मल त्याग करा दे, नहीं तो पीछे यह बाधा देता है। किसी किसी स्त्री का मुतहड नहीं टूटता और प्रसव की दूसरी दशा हो आती है अर्थात् बालक जरायु के मुख में आ जाता है। ऐसी दशा में दाई को चाहिये कि, उस मुतहड़ की थैली को जिसमें बालक है,

जाने पर जाँघों के बीच में एक तकिया दे देना चाहिये। जिससे बालक के मस्तक निकलने का सुभीता पड़े और कमर पर हौले हौले हाथ फेरते रहना चाहिये। इससे चैन पड़ता है और एक स्त्री जचा के पीछे बैठ कर उसकी गुदापर अपना हाथ लगा ले पर, दाबे नहीं। सधा हुआ हाथ रहने दे। जिस स्त्री के पहलौठी का बालक होता हो, उसकी तो बड़ी ही सावधानी होनी चाहिये। क्योंकि बालक का मस्तक निकलते समय उस स्थान में बड़ी तनतनाहट होती है। खाल तक फट जाने का भय रहता है। इसलिये जब तक कि, बालक का कन्धा न निकल आवे तब तक हाथ को उस स्थान से न हटाना चाहिये। इस समय बहुधा जाँघों में बाँइटा आ जाता है सो हाथ वा रुअर को आग पर सेंक कर जाँघ सेंकने से बाँइटा जाता रहता है। इस समय जचा से आँख मीच कर फिर पूर्ववत् थोड़ा बल करावे और इस समय स्त्री से ऐसी बातें करनी चाहियें, जो घबरावे नहीं। जैसे 'एक घड़ी का दु:ख सब घड़ी का सुख', 'अँसुवन जल सींच इस आनन्द फल खायगी', 'दु:ख का फल सुख है' उसके सामने ऐसे जापों का वृत्तान्त, जो निर्विघ्न हुए हों और जिनको वह जानती हो, करे तो और भी श्रेष्ठ है।

जब बालक का मस्तक निकल आता है और देह

निकलने में कुछ देर होती है, तब बहुत सी दाइयाँ बालक का मस्तक पकड़ कर खींचती हैं। सो यह कभी न करना चाहिये। मस्तक के संग एक नस होती है, वह खिंच आती है और उसके खिंच आने से बालक तुरन्त मर जाता है। ऐसी दशा में स्त्री के पेट पर हाथ फेरना चाहिये। इससे मन्दी पड़ी पीर फिर उठने लगती है। इस समय असावधान न रहना चाहिये।

इस समय जचा की जाँघों के बीच में एक तकिया (उसीसा) लगा दे तो बालक के उत्पन्न होने में बहुत सुभीता होता है।

एक स्त्री जचा के पेट को दाब ले और दाई बालक के मस्तक को एक हाथ से पकड़ कर और उसके नस-लाऊ दूसरे हाथ की दो या तीन उँगली लगा कर हौले हौले खिसका लावे। इसके खिसकाने से नस नहीं खिंचने पाती और न जचा को दुःख होता है। पेट के दबाये रहने से रुधिर नहीं निकलने पाता। जिस से बालक को हानि पहुँचती है। रुधिर बालक के कान, नाक और मुख सब में भर जाता है।

जब बालक उत्पन्न हो चुके तो उसके गले में उँगली
डाल कर जो लार हो, उसे निकाल देना चाहिये और
मुख पोंछ देना चाहिये, जो साँस लेने लगे। इसके पीछे
नार काटना चाहिये।

यदि बालक रोवे नहीं तो यह करना चाहिये। प्रथम
इस बात का ध्यान रक्खे कि, बालकों के गले में बहुधा
नार लिपटा हुआ आता है, सो पहिले उसे छुड़ा दे
और कभी कभी ऐसा भी होता है कि, बालक थैली ही
में लिपटा हुआ पैदा होता है तो उस समय उस थैली
को तुरत ही चतुराई के साथ, हाथ वा छुरी से जैसे बने
फाड़ दे। पर बालक के लग जाने का ध्यान रक्खे कि,
चोट न आ जाय। इस थैली में बालक बहुत देर तक
रहने से मर जाता है, पर फाड़ने से थैली का पानी
निकल जाता है और बालक को निकाल देता है और जो
नस लिपटी हुई पैदा हो, तो उसे भी तुरन्तही छुटा देना
चाहिये। नहीं तो इससे भी हॉफ कर मर जाता है। पेट
में तो इसके लिपटे रहने से कुछ डर नहीं रहता, पर बाहर
आने पर बड़ा ही डर रहता है। मूर्ख दाइयों के हाथ से
बहुत से बच्चे इस प्रकार से मर जाते हैं। जो देखे कि, नस
कई पेच खा गई है तो उस समय सुलझाने में बहुत देर
लगती है और लिपटी रहने से बालक का डर होता है।

इसलिये नस को उस समय काट देना चाहिये। काटने की रीति तनिक पीछे बताऊँगी। पहिले जो देखनी चाहिये, उसे और बता दूँ।

बालक जब उत्पन्न हो चुके तब देखना चाहिये कि वह रोता है कि, नहीं। बहुत से बालक बहुत देर सुस्त ही पड़े रहते हैं या हाँफा करते हैं। जो हाँफता होय तो जब तक हाँफनी बन्द न होय, तब तक नार न काटना चाहिये। हाँफनी शीघ्र बन्द करने के उपाय ये हैं कि, बालक के मुख की लार निकाल कर उसके मुख पर ठंढे पानी के छींटे देवे तो बालक रोने लगेगा और जो न रोवे तो गले तक उसकी देह किसी ठंढे पानी के बासन में डुबो देनी चाहिये और तत्काल निकाल लेनी चाहिये। इससे बालक चौंक कर रो उठेगा और जो इससे भी न रोवे तो एक बासन में ठंढा और दूसरे में गुनगुना पानी रक्खे। ऐसा कि, बालक को सुहा जाय। एकबेर बालक को ठंढे पानी में और दूसरी बेर गुनगुने पानी में बहुत थोड़ी थोड़ी देर रक्खे अर्थात् दो दो मिनट तक ही और मस्तक से नीचे नीचे तक का ही भाग रक्खे। मस्तक को पानी में न भिगोवे। ऐसा करने से बालक चैतन्य हो जावेगा। इसी कारण गर्भिणी के पेट उठने के समय ही से गरम पानी का प्रबन्ध कर ले।

यदि इससे भी बालक न रोवे तो बालक को गोदी ले कर उसके पजरे को हाथों से तनिक दबा कर वा बालक के नथनों को उँगली से बन्द कर के अपने मुख को बालक के मुख पर रख धीरे धीरे फूँक देनी चाहिये। उसी समय बालक के हाथ छोड दे और बालक की छाती दाब दे इससे साँस बाहर आवेगा। दो चार वेर ऐसा करे। इससे फेफडे फूल आवेंगे। जो इससे भी बालक न चेते तो उसके नाक के तालू को सुरसुरावे और हौले से चूतड और पीठ को थेप दे वा कपडा जला कर नाक में दूर से धुआँ दे वा बालक को दोनों हाथों पर औंधा लिटा कर जल्दी जल्दी हिलावे। जो बालक हो कर नीला पड गया हो और रोता भी न हो तो टूँडी की ओर से नार को तीन अंगुल छोड कर काट देना चाहिये। दो पैसे भर लोहू उसमें से गिर जावे उसे बाँध दे पर बहुत लोहू न गिरने दे।

बहुत सी दाइयाँ जब बालक नहीं रोता है तब यह करती हैं कि, बालक के मस्तक पर ठंढा पानी डालती वा काली मिर्च मुख में चबा कर उसके मुख वा नाक में फूँक देती हैं। इससे कई हानियाँ होती हैं। बालक नीर्जीव हो जाता है और उसे सुरसुरी का रोग हो जाता है। नार काटने के लिये बहुत पैनो छुरी वा कतरनी होनी

चाहिये और थोडा फीता वा डोरा वा रेशम वा पाट चाहिये और थोडा सफेद कपड़ा भी। भोंथरी छुरी या कतरनी से नार न काटे। इससे बालकों को बहुत दुःख होता है।

नार काटने की रीति यह है कि, बालक की ढूँढी की ओर तीन अंगुल नार छोड कर फीते से बाँध दे। और आध अंगुल और छोड़ कर माँ की ओर को भी बाँध दे। इन दोनों गाँठों के बीच में से काट दे—बालक की ओर की गाँठ को यों बाँधते हैं कि, लोहू बहुत न बहे। ... होकर वह मर न जाय और माँ की ओर गाँठ यों ... हैं कि, न जाने अभी प्रसूता के पेट में दूसरा बालक और हो, जैसे कि, जोड़ले बालक बहुधा हुआ करते हैं क्योंकि ऐसे बालक साथ साथ नहीं होते हैं। थोड़ी बहुत देर पीछे होते हैं। पर नार दोनों का एक ही होता है। जो इस ओर को गाँठ न दी जाय तो न जाने लोहू बह कर पेट में का दूसरा बालक मर जाय। क्योंकि 'फूल' वा 'औनार' अभी तक स्त्री के पेट ही में होता है और थोड़ी देर पीछे निकलता है। इसलिये इस बात की सदा सावधानी रखनी चाहिये और जो दूसरा बालक पेट में मालुम पड़े तो इसका हाल जचा से कदापि न कहे कि, दूसरा बालक अभी और है। नहीं तो जचा घबड़ावेगी और पीर बन्द

ो जावेंगी। नार काटने से पहिले एक बात का ध्यान
ौर भी कर ले। यदि देखे कि, बालक बहुत ही निर्जीव
तो नार काटने से पहिले माँ की ओर से नार का
ोहू सूत कर बालक की टूँडी में कर दे, पीछे काटे
थवा चार पाँच बूँद उसकी बालक को चटा दे। माँका
ोहू बालक को बहुत बल करता है क्योंकि पेट में
ालक इसीको खा कर पलता है। नार काटने से पहिले
र को शहद, घी और सेंधानमक से मल कर शुद्ध कर
तब काटे अथवा क्षीर और कैथ के वृक्ष के काढ़े से
थवा सोने या चाँदी के बुझे हुए जल से नार को शुद्ध
रे, तब काटे। उत्पन्न होने के पीछे बालक को अच्छी
ाँति स्नान करा के पवित्र कर दे और पोंछ कर किसी
दगुदे और गरम वस्त्र में दुबका कर लिटा दे। नार को
ाट कर लकड़ी के कोइलों में पिसी हुई कस्तूरी (जो
हिले से इस प्रकार तय्यार रखनी चाहिये कि, दो
ावल चोखी कस्तूरी एक माशे कोइलों में महीन पीसी
ुई।) लगा दे। इसमे मसान का रोग नहीं होने पाता
और पीछे बालक को घी, शहद, अनन्तमूल और ब्राह्मी
के रस में थोडा स्वर्णचूर्ण मिला कर चटा दे। यह महा-
गुणकारी है। इससे बालक का मल त्याग हो जाता है
और अनेक गुण होते है। यदि सब न मिल सके तो

बालक को केवल शहद, और घी ही चटा दे। जो बा..
सतमासा वा बहुत ही दुबला पतला हुआ होवे तो
के गाले को कड़वे तेल में भिगो कर उसमें दो वा चार
दिन तक बालक को रक्खे। इससे बहुत पोष पहुँचता
है। जैसा कि माँ के पेट में पहुँचता था। ऐसा करने से
सतमासे उत्पन्न भये बालक बहुधा बच जाते हैं और
पुष्ट हो जाते हैं।

बालक के होते ही नार काट कर उसको बेसन लगा
कर गुनगुने पानी से नहला देवे। यह रीति देशी है,
परन्तु डाक्टर लोग साबुन से नहलाते हैं, पर मेरी
समझ में बेसन उत्तम है। इसलिये कि, इससे सब मैल
कुचैल स्वच्छ हो जाता है।

जिस समय बालक उत्पन्न हो लेवे उस समय दाई
को यह भी देख लेना चाहिये कि, बालक के अङ्ग प्रत्यङ्ग
सब ठीक हैं अथवा बेडौल हैं वा सुडौल अथवा कोई अङ्ग
किसी से जुड़ा तो नहीं है। जैसा कि, बहुधा हाथ पाँव
की उँगली जुड़ी होती है।

यदि कोई अङ्ग जुड़ा दीख पड़े तो तत्काल तीव्र
नश्तर से चीर देना चाहिये, विलम्ब तनिक भी न करना
चाहिये। इसी प्रकार जो आँखों के पलक जुड़े हों तो
उन को भी चीर कर अलग कर दे। आजकल की को

ई ही दाई ऐसा करती है, परन्तु भद्देपन से अर्थात्
च की चूरी को तोड कर उसकी नोक से ऐसे समय
चीर फाड करती है। इस से बहुत भय और हानि
यह कार्य बडे पैने नश्तर से होना चाहिये।
जो गुदा का छिद्र बन्द होवे तो उसको भी खोल
ा चाहिये। इसी प्रकार समयोचित कार्य करे अर्थात्
ई अङ्ग यदि बेडौल है, जैसे नाक चपटी हो, मस्तक
बा हो इत्यादि, तो नाक को दोनों हाथ की उँगली
सूत कर ऊपर को उठा कर ऊँची सुडौल कर देनी
हिये। इसी प्रकार मस्तक को दोनों हाथों से दाब कर
या सुडौल कर देना चाहिये। इस समय थोडी ही,
सावधानी और उपाय से कुडौल अङ्ग सुडौल हो
ा है क्योंकि इस समय देह की हड्डी तक ऐसी नरम
ी हैं, जैसे हरे वृक्ष की कोमल टहनी कि, जिधर को
हो, झुका दो। परन्तु वायु के लगते लगते ही कडे
हो कर थोडी देर में वे बहुत कडे होजाते हैं और
र नहीं लचते हैं।
जब बालक उत्पन्न हो चुके तब जचा की सावधानी
नी चाहिये। यह तीसरी दशा है। बालक उत्पन्न
े के पीछे स्त्री के पेट से एक मास की सी थैली
कलती है, जिसको 'औनार' कहते हैं। जैसे गाय

भैंस के बच्छडा होने पीछे 'जेर' गिरता है, उसी स्त्री के यह ओनार गिरता है।

जब तक यह न गिर ले, तब तक स्त्री के पेट पर हाथ रक्खे रहना चाहिये। प्रसव होने के पीछे दो तीन दिन तक स्त्री के दर्द होता रहता है, पर इस से डरना न चाहिये। यह स्त्री के पक्ष में सुखदाई होता है क्योंकि इससे रुधिर बहता रहता है और पहलौठी की जच्चा के तो और भी अधिक बहता है।

यदि बालक उत्पन्न होने के पश्चात् पीर बन्द हो जावें, तो हौले हौले पेट पर हाथ फेरते रहना चाहिये। पीर फिर होने लगेगी और थोडी बहुत देर में गिर पडेगा। जो गिरने में कुछ देर लगे तो भले ही लग जावे, पर उसको खींच कर कभी न निकालना चाहिये जैसा कि, बहुधा अनेक मूर्ख दाइयाँ करती हैं। ऐसा करने से बहुत से दुःख और रोग उत्पन्न होजाते हैं। जब कभी कोई मूर्ख दाई भीतरी अङ्ग में हाथ डाल देती है और उसके नख की चोट कहीं जरायु में लग जाती है तो जच्चा को ज्वर आजाता है और कभी कभी इसी ज्वर में वह मर भी जाती है।

यदि पेट हाथ से दाबा न जावेगा तो लोहू बहुत बहता रहेगा। जो यह अपने आप न निकले वा निकलने में

देर लगे तो हौले से नार को कई बेर खींचने से चार पाँच बेर की पीर में निकल आवेगा। और जो यों भी न निकले तो दाई को चाहिये कि, अपने एक हाथ में नारियल का तेल चुपड़ कर और पेट में डाल कर आँनार को इकट्ठा कर के बहुत हौले हौले निकाल ले और हाथ से पेट को दबाये रहे और नार को धीरे धीरे खींचती जाय।

जब यह निकल आवे, तब एक दुपट्टा, चौतह कर के, पेडू से ले कर कलेजे तक कस के लपेट देना चाहिये। इस से लोहू निकलना भी बन्द हो जाता है और पेट भी नहीं डोलता, वरन स्त्री को बहुत ही चैन पड जाता है और गर्भाशय डिगने नहीं पाता, अपने स्थान पर आ जाता है। इस कपड़े को दूसरे तीसरे दिन खोल कर बाँधती रहे, जिससे नसें भी बहुत न भिचने पावें।

बहुत सी दाइयाँ बालक उत्पन्न होने के पीछे जचा को बैठा देती हैं जिससे सब लोहू निकल जावे, सो यह कभी न करना चाहिये। इससे स्त्री बहुत ही निर्जीव हो जाती है। बहुत लोहू निकलना अच्छा नहीं होता।

प्रसूता भोजन कठिनता से पचा सकती है, इसलिये दूध सब से अच्छा भोजन है। पर इस देश में रीति है कि, हरीरा देते हैं, जो घी गुड़ और अजवायन को औट कर बनता है। यदि सोंठ को पीस छान कर फंकी कराकर ऊपर

से दूध पिला दें तो बहुतही श्रेष्ठ है। ऐसा भोजन बहुत उत्तम होगा, जो बलकारक हो और पच भी जल्दी जावे। जो देर में पचेगा, वह हानि करेगा और बल नहीं करेगा। स्त्री को प्रसव के पीछे भोजन कर के सो जाने से प्रसूता को बहुत चैन पड़ता है। इस समय कोलाहल वा शब्द न करें। जैसा कि, बहुधा करती हैं कि, कहीं बन्दूकें छुटाते हैं, कहीं लुगाई ढोलक मँजीरे बजा बजा गीत गाती हैं। इससे जच्चा को बड़ी बेचैनी होती है। परन्तु इस देश की रीति ही ऐसी हो गई है। बदूक छुटाने से इस समय कुछ लाभ नहीं। यदि प्रसव के समय छुटाई जाती तो लाभ भी था कि, प्रसव में इसके शब्द से सहायता मिलती। परन्तु अब छुटाने से जच्चा को वृथा क्लेश देना है—लेटे लेटे ही जच्चा को धो पोंछ दे और सब स्त्रियों को सौरगृह में से निकाल कर किवाड़ मूँद कर अँधेरा कर दे—जिससे जच्चा को भी नींद आ जावे।

जब सो कर उठे तो जच्चा को मूत्र करा दे, पर उठावे नहीं। करवट ही लिवा कर करा दे। जो मूत्र न आवे तो गरम पानी में कपड़ा भिगो भिगो कर और निचोड़ कर पेडू पर रखती जाय। थोड़ी देर में उतर आवेगा। जो इस पर भी न उतरे तो वैद्य से उपाय कराना चाहिये। मूत्र न उतरने से रोग उत्पन्न हो कर कष्ट हो जाता है। मल भी त्याग

करा देना चाहिये, जो न उतरे तो अरण्डी के तेल या दूध में औटा कर सनाय या दूसरा कोई अन्य विरेचन दे देना चाहिये ।

सौरगृह में राई, श्वेत सरसों, नीम के पत्ते या इन्द्रजव की धूनी देनी चाहिये । जचा और उसके पहिनने तथा ओढ़ने बिछाने के कपड़ों में इस धूनी को दे दे ।

किसी किसी कुल या जाति में, वरन बहुधा स्त्रियों में ऐसी रीति है कि, जचा को स्नान इत्यादि शीघ्रतर अर्थात् चार या पाँच दिन ही में करा देते हैं । जिसको वह 'छठी की रीति' कहते हैं । यह बहुत ही हानिकारक है ।

कम से कम दस दिन में यह रीति होनी चाहिये । नहीं तो छः दिन के पूर्व तो कदापि न होनी चाहिये । क्योंकि इसका नाम 'छठी' है, जो छठवें दिन होनी चाहिये और जो पूर्व की प्रथा थी ।

परन्तु जब यह प्रथा थी, तब स्त्रियाँ बलवान और नीरोग होती थीं, परन्तु जब ऐसी निर्बल और रोगी स्त्रियाँ होती हैं, तब इसमें कुछ फेर होना अवश्य ही है अर्थात् दस दिन पीछे ही होनी चाहिये ।

स्त्रियों का विचार है कि, जचा छठी होने के पीछे शुद्ध हो जावेगी, छूने की छूत न रहेगी, परन्तु यह नहीं ज्ञात कि, स्नान करने से ज्वर हो आवेगा, शीत आ जावेगा

और जच्चा की जान पर बन आवेगी ।

इसी छठी के दिन स्त्रियाँ यह भी करती हैं कि, जच्चा को सिर से स्नान कराती हैं, घर बाहर सब को लीपती पोतती हैं । जच्चा को चाँवलों और दही का भोजन कराती हैं जो और भी हानिकारक है ।

ऐसे ही कारणों से स्त्रियाँ रोगग्रस्त हो जाती हैं और इसी कारण से छठी, दस दिन के पूर्व न होनी चाहिये ।

बहुत जातियों में कुआँ पूजने की भी एक और अनोखी रीति बडी हानिकारक होती है । वह भी न करनी चाहिये क्योंकि जच्चा अपनी निर्बलता के कारण चलने में क्लेश मानती है और कभी कभी आँखों के सामने अँधेरा हो जाता है और मूर्च्छित हो जाती है। इसी हेतु दो स्त्रियाँ उसकी बाँह पकड कर उसको ले जाती हैं। जब यह दशा होती है तो क्यों वृथा उसको क्लेश दिया जाता है ।

प्रसूता के चालीस दिन तक नित तैल मर्दन कराना चाहिये और लाक्षादितैल * का मर्दन होना और भी अच्छा होगा क्योंकि इससे शरीर की वायु नहीं बढ़ने पाती वरन शरीर में बल बढ़ता है । तैल मर्दन करके प्रातःकाल गरम पानी से स्नान कर डालना चाहिये ।

प्रसूता को क्रोध कभी न करना चाहिये, न परिश्रम

---

* स्त्री चिकित्सा में देखो ।

का काम और न पुरुषप्रसंग करना चाहिये । जचा एक सप्ताह, वरन दस दिन तक बत्ये का पानी पीवे, जिस को प्रायः सभी स्त्रियाँ जानती हैं कि पसारी के से बत्तीसा, अर्थात् बत्तीस औषध की पुड़िया बनती है । उसको पानी में डाल कर औटाते हैं, जो बत्ये का पानी कहलाता है । यह बड़ा गुणकारी होता है ।

यदि बत्तीस औषध न मिल सकें तो पीपल, पीपलामूल, गजपीपल, मोचरस, चीता, सोंठ और गुड़ इन्हीं को पानी में औटा कर पानी पिलावे ।

दशमूल का काढ़ा देवे तो अत्यन्त ही श्रेष्ठ है क्योंकि यह पूर्व प्रसूत तक के उत्पन्न हुए रोगों को दूर कर देता है । दशमूल के काढ़े में ये औषधें हैं—१ शालपर्णी, २ पृष्ठिपर्णी, ३ दोनों कटेली, ४ गोखुरू, ५ बेल की गिरी, ६ अरणी, ७ अरलू, ८ पाढ़, ९ कुमेर (खँभारि), १० पीपल इन सब की बराबर बराबर मात्रा है । यदि पूर्व से अर्क खिंचवा ले तो और भी अच्छा है । नहीं तो नित काढ़ा बना लिया करे ।

दस दिन तक तो अल्प और पाचक भोजन दे, फिर पीछे जब पचने लगे तो जो पूर्व से खाती आई होवे, वही भोजन दे देना चाहिये । यदि इस से बालक को हानि होती हो तो न देना चाहिये ।

पर इस से यह भी न समझ लेना चाहिये कि, बालक की माँ जो जी में आवे, खा लिया करे। नहीं, उसको बहुत ही बन्धन और नियम से रहना और आहार, विहार करना चाहिये। यहाँ तक तो जच्चा के विषय में बताया, अब तुझको उत्पन्न हुए बालक के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ।

बालक जब उत्पन्न हो ले, उसके चार पाँच घंटे पीछे माता को अपना स्तन बालक के मुख में देना चाहिये, जिससे बालक को पीने की टेव पड़े।

जो दूध न उतरे (जैसा कि पहलौठी की जच्चा के बहुधा होता है) तो भी दो तीन बेर बालक के मुख में स्तन दे दे। उसके चचोरने से दूध उतर आवेगा। कभी कभी ऐसाभी होताहै कि, बहुत बेर की प्रसूता स्त्री के स्तनों में दूध नहीं उतरता। उसका उपाय भी तुझे बताऊँगी। कभी कभी बालक ही स्तन को मुख में नहीं दाबता और चचोरता। इसके दो कारण होते है। (१) यह कि, स्तन में दूध ही नहीं, (२) यह कि, बालक से स्तन चचोरा नहीं जाता।

पहले का तो यह उपाय है कि, गर्म पानी करके और फलालैन का टुकड़ा उसमें भिगो भिगो कर निचोड़ डाले और स्तन पर रक्खे। इससे सेंक पहुँच कर, स्तन ढीले

पड़ जावेंगे। जब कुछ ढीले पडें तो पहले किसी स्याने बालक को पिला कर उनका दूध निकलवा दे। जिससे ढेपुनी उठ आवें और स्तन ढीले हो कर दूध निकलने लगे, अथवा मीठे तैल में कपूर पीस कर मिला ले और स्तनों पर तीन तीन चार चार घंटे पीछे कई बेर मले। इससे स्तन नरम हो कर बालक दाबने लगेगा। यह दशा पहलौठी की जचा की बहुधा होती है, जिसके पूर्व में सन्तान हो गई होवे, उसके बहुधा ऐसा नहीं होता है। कदापि ही हो जाता है। नहो तो शीघ्र ही दूध उतर आता है और स्तन भी ढीले रहते हैं, वरन प्रसव होने के पूर्व ही दूध उतर आता है।

इसका यह भी उपाय है कि, पहलौठी की गर्भिणी पूर्व से ही अपने स्तनों की नोकों को अपने हाथों से उठाती रहे तो इस समय दूध उतरने लगेगा और बालक मुख में भी ले कर दाबने लगेगा।

दूसरे का कारण यह है कि, बालक की जीभ मुख के भीतर किसी दूसरे अंग से जुडी होती है। इस लिये जब बालक स्तन को न दाबे तो पहले इसको देखे कि, कहीं जुडी तो नहीं है। जो जुडी प्रतीत होवे तो तत्काल डाक्टर को बुला कर नश्तर से चिरवा कर अलग कर देनी चाहिये। इसके होते ही बालक पीने लगेगा। चिरवाने

से डरना न चाहिये । जैसी कि बहुधा स्त्रिया डरती हैं । इस कार्य में जितना विलम्ब होगा, उतनी ही हानि होगी । क्योंकि जीभ का मास कड़ा होता जायगा ।

माता बालक को जब दूध पिलावे तब पहले थोड़ा सा चार पॉच बूँद धरती में गेर दे । क्योंकि इन बूँदों में विप होता है और बालक को हानि करता है ।

जब पिला चुके, तब स्तन को धो पोंछ डाले । इस से स्तन फटते नहीं हैं । इसी कारण स्तन को गीले कभी न रक्खे ।

किसी किसी स्त्री के स्तनों में दूध नही होता है, सो इसके इतने कारण हैं ।

(१) स्त्री का दुर्बल होना, (२) सन्तान में स्नेह न होना, और (३) क्रोध वा शोक करना ।

इसका उपाय अगाड़ी बताऊँगी, पर जो बालक के लिये ऐसी दशा में करना चाहिये, पहले वह बताती हूँ ।

यदि माँ के स्तन में दूध न हो तो बालक को गौ का टका भर दूध ले कर और उसमें दूना गरम पानी मिलावे, और थोड़ा सा बूरा डाल कर रुई के फोयों से बालक को पिला दिया करे । परन्तु अब तो दूध पिलाने की बोतल बिकती है, उससे ही काम ले ।

जब माता अपना ही दूध पिलावे तो दोनों स्तनों का

दूध ओसरे ओसरे से पिलावे। एक स्तन का ही न पिलावे। नहीं तो दूसरे स्तन में दूध भरा रहने से दुःख उत्पन्न हो जावेगा। स्तन को हौले हौले पिलावे। स्तन में बालक की टक्कर इत्यादि न लगने दे और न स्तन में दूध इकट्ठा होने दे, जिससे स्तन में गाँठ पड कर स्तन पक जावे, और 'थनैला' हो जावे। इसमें स्त्रियों को महाकष्ट होता है और कभी कभी मर भी जाती हैं।

चालीस दिन तक बालक को दो दो घंटे के अन्तर से दूध पिलावे। इससे जल्दी न पिलावे। जैसा कि, बहुधा मूर्ख स्त्रियाँ करती हैं कि, जब बालक रोया, स्तन मुख में दे दिया। पहला पिया हुआ दूध पचा नहीं कि, उसमें और कच्चा जा पडा, जिसने अजीर्ण करके बालक को क्लेश दिया।

बालक का नार कभी कभी किसी दूसरी वस्तु में उलझ कर ऐंच आता है और फिर पक जाता है। इसलिये यह उपाय पूर्व से ही कर देना उचित है कि, कड़ुवे तेल का फाया नार पर रख कर उसको कपडे से लपेट और एक पट्टा मे बाँध दे। पर पट्टी कसके न बाँधे और न उसे ढीली ही रहने दे।

यदि नार में रुधिर निकल रहा होवे तो उसको रेशम से बाँध दे। रुधिर को न निकलने दे। सात, आठ दि

में नार सूख कर आप ही गिर पड़ता है । यदि आप ही न गिरे तो खींचे नहीं । जब आप छुट-कर गिरे, तबहीं गिरने दे । बालक को नित कड़ुवा तेल लगा कर गुनगुने पानी से उचित समय पर (अर्थात् जाड़ों में दस और बारह बजे के बीच में, गर्मियों में सिवाय सन्ध्या के, चाहे जिस समय, वर्षा में भी सिवाय घटा के, चाहे जिस समय) नहला दिया करे । परन्तु नहलाने से पहले चून की लोई से तेल को सुखा लेवे । इस लोई के फेरने से व्यर्थ रोंगटे (जैसे मस्तक इत्यादि पर के) झड़ जाते हैं ।

जिस बालक के लोई इस समय अच्छी भाँति नहीं होती, उसके रोंगटे बने रहते हैं । जब लोई कर के बालक को स्नान करावे तो गुनगुने पानी का हौले हौले तर्रा भी दे । इससे बालक के शरीर में बल आता है ।

तेल जब बालक के लगाया जावे तो बगल, रान, कान के पीछे, घोंटुओं के पीछे, जाँघों में अथवा जहाँ जहाँ खाल के चिपकने और मैल के इकट्ठे होने की सम्भावना हो, खूब मल कर लोई कर दे और गरम पानी से धो डाले । नहीं तो खाल सड़ जाती है । शरीर में फोड़े-फुंसी हो जाते हैं ।

बालक को स्नान करा के सूखे कपड़े से तत्काल पोंछ डाले और जो जाड़े हों तो तुरन्त गरम कपड़ा पहिना

कर धूप में सुला देना चाहिये। इस क्रिया से बालक सुख मान कर सो जाता है।

पुत्र हो तो उसके मूत्रस्थान को खोल कर गरम पानी का तर्रा दे दे कर हौले हौले खोलती रहे, जिससे खाल जुड़ने न पावे और मैल भी धुल जाया करे। जो खुलती न दीखे तो तेल और तवे की कालौंस लगा दिया करे। दस पाँच दिन करने से खुल जावेगी।

बालक को स्वच्छ कपड़ों में रखना चाहिये। भीगे या मलिन पोतरे न रखने चाहियें। तुरन्त बदल दिये जावें। जो बालक बहुत ही निर्बल हो अथवा सतमासा, अठमासा हो तो उसको पानी में नमक डाल कर नहलावे।

जहाँ बालक की खाल की सुकड़न के पास कुछ मैल, या छिला फटा दृष्टि पड़े तो उसको नरम कपड़े या स्पंज (Sponge) से हौले हौले धो दिया करे और चिकनी खड़िया और चावल के आटे या मैदा को मिला कर लगा दिया करे। घाव भर आवेगा। यहाँ तक तुझको वे बातें बताईं, जो सौरगृह से सम्बन्ध रखती हैं। शेष आगे बताऊँगी।

धात्रीशिक्षा समाप्त।

स्त्रीचिकित्सा।

दाई का काम तो मैंने तुझे बता दिया, अब तुझको स्त्री के कुछ रोगों की औषध और लक्षण इत्यादि भी बताये देती हूँ।

बहुत से रोग स्त्रियों को ऐसे होते हैं कि, लाज के कारण वे उनको प्रकट नहीं करतीं और पुरुषों से इलाज भी कदापि नहीं करातीं।

मेमलोग तो कुछ सकोच इस विषय में नहीं करती हैं। यहां तक कि, उनके जनने तक को, पुरुष डाक्टर ही आता है। परन्तु यह व्यवहार उनका ग्राह्य नहीं है, वरन निन्दनीय है। इस देश की प्रथा और ही है। यहा ऐसे रोगों का उपाय प्रायः दाई के ही अधीन रहा है। चाहे वैसी दक्ष दाइया अब इस समय में न हों।

इस देश में तो यहा तक है कि, बहुधा स्त्रियां जो उच्चकुल की हैं, वे बहू बेटियों के रोगों को पुरुषों पर प्रकट तक नहीं करती हैं। उपाय तथा चिकित्सा तो एक ओर रही। अतएव मैं यही सोच कर मुख्य मुख्य रोगों की कुछ औषधें तुझको बताती हूँ। सब की तो नहीं बता सकती क्योंकि रोग इतने हैं कि उनके नाम भी स्मरण रखना कठिन है।

फिर उनके निदान, लक्षण और चिकित्सा का स्मरण रखना तो बहुत ही कठिन होगा।

जिन रोगों को साधारण प्रकार से स्त्री प्रकट नहीं करती हैं और प्राय: गुप्त ही रखती हैं, उन्हीं के विषय में कुछ बताना चाहती हूँ, नहीं तो वैद्य, हकीम, डाक्टर हैं ही।

सूतिकावस्था में स्त्रियों के बहुधा रोगोत्पत्ति की सम्भावना होती है और उन रोगों के लक्षण यह हैं कि, मूत्र रुक जाता है, पेट भारी होने लगता है। तो ऐसी दशा में कड़वी तूँबी, कड़वी तोरई (यह वर्षाऋतु में ढाक वृक्ष के जगल में बहुत होती है), सरसों, साँप की काँचली इन सब को सरसों के तेल में मिलाकर सूतिका को धूनी दे।

प्रसूत-यह रोग जापे ही में स्त्री को हो जाता है। इसी से इसका नाम यह हुआ है और आजकल कोई भी स्त्री इससे बची हुई नहीं है। प्राय सभी थोड़ी बहुत इस रोग में ग्रस्त हैं। जच्चावस्था में जो स्त्रियाँ अपना खान, पान नियम से नहीं रखती हैं और अनाचार व थोड़ी सी भी असावधानी कर बैठती हैं, वे जन्मभर कष्ट भोगती हैं। इस रोग के लक्षण ये हैं,

(१) शरीर का टूटना, (२) भीतर ज्वर का अश बना रहना, (३) प्यास अधिक लगना, (४) पेट, पीठ, पसली, कमर, पोंदू इत्यादि में सदा अथवा चाहे

जर दर्द होना, (५) हाथ, पाँव वा पेट पर सूजन हो आना, (६) वेर वेर उलटी का आना, (७) जी का मिचलाना, (८) आँखों में धुन्ध होना, (९) कब्ज़ रहना, (१०) मूत्र ठीक न आना अथवा कभी बहुत, कभी थोड़ा आना, (११) शरीर में निबलाई का होना, (१२) डकारों का बहुत आना, (१३) हाथ पाँव और माथे में पसीना निकलना, (१४) शरीर का फूल जाना और (१५) मर्मस्थान में शूल का होना।

स्त्री को इस रोग से अधिक कष्टदायी दूसरा कोई रोग नहीं है।

इस अकेले रोग ही से स्त्री को नाना प्रकार के दूसरे रोग उठ खड़े होते हैं। जिस स्त्री को इस रोग ने घेरा, उसका जीवन उसको भार हो जाता है। इसको न होने देने का सहज उपाय यही है कि, सौर में पूरी पूरी सावधानी रक्खी जावे। अर्थात् चालीस दिन तक जच्चा को पूरे नियम से रक्खा जावे, और पहिले पन्द्रह दिनोंतक तो बहुत ही सावधानी से रहे-सहे, खावे, पीवे, और सर्दी से बची रहे तो यह रोग उत्पन्न न हो। नियम ये हैं,

(१) सौरगृह में ठंढी वायु न जाने दे।

(२) इसबन्द, अजवाइन इत्यादि गरम वस्तुओं की धूनी सौरगृह में नित दे दे।

(३) जाड़ों में उस घर को आग से गरम रक्खे।

(४) हेमगर्भ की एक एक रत्ती मात्रा अदरक के रस में पहिले तीन दिन तक देनी चाहिये वा दशमूल का काढ़ा देना चाहिये। जो पूर्व में बता चुकी हूँ।

(५) अधऔटा पानी देना चाहिये, जिसमें सोंठ, पीपल, गजपीपल, पीपलामूल इत्यादि पड़ी हों।

(६) भोजन बलिष्ठ, किन्तु पाचक और हलका देना चाहिये। उपरोक्त उपाय तो इसके रोकने के हैं, इसके दूर करने के उपाय निम्न हैं।

(१) गोखुरू ढाई तोले कुचल कर आधसेर पानी में औटावे। जब छटाँक भर रह जावे, तब छटाँक भर बकरी का दूध मिला कर सात दिन तक दोनों समय साँझ सकारे पीवे। इससे अवश्य ही शीघ्र आराम होगा। जो कहीं पेट, पसली इत्यादि में दर्द होता हो तो तिल का तेल मल कर नामे से सेंके। परन्तु ठंढे पानी से बची रहे। जिस स्त्री को यह रोग हो जावे वह इतनी वस्तुओं से बचे। १ भात, २ दही, ३ खटाई, ४ शर्बत, ५ ठंढा पानी और ६ ठंढी वायु।

इस रोग में पथ्य ये हैं, अरहर वा मूँग की दाल पूरी, दूध, गरम साग। इस रोग में सुहागल वा मरीच्यादि तेल भी बहुत गुण करते हैं,

बैठने को जी चाहता है । यह रोग बहुधा ऐसी स्त्रियों को होता है जिनका गर्भ बेर बेर गिर पड़ता है या जिसके सतान बहुत और शीघ्र शीघ्र होती हैं या जिसको शोक अधिक रहता है अर्थात् जिन कारणों से देह निर्बल होता है, उन्हीं कारणों से यह रोग उत्पन्न होता है । इसका उपाय सब से उत्तम यही है कि, गर्भाशय को ठीक करके शुद्ध कर देना चाहिये कि, रजदर्शन ठीक समय और ठीक प्रकार पर होने लगे । पीछे और भी उपाय हो सकता है ।

यह रोग क्वारी लड़कियों को भी होता है । परन्तु उन को झूँठा होता है । ब्याही स्त्रियों को सच्चा होता है और विशेष कर उनको, जो बाँझ हैं वा विरहिन हैं या पति का जिनको शोक रहता है । इस कारण कि, उनके पति उनसे प्रेम नहीं मानते वा परदेश को चले गये हैं वा छोटे हैं वा पिण्डरोगी हैं अथवा नपुसक हैं ।

जननेवाली स्त्री को बाँझ की अपेक्षा यह रोग कम होता है ।

उपाय—यदि दूध के साथ पान का रस मिला कर दिया जावे तो यह रोग दूर हो सकता है । मसूढ़े दुखें या दाँत खोखले हों । गर्भावस्था में स्त्री के मसूढ़े और दाँतों में बहुधा दर्द होता है; वरन किसी किसी स्त्री को ऐसा होता है कि, प्रत्येक गर्भ में एक दांत गिर

जब दाँतों में दर्द जान पड़े तब रुई से दोनों कान मूँद दे। यदि इससे चैन न पड़े तो लौंग के तेल में रुई भिगो कर दाँत में रक्खे वा मसूड़ों पर लगावे, यदि मसूड़ों में दर्द हो तो।

मसूड़ों में दर्द हो और पेट में गड़बड़ हो तो इस दशा में औषध खानी चाहिये अथवा पोस्त के डोरे और बाबूना को औटा कर कुल्ले करे और सोते समय पुलटिस बाँध ले। कागज को ब्राण्डी शराब में भिगोकर और ऊपर से पिसी हुई कालीमिर्च बुरक कर दो तीन घण्टे तक गलपटे पर लगा रहने दे।

गर्भिणी के लिये भेदी (अर्थात् हलका जुल्लाब) औषध ये हैं-

(१) अरण्डी का तेल दूध में पीवे।

(२) दो तोले दाख, एक तोला गुलाब के फूल, दो तोले अजीर। इनको पीस कर चटनी बना रक्खे। तीसरे चौथे दिन एक सुपारी के बराबर खा लिया करे, यदि प्रयोजन हो तो सोते समय थोड़ा सा अधिक खा लेवे।

(३) पके अंगूर और भुने सेब से भी क़ब्ज दूर होता है।

(४) रोटी के संग शहद वा राब खावे।

हुक्मी विरेचन यह है-इस कारण कि, जितने

दस्त लेना चाहे, उतने ही आवें। अधिक न आवें।
सुपारी, बड़ी हड़ का छिलका, बबूल की कोंपल, तीनों एक एक तोला ले कर तीन पाव पानी में औटावे। जब छटाँक भर पानी रह जावे, उतार ले। जितने दस्त लेना चाहे, कपड़े में उतने ही बेर इस काढ़े को छान कर पी ले। जितनी बेर छानोगे उतने ही दस्त आ जावेंगे।

गर्भिणी का वायु–पाँच वा सात बादाम की मींगी और एक माशे गेहूँ की साफ भूसी खा लिया करे तो वायु का कोप गर्भिणी को नहीं होने पाता, दबा रहता है।

गर्भिणी का अफरा–बच, रसोत, हींग, काला नमक, इनमें दूध औटा कर पीवे।

मूत्र न उतरे–तो दाभ की जड़, दूब की जड़ और काँस की जड़, इनको थोड़ी सी ले और दूध में औटा कर पीवे।

संग्रहणी–अर्थात् जब भोजन न पचे, खाया कि, दस्त में निकल गया। ऐसी दशा में चाँवल का सत्तू आम और जामुन के बक्कल के काढ़े से खावे।

गर्भिणी को वमन–यह स्त्रियों को बहुधा हुआ करती है। इसका उपाय यह है कि, गेरू को आग में गरम करके पानी में बुझा लेवे, और उस पानी को पीवे अथवा कपूरचकरी को पीस कर मूँग बराबर गोली बना के खाय

या वटवृक्ष की डाँढी जला के उसकी राख शहद में चाटे।

गर्भिणी के पाँव की सूजन–जिस स्त्री के पाँवों पर सूजन आ जाय। उसको चाहिये कि, थोड़ा थोड़ा चला करे। इससे सूजन जाती रहेगी।

गर्भिणी को कम नींद आना–सोते समय थोड़ा पानी पी लेवे और गीला कपड़ा एक हाथ में लपेट कर सो रहे। नींद आ जावेगी।

गर्भिणी के रुधिर का बहना–कभी कभी किसी किसी स्त्री को किसी कारण से ऐसा हो जाता है कि रुधिर बहने लगता है, जिससे गर्भ को बहुत ही हानि पहुँचती है, बालक दुबला पतला हो जाता है, वरन कभी कभी तो गर्भ बिना समय गिर भी पड़ता है। जब ऐसी दशा हो, तब अनार के छिलके के पानी की पिचकारी लेने से यह 'जरायुप्रवाह' रुक जाता है। इस पानी के बनाने की रीति बालचिकित्सा के रक्तातीसार के उपाय में बताऊँगी। फिटकरी के पानी में कपड़ा भिगो कर गुप्त अंग के भीतर रक्खे।

गर्भपात–इसके लक्षण यह हैं कि, भसरद्वार से अ-काल रुधिर निकलने लगे। छाती ढीली और छोटी हो जायँ। स्तनों का दूध सख जावे। पेट ठंढा और भारी हो जावे। बालक का फड़कना बन्द हो जावे। गर्भाशय में

कुछ पिण्ड सा ढुरकता हुआ जान पड़े । करवट लेने से पिण्डा सा इधर उधर कोख में आवे । इसके उपाय गर्भरक्षा में बता चुकी हूँ । गर्भपात में भी जापे के बराबर, बरन अधिक सावधानी करनी पड़ती है । प्रसूता को खाने के लिये दो तीन दिनों तक कुछ नहीं दिया जाता है । इन दो तीन दिनों में ताँबे के पैसों को पानी में औटा कर पिलाते हैं । कोई घाँस का पानी औटा कर पीने को देते हैं । दो तीन दिन पीछे भोजन इत्यादि देते हैं । जो पेट में बालक मर गया होवे तो उसके लक्षण तो मैं तुमको धात्रीशिक्षा में बता चुकी हूँ । उपाय यहाँ बताती हूँ । छटाँक भर गौ का गोबर डेढ़ पाव पानी में घोल कर पिला दे अथवा काले साँप की काँचली की धूनी अंग के भीतर देवे । तुरन्त बालक हो पड़ेगा । यदि इनसे बालक शीघ्रतर न निकले तो तुरन्त किसी चतुर दाई को, जिसने डाक्टरी पढ़ी हो (न मिल सके पर डाक्टर को) बुला कर बालक को काट कर निकलवा ले नहीं तो थोड़ी ही देर में इसका विष पेट में फैल जाता है और पीछे स्त्री का बचना दुर्लभ हो जाता है, बरन स्त्री बहुधा मर ही जाती है । इसलिये इसमें विलम्ब करना अनुचित है—

पुष्पावरोध—इसके कुछ लक्षण तो पहिले बता चुकी हूँ, अर्थात् उन कारणों से मासिकधर्म ठीक समय पर न

हो अथवा कई कई मास तक रुका रहे और दो दो तीन तीन, वरन चार चार पाँच पाँच महीने में हो, सो भी कष्ट से और रुधिरप्रवाह कम हो, इसका उपाय किसी चतुर वैद्य से करावे । जिस कारण से हुआ है, उसीका उपाय करावे । इसके उपाय तो बता भी चुकी हूँ । पर चिरचिटे की जड़ को रेशम में बाँध कर गले में पहने तो आराम हो जावेगा ।

स्त्री के पेट का बढ़ जाना फलालैन की पट्टी पेट पर लपेट कर गुदा के नीचे हो कर न बहुत कड़ी और न ढीली बाँधे रक्खे ।

प्रसव को सुगम करने के उपाय-अर्थात् स्त्री जब पीर से (जनने को) व्याकुल होवे तो इन औषधियों से काम लेवे । (१) अरण्डी का तेल ढूँडी पर मले । (२) मेंहुँड़ का दूध नरम और ढूँडी पर मले । (३) सवा तोले अमलताम के छिलके को औटाय, शकर मिला कर पिला देवे । (४) नौ माशे गुलनारूना पानी में औटाय, शहद डाल कर पी लेवे । (५) चुम्बक पत्थर को अपने हाथ में मजबूता पकड़े रक्खे । (६) मनुष्य के बाल जला कर, गुलाबजल में मिला स्त्री के तालुये पर मले या स्त्री की लट उसके मुख में दे दे । (७) अझाभारा अथवा औंगा को पीस, टिकिया कर के थोड़ी देर तक ढूँडी पर

रक्खे। (८) वच उबाल कर पी ले। (९) यन्त्र घुल कर जो पिलाते हैं, वह सब थोथी बात है, इससे कुछ नहीं होता है। कभी न करना चाहिये। (१०) गर्भिणी को तेल लगा कर गरम पानी से नहला दे। (११) थोड़ी सी मूँग की खिचड़ी गरम गरम खिला दे वा गरम दूध अथवा पानी पिला दे। (१२) पोई का पत्ता और जड़ पीस कर तिल का तेल मिला कर भीतर लगा दे। (१३) पीपल, वच पानी में पीस कर और गरम कर अण्डी के तेल में मिला कर टूँडी पर लगा दे। (१४) साँप की काँचली की धूनी अंग के भीतर दे। (१५) हुलास से छींक लिवावे। (१६) प्रसूता के पास हीरे की कनी न रहने दे। (१७) ओखली में धान डाल कर गर्भिणी को मूसल दे कर कुटवावे। सवारी वा ऊँचे आसन पर बिठावे।

(१) पिलानेवाली के स्तनों में जो दूध कम हो तो यह उपाय करे कि, भाड में गेहूँ उकरवा * और अखरोट के पत्ते बराबर ले कर गौ के घी में पूरी उतारे और गौ के घी ही से सात दिन खावे तो बाँझ के भी दूध उत्पन्न हो सकता है। (२) गौ के दूध में थोड़ी शतावरी डाल, खाँड मिला कर पिया करे। (३) जीरा सफेद और साँठी के चॉवलों की खीर पका कर खावे। (४) सौंफ,

* एक बालू से भुनवाना, जिसमें अधभुन हो जावें।

शतावरी को बराबर ले कर कूट छान ले और भीगे चनों के पानी के संग पीवे। (५) गेहूँ के दलिये को दूध में पका कर खावे। (६) सफेद जीरे का पाग बना कर खावे।

दूध शोधन—इसके लक्षण मैं तुझको बालपोषण में बताऊँगी। परन्तु औषध यहाँ ही बताये देती हूँ। (१) मूँग का जूस पीवे। (२) भारंगी, दारुहल्दी, बच, अतीस तीन तीन माशे घोट कर पानी में पिया करे। (३) पाढ, मूर्वा, मोथा, चिरायता, देवदारु, इन्द्रजौ, कुटकी, इनका काढ़ा पिया करे। (४) जायफल की फाल खिलावे, दूध पिलानेवाली को, जो प्यास लगे तो भात ही दूध की लस्सी या ठंढा जल वा काली चाय बना कर पी लेवे, पर शराब कभी न पीवे। जैसे कोई कोई स्त्री करती है।

जो स्त्रियाँ बालकों को दूध पिलाती हैं, उनके स्तनों में कई कारणों से गाँठ पड कर फोडे हो जाते हैं और फिर स्तन पक जाते हैं। जैसे (१) बालक के सिर की चोट लग जाने से गाँठ पड जाती है। (२) स्तन गीले रहने से फट जाते है।

इसको थनैला कहते है और इससे स्त्री को महाकष्ट होता है। उसकी औषध यह है। (१) नागरमोथा और मेथी को बकरी के दूध में पीस कर लगावे। (२) अरण्डी की पत्ती का रस निकाल कर, उसमें कपड़ा भिगो भिगो कर

बेर बेर लगावे । (३) गुलाब की पत्ती, सेऊ की पत्ती, मेहँदी की पत्ती और अनार की पत्ती बराबर बराबर ले कर, धो पोंछ डाले और पानी में बहुत ही महीन पीसे और आग पर गुनगुनी कर के तीन चार बेर स्तनों पर लगावे । लगाते लगाते चैन पड़ जायगा । (४) सहँजने के पत्ते पीस कर लेप करे ।

कुच तड़क गये हों वा स्तनों में पीड़ा हो तो (१) ग्लैसरिन (Glycerine) चुपड़ दे वा घी में मोम मिला कर चुपड़ दे । (२) सुहागा दो तोले, सत गेहूँ का सात तोले पीस छान कर स्तन पर मले । (३) अरबीगोंद एक तोला और फिटकरी पाँच रत्ती, दोनों को महीन पीस कर स्तन पर लगावे । पहिले नुस्खे से जिसमें सुहागा है, बालक के मुख के फफोले भी जाते रहते हैं ।

दूध से भरे स्तन जो तरांते हों अथवा बालक न पीता होवे तो (१) ऐसी दशा में तेल मलवावे । (२) दूध की पुलटिस बँधवावे । (३) कपड़े की चौतह कर के कुचों के बीच में लगा कर दोनों कुचों को कपड़े से बाँध कर कन्धों के पीछे कपड़े को बाँध दे, जिस से कुच नीचे को न ढलक सकें । इससे स्त्री को बहुत चैन पड़ता है ।

प्रदर–यह निबलाई से हो जाता है और इस रोग के

होने से और भी निर्बलाई आती जाती है। यह रोग स्त्रियों ही का है, पुरुषों को नहीं होता है। इसके लक्षण ये हैं कि, मसवद्वार से एक प्रकार का श्वेतरंग का पानी सा बहता रहता है (यह पानी कई प्रकार का होता है)। स्त्री के शरीर में पीड़ा रहती है। हड़फूटन होती है। पानी झगीला, लिपलिपा (चिपकना) और चिकना सा निकलता है। कभी कभी सफेदाई, निलाई वा पिलाई लिये हुए होता है। यह दशा तो साध्य है, परन्तु जब रुधिर बराबर निकलता ही रहता है, रुकता नहीं है, प्यास अधिक लगती रहती है, दाह होता है और शरीर में ज्वर रहता है और शरीर अतिदुर्बल हो जाता है, तब दशा दुस्साध्य है।

इसके होने के कारण ये होते हैं, गर्भपात, भारी बोझा उठा लेना, पेडू आदि में चोट लग जाना, पुरुषप्रसंग अधिक करना, अधिक मद पीना, विरुद्ध भोजन करना, बुरी सवारी पर बैठ कर चलना, कोई अति तीक्ष्ण वस्तु खा लेना अथवा अधिक सोच करना इत्यादि।

श्वेतप्रदर की अत्युत्तम औषध-(१) रतालू लाल, शकरकन्द, इन दोनों को सुखा बराबर लेकर कूट, पीस, छान कर आधी मिश्री मिला, छ माशे लेकर, उस में चार बूंद बड़ के दूध की डाल कर खा लेवे। ऊपर से गौ का दूध पी लेवे। पन्द्रह दिन करे। निश्चय

(२) पठानी लोध डेढ़ तोला ले, और महीन पीस का तीन पुड़िया करे। सवेरे ही तीन दिन तक सर्द पानी के संग फाँके। ऊपर से पकी केले की फली खावे।

पीलाप्रदर–कायफल कूट कर दूध के संग खाय।

सब प्रकार के प्रदर जावें। (१) सुपारी के फूल, पिस्ता के फूल, मँजीठ, सिरयाली के बीज, ढाक का गोंद। चार चार माशे ले कर पानी के साथ फाँके तो सफेद, पीला, स्याह दुर्गन्धयुक्त सब प्रदर जावें।

(२) सालबमिश्री, चिकनी सुपारी और माजूफल को कतर कर कतीरा, काली मूसरी, केले की फली, मोचरस, चोबचीनी दो दो तोले, केसर, जायफल, जावित्री, लौंग, सोंठ साढ़े चार चार माशे, भसींड़ा आठ तोला, तालमखाने, मस्तगी एक एक तोला, देवदारु चार तोला। इन सब को कूट पीस कर छान ले। इन सब के बराबर मिश्री ले कर चाशनी करे, आठ तोले घी, ⟩= मावा डाले। पीछे कुटी पिसी औषधें मिला दे। नौ नौ माशे साँझ-सकारे खा लिया करे।

अन्य औषधें–(१) तोला भर फालसे के पेड़ की छाल ले, रात्रि को पानी में एक कोरे कुल्हड़े में भिगो दे। सवेरे उस पानी में मिश्री मिला कर पी लिया करे। पन्द्रह दिन तक करे। (२) कसेला, माजूफल, पुरानी सुपारी,

धाय के फूल, सोंठ, लोध । इन सब को पाव पाव भर ले । मँजीठ तीन तोले, मोचरस तीन तोले, गेरा लकड़ी तीन तोले, सोंठ तीन तोले इनको कूट छान कर सेर भर घी में भिगोवे और दो सेर मिश्री की चाशनी करके लड्डू बाँध ले । छटाँक छटाँक भर नित दोनों समय खा लिया करे तो सब प्रकार के प्रदर रोग जावें । (३) चिकनी सुपारी को पीस कर घी में बराबर की खाँड़ मिला कर दो दो तोले नित दोनों समय खावे । (४) डाभ की जड़ को चाँवल के पानी में पीस कर तीन दिन पीवे । (५) गूलर के फल सुखाय महीन पीस उसमें मिश्री और शहद मिला कर तीन तोले भर की गोली बाँध, सात दिन खावे । ([illegible]) टिंक्चरस्टील की पाँच पाँच बूँद पानी में डाल कर नित सबेरे पीवे ।

रक्तप्रदर यह है, जब स्त्री के गुप्त अंग से मासिक रुधिर बराबर बहता रहे और बंद न होवे, जिसको 'पैर-कना' या 'पैर जारी होना' कहते हैं । उपाय (१) आम की गुठली का चूर्ण कर के घी, बूरे में मैदा मिला हलुवा बना कर खिलावे । (२) आम की गुठली को आग में भुन भुन कर खिलावे । (३) अशोक की छाल के काढ़े के साथ दूध को औटा और ठंढा कर के प्रात:काल शक्ति प्रमाण पिलावे । (४) कठगूलर के कच्चे फल के रस में

शहद मिला के चटावे। दूध भात खावे। (५) सफेद सुरमा, रसौत, पठानीलोध, कहरवा, चुनियाँगोंद, मोच रस, धाय के फूल सब बराबर ले कर पीस, कूट छान ले। सब की बराबर मिश्री मिलाकर छः छः माशे की पुड़िया बनावे। गौ के कच्चे दूध के संग साँझ सकारे खावे। यदि कच्चा दूध न पच सके वा जाड़े की ऋतु हो तो औटा कर पिलावे, पर गुनगुने दूध के संग सेवन करे। दूध न मिले तो शहद के संग चाटे।

टिकिया—काही की टिकिया बरमासने के पत्ते पर धर कर मूत्रस्थान पर बाँध देवे और मँजीठ को औटा कर उसका पानी ठंढा कर के पिलावे।

जो यह प्रदररोग स्त्री को गर्भावस्था में पिछले महीने में होवे, जैसा कि, कभी कभी हो जाता है तो यह उपाय उचित है।

(१) स्त्री अपने नीचे कम्मल बिछा कर न सोवे। (२) बिछौना बहुत गुदगुदा न रक्खे। (३) मलकोष्ठ को शुद्ध रक्खे। (४) कभी कभी अल्प विरेचक औषध खा लिया करे। (५) भोजन साधारण, पर पुष्ट करे। (६) मदिरा आदि का कदापि सेवन न करे। (७) सज्जी, फिटकरी व सिरके को गरम पानी में मिला कर भीतर के अंग को साँझ-सकारे धो दिया करे।

अब तुझको कुछ औषध फुटकर बताती हूं, जो तेरे काम आवेंगी।

आँखों के रोग–(१) जो आँखें लाल रहती हों तो छः माशे बकरी के दूध में चार रत्ती अफीम पीस कर नेत्र के ऊपर लगावे। भीतर तनिक भी न जाने दे, वरन हाथ तक न लगने दे। नहीं तो बहुत दुःख होगा। (२) दो रत्ती फिटकरी को एक तोले पानी में पीस कर चार बूँद आख में साँझ-सकारे, दोनों छाक डाले–ललाई जाती रहेगी।

रतौंधी–यह वह रोग है कि, निबलाई से रात्रि वा अँधेरे में कम दृष्टि पड़ता है। इसका मुख्य उपाय तो मस्तक की पुष्टि है। (१) गौ का घी, मिश्री और कालीमिर्च का सेवन प्रातःकाल ही किया करे। (२) आँखों में अँगरेजी साबुन आँजे। (३) हुक्के की कीट (अर्थात् जो नैचे में जमी होती है) अथवा देशी स्याही दवात में से ले कर आँख में आंजे। तीन चार दिन में आराम हो जावेगा। फिटकरी की सलाई बना कर आँख में लगा लिया करे, पर अधिक नहीं। (४) पान के रस की तीन चार बूँदें आँख में डाल कर पीछे से आँखों को साफ पानी से धो डाले–दस पाँच दिन करने से बीमारी जाती रहेगी।

१०नेत्र की ज्योति–कपूर को जला कर काजल पार ले। रात्रि को आँज कर सो रहे। बहुत ही गुणकारी है। ज्योति बढ़ती है।

बवासीर–यह दो प्रकार की होती है। (१) जिस में रुधिर आता है, (२) जिसमें मस्से सूज जाते हैं। (१) छोटे छोटे कोमल सोखनेवाले ललाई लिये हुए गूमड़े होते हैं, जिनसे लोहू गिरता है। इनसे मल त्यागने में बड़ी पीडा होती है। कभी कभी इनके सग आँतें तक निकल आती हैं। इसलिये जब यह रोग होवे तब बहुत देर तक मल त्यागने को न बैठी रहे। त्याग कर तुरन्त उठ बैठे। जो बने तो अँगूठे के बल से आँत को भीतर कर दे और इसीलिये अँगूठे के नख को कटाये रहे, जिस से लग जाने का भय न रहने पावे। खूनी बवासीर में रोगी बहुत निर्बल हो जाता है, परन्तु पीड़ा कम रहती है। मस्सों में पीडा बहुत ही अधिक होती है। बेचैन हो कर रोगी तिलमिला जाता है। (२) मस्से, जो सूज आये हों तो अखरोट के तेल में रुई भिगो कर गुदा के भीतर रक्खे, मस्से गल जावेंगे। (३) दो सेर पानी में पोस्त के डोरे और नायूना को आध घंटे तक औटा कर, उसमें फलालैन का टुकड़ा भिगोवे और इससे गुदा को सेंके। सोते समय पुलटिस बाँध दे। (४) गेंदे की पत्ती

कालीमिर्चों में घोट कर भाँग की भाँति पीवे ।

उबटना-(१) पीली सरसों ऽ१, श्वेत चन्दन का चूरा ऽ~, बालछड ऽ~, नेत्रवाला ऽ०॥, आम की छाल ऽ~, केसर १)), चिरौंजी ऽ=, इन सब को कूट छान कर रक्खे । जब आवश्यकता हो, दूध में पीस कर लगावे । शरीर में सुगन्ध होगी, कान्ति बढ़ेगी, स्वच्छता होगी ।

(२) बकरी का दूध, गौ का घी, मसूर का चून, नारंगी का छिलका, मैदा मिला कर उबटन करे ठंढे पानी से सवेरे उठ कर और सोते समय मुख धो डाले ।

यह तुझको स्त्रीचिकित्सा में नाममात्र बतला दिया है । नहीं तो पार भी नहीं पाती । अब उठ, चल कर सो रहें । भाई कई बेर आ आ कर और दूर ही से हमको यहाँ बैठी देख कर फिर गया है । उसके सोने में बाधा पड़ती है और सोना हमको भी है, यह कह कर उठ दीं ।

स्त्रीचिकित्सा समाप्त ।

स्वास्थ्यरक्षा ।

छठे दिन जब फिर रात्रि का समय हुआ और मोहनी अपनी बड़ी बहिन दुर्गा से आकर पूछने लगी कि, आज

तुम मुझको क्या सिखानोगी, तो दुर्गा यों बोली कि, हे बहिन ! अब मैं तुझको कुछ स्वास्थ्यरक्षा के विषय में बताना चाहती हूँ । इससे यह प्रयोजन है कि, अपने शरीर को आरोग्य और नीरोग कैसे रक्खे ? सो यह भी अधिकतर स्त्री के अधीन है क्योंकि यह बहुधा खाने, पीने और घर को मैला-कुचैला रखने से नहीं रहता है । इसलिये इसके रखने के नियम तुझको बताती हूँ ।

यह तो तू जानती ही है "संसार के सर्वसुख एक ओर और अकेली आरोग्यता एक ओर।" इस कारण कि यही सब सुखों का मूल है । यदि शरीर आरोग्य रहा तो जीव मोक्ष तक के साधन सुगमता से करके उसे प्राप्त कर सकता है । किसी ने सच कहा है--'सहस सुख भी आरोग्यता के पटतर नहीं।' जिसकी काया नीरोग रहती है, वह सब सुख भोगती है । जो सदा रोगी रहती है, उसको सुख भी कुछ सुख नहीं दे सकता । नीरोग रहना दो प्रकार से बन सकता है । प्रथम खाने पीने की वस्तुओं में सावधानी रखने से । दूसरे घर और कपडे आदि के स्वच्छ रखने से । इसलिये मैं पहिले तुझको यही बताती हूँ कि, खाने, पीने की वस्तु में क्या क्या सावधानी रखनी चाहिये ।

खाने पीने की वस्तु को कभी उघारी न रक्खे क्योंकि

कूड़ा कर्कट, धूल वा मकरी के अण्डे, छोटे कीड़े, सुरेहरी, पई, घुन वा ऐसी ही दूसरी वस्तुएँ उसमें गिर पड़ती हैं और पेट में जा कर नाना प्रकार के रोग, कुपच आदि उत्पन्न करती हैं।

भोजन को कच्चा न खावे। अच्छा पका हुआ खावे। कच्चा भोजन पेट में गच करता है और थोड़े ही दिनों में बड़े बड़े रोग उठा खड़े करता है।

ऐसा भोजन कभी न खाना चाहिये, जो सड़ गया, घुस गया, फफूँद गया वा गल गया हो अथवा सूख गया हो क्योंकि सूखा भोजन पेट में जा कर आँतों में चुभता है और फिर शूल का दर्द कर देता है। सड़ा, घुसा भोजन भीतर जाकर विष का गुण रखता है।

इसलिये सदा टटका भोजन खावे और स्नान करके खावे, रौंथ रौंथ कर खावे। शीघ्रता से न निगल जावे। कौर छोटा छोटा खाना चाहिये। बड़ा कौर न खाना चाहिये। जब एक ग्रास को खा लेवे तब दूसरा मुख में देवे। अधिक रौंथने में यह गुण है कि, मुख की लार भोजन में अधिक मिल जाती है, जिससे शीघ्र गल कर वह पचजाता है। क्योंकि लार में एक प्रकार की क्षार वस्तु है।

भोजन के समय बहुत पानी न पीना चाहिये और न भोजन के पहिले और न पीछे पीना चाहिये। भोजन

कर-के आध घंटे लेट रहना चाहिये। पीछे थोड़ा पानी पीना चाहिये तो भोजन अच्छा पचता है।

भोजन करके परिश्रम न करे, न राह चले। नहीं तो पेट में दर्द हो जायगा। भोजन तब करे, जब खूब कड़कड़ा कर भूख लगी हो क्योंकि कहा है कि, 'धनी को जब भूख लगे और दरिद्री को जब मिल जावे, उस समय भोजन करना उचित है'।

अरुचि या अजीर्ण में भोजन कभी न करे और परिश्रम करने के पीछे ही भोजन न करे। रुचि से अधिक भी न करे। जिसके सम्मुख भोजन करने से लज्जा वा ग्लानि आती हो, उसके सम्मुख भी कभी न करे। इस लिये सब से उत्तम एकान्तस्थान भोजन के लिये है। जिस भोजन के लिये मन न करता हो, उस भोजन को भी न करे। क्योंकि 'जो रुचता है वही पचता है'। किसी के संग भी भोजन करना उचित नहीं है। साँझ-सकारे की संधि-समय में भोजन न करे। इससे वायु की वृद्धि होती है। भोजन के पीछे ही भोजन न करे। कम से कम दो भोजनों में चार घंटे का अवश्य अन्तर होना चाहिये और नियत समय पर भोजन होना चाहिये। नरम, पाचक, आर्द्र, स्वरूप, सुगन्धित भोजन बुद्धि तथा बल को बढ़ाता है। अधिक भोजन अजीर्ण, पाकयन्त्र में पीडा और मन्दाग्नि

तथा वमन रोग को उत्पन्न करता है । इसलिये इतना भोजन करे कि, थोडी सी रुचि बनी रहे । भोजन पीछे स्नान भी न करे । भोजन करते समय रसोंई करनेवाले को, कुत्ते को, माँ वा स्त्री अथवा अपने किसी और प्यारे को सम्मुख बैठावे । इससे भोजन अच्छा किया जाता है और पचता है । भोजन पेट भर कर कभी न करे । सदा थोडी सी भूख बनी रहने दे । भोजन करने को जब बैठे, तब हाथ, पाँव धो कर और कुल्ले करके बैठे । पालथी मार कर सुख से बैठे । किसी प्रकार की चिन्ता का ध्यान न करे । किन्तु प्रसन्न चित्त हो कर भोजन करे । भोजन के समय, अप्रसन्न कभी न हो । क्योंकि प्रसन्न हो कर खाने से चित्त शान्त रहता है और शरीर पुष्ट होता है । अप्रसन्न होकर करने से देह नहीं पनपती, वरन बल घटता है ।

भोजन के आदि में ईश्वर का ध्यान कर के धन्यवाद दे । फिर पहिले कुछ मधुर खावे । बीच में लोन और खटाई की वस्तु खावे । भोजन के अन्त में दही, मठा, नींबू, इमली इत्यादि खावे । इससे अच्छा पचता है । इसी कारण अचार वा दही बडे वा राइता भोजन में अवश्य होना चाहिये । भोजन के संग थोडा सा गुड खा लेने से भी बहुत गुण होता है । भोजन खूब पचता है ।

भोजन के आदि और अन्त में थोडा मीठा भोजन करे

और जिन भोजनों का आपस में विरोध है, उनको साथ न खावे, जैसे दूध के संग शराब, मठा, गुड, मछली और साग, खीर के संग नींबू, तेल के संग दही और अफीम, उड़द के संग शहद, मूली के संग मीठा, मसूर, उडद और मास, केले के सग लस्सी, गरम भोजन के सग दही, खिचड़ी के सग खीर, दही के सग मूली वा पखेरू का मास, सिरके के सग चाँवल, शहद के सग घी, मसूर, लहसन, खरबूजा, मुनक्का, दही और मूली; खरबूजे के संग मास, शहद और आम; मास के पीछे शहद; मछली के संग दूध वा ईख का रस वा शहद, लहसन, प्याज़, फिंदक या बादाम न खावे । इन विरुद्ध भोजनों के अतिरिक्त छः प्रकार से भोजनों की विरुद्धता और भी मानी है । उसका भी ध्यान रक्खे ।

१ रसविरुद्ध–जैसे दूध और नमक जिसके मिलने से दूध फट जाता है ।

२ योगविरुद्ध–जैसे गुड दूध कि, मिल कर अवगुण कारी हो जाते हैं ।

३ ऋतुविरुद्ध–जैसे क्वार मे करेले, माघ में मूली । इस की, चौपाई यह है ।

सावनसाग रु भादों मही । क्वार करेला कातिक दही ॥
अगहन ज़ीरा पूसे धना । माघे मिश्री फागुन चना ॥

चैतै गुड वैशाखै तेल। जेठै पथ असाढै बेल॥
इन तेरह से बचे जो भाई। ता घर वैद्य न स्वप्नेहु जाई॥

४ मानविरुद्ध–जैसे घी, शहद बराबर। सेर दूध में सवासेर बूरा।

५ क्रमविरुद्ध–जैसे भोजन से पूर्व पानी वा दूध पीना वा भोजन के अन्त में भैंस का दही पीना।

६ धर्मविरुद्ध–जैसे प्याज, लहसन, मांस इत्यादि।

भोजन सदा एक सा न करे। हेरफेर से करती रहे। इसी मिस से शास्त्रकारों ने भिन्न भिन्न तिथियों में भिन्न भिन्न पदार्थों को भोजन करने का निषेध किया है। भोजन कर के कुल्ले कर डाले और थोड़ी दर पीछे छ' माशे सौंफ चाब ले। इससे मलत्याग भले प्रकार से होता है। भोजन पश्चात् चिन्तारहित हो कर बैठे वा बाई करवट लेटे अथवा कुछ टहले और भोजन के पीछे कभी सवारी पर न चढे और न धूप में फिरे। बासी भोजन को तचा करके न खावे। पानी सदा छान कर पीना चाहिये। बहुधा बाल, कीडे इत्यादि पानी में आ जाते हैं, जो पेट में जा कर दु ख देते है। ठढे से और निहार मुख पानी कभी न पीना चाहिये। शरीर में जब पसीना आ रहा हो तब भी पीना न चाहिये। बाहर से चल कर आई हो तब भी न पीवे। शौच जाने के पीछे भी न

पीवे। इससे पेट चल निकलता है और बहुमूत्र का रोग हो जाता है। शौच से पूर्व पी लेवे तो मल त्याग अच्छा होता है। लेटे लेटे न पीवे, नहीं तो किसी नस वा पसली में उतर जाने का भय रहता है। कई कूपों का पानी मिला कर न पीवे।

पानी जब पीवे तब बैठ कर पीवे और तीन साँस में पानी पीवे। एक साँस में न पीवे। अजीर्ण हो तो थोड़ा थोड़ा ठंढा पानी कई बेर पीवे और बाईं करवट लेटी भी रहे तो अजीर्ण पच जायगा। पानी को मुख में हिला हिला कर न पीवे। पानी पीने में मुख और गले को ऊपर की ओर न करे और पानी पीने में शब्द न करे। बर्तन को ऊपर उठा कर न पीवे। मुख से बर्तन लगाकर पीवे। खारी पानी कभी न पीवे। इससे पथरी का रोग हो जाता है। मसाने और गुर्दे में रेह हो जाती है। प्यास से अधिक पानी कभी न पीवे। इससे पेट बढ़ जाता है, जठराग्नि मन्द हो जाती है। रुधिर में जल का अंश अधिक हो जाता है। शरीर की पेशी निर्बल हो जाती है। पानी बहुत ठंढा भी न पीवे और न गरम पानी पीवे। भोजन के पहिले भी पानी न पीवे। इससे भी जठराग्नि मन्द हो जाती है। भोजन के संग बेर बेर भी पानी न पीवे। इससे भोजन पचता नहीं है।

अजीर्ण हो जाता है । परिश्रम कर के भी तत्काल पानी न पीवे और न पाँव धोवे । रात्रि में सो कर उठे और पानी पी कर फिर सो जावे तो कफ अधिक होता है । इसलिये ऐसा न करे । पानी पीने की एक कहावत प्रसिद्ध है कि-' माघ गलेला ' ' भादों वेला ' 'जेठ मास में प्यास की वेला ' । इससे यह प्रयोजन है कि, माघ मास में पानी बहुत ठंडा होता है । वह दाँतों में लगता है । इसलिये गले से पीवे अर्थात् बहुत ठंडे जल को जब पीवे तो दाँतों से लगा कर न पीवे । भादों मास में पानी में कीड़े मकोड़े वा कूड़ा कर्कट इत्यादि के पड़ने का भय रहता है । वेले में पीवे कि, वह तुरन्त दीख जावे । ताकि निकाल डाला जावे और पीने में न आ जावे । जेठ मास में जब प्यास अधिक लगती है तब बहुत पानी पीवे कि, फेफड़े सूखने न पावें । यह तो खाने, पीने के विषय में रहा । अब और विषय बतलाती हूँ ।

प्राणी सगरे दिन परिश्रम करता है तो उसको रात्रि में विश्राम करना उचित होता है और विश्राम में सोना सब से उत्तम और सुखदायक होता है। इसलिये इसके नियम तुमको बतलाती हूँ । ग्रीष्मऋतु में छ घंटे और शीतऋतु में आठ घंटे का सोना नीरोगी प्राणी को बहुत है अथवा इससे न्यूनाधिक । परन्तु गरमी के दिनों में दुपहर को

भी घटे, दो घटे का विश्राम आवश्यक है। इससे मस्तिष्क की शक्ति को चैन मिलता है। बालक, बूढ़े और रोगी को नियत समय से अधिक सोना स्वास्थ्य का रक्षक है। सोना निर्विघ्न होना चाहिये अर्थात् ऐसा कि, जिसमें स्वप्न इत्यादि कुछ न दीखे। सुषुप्तिदशा होना चाहिये। स्वप्नदशा न रहनी चाहिये। इसी कारण सोने के पूर्व भोजन सूक्ष्म करना चाहिये। पेट भर कर कभी भोजन सोने के पूर्व न करे। सिरमें तेल डाल कर सोवे। दीपक को सोने के पूर्व बढ़ा दे। इनसे नींद अच्छी और गहरी आती है। भरे पेट से स्वप्न बहुत और बुरे बुरे दीखते हैं। नींद में विघ्न पडता है। शयनागार स्वच्छ और पवित्र होना चाहिये। उसमें दुर्गन्ध आदि कुछ न हो। बहुत असबाब आदि भी न भरा हो या धरा हो। किन्तु शयनभवन में अच्छे अच्छे फूल, चित्र इत्यादि रक्खे हों। भयानक खिलौने व चित्र न हों। भीतें लिपी पुती हों। ग्रीष्म और वर्षाऋतु में पवनीक और शीत में गरम भवन होना चाहिये।

खाट का सिरहाना पाइँते से कुछ ऊँचा रहना चाहिये, जितना अपने को भावे। परन्तु सिरहाना उत्तर दिशा को और पाइँत दक्षिण दिशा को न करना चाहिये। शास्त्र में इसको वर्जित किया है और लोकप्रसिद्ध भी है। इसलिये

कि, इस भाँति सोने से स्वप्न बुरे बुरे दीखते हैं। प्राणी कभी कभी बावले तक हो जाते हैं, वरन मर भी जाते हैं। क्योंकि तने देखा है कि दिग्यन्त्र (ध्रुवयन्त्र वा क़ुतुबनुमा) की सुई जब उत्तर को ठीक होती है तो ठहर जाती है। अन्य किसी दिशा में नहीं ठहरती है। इसी भाँति मनुष्यों के मस्तक में जो धमनी नाडी है अर्थात् वह जो बालक के तालू में लपका करती है। जब ठीक दोनों ध्रुवों के बीच में उत्तर को होती है तो ध्रुवयन्त्र की सुई की भाँति ठहर जाती है। इसी कारण दक्षिण को पाँव और उत्तर को सिरहाना करके न सोना चाहिये। इसके ठहरने से मस्तक में रोग उत्पन्न हो जाते हैं, जो कभी कभी अति भयानक होते हैं। बिस्तर गुदगुदा हो सिरहाना कुछ ऊँचा और नरम उसीसा (तकिया) हो। ओढ़ने बिछाने के वस्त्र धुले हुए स्वच्छ हों। मलिन न हों। पसीने आदि की दुर्गन्ध न आती हो। जाडों में कपडे धूप में सुखा देने चाहियें।—

कपडे से मुख ढाँप कर न सोना चाहिये। नाक तक ओढ़े। मुख उघारा रहने दे। इसका कारण यह है कि, मुख में से जो दुष्टवायु निकलता है वह कपडे से रुक कर भर जाता है और वही भीतर को साँस द्वारा फिर चला जाता है। मुख उघरे में यह बात नहीं होती। स्वच्छवायु बाहर से

बराबर आता रहता है। सोने के घर में मिट्टी का तेल न
रहने दे। भीगे वा सर्द वस्त्र ओढ़ वा बिछा कर कभी न
सोवे। सदा इकेली खाट पर सोवे। दूसरे जने को अपने
पास न सुलावे। यहाँ तक कि, स्त्री पुरुष भी भोर तक
एक खाट पर न सोवें। दिन में कभी न सोवे विशेषकर
वर्षाऋतु में। इस से ज्वरांश हो आता है। आलस्य शरीर
में भर जाता है। अँगडाई आने लगती है। इसलिये
दिवास्वप्न का शास्त्र में निषेध है। परन्तु बालक, बूढ़ी
स्त्री, थकी हुई, घाववाली, मद्य पीनेवाली, नित्य वाहन
पर चलनेहारी, मार्ग की थकी हुई, भूखी, मेद, पसीना,
कफ, रस और रुधिर क्षीण तथा उनींदी, अजीर्णवाली
थोड़ी देर को दिन में भी सो जावें तो कुछ हानि नहीं,
वरन उलटा लाभ है कि, इस सोने से इनको चैन मिलता है।

धरती में कभी न सोवे और विशेष कर वर्षाऋतु में
क्योंकि बहुधा कीड़े-मकोड़े के काट खाने तथा कान, नाक
में घुस जाने का भय रहता है। सोने के समय कान में
सदा रुई दे कर सोना चाहिये। धरती पर सोने से नसें
दब जाती हैं और देह तख्ता सी हो जाती है। लोहू बहना
बन्द हो जाता है, जो तख्त वा चौकी पर सोने से भी
हो जाता है।

ओस में सोना भी वर्जित है। क्योंकि ओस की ठंड

फेफड़ों में घुस जाती है और खाँसी वा दम का रोग उत्पन्न कर देती है। सवेरे उठ कर शरीर अकड़ने लगता है। देह टूटती है और देह में आलस्य छाया रहता है।

सोने से पहिले नित अञ्जन आँजना चाहिये और हाथ, पाँव धो कर और कुल्ले कर के सोना चाहिये। इससे नींद गहरी आती है और स्वप्न नहीं दीखते हैं। रात्रि को सोते समय और भोर को उठते ही सट (ताजा) पानी से सदा मुख धो डाले तो मुख की कान्ति सदा बनी रहेगी। मुख पर झुर्री न पड़ेगी। यह एक बड़े प्रसिद्ध डाक्टर का नुस्खा है। दिन चढ़े वा सूर्योदय तक न सोवे, वरन चार घड़ी के तड़के जब तक तारागण दीखते रहें, उठ बैठे और आँख खुले पीछे फिर न लेटी रहे। क्योंकि यह हानिकारक है। आँख खुलते ही तत्काल उठ बैठे। थोड़ा सा पानी पी कर मल त्याग कर आवे तो बहुत ही लाभदायक है। क्योंकि ऐसा करने से काया नीरोग और चित्त प्रसन्न रहता है और स्त्री की तो लाज भी बनी रहती है। प्रातरुत्थान के बड़े बड़े लाभ कवियों ने वर्णन किये हैं। यथा—

दो॰ सदा रैन को सोइ के, जो जागे बड़ भोर।
रहे निरोग शरीर से, गहे ज्ञान की डोर॥

प्रातःकाल उठ कर शौच आदि जाना चाहिये फिर

गोबर को नित और तुरन्त उठवा दिया करे। तमाकू इत्यादि की पीक से भी घर को अपवित्र न करना वा रखना चाहिये और न थूक, खखार वा नाक सिनकने से।

घर में बहुत मक्खी, मच्छर न रहें। इसलिये चूने में संखिया डाल कर पुतवाना चाहिये और यदि हो सके तो जाड़ों में गुलाबी रङ्ग, ग्रीष्म में हरा वा नीला, वर्षा में श्वेत रङ्ग से घर को पुतवावे। परन्तु यह धनी लोगों के व्यवहार हैं, साधारण के नहीं।

वर्षाऋतु में बहुधा कीट पतङ्ग इत्यादि उड़ उड़ कर दीपक की लोइ पर आन कर गिर पड़ते हैं। इसलिये दीपक में यदि प्याज डाल दे तो पतङ्ग इत्यादि जीव दीपक के पास नहीं आवेंगे।

जिस घर में रहे, उसको नित बुहार डाले। कूड़ा-कर्कट इकट्ठा न होने दे। एक तो इसमें दुर्गन्ध आने लगती है। दूसरे कीड़े-मकोड़े, बिच्छू, काँतर आदि आ छुपते हैं, जिनके काटने का भय रहता है। घर को बहुत स्वच्छ और लिपा, पुता रखना चाहिये। आठवें दिन गौ के गोबर से घर की धरती लिपवा दिया करे और धूप, लोहबान, गूगल वा कपूर की धूनी देती रहे। इससे दुर्गन्ध दूर होती रहती है। कोई रोग नहीं होने पाता और वायु भी शुद्ध रहता है।

इसी कारण तुलसी का वृक्ष और सूर्यमुखी के वृक्ष घर में अवश्य रहने चाहियें। इनके रहने से घर का वायु बहुत ही अच्छा रहता है। नीरोग होजाता है और इनकी तीव्र सुगन्धि घर की दुर्गन्ध को हर लेती है।

तुलसी के दल को, जो नीचे गिरें, उनमें से दो वा चार नित भोर को खा लिया करे तो बहुत ही गुण करते हैं।

निवासगृह में बहुत अँधेरा न होना चाहिय, जिससे उस में सील रहे। सील का घर बहुत बुरा होता है। उसके निवासी आरोग्य कभी नहीं रह सकते हैं। क्योंकि ऐसे घर का वायु कभी स्वच्छ नहीं रहता। घर से मकरी के जाले आदि सब निकाल देने चाहिये। छिपकली के अण्डे न होने देने चाहियें। नमक को सदा ढका रखना चाहिये, क्योंकि इस को बहुधा छिपकली चाट जाती है और ऐसे नमक के खाने से कोढ़ होजाता है। सील के घर में एक और जीव जिसे 'दखोरी' कहते हैं, होजाता है। इसके काटने से बहुत दुःख होता है। इसके सिवाय सील के घर में बहुत से अन्य जीव उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये ऐसे घर का रहना आरोग्य कभी नहीं रहने देता। इसी कारण धनी लोग अपने घरों में कबूतर पालते हैं और कलकत्ते आदि बंगाल देश के (जो आर्द्र देश है) नगरों में साहब लोग अपने

अपने बँगलों में इनको बसेरा लिवाते हैं और इसी हेतु सध्याममय नित दाना डालते हैं कि, यह पक्षी भोजन के लोभ से आ कर यहा बसेरा लें। कबूतरों के पंख का वायु बहुत ही गरम है। लक़वा रोग में कबूतरों के दड़बे के वायु में रोगी का मुख घसवाते हैं और छोटे छोटे बालकों को, जिनके बहिन भाई हो होकर मर जाते हैं, इनके पख की वायु खिलाते हैं।

सोने के कपड़ों को ओढ़ने बिछाने से पहिले अच्छी भाँति फटकार लेना चाहिये और वर्षाऋतु में तो इस बात की बहुत ही सावधानी रखनी चाहिये क्योंकि बहुधा जीव जन्तु इनमें घुस बैठते हैं।

खाट भी जिन पर सोया जावे, खटमल इत्यादि दुःखदायी जीवों से बची रहनी चाहिये। इसका सहज उपाय यह है कि, खाटों को धूप में रखना चाहिये। खाटों को सीले स्थान में रक्खा रहने देने से ऐसे जीव उत्पन्न होजाते हैं। कभी कभी छोटे छोटे जीव पान और साग में भी आ जाते हैं। इसलिये इनको भी अच्छी भाँति धुलवा कर और देख कर खाने पीने में लाना चाहिये। अब तुझको कुछ ऋतुचर्या बताती हूँ कि, किस ऋतु में कौन कौन सी वस्तु खानी चाहिये।

सावन मास ल[illegible]

कि, बैंगन इस समय पक जाते हैं और उनमें बीज अधिक हो जाते हैं, जिनका खाना महाहानिकारक है। सावन मास में कदी भी न खावे। कातिक मास से पहिले सिंघाड़े, कचरी, गन्ना, चने का साग, बेर इत्यादि न खावे। इस कारण कि, ये इस समय से पूर्व पक नहीं चुकते। कचे रहते हैं। अन्त कातिक में पकते हैं और खाने योग्य होते हैं।

वर्षभर में छः ऋतु होती हैं। उनकी चर्या इस प्रकार से रहनी चाहिये।

(१) ग्रीष्मऋतु—शीतल जल से स्नान और उसका पान करना। प्रातःकाल सद दूध मिश्री डाल कर पीना। कपूर, चन्दन लगाना। पुष्पमाला धारण करना वा अन्य सुगन्धि सूँघना। मोटे कपडे पहिनना कि, धूप और लू न लगे। ठंढे मकान में दुपहर को रहना, परन्तु एकदम से निकल कर बाहर धा धूप और लू में न आ जाना क्योंकि ऐसी ही दशा में लू का लगना सम्भव है। दो बजे से चार बजे दुपहर तक लू लगने का भय है। इस लिये अधिक रस इत्यादि के घर में न रहे। यथासमय ... । गेहूँ, चॉवल का भोजन करे।

शिखरन और सत्तू खाना और शर्बत पीना और सघन ... की छाया सेवन करना यह पथ्य है।

सिरका अथवा दूसरी तीक्ष्ण वस्तु खाना, अधिक

परिश्रम करना, धूप और लू में अधिक डोलना इस ऋतु में कुपथ्य है।

हड़ का सेवन—अगर का गुड मिला कर, एक छोटी हड को पीस, मिला कर खावे।

(२) वर्षाऋतु—राइता या मट्ठा पीना; श्वेत, महीन और ढीले वस्त्र धारण करना, गेहूँ, चाँवल, उडद, दूध इत्यादि का अल्प भोजन करना; टटका और कूपजल का पान और उससे स्नान करना, शरीर में मिट्टी मलना, उबटना करना, घरों में धूप (सुगन्धादि) समीरसेवन पथ्य है।

क्योंकि घर में पवन इस ऋतु में कम मिलता है, परन्तु जब से पर्दे की रीति प्रचलित हो गई है, तबसे स्त्रियों के लिये झूला रख दिया है कि, यह भी एक प्रकार का समीरसेवन है कि, झोंका लेने से वायु लगता है। सो यह ही करना चाहिये। परन्तु बहुत स्त्रियों का इकट्ठा होना अच्छा नहीं है, जैसा कि प्रचार हो रहा है। केवल दो चार स्त्रियों ही का रहना ठीक है।

दिन में या ओस में अथवा बहुत सोना; नदी, नाले, तडाग या अन्य नवीन जल का सेवन वर्जित है।

वातल वस्तु का सेवन, धूप का भ्रमण, पानी में भीगना, ठढा भोजन करना, चित्त को खेद मानना, दही खाना,

(३) सदा एक ही भोजन न करना, भोजन में हेर फेर करते रहना। फल और साग थोड़ा थोड़ा नित खाना, नहीं तो तीसरे दिन अवश्य ही खाना। ऐसा न करने से रुधिर में विकार हो जाता है, जिसको अंग्रेजी में स्कर्वी (Scurvy) कहते हैं अर्थात् मसूड़े इत्यादि से रुधिर बह निकलता है।

(४) मद्य सादा—सपुष्ट और सार भोजन करना।

(५) रात्रि के अन्त में पानी और दिन के अन्त में दूध पीना।

(६) दिन में दो बेर दन्तधावन करना।

(७) प्रसन्न, हर्षित और आनन्दित रहना क्योंकि प्रसन्नता, हर्ष इत्यादि से स्वास्थ्य की मित्रता है।

(८) यथाशक्ति व्यायाम करना। इससे बढ़ कर स्वास्थ्यप्रदायक कोई वस्तु संसार में नहीं है। इस कारण ...भोजन पचता है, जो जीवन का आधार है।

चिकना पुष्ट भोजन, उष्ण वस्त्र (ऊन वा रुई) धारण, दूध, घी, तिल, उडद, गेहूँ, चावल, मिश्री, केसर, कस्तूरी, व्यायाम, तापना ये पथ्य हैं। दिन का सोना कुपथ्य है।

हड़सेवन–पाँच हड का चूर्ण पीपल के संग खावे।

(६) वसन्तऋतु–वाटिकाभ्रमण, कफनाशक आहार विहार करना; गेहूँ, चाँवल, मूँग, शक्कर, शर्बत, व्यायाम; समीरसेवन, वमन, विरेचन ये पथ्य हैं।

कफकारक भोजन, मीठा, खट्टा दही, चिकनी वस्तु, गरिष्ठ भोजन इत्यादि कुपथ्य हैं।

हडसेवन–छः हड का चूर्ण शहद के संग खावे।

जो वस्तु स्वास्थ्य की सहायक और विनाशक हैं, उनका ध्यान रक्खे और वे इस प्रकार हैं।

स्वास्थ्य की सहायक–

(१) चार घड़ी के तड़के उठना और थोड़ा शीतल जल पी कर मल त्यागना।

(२) कान, मस्तक और तलुए में तेल * लगाना, शरीर में तेल मलना।

---

* (१) कान में तेल डालने से कान में रोग उत्पन्न नहीं होते। सुनली नहीं चलती, नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। मस्तक ठंढा रहता, ठोड़ी और गले की नाड़ी दृढ़ होती हैं।

(२) मस्तक में डालने से बाल कोमल, काले, सघन और पुष्ट होते हैं और मस्तक ठंढा रहता है।

ऊपर को अधिक होता है। इससे कामशक्ति में न्यूनता होती रहती है। प्रबल नहीं होने पाती। पीसने से जाँघों में मेद नहीं जमने पाती, जिससे गर्भाधान में बाधा पड़ती है अर्थात् गर्भ रहता ही नहीं है और स्त्री मोटी हो जाती है। इसी प्रकार के अनेक कारण हैं।

(७) स्वास्थ्य के विनाशक ये हैं—

(क) (ख) (ग)

(१) धूप का बैठना, आग से पात्र तपाना, अग्नि को मुख से फूँकना।

(२) विषमासन बैठना, गरिष्ठ भोजन करना, विना क्षुधा अथवा अतिभोजन करना, दूषित अन्न, जल वा वायुसेवन करना, मलिन रहना; बीभत्स वस्तु को देखना व सूँघना।

(३) सूर्योदय वा सूर्यास्त होते अथवा बिजली और इन्द्रधनुष अथवा देर तक और किसी दूर की वस्तु को टकटकी बाँध कर देखना।

(४) दूसरों के कपड़े वा बिस्तर पर सोना वा दूसरे की कंघी अपने बालों में डालना—इनसे छूत के रोग उत्पन्न होते हैं।

(क) इससे भोजन नहीं पचता, अजीर्ण रहता है।

(ख) शरीर निर्बल और ढीला होता है, दृष्टि को हानि होती है।

(ग) मुख की कान्ति मारी जाती है, दृष्टि को हानि है

घर की स्त्रियों को तो सिवाय पलँग पर बैठे रहने के घर का काम-काज भी अपने हाथों से नहीं करना पड़ता है । टहलनी मौजूद होती है । इसी कारण वे सदा रोगी सी बनी रहती हैं, मुख पीत वर्ण रहता है, भोजन में अरुचि और यदि खा लिया तो अजीर्ण होता है । साधारण मनुष्यों के घर की अथवा ग्रामीण लोगों की स्त्रियाँ, जो घर का काम-धन्धा करती रहती हैं अथवा कूटती, पीसती, चर्खा कातती या इसी प्रकार के अन्य और गृहकार्य करती हैं, सदा प्रसन्नमुख और हृष्ट-पुष्ट रहती हैं । पेट भर कर आहार कर के भले प्रकार पचा लेती हैं और इसी कारण बलवान् होती हैं कि, पुरुषों के समान, वरन अधिक काम करती हैं । इसलिये मेरी सम्मति उनके लिये यह है कि यदि साधारण की भाँति अपने घर के परिश्रमी काम-धन्धे को नीच कार्य समझ कर न करना चाहें, तो यह उपाय ठीक हो कि, जिसमें उनका मन भी लगे और स्वास्थ्य भी बना रहे, चित्त भी प्रसन्न रहे । अर्थात् दस पाँच मिल कर गा बजा कर नाचा करें ।

स्त्रियों की स्वास्थ्यरक्षा के निमित्त ही उनके लिये कूटना, पीसना, कातना इत्यादि कार्य निर्धारित किये गये हैं । कूटने तथा कातने से रुधिरप्रवाह हाथों की ओर

(३) सिदौसी सोना और सिदौसी जागना।

(४) क्रम और नियम से खाना, पीना तथा रहना, सहना।

(५) प्रकृति के अनुकूल वर्तना।

(६) वेग को न रोकना।

(७) शरीर और मन को शुद्ध और स्वच्छ रखना।

(८) भूख, प्यास में यथोचित खाना, पीना।

(९) सामर्थ्य से अधिक न खाना, न परिश्रम करना।

(१०) पूरी नींद सोना।

हे बहिन! अब तुझको मैं स्वास्थ्य की आवश्यक बातें बता चुकी। यदि इनके अनुसार वर्तेगी तो सदा

फिर कपड़ा में थोड़ा थ त म नाच के खाली घड़े म पानी था र भर जाता है और वह पानी शुद्ध हो जाता है। (५) स्याहीसोख कागज (ब्लाटिंग पेपर) में पानी को छान लेने से भी पानी शुद्ध हो जाता है। (६) एक प्रकार की बनी हुई बोतल अंग्रेजी सौदागरों की दूकान पर बिकती है कि, उसको पानी में रख देने से शुद्ध जल छन छन कर उसमें भर जाता है। मैल-मिट्टी, कीड़े, कूड़ा सब बाहर रह जाता है। परन्तु सब से उत्तम और सुगम उपाय औटाना ही है। जहां पानी में कुछ विकार देखे, चाहे दिन घड़े बदल दिया करे। कोरे घड़े में भी अशुद्धता सोखने की शक्ति है। परन्तु कीड़े-मकोड़े वा कूड़े कर्कट को दूर नहीं कर सकते हैं। वायु सुधारने की विधि यह है कि, हवन करे। गन्धक की धूनी दे। घर में कोइले डले (टोकरे) में बांध कर टांग रक्खे। धूप, गूगल, लोहबान, लौंग इत्यादि की दवे अथवा आर्यसमाजियों ने जो धूप की बत्तियां बनाई हैं, उनको जलाती रक्खे।

साँझ सकारे झाड़े जावे । ताका पमा वैद्य न खावे ॥

प्रकृति के स्वास्थ्यरक्षक नियम ये हैं :—

(१) चलना-फिरना, परिश्रम करना ।

(२) *शुद्ध जल, वायु का सेवन और शुद्ध स्थान का निवास ।

---

* शुद्ध जल की पहिचान यह है कि, उसमें किसी प्रकार की दुर्गंधि न हो । स्वाद और रंग बुरा न हो । कीड़े-मकोड़े वा मल मिट्टी न हो । जिसमें मल-मूत्र न पड़ते हों । लोग जिसमें स्नान न करते हों । बहता हो, स्थिर या बन्द न हो । काई अधिक न पड़ गई हो । जैसा कि, बहुधा छोटी नदी वा तालाबों की दशा होती है । इसलिये तुमको जल सुधारने की विधि भी बताती हूँ । (१) मैल मिट्टी इत्यादि मिले जल में थोड़ी सी फिटकरी, निर्मली वा बादाम की मींग पीस कर घोल दे और थोड़ी देर रहने दे । जब पानी फट कर मैल नीचे बैठ जावे, केवल जलमात्र रह जावे, तब निथार कर दूसरे बासन में कर ले । दूसरी बेर फिर निथार ले । (२) यदि पानी भरा हो वा उसका स्वाद अच्छा न हो तो लोहा, ईंट वा सोने वा चादी के टुकड़ों को आग में लाल करके कई बेर बुझा ले । (३) जो दुर्गंधि पानी में हो, तो पानी को औटा ले । ¼ भाग जल जावे, तब उतार कर निथार ले, और दूसरे बासन में कर ले । (४) घड़ा में वा बने हुए पत्थर के ([illegible]) यन्त्र में छान ले । जैसा कि, अंग्रेज बहुधा करते हैं कि, टिकठी बना कर और पांच घड़ा में से चार घड़ों में महीन छेद कर के टिकठी में एक के उपर दूसरे को रख देते हैं । सब से नीचे विना छिद्र किया हुआ घड़ा रखते हैं । सब से उपर के घड़े में कोयले, उससे नीचे के में बालू रेत और इससे भी नीचे के में कंकर भर देते हैं । कोइले के घड़े के उपर दूसरे घड़े में पानी भर कर रख देते हैं । उसमें से टपक टपक कर कोइलों में, फिर रेत

स्त्रीसुबोधिनी

चतुर्थ भाग



बालपोषण ।

सातवें दिन, जब दुर्गा ने यह देखा कि, घरवाले खा पी कर निश्चिन्त होते जाते हैं, वरन कोई कोई तो जा भी सोया है तब अपनी बहिन मोहनी को पास बिठा कर यों बतलाने लगी कि, बहिन ! जब बालक पैदा होता है, तब उसका पालन-पोषण भी करना होता है । इसलिये तुझे यह भी बताती हूँ कि, बालक को किस प्रकार पाले । सब से प्रथम बालक दूध पी कर ही पलता है, क्योंकि वह अपनी माता का दूध जन्मते ही पीता है । परमेश्वर उसके लिये उसके खाने, पीने की वस्तु पहिले ही से उस की माँ के अङ्ग ही में पैदा कर देता है । पर बहुत स्त्रियों का दूध उन्हीं के बालकों को हानि करने लगता है । उनके दूध पीने से उन्हीं के बालक मर जाते हैं या रोगी हो जाते हैं । इसलिये उनका दूध न पीने देना चाहिये । दूषित दूध की पहिचान यह है कि, जिस स्त्री का दूध पानी में न डूबे, खट्टा हो या कड़ुवा हो, रङ्ग जिसका काला या

जो बालक को धाय का ही दूध पिलाया जावे तो पहिले इन बातों को देख ले कि, इस धाय की सन्तान मर तो नहीं जाती है। उसको कोई रोग तो कुष्ठ, दम, खाज इत्यादि का नहीं है। गर्भवती तो नहीं है। स्त्रीधर्म से तो नहीं होती है। क्रोध तो बहुत नहीं करती है। पवित्र रहती है कि नहीं, कभी कोई बुरा रोग तो उसके नहीं हो गया है कि, जो बहुधा खोटी स्त्रियों को हो जाता है और फिर उनका दूध पीने से वे रोग उनकी सन्तान में भी हो जाते हैं। धाय का स्वभाव अच्छा हो। सुशील हो। प्रसन्नमुख हो। धाय कुलीन हो। सन्तान को प्यार करनेवाली हो। सन्तोषी हो। जवान हो। दूधवाली हो। मध्यम अवस्था की हो। बहुत मोटी या दुर्बल न हो। स्तन उसके ऊँचे, लंबे और कड़े हों। पहलोठी की जनी न हो। दूसरे या तीसरे की जनी हुई हो तो बहुत अच्छी है।

बालक को पैदा होने से छ: दिन तक दूध के अतिरिक्त गूला या घुटी और देना चाहिये। क्योंकि इन दिनों में माँ का दूध बहुत ही निर्बल होता है। गूला इसे कहते हैं कि, एक तोला गुड़ में थोड़ी सी अजवायन और पानी डाल कर मिट्टी की कुल्हिया में आग पर औटा लेते हैं फिर छान कर बच्चे को पिला देते हैं। घुटी कई प्रकार की होती है, सो तुझे बताती हूँ, पर मुगलानी घुटी सब में अच्छी

पीला हो वा जिसको काढ़कर के रख देने पर उसमें मलाई सी न पड़े अथवा जो उसमें चींटी डाली जावे तो मर जावे, जीती तैर कर न निकल आवे, ऐसा दूध दूषित होता है। क्योंकि निर्दोष दूध पतला, निलाई लिये हुए, मीठा और जिसमें मलाई पड़ती हो, होता है। जिस स्त्री के दूध में दूषित दूध के लक्षण पाये जावें, उसका दूध उसके सन्तान को न पीने दे। उसके लिये कोई धाय रख लेनी चाहिये और उस स्त्री का दूध निकलवा कर धरती में डलवा दिया करे। स्तन में न रहने दे। नहीं तो रोग हो जाता है। स्त्री के स्तन दुखने लगते हैं और कभी कभी पक भी जाते हैं।

यदि स्त्री के दूध में थोड़ा ही दोष हो तो औषध देने से शुद्ध हो सकता है। जैसा कि, मैं तुझको स्त्रीचिकित्सा में बता चुकी हूँ। यदि माँ का दूध बहुत ही दूषित हो तो विना धाय के काम नहीं चल सकता है।

धाय इस प्रकार की हो कि, जितने दिन की बालक के लिये धाय चाहिये, उतने ही दिन का बालक उसकी गोद में हो। दो चार दिन की न्यूनाधिकता का तो कुछ विचार नहीं है क्योंकि थोड़े दिन का बालक उसकी गोद में होगा तो धाय का दूध पतला, यदि अधिक दिन का होगा तो गाढ़ा होगा। पचने में अन्तर पड़ेगा।

दर्द हो जाता है और दूध को डाल देता है ।

बालक को इस रीति से दूध पिलावे । माता सीधी बैठ कर, स्तन को धो कर बालक के मुख में दे, परन्तु पहिले कुछ दूध की बूँदें निकाल कर डाल दे क्योंकि यह दूध अच्छा नहीं होता है । पहिले सीधा स्तन पिलावे फिर दूसरा पिलावे । यह न करे कि, एक ही स्तन को बराबर पिलाती रहे । इससे स्त्री के कुचों में रोग हो जाता है । और उनमें से एक छोटी और एक बड़ी हो जाती है । लेट कर दूध कभी न पिलावे । इससे बालक का कान बह निकलता है । बालक को गोद में ले कर और एक हाथ उसके मस्तक के नीचे लगा कर मस्तक को ऊँचा रक्खे रहे, तब पिलावे । माता नींद में बालक को दूध कभी न पिलावे । इससे अनेक रोग हो जाते हैं । क्रोध और भय के समय भी न पिलावे और न जब आप रोती हो या किसी से लड़ती हो या दूर से चल कर आई हो अथवा पसीने में देह भरी हो तब पिलावे । ऐसी दशा में दूध पिलाना बहुत ही बुरा है । विष का गुण रखता है । इसीलिये दूध जब पिलावे, तब प्रसन्नचित्त हो कर और बालक से स्नेह मान कर दूध पिलावे । नहीं तो बालक को स्याने भये पर माता से स्नेह कम होगा और यह तो देखी-भाली बात है कि, जिस माता

का दूध बालक नहीं पीता, उस माता से बालक क
स्नेह नहीं होता है ।

स्त्री बालक को दूध पिलाने से नीरोग रहती है, वरं
ऐसी स्त्री के गर्भस्राव तथा गर्भपात रोग नहीं होते ।

दूध पिलानेवाली स्त्री का आहार अच्छा होन
चाहिये । ऐसे पुष्ट आहार उसको दिये जावें, जिन
दूध शुद्ध हो और बढ़े । जैसे जीरा, दलिया और दूध
परन्तु इतना दे, जितना पचे । अधिक न दे क्योंकि
अजीर्ण हो कर दूध दूषित हो जाता है और बालक क
भी अजीर्ण करता है ।

माता को गरिष्ठ वा सूखा भोजन न देना चाहिये
दूध बढ़ाने की यह भी रीति है कि, जब बलिष्ठ भोजन
देने से दूध न बढ़ता देखे, तब इससे उलटा करे कि
रूखा भोजन दे ।

यदि स्तनों के कड़े होने से दूध कम हो तो किसी
स्याने बालक से पिला कर स्तनों को ढीले कर लिय
करे । स्तनों पर पुलटिस बाँध दिया करे अथवा अरण्ड
के पत्तों को डुँठले समेत पानी में पीस कर और छान
कर दूध पिलानेवाली को पिला देवे और इसके पत्तों
का रस निकाल कर स्तनों पर मले । दूध पिलानेवाली
स्त्री चोली वा अँगिया कहीं न पहिने । बालक को रात्रि

इस शीशी को भी नित धो, पोंछ कर शुद्ध कर लिया करे। दूध में मलाई न रहने पावे। छान कर निकाल देनी चाहिये, तब पिलाना चाहिये। गाढा दूध न पिलाना चाहिये। पतला पिलाना चाहिये। यदि दूध में तनिक सा नमक डाल दिया जावे तो और भी अच्छा है। इससे पचता शीघ्र और अच्छा है।

दूध नियत समय पर पिलावे और इस प्रकार समय बाँध लेवे।

एक महीने के बालक को एक एक घंटे के पीछे।
तीन महीने के बालक को दो दो घंटे के पीछे।
छः महीने के बालक को तीन तीन घंटे के पीछे।
नौ महीने के बालक को चार चार घंटे के पीछे।

नौ महीने की अवस्था तक बालक को निरा दूध पिलावे अन्य कोई वस्तु खाने को न देवे क्योंकि कहावत है कि, 'नौ महीने भरे और नौ महीने धरे'। अर्थात् पहिले नौ महीने में निरा दूध पिलावे। पीछे नौ महीने आहार दे कर, दूध छुडा दे। जब बालक नौ महीने का हो जावे तब धीरे धीरे दूध छुडाने का उपाय करे अर्थात् धीरे धीरे छुड़ा देवे। एक संग ही न छुड़ा दे, वरन बालक को माता के दूध पीने के संग कभी कभी खीर, खिचडी, अरारूट या साबूदाना आदि देती रहे।

जिस बालक को जो रुचे और पचे, वही उसको खिलावे क्योंकि किसी बालक को कोई वस्तु और किसी को कोई वस्तु रुचती, पचती है। अंग्रेजी सौदागरों के यहाँ बालकों के लिये बनी हुई खानेकी वस्तुएँ बिकती हैं। उनको दूध वा पानी में पिलाने से माता के वा गौ के दूध की बराबर, वरन उससे भी अधिक गुण देती है। जैसे म्यलिन्स साहिब की बनाईहुई दवाई (Mellin's Infant Food) बालकों के लिये।

पर सुगमतर उपाय दूध छुड़ाने का यह है कि, माता बालक से कुछ दिनों के लिये अलग हो जाने वा रात को अपने पास न सुलावे। दूसरी स्त्री के पास सुला दिया करे।

यदि पिला सके तो माता अपना दूध सन्तान को जब तक कि, गर्भ न रहे, बराबर पिलाती रहे। इससे अधिक गुणदायक और बलकारक सन्तान के लिये कोई दूसरी वस्तु नहीं है। कहावत प्रसिद्ध है कि, 'देखें तैंने अपनी माँ का कितना दूध पिया है'।

बालकों को दूध पिला कर वा भोजन करा कर उन का मुख धो डाले। जिससे मुख वा आँख को माखी न काट खाय वा मुख में दुर्गन्धि न आने लगे और मुख के रोग उत्पन्न न हो जावें।

इस शीशी को भी नित धो, पोंछ कर शुद्ध कर लिया करे। दूध में मलाई न रहने पावे। छान कर निकाल देनी चाहिये तब पिलाना चाहिये। गाढा दूध न पिलाना चाहिये। पतला पिलाना चाहिये। यदि दूध में तनिक सा नमक डाल दिया जावे तो और भी अच्छा है। इससे पचता शीघ्र और अच्छा है।

दूध नियत समय पर पिलावे और इस प्रकार समय बाँध लेवे।

एक महीने के बालक को एक एक घंटे के पीछे।
तीन महीने के बालक को दो दो घंटे के पीछे।
छः महीने के बालक को तीन तीन घंटे के पीछे।
नौ महीने के बालक को चार चार घंटे के पीछे।

नौ महीने की अवस्था तक बालक को निरा दूध पिलावे अन्य कोई वस्तु खाने को न देवे क्योंकि कहावत है कि, 'नौ महीने भरे और नौ महीने धरे'। अर्थात् पहिले नौ महीने में निरा दूध पिलावे। पीछे नौ महीने आहार दे कर, दूध छुड़ा दे। जब बालक नौ महीने का हो जावे तब धीरे धीरे दूध छुडाने का उपाय करे अर्थात् धीरे धीरे छुडा देवे। एक सग ही न छुडा दे, वरन बालक को माता के दूध पीने के संग कभी कभी खीर, खिचडी, अरारूट वा साबूदाना आदि देती रहे।

है। इस कारण कि, बालक की रीढ की हड्डी बहुत नरम होती है, बोझ से नव जाती है। एक वर्ष की आयु से पूर्व बालक को कभी पैरों से खडा न करे। इसमें पाँव निखड़ा जाते हैं। जब बालक स्वय खडा हो सके, तभी खडा करे वा होने दे। बालक की टॉग चिपटा कर भी गोद में न रक्खे। बालक को अपनी नींद सोने दे और अपनी ही नींद उठने दे। आप कभी न जगावे और न अचानक जगावे। बालक को औंधा वा चित्त कभी न लिटावे। झूले में झुला कर वा गीत गा कर (जैसा कि, स्त्रियाँ बहुधा करती हैं) बालक को सोने की टेव न डाले। न गोद ही में सोने की टेव पडने दे। मुँदे घर में भी बालक को न सुलावे। सदा पवनीक में सुलावे।

दूध पी कर ही वा भोजन करते ही बालक को न सोने दे। इससे दूध वा भोजन पचता नहीं है और स्वप्न भी बालकों को बुरे दीखते हैं। तीन वर्ष की आयु तक तो बालक को दिन में सोने दे, पीछे केवल रात्रिही के सोने की टेव डाले। दिन में सोने की छुडा दे।

अफीम आदि खिला कर बालकों को सुलाने की टेव न डाले। इस कारण कि, ऐसी वस्तुओं से बालकों के मस्तक अभी से निर्बल और शुष्क हो जाते हैं।

स्त्री के जब इन चिह्नों में से दो चार दृष्टि पड़ें तो दूध पिलाना अवश्य छुड़ा देना चाहिये और गर्भिणी माता तो अपना दूध कभी बालक को न पिलावे क्योंकि तब यह महाहानिकारक है।

(१) जब माता के स्तनों में दूध न रहे। (२) जब माता के कानों में सनसनाहट जान पड़े। (३) आँखों में अँधेरा सा दीखे। (४) आँखों में पीड़ा होवे। (५) मस्तक में धमक और चित्त में व्याकुलता हो। (६) मूर्च्छा हो, देह काँपे, भ्रान आवे, भूख न लगे, देह दुर्बल होती जावे और थकावट जान पड़े, अजीर्ण हो, मल बँधा हुआ उतरे। (७) पेट में सनसनाहट हो मानो पेट बैठा जाता है, बाईं ओर पीड़ा होने, करिहाँव निबल पड़ जावे, देह में चलते फिरते पीर हो, मुख पर पिलाई छा जावे, साँस उखड़ आई हो, टकने सूज आये हों, जब तक बालक छः महीने का हो, तब तक सदा उसकी नार को हाथ लगा कर सहारे से रक्खे क्योंकि इस समय तक नार ठहरी हुई नहीं होती है। ऐसा न करने से झटका चला जाता है और नार टूट कर बालक कभी कभी मर भी जाता है। बालक को बिना सहारे कभी न बिठावे। इन दिनों में बालक को सीधा भी न लेवे क्योंकि सीधा लेने से पीठ का कुब्ब निकल आता

अर्धरंगीन अथवा हल के रंग के गुलाबी वा बसन्ती पहिनावे ।

चटकीले कपडे पहिनने की टेव उनको अभी से न पड़ने दे । छोटे बालकों के पोतरे भी स्वच्छ रक्खे । गू, मूत में सने वा भीगे न रहने दे । मैने देखा है कि, बालक ने मूत कर वा हग कर पोतरे को बिगाड दिया और माता ने उसी को उलटकर बालक को फिर उसी पर सुला दिया । सो यह न करना चाहिये । यह महाहानिकारी है । जहां बालक ने पोतरा बिगाड़ा कि, दूसरा बदल दिया जावे । गीले में बालक को कभी न पडा रहने दे । इससे बालक को अनेक रोग उठ खडे होते हैं ।

बालक के वस्त्र कभी मैले कुचैले न रहने दे । सदा स्वच्छ वस्त्र रक्खे । उनके शरीर को भी मैल-माटी में न होने दे । नहला कर शुद्ध कर दिया करे । रात्रिको सोते समय नित नीम वा सरसों के तेल का काजल आँखों में लगा दिया करे और भोर को नित उठते ही शौच करा कर मुख धो दिया करे और स्याने भये पर दांतून भी करा दिया करे । यही काजल भोर को भी लगा दिया करे ।

बालकों को कठले वा गडे, यन्त्र इत्यादि कभी न पहिनाने चाहियें । बहुतसी मूर्ख स्त्रियाँ यह समझ कर कि, इन गडों और यन्त्रों से हमारे बालक भूत, प्रेत, मसान,

मूर्ख स्त्रियाँ अपने सुख के लिये ऐसा करती हैं, जिसमें बालक अचेत होकर पड़ा रहता है। पर यह महाहानि कारी है। बालकों को अपनी देह से चिपटा कर न सुलाया जावे और यदि सुलाया जावे तो माता बालककी पीठ अपनी ओर को रक्खे। बालक को सदा करवट लिवा कर सुलाना अच्छा होता है और चौड़ी खाट पर। ओढ़ने, बिछाने के कपड़े देख ले कि, उनमें कोई वस्तु बालक के चुभती तो नहीं है अथवा बालक फँसता तो नहीं है। बालकों को तंग कपड़े न पहिनाना चाहिये। इनसे फेफड़े, पाकाशय और हृदय को हानि पहुँचती है। दम रुक जाता है। भोजन पचता नहीं है। नाड़ियों में रक्त भले प्रकार बह नहीं सकता है। मलत्याग अच्छे प्रकार नहीं होता है और न बहुत ढीले कपड़े पहिनावे कि, उनमें हाथ, पाँव उलझ जावें। सोते में बालकों के मुख को न ढाँपे। नाक तक कपड़ा उढ़ावे, जिससे साँस भीतर न भरा रहे, वरन बाहर निकला चला आवे। अँगरखे की तनी, कोट आदि के बटन सोते समय खोल दिये जावें। नाक में जो कोई रूमाल इत्यादि बँधा होवे तो सोते में खोल दिया जावे। बच्चों को जाड़े में गरम और काले रंग के कपड़े, गर्मी और वर्षाऋतु में ढीले और श्वेत रंग के पहिनावे। वसन्तऋतु में दुहरे और

नियम रक्खा है कि, इससे वह नस दबी रहती है और नीचे को धसकने नहीं पाती ।

यदि धसक गई हो तो उस बालक को जाँघिया पहिनाये रक्खे । इससे ठीक हो जावेगी ।

बालकों को सदा समीरसेवन कराया करे । गोद में ले कर अथवा पैदल चला कर (जब चल सके, पर पहिले नहीं) अथवा गाड़ी में बिठा कर । जाड़ों में दुपहर और धूप के समय, गर्मी में साँझ, सकारे, वर्षा में जब बादल न हों वा बूँदें न पड़ती हों, पर बालक को गर्मी, सर्दी दोनों से बचाये रक्खे ।

तीन, चार महीने की आयु तक बालक के नित तेल सब अंगों में लगा फिर चून की लोई कर के जाड़ों में गरम पानी से, गर्मी में सर्द पानी से, वर्षा में गुनगुने पानी से नहला दिया करे और नित जैसा कि, धात्री-शिक्षा में बताचुकी हूँ ।

जब बालक तीन वर्ष का हो जावे तब उसको नित-प्रति प्रातःकाल स्नान करने की टेव डाले । नहला कर शरीर को सूखे कपड़े से तुरन्त पोंछ डाले ।

छोटे बालकों के नहलाने के पानी में खाने का नमक डाल कर नहलाने तो अति गुणकारी है । निर्बल बालक थोड़े ही दिन के स्नान में बलवान् तथा पुष्ट हो जाता है ।

झपेटा वा भूतनी, चुडैल आदि से बचे रहेंगे और इनके प्रभाव से इनमें से कोई बाधा न करने पावेगा, पहिना देती हैं; पर मैंने कभी न देखा कि, ऐसा बालक रोगी न हुआ होवे वा मरा न होवे, वरन ऐसे ही बालकों को बहुधा रोगी देखा और उनके माँ, बापों को सदा स्याने भोपों ही को उन्हें दिखाते देखा। ऐसे बालक सदा रोगी ही बने रहते हैं। बात क्या है कि, कठले, गंडे, यन्त्र, जो नार में पहनाये जाते हैं, उन पर दूध, पानी वा लार पड़ने से उनमें दुर्गन्धि आने लगती है और वही दुर्गन्धि उनको रोगी रखती है। जितने अधिक यह पहिनायें जाते हैं, उतने ही अधिक बालक रोगी होते हैं। इसलिये इनको कदापि न पहिनाना चाहिये, क्योंकि इनसे कुछ लाभ नहीं, वरन उलटी हानि है।

बालकों के हाथ पाँव में जैसा कि, अब करते हैं कि, कड़े, छड़े वा अन्य कड़ी वस्तु गहने की पहिना देते हैं, सो कदापि न पहिनानी चाहिये। इससे भी अति ही हानि होती है क्योंकि रक्तवाहिनी नसों में बाधा पड़ती है। बहुत छोटे बालकों के पेट की आँत लटक कर बहुधा अण्डकोष में आ जाती है। इसलिये उसका अधिक ध्यान रखना चाहिये। यही सोच कर हमारे देश में पहिले ही से कटिबन्धन सूत्र (कधनी वा कौंधनी) के पहिनाने का

नहीं है, अच्छे अच्छे गुण सिखाने में है। यदि तुमको इस बात का ध्यान है कि, कोई हमारे बालकों को नंगा, बूचा कहेगा, सो कहने दो। यह इतनी बुरी बात नहीं है कि, जितनी यह कि, बालक के प्राण जाते रहें। कुरूप और महादरिद्री का बालक, जो गुणवान् है वह गहने लदे हुए धनी के महासुरूपवान् बालक से कहीं उत्तम और श्रेष्ठ है, जिसमें कोई अच्छा गुण नहीं है, केवल गहना ही गहना है।

बालकों के कान और बालों में चौथे वा पाँचवें दिन कड़ुवा तेल डालना चाहिये और जिन दिनों दाँत निकलते हों, उन दिनों में अवश्य ही डाले। इससे आँख नहीं दुखती और कनपटी, जो इस दशा में गर्मी से भड़का करती है, नहीं भड़कती, बरन बालक को चैन पड़ता है और दुःख दूर होता है।

बालकों की चाँद में मैल जम जाता है सो उसको भी धोकर निकाल दिया करे। पीछे तेल डालना चाहिये। इससे मस्तक में तरी रहती है, बाल भी जल्दी बढ़ आते हैं, चाँद में भुसी वा फियास नहीं पड़ने पाती, जिसके होने से न तो बाल बढ़ते और न दृढ़ होते और न मस्तक तर रहता, बरन बहुत ही सूखा रहता है। इसके कारण बालक बहुधा मस्तकशून्य और मूर्ख हो

यदि पानी में मेथी वा मेहँदी डाल कर गरम कर और फिर नहलावे तो बहुत ही अच्छा है।

बालकों को कभी गहना पहिनाना न चाहिये। इनमें दो अवगुण हैं:-एक तो यह कि, इनके पहिनने से बालकों की नस दबी और मिची रहती है, जिससे वह अच्छी भाँति पनपने नहीं पाते और जन्म भर को दुर्बल और क्षीणतन बने रहते हैं। दूसरे यह कि, गहने पहिननेवाले बालकों के प्राण हरने के लिये बहुत से दुष्ट पैदा हो जाते है। बहुत बेर देखने और सुनने में आया है कि, अमुक के बालक को चोर ले गये अथवा उन्हीं का नौकर गहना उतार कर उनको मार किसी कुयें वा खारों में डाल आया अथवा द्वार पर से बालक को कोई बटोही ले गया और पता न लगा।

ये बातें नित नित सुनने और देखने में आती हैं और केवल गहने पहिनने ही से होती हैं। पर मूर्ख लोग तो भी नहीं मानते। अपनी सन्तान के शत्रु बनने में उलटे सिहाते है। कभी न देखा और सुना कि, कोई ऐसे बालक को पकड ले गया जिस पर गहना न था। तो भी लोग गहना पहिनाये विना नहीं मानते। विना गहने के बालकों की शोभा ही नहीं समझते है सो गहना पहिनाने से शोभा नहीं होती है। मनुष्य की शोभा गहने में

तनिक भी मन विरुद्ध बात होने से बालक बहुत मचलता है और फिर सदा के लिये मचलने की टेव पड़ जाती है।

इन दिनों में बालक की लार और दस्त, खाँसी आदि को अफ़ीम आदि दे कर कभी न रोके। इससे बड़ी हानि हो जाती है। हाँ, अरण्डी का तेल दे कर यदि विरेचन करा दिया जावे तो कुछ हानि नहीं है। इन दिनों में दस्त बालक के हरे पीले और फटे से हो जाते है। बालकों की मलपरीक्षा से उनके दूध पिलानेवाली का पथ्यापथ्य बदल देना चाहिये। परीक्षा यह है कि, स्वास्थ्यावस्था का मल हल्दी या पकी नारंगी के रंग का सा होता है और चॉवल के गाढ़े माँड का सा जमा होता है। न पतला और न बहुत गाढ़ा। पर जब उदर में विकार होता है, तभी रंग में अन्तर होता है अर्थात् फटे दूध की सी फिटकें अथवा आँव मिला-हुआ होता है, या तो बहुत पतला होता है, नहीं तो बहुत गाढ़ा होता है और चिकना महादुर्गन्धि लिये हुए होता है।

छोटे छोटे बच्चों को मिट्टी खाने की टेव पड़ जाती है। इसमें उनकी चौकसी और सावधानी रखनी चाहिये। जिस से वे मिट्टी न खाने पावें। दूसरे तीसरे दिन बालकों को कुछ थोड़ा सा गुड खिला दिया करे, तो बहुत अच्छा है।

जाते हैं ।-अब कुछ तुझ को बालकों के दाँत निकलने के विषय में बताना चाहती हूँ । जिन दिनों बालकों के दाँत निकलते हैं, उन दिनों में उनके लार बहुत गिरती है । इसलिये उनके गले में एक रूमाल वा अँगोछा बाँधे रक्खे और जब वह भीग कर गीला हो जावे तब दूसरा सूखा बदल दे और इस भीगे को धो कर सुखा दे । इसी प्रकार हर घड़ी गले में सूखा कपड़ा बँधा रक्खे । ऐसा करने से बालक की छाती पर ठंढ नहीं पहुँचने पाती । छाती में ठंढ पहुँचने से छाती के अनेक रोग खाँसी आदि उत्पन्न हो कर महादुःख देते हैं ।

इन दिनों फेफड़े, मस्तक, पाकाशय का काम ठीक नहीं रहता है । इसीसे उनको खाँसी, अपच, अफरा, दस्त, उलटी, फोड़े, फुंसी और खाज आदि रोग हो जाते हैं ।

इन दिनों में शुद्ध वायु सेवन कराना (इसीसे हमारे शास्त्रों में निष्क्रमण संस्कार रक्खा है, जो इन्हीं दिनों में होता है । उससे अभिप्राय समीरसेवन ही का है ।) घश्यक है । यदि बालकों को दाँत पीड़ा अधिक देते हों, तो मसूड़े किसी चतुर डाक्टर से चिरवा दे । नहीं तो घुटी का हलका विरेचन दे दिया करे । इन दिनों में बालक को खीझने वा झुँझलाने न दे । इसी कारण बालक की कोई इच्छा के प्रतिकूल बातें न करे । क्योंकि

तनिक भी मन विरुद्ध बात होने से बालक बहुत मचलता है और फिर सदा के लिये मचलने की टेव पड़ जाती है।

इन दिनों में बालक की लार और दस्त, खाँसी आदि को अफीम आदि दे कर कभी न रोके। इससे बड़ी हानि हो जाती है। हाँ, अण्डी का तेल दे कर यदि विरेचन करा दिया जावे तो कुछ हानि नहीं है। इन दिनों में दस्त बालक के हरे पीले और फटे से हो जाते हैं। बालकों की मलपरीक्षा से उनके दूध पिलानेवाली का पथ्यापथ्य बदल देना चाहिये। परीक्षा यह है कि, स्वास्थ्यावस्था का मल हल्दी वा पकी नारंगी के रंग का सा होता है और चाँवल के गाढ़े माँड़ का सा जमा होता है। न पतला और न बहुत गाढ़ा। पर जब उदर में विकार होता है, तभी रंग में अन्तर होता है अर्थात् फटे दूध की सी फिटकें अथवा आँव मिला हुआ होता है, या तो बहुत पतला होता है, नहीं तो बहुत गाढ़ा होता है और चिकना महादुर्गन्धि लिये हुए होता है।

छोटे छोटे बच्चों को मिट्टी खाने की टेव पड़ जाती है। इससे उनकी चौकसी और सावधानी रखनी चाहिये, जिस में वे मिट्टी न खाने पावें। दूसरे तीसरे दिन बालकों को कुछ थोड़ा सा गुड़ खिला दिया करे, तो बहुत अच्छा है।

बालकों को कभी न डरावे क्योंकि इससे कभी कभी बालक ऐसे डर जाते हैं कि, सदा डरपोक बन जाते हैं। बचपन का भय उनके हृदय से जन्म भर नहीं निकलता है। कभी कभी उन्हीं बातों का स्वप्न देख कर वे युवावस्था में डर उठते हैं । उनका हृदय निर्बल हो जाता है और बहुधा स्वप्न में वे ही बातें देख कर, सोते सोते वे रो उठते हैं । यहाँ तक कि मल, मूत्र त्याग कर देते हैं ।

यदि बालक किसी प्रकार से डर गया होवे तो उसका उपाय यह है कि उस दशा में बालक से कभी कड़ा वा डरा कर न बोले । घुड़की आदि न देवे, वरन बहुत ही प्यार और स्नेह से बोले । चिल्ला कर कभी न बोले । जो रात्रि में बालक सोते सोते चौंक पड़ता होवे तो उस बालक को रात्रि में इकेला कभी न छोड़े और अँधेरे में न रक्खे, वरन रात्रि भर दिया जलाये रक्खे कि, बालक की जब आँख खुले तब अँधेरा दृष्टि न पड़े, उजेला ही दीखे । कुछ दिनों तक ऐसा करने से बालक का डर जाता रहेगा ।

छोटे बालकों को सदा इच्छापूर्वक खेलने-कूदने दे; पर सावधानी गिरने-पड़ने की रक्खे । इच्छापूर्वक किलोल करने से बालक बहुत बढ़ते हैं और [illegible] हैं ।
इत्यादि क्रीड़ा से बहुत बढ़ते हैं ।

परन्तु बालकों को विष की वस्तु, औषध, छुरी, कतरनी वा अन्य किसी हथियार के पास न जाने दे अथवा इन को ऐसे स्थान पर न रक्खे, जहां बालकों का हाथ पहुँच जावे वा वे उनके हाथ लग जावें। इसलिये इससे सदा सावधान रहे।

बालकों को चौथे, आठवें दिन घुटी, जो पहिले बता चुकी हूँ। अवश्य दे दिया करे अथवा हड, कालानमक, सुहागा पानी में घिस घिसकर और तनिक सी हींग घिस कर और आग पर गुनगुनी करके बालकों को पिला दे। पहिले ही वर्ष (वरन जहाँ तक शीघ्र हो सके, तीसरे वा चौथे ही महीने यहाँ तक कि हाल के हुए) बालक के टीका लगवावे [illegible] पूरी करनी चाहिये।

जाने से बालकों को पीछे बहुत कष्ट होता है । जहाँ जहाँ इसका चेप लगता जाता है, वहाँ वहाँ ही फफोले पड़ते जाते हैं । यहाँ तक देखा गया है कि, असावधानी से सगरी देह, मुख, नाक, कान, हाथ में फफोले हो गये हैं। इसीलिये बालक के दोनों हाथों में कपडे की पट्टी लपेट दे कि, वह खुजाने न पावे । जिससे फफोले टूट कर उसका पसेव दूसरे स्थान में न लग जावे । कोई कोई मूर्ख स्त्रियाँ ऐसा करती है कि, टीका लगानेवाले ने टीका लगा कर पीठ फेरी कि, उसी समय उसने पानी से धो डाला । इससे बड़ी ही हानि हो जाती है । सो न करना चाहिये । प्रथम तो एक बेर के टीका लगाने ही से शीतला नहीं निकलती । पर यदि सात वर्ष की आयु में एक बेर टीका और लगवा दिया जावे तो फिर शीतला निकलने का कुछ डर और चिन्ता नहीं रहती । कोई कोई युवावस्था में भी बालकों के टीका तीसरी बेर लगवा देते हैं ।

टीका लगने पर जब फफोले उठ आवें, तब उनको फूटने न दे । आप ही जब बैठ जावें तब बैठने देवे वा टीका लगानेवाला उनका पसेव निकाल ले जावे । इसके पीछे दो चार दिनों ही में खुरट बँध आवेगा । परन्तु उस खुरंट को हाथसे न उचेले । आपही सूखकर जब गिर पडे गिरजाने दे।

यदि बालकों को ये ओषधियाँ खिलाई जावें तो महा

गुण करती हैं। ये वैद्यक के सर्वोत्तम ग्रन्थ सुश्रुत में लिखी हैं।

जब तक बालक दूध पीता रहे तब तक इस घी को चटाती रहे जो इन औषधियों को घी में पकाने से बनता है।

श्वेत सरसों, बच, दुद्धी, चिरचिरी, शतावरी, सरिवन, ब्राह्मी, पीपल, हल्दी, कूट और सेंधानोन।

जब बालक दूध पीता हो और अन्न भी खाता हो अर्थात् दूध छुडाने का समय हो, तब मुलहठी, बच, पीपल, चीता, त्रिफला इनका घी पका कर खिलावे।

जब केवल अन्न ही खाता हो और दूध छोड़ दिया हो तो दशमूल, दूध, तगर, भद्रदार (देवदारु) कालीमिर्च, शहद, वायविडङ्ग, मुनक्का, दोनों ब्राह्मी इनका घी पका कर देवे अथवा असगन्ध के कल्क से चौगुना गाय का घी और घी से दसगुना गाय का दूध मिला कर घी तय्यार करके बालक को खिलावे तो बालक पुष्ट और बलवान होगा। यह चार उपाय भी बालकों के लिये शरीर, बुद्धि और बल बढ़ाने को उसी ग्रन्थ में लिखे हैं। इनको योग वा प्राश कहते हैं।

१-सुवर्णचूर्ण-कूट, शहद, घी, बच।

२-सोमलता-शङ्खपुष्पी, शहद, घी, सुवर्ण।

३-अर्कपुष्पी-शहद, घी, सुवर्णचूर्ण, बच।

४–सुवर्णचूर्ण, कट्फल, श्वेतफलका, कुम्हड़ा, दूध, घी, शहद ।

कुमारकल्याण घी बालकों को बहुत ही गुणकारी होता है अर्थात् बल और वर्णकारक, श्रेष्ठ, पुष्टिदायक, जठराग्निवर्द्धक तथा छाया, सर्वग्रह, अलक्ष्मी, कृमि, दन्तरोग, सर्व बालरोग और दाँतों के भेद का विशेष नाशक है। रीति उसके बनाने की यह है कि, घी से चौगुना भटकटैया का काढ़ा और दूध साथ साथ मिला ले। अष्टमङ्गल घृत इससे भी अति श्रेष्ठ है। इसकी रीति यह है कि, वच, ब्राह्मी, सफ़ेद सरसों, सारिवा, सैन्धव, पीपल और आठवाँ घृत इनसे घी तय्यार करके बालक को पिलावे तो बालक की स्मृतिशक्ति दृढ़ और बुद्धि तीव्र होती है।

बालक को गरिष्ठ भोजन कभी न करावे। बीस वर्षकी आयु तक उसको सुपच साधारण भोजन दे। जैसे रोटी, खिचड़ी, दाल, भात। पर इनमें घी इत्यादि कभी न दे अथवा अन्य ऐसा ही पुष्ट भोजन करावे और न बालकों को बेर बेर भोजन करावे। जो समय भोजन के नियत हों, उन्हीं समयों पर दे; जिससे भोजन पच कर भूख भी अच्छी लगे। बिना पचे हुए भोजन पर वा भोजन के पीछे भोजन कभी न करावे। कोई वस्तु घी वा मेवा की

उनको यों न खिलावे। बहुधा मनुष्य यह सोचते हैं कि, ऐसा भोजन बालकों को बल करेगा सो यह उनका विचार झूठा है। घी, मेवा वा इसी प्रकार की अन्य गरिष्ठ और देर में पचनेवाली वस्तुओं के पचाने को बहुत बल चाहिये। सो, बालकों के पेट में इतना बल नहीं होता है कि, ऐसे भोजन को पचा लेवें और जब पचता नहीं है और पाकाशय को अपनी अधिक शक्ति करनी पड़ती है, तब पाकाशय निर्बल हो जाता है और फिर उसमें ऐसा बल नहीं आने पाता, जैसा कि, आना चाहिये था। जो उनको केवल नाज वा अन्न ही का साधारण भोजन दिया जाता तो वे उसको बहुत ही शीघ्र और बहुत पचा जाते। जो मनुष्य सूखा सेर भर भोजन करता है, वह पाव भर घी नहीं खा सकता और न उसको भली भाँति वह पचा सकता है। निरा नाज बहुत शीघ्र पच जाता है और इसी कारण अधिक बल करता है। जो भोजन पचता नहीं है, वह बल भी नहीं करता है वरन पाचनशक्ति को उलटा कम करता है।

यह बात इससे भी प्रकट है कि गँवारलोग जो निरा नाज खाते हैं और खूब पचा लेते हैं, बड़े हृष्ट-पुष्ट और बलवान् होते हैं। वे लोग जो घी, दूध खाते हैं, पर पचा नहीं सकते, उन जैसे ये नहीं होते हैं।

जब आयु बीस वर्ष की होगी, तब पाचनशक्ति पूर्ण हो जावेगी। उस समय घी, दूध, मेवा इत्यादि बलकारक वस्तु जितनी दी जावेंगी वे पच कर उतना ही अधिक बल करेंगी। यह परीक्षित है।

बालकों को यथारुचि खेलने-कूदने दे कि, उनका मन भी बहले और भोजन भी पचे, क्योंकि इसमें थोड़ा सा परिश्रम भी पड़ेगा, जो पाचनशक्ति को सहायता देगा।

बालकों को ऐसे खेल-कूद करने दे, जिनमें उनकी बुद्धि, बल आदि बढ़ें और मन भी बहले, चित्त को अरुचि भी न होवे और जिससे मन फिर उसके करने को चाहे। इसका सहज उपाय यह है कि, (१) किसी वस्तु को ऊँचे स्थान पर रख दे और बालकों को कहे कि, देखें, इस वस्तु को उछल कर कौन ले सकता है? (२) किसी वस्तु को नियत करके बालकों को दौड़ावे, यह कह कर कि, देखें, पहिले इसको कौन छू सकता है? (३) तुममें से इस बोझ को कौन उठा सकता है अथवा यहां से उठा कर वहां तक कौन ले जा सकता है? (४) सौ बेर कौन उठ, बैठ सकता है? (५) इस भीत पर इस आले में पाँव रख कर कौन चढ़ सकता है? (६) दोनों पाँव जोड़ कर इतनी दूर कौन फाँद सकता है? (७) इसी प्रकार की बालकों

में आपस में दौड़ धाँर कर परिश्रम करावे और उनमें से जो जीते, उसको पुरस्कार भी दें, जिससे उसका मन फिर भी करने को करे। ऐसा करने से भोजन पच कर बालकों को भूख अच्छी लगेगी।

बालकों की छाती चौड़ी हो कर शरीर सुडौल हो जावे और स्वर भी गम्भीर हो, इस कारण बालकपन ही से उनको गाने का अभ्यास करावें। यह बालकों को बहुत ही उपकारी है। इससे छाती तथा फेफड़े चौड़े होते हैं। बालकों का मन भी बहलता है और वे गानविद्या भी सीख जाते हैं, जो मन को शान्ति और प्रफुल्लित करनेवाली है। छोटी अवस्था में पुत्र या पुत्री का विवाह कभी न करना चाहिये। पुत्र का तो इस कारण कि, उसका पढ़ना, लिखना विवाह होने पर मारा जाता है। जाना होते ही मन कुछ से कुछ हो जाता है, जिससे देह निर्बल और मस्तक में पीड़ा हो कर नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं। बहुत से तो शीतला आदि रोगों में मर जाते हैं। उनकी वह बालविधवा हो जाती है, जिसको जन्म भर काटना असह्य हो जाता है। पुत्रविवाह तो जब वह पढ़ लिख कर जीविका करने योग्य हो जावे तब करे। इससे पहिले कभी न करे। शास्त्रों में पचीस वर्ष की आयु में पुत्र के लिये विवाह करने की आज्ञा है, पर

जाने दे । वायु का अवरोध न करे । बालक के नार को बहुत सावधानी से काटे । सर्दी न पहुँचने दे । बालक का शरीर मैला न रहने दे । जन्म लेने के पश्चात् ही बालक को एक दस्त करादे । बालक को वासी दूध न पिलावे। इन्हीं बातों में असावधानी होने से बालकों को बहुधा ये रोग हो जाते हैं कि, शरीर शिथिल होजाता है । बालक सोता नहीं है । दस्त पतला जाता है । बेर बेर दूध डाल देता है। प्यास बहुत लगती है । माता के स्तन को मुख में नहीं दाबता। हिचकी, खाँसी, अतीसार, उलटी और ज्वर हो आता है । रंग पीला पड जाता है। काँपता है, गले में घुरघुराहट होने लगती है। मुख में झाग लाता है, शरीर में दुर्गन्ध होजाती है आदि । मूर्ख स्त्री, पुरुष इनको भूत, प्रेत, मसान का कारण जान, झाडा फूँकी कराने लगते हैं । कहते हैं कि, बालक को झपेटा हुआ है अथवा दव गया है और स्याने भोपे भाँड़ भगत की झाडा फूंकी तथा गडा, यन्त्र के भरोसे ही में रह कर संतान के शत्रु बन पीछे रोते हैं । बालकों के रोग रोकने का सहज और मुख्य उपाय तो यही है कि, सौर ही से बालकों को स्वच्छ प्रकार से रक्खा जावे । और इन काढ़ों से बालकों को चौथे आठवें दिन स्नान कराती रहे । (१) गोरखमुडी और रास का काढ़ा । (२) हल्दी, चन्दन, कूट इनको

पीस बालक के उपटना कर स्नान करावे। (३) सांप की कांचुली, लहसन, सरसों, नीम के पत्ते, बिलाई की बीट, बकरे के बाल, भेड़ के सींग, घृत और शहद सब को पीस बालकों को धूनी दे। (४) गौ, बकरी, भेड़, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊंट सब के मूत्र को तेल में औटावे। जब मूत्र जल जावे, तेलमात्र रह जावे तब उस तेल को छान कर बोतल में रख छोड़े। बालकों के मल कर स्नान करा दिया करे। (५) पीपल, पिपलामूल और कलौंजी इनका काढ़ा कर के गौ के घी में पकावे। जब घी मात्र रह जावे, तब उसे रख छोड़े। उस घी को बालकों के मल कर स्नान करावे। (६) राल, गूगल, वच, हल्दी इनकी धूनी दे दिया करे।

बालक जन्म लेते ही दस्त जाता है। यदि किसी कारण से उस समय दस्त नहीं आता है तो दाई हाथ की छोटी उंगली को गुदा में डाल कर दस्त करा देती है। सो यह अच्छा नहीं है। यदि बालक को इस समय दस्त न आया होवे तो उसकी माता का थोड़ा सा दूध उसको पिला देवे। (पर फिर पीछे इस दूध को दो तीन दिन तक न पिलावे। यह विष है।) अथवा अरण्डी के तेल की दस बूंदें शहद में मिला कर चटा दे तो दस्त आ जायगा। इसी दस्त के न आने से बहुत से रोग बालकों को हो जाते हैं,

जिनको मसान का रोग बतलाते हैं। बालचिकित्सा बहुत कठिन है, क्योंकि बडे प्राणी के रोगों का तो निदान अच्छे वैद्यों से नहीं हो सकता है, छोटे बालकों का जो मुख से कुछ कह नहीं सकते, क्योंकर निदान हो कर ठीक औषध हो सकती है, परन्तु जिस प्रकार रोगों के निदान अनेक प्रकार से किये गये हैं, इसी प्रकार बालकों के रोग पहिंचानने के लिये बहुत से उपाय निर्धारित किये गये हैं।

बडे बालक तो अपना कुछ वृत्तान्त कह भी सकते हैं, परन्तु बहुतही छोटे बचे जो मुख से बोलना तो एक ओर रहा, सुनता-समझता भी नहीं है, क्योंकर अपना दुःख, दर्द जता सकता है ? सो उनके पहिंचानने के उपाय ये हैं कि, बालक रोता है, क्योंकि उस असह्य को इस द्वार के अतिरिक्त और कोई अन्य द्वार अपने दुःख जताने का नहीं है, पर बहुत सी मूर्ख स्त्रियाँ बालक को भूखा जान कर उसको बेर बेर दूध पिलाने लगती हैं, जिसे बालक पीता नहीं है। यदि कुछ पी लिया तो और उलटा कष्ट थोड़ी देर पीछे उसे होने लगता है। जैसे पेट के दर्द और अजीर्ण की दशा में।

मर्ख स्त्रियाँ ... दुःख के कारण दूध तो पीता पर रो... जाता है, जिसका ठीक कारण

से निश्चय नहीं कर सकतीं तब इस कारण झुँझला कर बालकों को मारने पीटने लगती हैं, सो नहीं करना चाहिये। स्त्री को चाहिये कि, पहिले उसके कारण को खोजे। बालक के दुःख जानने की रीति यह है :—

(१) बालक रोता होवे और मुख में झाग आते होवें तो जानना चाहिये कि, उसके कपड़ों में कोई जूं है, जो बालक को काट रही है, सो उसको ढूंढ़ कर निकाल देनी चाहिये। जहाँ काट खाया होवे, तनिक सा घी मल देना चाहिये। तत्काल बालक चुपका हो जावेगा।

(२) यदि बालक वेर वेर अपने पैरों को पेट की ओर समेटे और पेट को दबाने से खुश न हो, बराबर रोता ही रहे तो जानना चाहिये कि, पेट में दर्द है। इसका उपाय यह कि (अ) हाथ को आग पर सेंक सक कर अथवा रबर को आग पर दूर ही से गरम करके बालक के पेट को सेंके, पर इस बात का ध्यान रक्खे कि, रबर को इतना गरम कर के न सेंके कि, बालक की खाल, जो बहुत ही कोमल होती है, कहीं जल जावे। (इ) रोगनगुल का गुनगुना कर के पेट पर मल दे। (उ) नमक को खूब महीन पीस कर और गरम करके बालक के पेट पर मले। (क) इलायची के दो बीज, सौंफ के दो दाने माँ के दूध में पीस कर पिला दे।

(३) सोकर बालक उठे और रोवे, जीभ निकाले और इधर उधर दूर की खोज से मस्तक को हिलावे तो जानना चाहिये कि, भूखा है। दूध पिलाने से चुपका हो जावेगा।

(४) एक करवट देर तक सोने से वा किसी वस्तु के चुभने से वा चींटी अथवा मच्छर के काटने से भी बालक रोता है। सो प्रथम इसको भी देख लेना चाहिये। यदि इनमें से कोई सा कारण जान पड़े तो पहिले उस का उपाय कर देना चाहिये।

(५) जो बालक बराबर रोये ही चला जावे, चुपका न होवे तो जानना चाहिये कि, कहीं दर्द है वा कोई दुःख है।

(६) सो दर्द पहिचानने की यह रीति है कि, जहाँ दर्द होता है, उस अंग को बालक बार बार छूता है और उस अंग को दूसरे के छूने पर रोता है।

(७) जब बालक के मस्तक में पीड़ा होती है, तब बालक अपनी आँखें मूँद लेता है।

(८) यदि वस्तिस्थान (गुदा) में दर्द होता है तो बालक को प्यास अधिक लगती है और मूर्च्छा होती है। यदि दर्द मलकोष्ठ में होता है तो मल, मूत्र रुक जाता है और मुख मलीन हो जाता है, साँस अधिक चलती है और आँतें बोलती हैं।

(६) जब सब शरीर में दर्द होता है तो रोता है। बालकों को खान की औषध तीन प्रकार से दी जाती है। (१) जो बालक दूध पीते हैं तो उनकी दूध पिलाने वाली को। (२) जो नाज खाते हैं तो बालक को। (३) जो बालक दूध भी पीते हैं और नाज भी खाते हैं तो बालक और दूध पिलानेवाली दोनों को। बालकों को उनके माता के दूध अथवा शहद में घिस कर औषध दी जाती है। बालकों को बहुधा ये रोग होते हैं, जिन के नाम, लक्षण और उपाय अब तुमको बताती हूँ। अब तक तो ऊपरी चिह्न ही बताए।

(१) टूँडी का पक जाना-(अ) जो नार के खिंचने से पक गई हो तो मोम का मरहम कपड़े पर लगा कर या (इ) कपड़े को कड़वे या गोले के तेल में भिगो कर लगा दे। (उ) अथवा थोड़ी सी पुलटिस बांध दे। (क) हल्दी, लोध, मिरगु का चून इन सब को शहद में महीन पीस टूँडी के ऊपर लेप करे। (ख) जो सूजन होय तो पीली मिट्टी को आग में गरम कर, दूध डाल उसका बफारा दे। (ग) कपड़े को आग पर गरम कर कर के सेंके तो सूजन जाती रहेगी।

(२) खाल का लग जाना-बालक की खाल काँख, कोहनी, घोंटू, रान या जाँघ में से चिपकी रहती

है । यहाँ मैल जम जाता है और कच्ची खाल होने के कारण लग उठती है । इसलिये कड़ुवा तेल लगा कर, मैल निकाल कर नित गरम पानी से धो दिया करे।

(३) दूध डालना—इसको बालक कई प्रकार से डालता है । (१) अपने पेट के विकार से, (२) माता के दूध के दूषित होने से अर्थात् जब माता का दूध गरम अधिक होता है तो बालक उसको पीते ही डाल देता है। जो स्त्री रोटी कर के या चक्की पीस कर उठी हो अथवा कहीं से शीघ्रता में चली आई हो, पसीने में न्हा रही हो अथवा ऐसा ही अन्य कारण हो तो उस समय का दूध गरम हो जाता है, उसको न पिलाना चाहिये और माता से यह काम छुड़ा देने चाहियें । यदि माता को अजीर्ण रहता हो तो माता को अल्प भोजन, जो शीघ्र पच जावे, देना चाहिये और कोई पाचन चूर्ण देना चाहिये । पेट भर भोजन न देना चाहिये । आधी भूख खिलाना चाहिये । (अ) काकड़ासिंगी, अतीस, मोथा, पीपल पीस कर शहद में चटावे । (इ) आम की गुठली और धान की खील, सेंधानोन पीस कर शहद में चटावे । (उ) कटेली के फल का रस, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, सोंठ इन सब को पीस कर घी और शहद में चटावे।

(४) दूध न पीना—इसका पहिले कारण निश्चय

कर ले और यह कि, कौन सी पीडा कर के दूध नहीं पीता। (आ) जहा उसका हाथ वेर वेर जा कर पडे वहा दर्द जाने। कारण निश्चय कर के उपाय करना चाहिये। (ई) गर्भिणी का दूध पीने से मन्दाग्नि हो गई है, जौनसा कारण हो, उसीका उपाय करे अथवा नींव के पत्ते, पटोल के पत्ते, गिलोय के पत्ते और अडूसे के पत्ते, इनका काढा कर स्नान करावे।

(५) दूध पी कर डाल देना–इसके कारण भी वे ही उपरोक्त हैं और वे ही उपाय हैं।

(६) डुडी का जाना–इसके पहिचानने के ये लक्षण हैं कि, बालक दस्त जाने में रोता है और दस्त पतला आता है। दस्त आने में फिट फिट शब्द भी होता है। गुदा के नीचे एक नस होती है, वह अपने स्थान से हट जाती है, सो उसको किसी चतुर दाई वा बूढ़ी स्त्री से, जो इस काम को अच्छी भाँति जानती हो, उठवा देना चाहिये। इस क्रिया का नाम 'डुडी उठाना' कहते हैं।

(७) हँसली का जाना–यह नार की हँसली की एक हड्डी है, जो हँसली की भाँति दोनों कन्धों से लगी हुई होती है और नार के आगे को होती है। बालक की नार में हाथ लगा कर न लेने से झटका

चला जाता है, उसीमें दर्द हो जाता है । (अ) इस के रोकने का उपाय यही है कि, बालक की नार में चाँदी की एक हँसली डाल दे । (इ) उसके ठिकाने बैठाने का उपाय यह है कि, किसी चतुर दाई से सुतवा दे । (उ) नीम के पत्तों की धूनी दे । (क) गुञ्जा की माला पहिनावे ।

(८) काग का लटक आना—यह गर्मी से हो जाता है । बालक दूध पीना छोड़ देता है अथवा पीकर तत्काल डाल देना है । रोता बहुत है, पर रोया नहीं जाता । (१) इसमें चूल्हे की राख और काली मिर्च पीस कर, उँगली पर लगाकर उँगली के बल से चतुराई से ऊपर को उठा दे । गरम वस्तु बालक को न खाने दे, न उसकी दूध पिलाने वाली को खाने दे । (२) मुलतानी मिट्टी को सिरके में पीस कर तालुये पर लगा दे या माजूफल को सिरके में पीस कर, उँगली से लगा कर काग को उठा देवे ।

(९) आँख दुखना—जब आँख दुखने को आवे तो तीन दिन तक तो कुछ औषध किसी प्रकार की न दे, क्योंकि औषध करने से वेग रुक कर पीछे अधिक दुःख देता है । आँख दुखने के कई कारण होते हैं । कभी गर्मी से, कभी दाँतों के निकलने से, कभी दूध पिलाने-

वाली की आँख दुखने मे। सो इसके उपाय ये हैं।
(१) छोटे बालकों के कान में तो कड़वा तेल डाल दे और तालुये पर भी मल दे। यदि हो सके तो एक एक बूँद आँख में भी डाल दे। (२) दूध पिलानेवाली को खाने पीने में नियम से रहना चाहिये। नमकीन या खट्टा न खाना चाहिये। चने वा चने की बनी हुई कोई भी वस्तु न खावे। (३) रसोत का पानी आँख में डाल देना चाहिये। (४) नीम की कोंपल पीस कर, टिकिया बना कर, कोरे घड़े पर लगा कर ठंडी कर ले। फिर रात्रि को वा दुपहर को बाँध दे। (५) गेरू पानी में घिस कर रुई को उसमें अच्छी भाँति भिगो कर बाँध देना चाहिये। (६) घी को गरम कर के और रुई के फाये बना कर, नमक के पानी में भिगो कर इसे घी में छोड़ दे। जब छुन छुन शब्द बन्द हो जावे, उतार कर और ठंडा करके आँखों, पर बाँध देवे। (७) जो आँखें दाँत निकलने के कारण दुखती हैं, उनका अच्छा होना तनिक कठिन पड़ता है, क्योंकि जब तक दाँत नहीं निकल चुकते, आँख दुखती ही रहती हैं। (८) घीग्वार का रस आँख में टपकादे। (९) आँवले और लोध को गौ के घी में भून पानी में, पीस कर लगा दे। (१०) अमचूर को लोहे पर पीस, आँख ~ दे। (११) उसी बालक के मूत्र

में रुई भिगो कर फाये बाँध दे। (१२) बकरी के दूध के फाये बाँधे। (१३) चामे की पत्ती या बमहती की टिकिया बना कर बाँधे। (१४) तोले भर गुलाबजल में चार रत्ती फिटकरी महीन पीस कर मिला दे और मोरपंख व पलक के लिखने की क़लम में इस जल को भर कर दिन में दो तीन बर चार चार बूँद दोनों आँखों में डाल दिया करे। (१५) रसोत और फिटकरी बराबर और अफीम आधी लेकर, पानी में पीस कर, गुनगुना कर आँखों के ऊपर नीचे पलकों पर लेप कर दे, परन्तु आँखों के भीतर न जाने दे।

(१०) खाँसी—यह बहुत ही बुरा रोग है और सब रोगों की जड़ है, क्योंकि कहावत प्रसिद्ध है कि, 'रोग का घर खाँसी, लड़ाई की जड़ हाँसी'। इसलिये इस रोग में बहुत ही सावधानी रखनी चाहिये। इसके लक्षण प्रतीत होते ही उपाय करना चाहिये। यह कई प्रकार की है।

(१) धाँस, जो कभी कभी उठे, पर जोर से उठे। (२) श्लेष्मा (जुकाम) होने से जिसमें छाती की कौड़ी में दर्द होता है। यह बहुत ही बुरी होती है। (३) काली वा कुकुरखाँसी यह सर्दी से होती है या छूत से भी हो जाती है अर्थात् एक बालक को खाँसी हो रही है, उसका जूठा पानी वा खाना दूसरे बालक ने पी वा खा लिया अथवा मुख में साँस चली गई तो उस बालक को भी हो

जायगी । यह खाँसी देर में जाती है और बड़ा कष्ट देती है । बालक बहुत देर तक खाँसता रहता है, यहां तक कि, खाँसते खाँसते रद्द (वमन या उल्टी) कर देता है। (४) जिस में बालक की आवाज बैठ जाती है, यह और भी बुरी है । इसमें बहुत ही सिदौसी बालक की सुध लेनी चाहिये, क्योंकि इसमें बालक मर जाता है। इस खाँसी में साँस देर में आती है और साँस लेने में ताँबे के बर्तन की सी टङ्कार जान पड़ती है । (५) धुयें के कारण जो धाँस गई होवे तो तालु सुँघराने से आराम होता है । (६) गले में गरद-गुबार चला गया होवे और उससे खाँसी उठती होवे तो छाती पर तेल मलने से अथवा गला सहलाने से आराम हो जावेगा । (७) खुश्की से गले में फाँस पड़ गई होवे तो बिहीदाने के लुआब में मिश्री मिला कर पिलावे या सहतूत का शर्बत चटावे या छाती और गले में तैल मले । (८) जब बालक के चिनूने या छारये पड़ जाते हैं तब उस समय भी सूखी खाँसी उठती है । इस दशा में चिनूनों का उपाय करे, जो आगे बताऊँगी ।

(१) पोहकरमूल, अतीस, पीपल, काकड़ासिंगी को पीसकर शहद में चटावे । (२) वंशलोचन पीस कर शहद में चटावे । (३) आक की मुखमुन्दी बोंडी गिन

कर और उतनी ही कालीमिर्च गिन कर और पाँचों नमक डाल कर एक कुल्हिया में रख कर कपरौटी कर आग में फूँक ले। इस राख को थोड़ी थोड़ी खाँसीवाले बालक को चटावे। (४) एक कुल्हिया को गरम कर के साम्हर नमक उस में भूनले और बालक को चार पाँच बेर दिन में चटा दिया करे। (५) अनार का छिलका और नमक पीसकर चटा दिया करे। (६) बहेड़े को भूभल में भून नमक मिला कर चटा दिया करे। (७) आक की जड़ को आक के रस में तीन चार बार भिगो कर सुखा ले। फिर इसका धुआँ पिलावे। जब ठण्ड से खाँसी होवे। (८) अथवा आक के पत्तों को तवे पर भून कर जला लेवे। उसमें खारी नमक डाल कर पीस लेवे, बँगले पान में रख कर चूसे। (९) पान के रस में एक वा दो रत्ती जायफल घिस कर देवे। (१०) यदि शुष्क खाँसी होवे तो मुलहठी का सत मुख में डाले रक्खे। (११) गरम पानी की भाफ टोंटनीदार लोटे वा भारी से गले में लेवे तो खाँसी दूर होवे। (१२) कीकर (बबूल) का गोंद मुख में डाले रक्खे। रस चूसने दे। (१३) खाँसी, ज्वर और अतीसार संग होवें तो काकड़ासिंगी, पीपल, अतीस, मोथा को पीस कर शहद में चटावे। (१४) खाँसी और ज्वर—(१) काकड़ासिंगी,

अतीस, पीपल पीस कर शहद मे चटावे। (२) कटेली के फूलों की केसर को शहद में मिला कर चटावे। (३) सुहागा अधभुना और बराबर की कालीमिर्च पीस कर घीग्वार के रस में चने बराबर गोली बांधे और खिला दिया करे। (४) बादाम की मींगी पानी मे घिस कर चटावे। (५) सरसों को पीस कर शहद में चटावे। यदि इनके संग दस्त भी हों तो काकडासिगी, पीपल, अतीस और मोथा को पीस कर शहद में चटावे।

(१२) पेट्च चलना-जिसको अतीसार भी कहते हैं। यह कई कारण से होता है। अजीर्ण से, सर्दी पाने से, गर्मी पाने से और दाँत निकलने के दिनों में तो बहुधा होता है। जो दाँतों के कारण दस्त हों तो उनको कदापि न रोकना चाहिये, क्योंकि रोकने से हानि होती है। इसका विशेष हाल दाँत निकलने के विषय में बताऊँगी और जो अजीर्ण के कारण से हो तो बालक को जुटी देनी चाहिये वा कोई पाचक चूर्ण जैसे भुना हुआ सुहागा आदि। दूध में मिला कर चूने का पानी पिलाया जावे। चूने का पानी बनाने की विधि अगाडी बताऊँगी। दूध पिलानेवाली दूध को जल्दी जल्दी न पिलावे, देर में पिलावे। सर्दी से जो दस्त हों तो बालक को सर्दी से बचाये रक्खे। के पेट पर फलालैन लपेट दे। दूध पिलानेवाली भी

ठंढ से बची रहे और शीतकर वस्तु का भोजन न करे। यदि गर्मी से बालक को दस्त हो गये हों तो बालक और दूध पिलानेवाली दोनों गर्मी से रक्षित रहें। ठंढी वस्तु का सेवन करें। चावल आदि भोजन करें अथवा वंशलोचन और छोटी इलायची, मिश्री पीस कर माता के दूध में बालक को पिलावे।

सामान्य दस्तों के लिये ये औषधें उपयोगी हैं। (१) बेलगिरी, कत्था, धाय के फूल, बड़ीपीपल और लोध। इनको पीस कर शहद में चटावे। (२) इन्दी, कुड़े के बीज, काकड़ासिंगी, बड़ीहड़ पानी में भिगो कर उस पानी को पिलावे। (३) सोंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला और इन्द्रजौ इनका काढ़ा पिलावे।

यदि अतीसार के सग ज्वर भी बालक को होवे तो नागरमोथा, पीपल, अतीस, काकड़ासिंगी, इनका चूर्ण कर, शहद में मिला कर चटावे। इस औषध से खाँसी और दूध गिरना भी बन्द होता है।

यदि इनके सग प्यास भी हो तो मोथा, सोंठ, अतीस, इन्द्रजौ, खस इनका काढ़ा दे।

(१३) आँव अतीसार अर्थात् दस्तों के संग आँव भी आती हो तो (१) वायविड़ंग, अजमोद, पीपल महीन पीस कर चावलों के पानी में दे। (२) सोंठ,

अतीस, भुनीहींग, मोथा, कुड़ा और चीता इनका चूर्ण कर गरम पानी से दे ।

(१४) रक्तातीसार उसे कहते हैं कि, जब दस्तों में लोहू निकलता है तब (१) पाषाणभेद और सोंठ पानी में घिस कर पिलावे। (२) सफेद जीरा, कुड़े के बीज, जल में पीस कर, मिश्री मिला कर दे। (३) मोचरस, मँजीठ, धाय के फूल, कमल के फूल इनको पीस कर साठी चावलों के माँड़ में दे। (४) अनार के फल का छिलका एक छटाक, लोंग और दालचीनी का चूरा आठ आठ माशे ले कर मिट्टी की हाँडी में डेढ़पाव पानी में पन्द्रह मिनट तक मन्दी आग से उबाल ले। पर हाँडी का मुख बन्द रक्खे। जब उबल जावें तब उतार कर छान ले और ठंढा कर ले। बालक को छः छः माशे और युवा मनुष्य को चार चार तोले दिन भर में तीन बार बेर दे। (५) आक की जड़ का चूर्ण दे, जो इस प्रकार बनता है। आक की जड़ को खोद कर, मिट्टी को धो, पोंछ कर छाया में सुखावे। जब सूख जावे तब छाल को अलग कर ले और दूसरी बेर फिर सुखावे कि, तनिक भी दूध न रहने पावे। जब निपट सूख जावे तब कूट कर चूर्ण कर ले। बालक जितने वर्ष का होवे, उतनी ही रत्ती दिन में तीन चार बेर ठंढे पानी के साथ फँका

दे । गुश मनुष्य को दम से तीस रत्ती तक दिन भर में तीन चार बेर फँका दे । सौंफ और जीरा सफेद दो दो माशे, छोटी इलायची के दाने चार रत्ती, सौंफ और जीरे को आग पर किसी बर्तन में थोड़ा भकोर ले । फिर तीनों को पीस ले । इसमें छः माशे अनारदाने का लुआब नि काल कर एक तोला मिश्री मिलावे । पहिले फकी कर ले, ऊपर से इस लुआब को पिला देवे । (२) सौंफ को अधभुनी कर कूट लेवे और बूरी मिलाकर खावे । (३) मरोरफली को सेंधानमक के साथ पिस कर पिलावे । (४) सोंठ वा अदरक का मुरब्बा खिलावें । (५) सौंफ, सोंठ, पोस्त का छिलका, आँवला, छोटी हड़, सफेद जीरा यह सब चार चार माशे, मिश्री दो तोला, पोस्त के डोरे, सौंफ और जीरे को भून कर अलग रख लें । फिर शेष तीनों को भून ले । ये तनिक देर में भुनती है । फिर इन सब ओषधियों को थोड़े घी में भून कर पीस ले और मिश्री मिलाकर रख छोड़े । दिन में तीन बेर ठंढे पानी से खिलावे, पर भोजन गरिष्ठ न करे, हलका भोजन करे । अनार का काढ़ा दे, जिसकी विधि चिनूनों में बताऊँगी ।

(१५) अफरा उसे कहते हैं कि, जब पेट फूल जावे । यह बहुधा करके अजीर्ण से होता है । तब (१

सेंधानोन, सोंठ, इलायची, भुनी हींग और भारंगी को महीन पीस गरम पानी के संग पिलावे । (२) हींग को भून कर और पानी में घिस कर ढूँढी के चारों ओर लेप कर दे । (३) सूखा पोदीना, छोटी इलायची, पीपल, कालीमिर्च और कालानमक बराबर बराबर पीस कर तीन चार दिन खावे ।

(१६) लार गिरना—जवारस मस्तगी थोड़ी थोड़ी सी खिलावे । जिसके बनाने की यह विधि है कि, दो तोले मस्तगी, दो तोले बड़ी इलायची के बीज कूट पीस कर, पाव भर बूरे की चाशनी कर के उसमें दवा डाल दे और चकती जमा ले । एक या दो माशे खिला दिया करे ।

(१७) कान बहना—लोध को महीन पीस कर कान में डाल दे, बन्द हो जावेगा और दर्द भी जाता रहेगा । (१) समुद्रफेन, सुपारी की राख, कत्था इन सब को महीन पीस कर, कागज़ की बत्ती बना कर कान में फूँक दे । (२) मोर के पंजे को जला कर डाले । (३) मोटी सीप को कड़ुवे तेल में जला कर डाले । (४) जो कान में दर्द होता हो तो लड़केवाली स्त्री के दूध की चार बूँदें डलवा दे । (५) नीम की कोंपल का रस शहद में मिला कर, गुनगुना कर के डाल दे । (६) सुदर्शन के पत्ते का रस निकाल कर गुनगुना कर के

कान में डाल दे। (७) रुअर को गरम कर कर के सेंक दे। (८) बाबूने को पानी में औटा कर, किसी टोंटनीदार लोटे में भर कर उसका मुख तो ऐसा बन्द कर दे कि भाफ न निकले और टोंटनी की ओर से कान में भाफ जाने दे। इस प्रकार से सेंके, तो चैन पड़ जायगा। (६) आक की जड़ को मीठे तेल में खूब औटावे। जब तेल रह जावे और जड़ जल जावे, उसको छान कर कान में डाले, तो दर्द जाता रहेगा।

(१८) दाँत निकलना—यह आगे जा कर जितना सुख के कारण बनते हैं, उतना ही बालक को निकलने की दशा में कष्टदायक हो लेते हैं और शरीर में अनेक रोग उत्पन्न कर देते हैं। दाँत का निकलना प्रायः सात ही महीने के पीछे होता है, पहिले आगे के दाँत निकलते हैं, सो भी नीचे के, पर किसी किसी के ऊपर भी निकलते हैं (उनको अशुभ मानते हैं)। नवें महीने आगे के दाँतों से इधर उधर के दाँत। बारहवें महीने दो अगली डाढें निकलती हैं। अठारहवें महीने में दो कीलें और चौबीसवें महीने में पिछली दो डाढें। नीचे ऊपर के दाँत डाढ़ों के संग ही निकलते हैं। यह साधारण समय है। पर किसी किसी के इस समय में अन्तर पड़ जाता है। यह 'दूध के दाँत' कहलाते हैं। छठे या सातवें वर्ष से, सच्चे

दाँत निकलते है, जो 'नाज के दाँत' कहलाते हैं और फिर इस समय ये दूध के दाँत गिरने लगते हैं। इक्कीस व० की आयु तक सब दाँत और डाढ़ निकल चुकते हैं। फिर पीछे नहीं निकलते। हाँ, एक अकल डाढ़, जो सब डाढ़ों से पीछे होती है इक्कीस वर्ष की आयु से पीछे भी किसी किसी के निकलती है। कोई कोई मनुष्य ऐसे भी होते हैं कि उनके जन्म भर दाँत डाढ़ निकलते ही नहीं और किसी किसी के माँ के उदर में ही से दाँत निकले हुए आते हैं। सो यह विशेष दशा है। मैंने केवल सामान्य दशा का वर्णन किया है, जो सब की होती है।

बालक के दाँत निकलने के लक्षण ये हैं कि, मुखसे लार गिरती है, मसूढे गरम और लाल रहते हैं, बालक अपनी उँगलियों को चबाता है, प्यास अधिक लगती है और इसी कारण जल्दी जल्दी दूध पीने को करता है, पर पीता नहीं है। माता के स्तन को तनिक चचोडा कि, तत्काल छोड दिया। बालक के गालों का रंग रोने में लाल हो आता है। जब ये लक्षण हों, तब जान ले कि, दाँत निकलते हैं और बालक के सुगमता से दाँत निकलने के लिये सहज उपाय यह है कि, किसी चतुर डाक्टर से मसूढ़ों को चिरवा दे या शहद में सुहागा, नमक अथवा जीरा पीस कर मिलावे ... दिन में कई बार

कान में डाल दे । (७) रुथर को गरम कर कर सेंक दे । (८) बाबूने को पानी में औंटा कर, किसी टोंटनीदार लोटे में भर कर उसका मुख तो ऐसा बन्द कर दे कि, भाफ न निकले और टोंटनी की ओर से कान में भाफ जाने दे । इस प्रकार से सेंके, तो चैन पड़ जायगा । (९) आक की जड को मीठे तेल में खूब औंटावे । जब तेल रह जावे और जड़ जल जावे, उसको छान कर कान में डाले तो दर्द जाता रहेगा ।

(१८) दाँत निकलना—यह आगे जा कर जितना सुख के कारण बनते है, उतना ही बालक को निकलने की दशा में कष्टदायक हो लेते है और शरीर में अनेक रोग उत्पन्न कर देते है । दाँत का निकलना प्रायः सात ही महीने के पीछे होता है, पहिले आगे के दाँत निकलते है, सो भी नीचे के, पर किसी किसी के ऊपर भी निकलते है (उनको अशुभ मानते है) । नवें महीने आगे के दाँतों से इधर उधर के दांत । बारहवें महीने दो अगली डाढ़ें निकलती है । अठारहवें महीने में दो कीलें और चौबीसवें महीने में पिछली दो डाढ़ें । नीचे ऊपर के दाँत डाढ़ों के संग ही निकलते है । यह साधारण समय है । पर किसी किसी के इस समय में अन्तर पड जाता है । यह 'दूध के दाँत' कहलाते है । छठे वा सातवें वर्ष से सबे

देगा, परन्तु ऊपरी दूध बालक को खूब पिलाने और नाज खाने को कम दे। यदि बालक को दाँत निकलने में दस्त आते रहें तो बहुत अच्छा है। कब्ज हो तो कभी कभी अरण्डी का तेल दे दिया करे, पर यदि स्वयं ही दस्त बहुत आते हों तो बेलगिरी और रूमीमस्तगी मिला कर तनिक तनिक खिलावे।

कभी कभी बालक को इसमें बहुत ही पीड़ा होती है। मसूड़े फूल जाते हैं और लाल हो आते हैं, तत्ते रहते हैं, बहुत दुखते हैं, दूध पिया नहीं जाता, कण्ठ सूखा जाता है और चेहरा लाल, देह में ज्वर हो आता है, माथा गरम रहता है, सोते सोते बालक रो पड़ता है, कभी उठ के बैठ जाता है, कभी ऐंडने लगता है। पेट चल निकलता है, दुखता है और अफर जाता है और कभी कभी टोंट भी बँध जाती है।

जब ऐसी दशा हो तो तत्काल मसूड़ों को चिरवा दे। इससे बालक का कष्ट बहुत ही कम हो जायगा।

कभी कभी ऐसा भी होता है कि, टोंट बँध कर बालक के हाथ पाँव ऐंठ जाते हैं, और बालक नार नटेर जाता है और बत्ती सी भिच जाती है (१) ऐसी दशा में

चुपड दिया करे। मुलहठी की डंडी को छील कर बालक के गले में डोरे से बांध कर लटका दे और उसको चूसने दे। अथवा रबड के बने हुए खिलौने दे दे, जिनको वह दांतो से दाबता रहे। इससे बालक को बहुत चैन पडती है।

जब बालक के दाँत निकलते हों तब इतनी बातों का ध्यान रक्खे। खटाई की कोई वस्तु बालक के खाने को न दी जावे, क्योंकि खटाई खाने से दाँत देर में निकलते है। गर्मी के दिनो मे बालक के सिर को गरम पानी से धो दिया करे, परतु गरम टोपी न पहिनावे। कोई छोटी वस्तु बालक के खेलने को न दे दे, जिसको वह निगल जावे, क्योंकि बालक इन दिनों में हर वस्तु को मुख में रख कर मसूड़ों से चबोरने लगता है। छोटी वस्तु का गले में चले जाने का भय रहता है, जो कण्ठ में अटक कर बालक के कभी कभी प्राण तक हर लेती है, नहीं तो कष्ट तो देती ही है। जब बालक के दाँत निकलते हों तो माता को चाहिये कि, अपना दूध न पिलावे। बरन छुड़ा दे। इस प्रकार कि, दो चार दिन आप भोजन कम करे, जिसमे दूध न उतरे और छः माशे खाडिया मिट्टी और चार रत्ती कपूर पानी में पीस कर स्तनों पर मल दिया करे। दस पाँच दिन ऐसा करने से बालक स्वयं दूध पीना छोड़

देगा, परन्तु ऊपरी दूध बालक को खूब पिलाने और नाज खाने को कम दे । यदि बालक को दाँत निकलने में दस्त आते रहें तो बहुत अच्छा है । कब्ज हो तो कभी कभी अण्डी का तेल दे दिया करे, पर यदि स्वयं ही दस्त बहुत आते हों तो बेलगिरी और रूमीमस्तगी मिला कर तनिक तनिक खिलावे ।

कभी कभी बालक को इसमें बहुत ही पीड़ा होती है । मसूड़े फूल जाते हैं और लाल हो आते हैं, तत्ते रहते हैं, बहुत दुखते हैं, दूध पिया नहीं जाता, कण्ठ सूखा जाता है और चेहरा लाल, देह में ज्वर हो आता है, माथा गरम रहता है, सोते सोते बालक रो पड़ता है, कभी उठ के बैठ जाता है, कभी ऐंडने लगता है, पेट चल निकलता है, दुखता है और अफर जाता है और कभी कभी टोंट भी बँध जाती है ।

जब ऐसी दशा हो तो तत्काल मसूड़ों को चिरवा दे । इसमें बालक का कष्ट बहुत ही कम हो जायगा ।

कभी कभी ऐसा भी होता है कि, टोंट बँध कर बालक के हाथ पाँव ऐंठ जाते हैं और बालक नार नदेर जाता है और बत्ती सी भिच जाती है । (१) ऐसी दशा में बालक के मुख पर ठंडे पानी के छींटे देवे, जब तक कि, बालक आँख न खोल दे । (२) गुनगुना पानी कर के,

नाँद या किसी ओंडे वर्तन में भर कर बालक को नार तक आठ या दस मिनट तक उसमें बिठा दे, पर अधिक नहीं । निकाल कर तुरत सूखे अँगोछे से शरीर पोंछ डाले और वस्त्र उढा देवे, जिससे पवन न लगने पावे । फिर डाक्टर से मसूढ़े चिरवा कर अएडी के तेल का निरेचन (जुल्लाब) दे दे ।

इन्हीं दिनों में बालकों के कान के पीछे फुंसी वा गिल्टी भी हो जाती है, सो उनको गरम पानी में दूध या शराब डाल कर धो दिया करे । आहार बालक का घटा दे और भेदी औषध दिया करे । अँगरेजी सौदागरों के बिजली की बनी हुई एक प्रकार की पट्टी सी निकली है, जिसको नार में पहना देते हैं और इसी कारण उनका नाम गुलूबद है, उसको बालक की नार में बाँध दे तो दांत बहुत सुगमता से निकल आवेंगे और बालक को पीडा कम होगी ।

(१६) गला आजाना—सहतूत का शर्बत चटा दे । यह जितनी बेर चटाया जावेगा, उतना ही शीघ्र आराम पड़ेगा । इससे यह प्रयोजन है कि गले में हो कर जितनी अधिक बेर यह शर्बत उतरता है उतना ही अधिक और शीघ्र सुख होता है इसलिये बहुत थोड़ा थोड़ा चटावे कि, बहुत बेर चटाया जावे ।

(२०) कोहे आ जाना उसको कहते हैं कि, आँखों की बाहरी कोर लाल पड़ जावें और जो संधि दोनों पलकों की है, वह चिर जावे और उसमें पीड़ा होवे, खुजली चले। घाव बढ़ता ही जावे। इसका उपाय यह है कि, कपड़े की पोटली सी बना कर हाथ पर रगड़े अथवा मुख से उसमें फूँक भर कर आँखों के उस भाग को सेंक दे। (१) काजल में सफेदा रगड़ कर और उँगलियों में भर कर दिये की लौ पर उँगलियों को तनिक सेंके और गरम गरम ही आँखों में आँज दे। दो तीन दिन करने से आराम होजावेगा। (२) यदि रोहे हो गये हों अर्थात् आँख बहुत सूज गई होवे और ऊपर के पलक के भीतर फुसियाँ हो गई हों तो चिकासू (यह औषध पसारी के बिकती है) के बीज ले कर उबाल ले। उनके छिलके छील डाले। भीतर की मींगी को पानी में घिस कर दिन में दो तीन बेर आँखों में आँज देवे। इससे फुसियाँ फूट कर पानी वा लोहू निकल जावेगा। (३) अथवा रोहू मछली के दाँत डोरे में बीस वा पचीस बाँध बालक की नार में पहिना दे। चिकासू चक्षु का अपभ्रंश है।

(२१) तलुवे का पक जाना वा बैठ जाना— मुलतानी मिट्टी घिस कर दिन में कई बेर तलुवे पर रक्खे।

(२२) अलाई का निकलना— ये वे फुसियाँ हैं,

जो वर्षा ऋतु में छोटी छोटी लाल सी चकत्ते के रूप में शरीर में और बहुधा कर पीठ और छाती में निकल आती हैं। किसी किसी का मुख श्वेत होता है। इसका उपाय यह है कि, मसूर के छिलके और आँवले जला कर, उनकी बराबर मेंहदी और कबीला पीस कर, घी में मिला शरीर के उस भाग पर मल दे और मेंहदी को पानी में औटा कर और छान कर उस पानी से नहला दे।

(२१) अफोह–वे फुसियाँ हैं कि, जो शीतला के से फफोले बालक के शरीर में श्वेत श्वेत हो जाते हैं, आज के हुए फफोले कल फूट गये और कल नये और उत्पन्न हो गये। इनकी झिल्ली बहुत ही पतली होती है। फफोलों की खाल श्वेत होती है, परन्तु फफोलों के चारों ओर ललाई रहती है। दस बीस फफोले नित्य नये निकलते हैं और फूट जाते हैं। यह उड़ना रोग है अर्थात् छूत से भी हो जाता है। इसका उपाय यह है कि, (१) इसी अफोह नाम का एक पेड़ होता है, उसकी डाली मँगा कर प्रातःकाल जब तारे दीखते हों तब डाली को चलनी में रख कर, बालक को उसके नीचे बैठा कर चलनी में पानी डाल कर बालक को दो तीन दिन खूब नहला दे। (२) अफोह को पानी में औटा कर उस पानी से नहला दे तो जाता रहेगा।

(२४) दुकाम्म लगना अर्थात् बालक को इतनी प्यास लगना कि पानी पीते पीते उसकी शान्ति न हो। पल पल में पानी माँगे वा पीवे। इसका यह उपाय है। (१) मुनक्का दाख को धो पोंछ, बीज निकाल कर, सेंधा नमक के संग घोट पीस कर प्रातःकाल ही बालक को चटा दिया करे। (२) चने की दाल भिगो कर खिलावे। (३) जहरमोहरा खताई को पानी में पीस कर पिलादे। (४) कमलगट्टे की हरी मींगी को नींब के संग घोट कर पानी में पिला दे।

(२५) ज्वर या तो स्वय होता है या किसी की औंदेर से होता है। जब किसी की औंदेर से होता है तो पहिले उसी की औषध करे। जो केवल ज्वर ही हो और किसी की औंदेर से न हो तो ज्वर की औषध करे, पर इस ज्वर के अनेक प्रकार हैं। उनका निर्णय करना सहज बात नहीं है। किसी पूरे वैद्य ही का यह काम है, परन्तु जो साधारण ज्वर, जैसे बहुधा वर्षा ऋतु में हो आता है, वह दो प्रकार का है। उसकी औषधें बताती हूँ। (१) प्रकार यह है कि जिस में हर समय ज्वर बना रहता है और उतरता नहीं है, चाहे घट जाता है। (२) जो औंदेर से आता है। (३) जिस को इकतरा तिजारी (तेइय्या) चौथय्या कहते हैं।

ज्वराश जब तक शरीर में रहे, औषध ज्वर हटाने

नहीं देते हैं और विशेष कर ओसरेवाले ज्वर में। हाँ, जब ज्वर नहीं होता, तब देते हैं, जिससे ओसरा रुक जावे। यदि तनिक भी ज्वर का अंश हो आता है तो फिर नहीं देते हैं और बराबर रहनेवाले ज्वर में पसीना लिवा कर ज्वर को निकालते हैं। जहाँ देह में पसीना आया, ज्वर घटना आरम्भ हुआ अथवा अंरडी के तेल से दस्त करा देते हैं। ये बहुत ही परीक्षित औषधें हैं।

(१) कजे की पिसी हुई मींगी एक माशे और ½ माशे कालीमिर्च दोनों को पीस मिला ले। (२) पिसा अतीस डेढ़ माशे और पिसी कालीमिर्च ½ माशे इतनी एक बेर की मात्रा है। जब शरीर ठंढा हो, ज्वरका अंश न होवे तब ठंढे वा सदं पानी के संग, फँका दे। इतना ही साँझ और इतना ही सकारे।

यदि मल कोष्ठबद्ध हो तो पहिले एक माशे कालादाना और आध माशे सोंठ का चूर्ण कर, दोनों को फँका कर, गरम पानी पिला कर विरेचन करा दे। फिर दूसरे दिन औषध दे।

जो संध्या को देह गरम हो आती होवे तो छटाँक भर पानी में चार रत्ती शोरा और एक माशे बूरा घोल कर पिला दे। इससे पसीना आवेगा। उस समय कंबल से शरीर को ढाँप दे। यदि ज्वर के सङ्ग आँव के दस्त आते हों तो यह गोली बनाकर देनी चाहिये। हींग एक रत्ती,

अफीम १/४ रत्ती, कालीमिर्च आधी रत्ती, यह एक गोली का प्रमाण है। इस हिसाब से गोली बनाकर रख छोडे। साँझ सकारे खिला देवे। इन दस्तों में रोटी पूरी नहीं खाना चाहिये। दही से या मीठे से चॉवल खावे। खिचडी या दलिया खावे। ऊपर की मात्रा युवा मनुष्य के लिये है। बालक की इस प्रकार से है —

१४ वर्ष के बालक को इसमें से १/२ मात्रा,
७ ,, १/३ ,,
४ ,, १/४ ,,
२ ,, १/६ ,,
१ ,, १/१२ ,,
६ महीने के ,, १/१६ ,,

नींब की हरी हरी सींक ले कर उनके पत्ते और छिलका छील डाले। पचीस सींकें और सात कालीमिर्च डाल कर पानी में पीस लेवे और पी जावे। दो तीन दिन दोनों समय पीने से ज्वर जाता रहेगा।

अतीस पीसकर रख छोडे। जब ज्वर उतर गया होवे और शरीर ठंढा होगया होवे तब एक रत्ती की पुडिया ठण्डे पानी के सग खिला देवे। तीन चार दिन तक दिन में तीन चार बेर खावे।

ज्वर में पुरुषप्रसंग अत्यंत वर्जित है। इस से विषम

ज्वर हो कर हड्डी में घुस बैठता है । फिर सिवाय मृत्यु के और कोई उपाय दुःख से बचने का नहीं होता है। यह तरुण अवस्था में बहुधा और विशेष कर हो जाता है । इस लिये बहुत ही सावधान रहना चाहिये।

(२६) संग्रहणी अर्थात् भोजन का न पचना। (१) आधी छटाक खाने का खरा चूना ले और परात में रख कर ढाई सेर पानी में धीरे धीरे पतली धार से तरी दे । जिसमे वह घुल घुल कर पानी में मिलता जाय । दो घंटे पीछे उस पानी को निथार लें । नीचे के चूने को फेंक दे । अब इस पानी को आध घण्टे तक फिर निथरने दे । दुबारा फिर निथारकर नीचे के चूने को फेंक दे और इस पानी को बोतल में भरकर, बालक को दूध में थोड़ा थोड़ा सा मिला कर पिला दिया करे। इस से बालक की उल्टी और फटे दस्तों को भी आराम हो जाता है ।

(२७) मुख आजाना-(१) शीतलचीनी और पपरिया कत्था पीसकर शहद में चटावे। (२) केले की ओस चटावे । (३) कपूर और शीतलचीनी पीस कर लगावे । जो सफेद छाले मुख में हो गये हों, मुख का लाल रंग हो आया हो, लार अधिक गिरती हो तो बालक को घुटी देनी चाहिये । जो तुमको बालपोषण में बता

चुकी हूँ । (४) छोटी इलायची के बीज, पपरिया कत्था और वशलोचन पीस कर बुरक दे । यदि फफोले पड़ गये हों तो दो रत्ती सुहागा, सात रत्ती गेहूँ का सत पीस, छान कर मुख में मले ।

(२८) शीतला निकलना—इस रोग को तो तू जानती ही है । इसके रोकने का सहज उपाय तो यह है कि, गर्भाधान रजोदर्शन से सोलहवें दिन किया जावे, क्योंकि उस दिन का रज निपट शुद्ध होता है । दूसरा उपाय यह है कि, जिस समय बालक का नार काटा जावे, उसी समय बालक के पेट का खराब पानी सूँत कर निकाल देवे । अच्छा पानी तनिक भी न निकलने दे । नहीं तो बालक मर जावेगा ।

यह रोग प्राय॰ सब बालकों को होता है । इससे कोई न बचा है, न बच सकता है । माता के उदर में बालक जो रुधिर खा कर पलता है, यह उसका विकार होता है । उसी की गरमी अब फूट कर निकलती है । यह रोग उड़ना भी है, क्योंकि जहाँ एक बालक को घर में हुआ कि, अन्य सब बालकों को हो जाता है । इसके रोकने के लिये सब से अच्छा उपाय टीका देना है । इसके लगने से नहीं निकलती [illegible] बहुत जोर नहीं करती [illegible] १) खसरा,

जिसमें बहुत छोटे छोटे दाने निकलते हैं। इसमें तो कुछ डर नहीं रहता। (२) बड़े दानों की, जो कसूमी कहलाती है, और बड़े दाने की एक काली होती है, जिसमें बालक नहीं बचता है। शीतला निकलने के पहिले दो या तीन दिन ज्वर आता है और बालक अचेत पड़ा रहता है। इसलिये इस समय के ज्वर में कोई औषध न देनी चाहिये, वरन जब जाने कि, अब बालकों के शीतला निकलने लगी हैं तो एक हिस्सा पोस्त और दो हिस्सा कन्द का शर्बत बालकों को दिया करे और दूध पिलाने वाली को ठंढी वस्तु खाने को दे, अथवा रुधिरशोधक वस्तु जैसे शहद, चिरायता पिलावे। उड़द की दाल और मीठा न देवे। जब जाने कि, बालकों के शीतला के दाने निकलने लगे तो दूध पिलानेवाली को गोला चार चार तोला खिलावे, और जो बालक दो वर्ष का हो तो दो तोला उसे भी खिलावे। वर्ष पीछे एक तोला के हिसाब से दे। (१) गोला खाने से शीतला के दाने अधिक नहीं निकलने पाते, वरन थोड़े निकलते हैं। (२) रुद्राक्ष के दाने पानी में घिस कर दे। (३) मुलहठी और अनार-दाना बराबर कूट और औटाय शाहतरा के अर्क में मिला कर पिलावे।

जिस बालक के शीतला निकले, उसको अँधेरे घर

में रक्खे। किसी की परछाहीं न पड़ने दे। परछाहीं पड़ने ही से पुख या शरीर पर रन वा चिह्न पड़ जाते हैं। कभी खुजलाने से भी चिह्न पड़ जाते हैं। इसलिये बच्चे के हाथ में कपड़े की थैली बाँध दे कि, वह इनको खुजा न सके। यदि खुजली मारती होवे तो कबूतर के पर से मक्खन व मलाई खुजली के स्थान पर लगा दे। ठंढक पड़ने के लिये ठंढे पानी से देह धो दे। चूने के पानी में नारियल के तेल को मिला कर लगा दे। इस से रन वा चिह्न नहीं पड़ने पाते हैं। जब खुरट उतरने लगे, तब गरम पानी से नहला दे। तेल नित्य लगा दे और आँख नित्य धो देवे। दिये को ऐसे स्थान पर रक्खे कि, जो खाट के सिरहाने की ओर रक्खा जावे कि, जिससे परछाहीं न पड़ने पावे और बालक के आँखों के सम्मुख न रहे। ऐसा न करने से बड़ी हानि होती है। कभी कभी बालकों की आँखें मारी जाती हैं। इस रोग में बालकों को डरने न दे। कभी कभी डर के मारे ही बालक मर जाता है। जब शीतला के दाने (गौर) फूट जायें तो सिर्स, पीपल, लसोड़ा और गूलर की छाल को जला कर और पीस छान कर घी में मिला लेवे और फफोलों पर लगा दे। शीतला कोई देवी नहीं है। जैसा कि लोगों ने विश्वास कर रक्खा है। नहीं, यह केवल

एक प्रकार का रोग है। यदि यह देवी होती तो अपने न माननेवालों के सन्तानों को कभी जीता न छोड़तीं। सब को मार डालतीं और अपने पूजनेवालों की सन्तान में से एक को भी न मारतीं, वरन सब को चिरंजीवी रखतीं। सो कदापि नहीं होता है। न माननेवालों और न पूजनेवालों के बालक जीते जागते भी रहते हैं और मानता माननेवालों तथा पूजनेवालों की सन्तान मर भी जाती है। क्योंकि सिवाय हिन्दुओं के अन्य देश के वासी इसको नहीं पूजते। उनकी सन्तान नहीं मरती। हिन्दुओं में (जो अधिकतर पूजते है) उनके मरजाती हैं। इसलिये यह रोग ही है। जो मरनेहारा था, वह मर गया और जो बचनेहारा था, वह बचगया।

(२६) मसान–यह रोग बहुत कर सौर ही में उत्पन्न हो जाता है। यह कोई भूत, प्रेत नहीं है। जैसा कि, माना गया है। यह केवल एक रोग है, जो मैला कुचैला रहने से हो जाता है। इसमें बालक की पसली चलने लगती है। ज्वर हो आता है। पसलियों में कफ जम जाता है। कभी दस्त हो जाते हैं और कभी नहीं भी होते हैं। बालक अचेत रहता है। यह सर्द और गर्म दो प्रकार का होता है। इस रोग में दस्त करा देने से तुरन्त आराम पड़ता है। जो गर्मी से होता है, उसमें तो

कुछ डर नहीं होता। इसके होने के इतने कारण हैं। (१) जिस घर में बालक रहता है, वह तंग और अँधेरा होने से। (२) पहिनने के कपडे और पोतडे अपवित्र रखने से। (३) दूध पिलानेवाली की असावधानी से। (४) थोडी थोडी देर में दूध पिला देने से। (५) गरिष्ठ भोजन बालक को वा दूध पिलानेवाली को कराने से। (६) ठंढमें पूरे कपडे न पहिनाने से। (७) पुरुषप्रसंग के पीछे ही दूध पिला देने से। क्योंकि, दूध में से उस समय गर्मी निकल जाती है। (८) दूध पिलानेवाली का अधिक पुरुषप्रसंग करने से। सर्दी में बहुत डर रहता है। इसकी औषध ये हैः—(१) कबीला, चूना, नीलाथोथा, बडीहड़ और बहेडे का छिलका, पपरिया कत्था। इन सब को बराबर ले कूट, छान गोली बना ले। जब देखे कि, बालक को रोग है, घी में मिला कर पसली पर लेप करे। (२) केंचुआ, पीलू का बीज और लौंग बराबर ले कर बाजरे के बराबर गोली बना ले। एक गोली नित्य खिला दे। (३) एक कजे का बीज और एक रत्ती नीलाथोथा इन दोनों को पीस, सरसों की बराबर गोली बना कर एक नित्य खिला दे। (४) एलुआ और जमालगोटा बछिया के मूत्र में लोहे से पीस कर मूँग बराबर गोली बना ले।

एक नित्य खिला दे। (५) सूखा केंचुआ पानी में पीस एक बूँद बालक के मुख में टपका दे। (६) अण्डी का तेल बालक के पेट पर मल कर, वकायन के पत्ते गरम कर के बाँध दे। (७) तेलिया संखिया, जमालगोटे की मींगी थूहड के दूध में पीस कर टूँडी पर लेप कर दे। (८) बालक का नार जिस समय काटा जाय, उसी समय चोखी कस्तूरी एक चावल भर थोड़े से कोइले में महीन पीस कर उस कटे हुए नार पर लगा दे तो यह रोग फिर न होगा। (९) शराब को थोड़े से तेल में मिला कर नख और पेट पर लेप कर दे। (१०) थोड़ी शराब अर्थात् चार पाँच बूँदें अथवा कुछ अधिक बालक की अवस्थानुसार गले में डाल दे और घंटे घंटे दो दो घंटे पीछे तीन चार बेर फिर डाल दे। यदि कण्ठ में कफ भी घिर आया होगा तो दूर हो जावेगा। (११) यदि बालक के शरीर में लाल लाल फफोले उठ आये हों और ज्वर हो और फफोले इस भाँति के हों कि, एक अंग में न हों जैसे आज पेट पर हैं तो कल जाँघों में हो गये। कल जाँघों पर हुए तो परसों मुख पर हो गये। ऐसी दशा में कपड़े बहुत ही स्वच्छ और पवित्र रहने चाहियें। रहने का घर पवनीक होना चाहिये। (१२) सर्दी हो कर गले में कफ घरघराता हो और पेट की पीड़ा से बालक रोता होवे

और सुस्त पड़ा होवे जो (शुण्ठी मात्रा) दे अर्थात् बैतरा सोंठ का चूर्ण पावभर, दही चका आधपाव, पीपल छोटी आधपाव। इन सब को एक मिट्टी की हाँडी में भरे। मुख बन्द करके उस पर तीन कपरौटी चढ़ा दे। फिर एक गड्हा हाथ भर लंबा, हाथ भर चौड़ा और इतना ही नीचा खोद कर, अरने उपले उसमें भर दे। बीच में इस हाँडी को रख कर आग लगा दे। जब कंडे जल जावें तब राख निकाल कर फिर भरे और आग लगा दे। इसी प्रकार तीन बेर करे। अब हाँडी को तीसरी बेर निकाल कर उसमें से सब औषध रत्ती रत्ती भर निकाल ले। इसको शीशी में भर कर, कस कर डाट लगा दे। यह साधारण मात्रा है। माता के दूध में एक चावल दे। जो रोग का बल अधिक जान पड़े तो एक रत्ती अदरक का रस और छ रत्ती शहद मिला कर तीन दिन तक दोनों बेर दे। यदि पसली चले तो तुलसीदल के चार रत्ती रस में वा चावल भर शुण्ठी मात्रा और एक माशे शहद मिला कर दे और इस तेल को पेट पर लेप कर के सुहाता सुहाता सेंक दे।

१ तेल—अदरक और लहसन का दो दो तोले रस ले कर आधी छटाँक मीठे तेल में आग पर औटावे। जब रस जल जावे तब उतार कर छान लेवे और शीशी में भर लेवे। जिस के बालकों को बहुधा मसान का रोग हो जाता है, उस

को यह करना चाहिये कि, वह अपने घर में कबूतर पाले। बालकों को साँझ सवेरे कबूतरों के पख की वायु लगने दे। इसी कारण बालकों के हाथ से कबूतरों वा चिड़ियों को चुगा चुगवाते हैं। (१) जबतक बालक दूध पीता रहे तब तक कभी पुरुषप्रसंग न करे, क्योंकि इससे दूध की उष्णता निकल कर ठंढक आ जाती है। और वही ठंढ दूध का कफ बना देती है, जो आँतों में चिकट जाता है और रोग उत्पन्न कर देता है। (२) यदि कभी ऐसा (पुरुषप्रसंग) हो ही जावे तो उस समय से एक पहर पीछे अपने स्तनों का दूध बालकों को पिलावे, पर उसमें भी पहिले थोड़ा सा दूध निकाल कर धरती पर डाल दे; क्योंकि वही दूध अधिकतर दूषित हो जाता है और ऐसा करने से दूषित दूध निकल जाता है। (३) आप जायफल खावे और बालक को भी कभी कभी अपने दूध में घिस कर पिला दिया करे।

(३०) *चिनूने वा कृमये पड़ जाना*—ये बालक को अजीर्ण रहने और दूध वा भोजन के न पचने से पड़ जाते हैं; और बहुधा दाँत निकलने के दिनों में। इसमें बालक आँख नटेर जाता है और मुख उसका पीला पड़ जाता है। सोते में गुदा को बालक खुजाता है। नाक को मीड़ता है। दाँतों को किरोता है। यही लक्षण

ज्ञान लेने के हैं कि, इस बालक के पेट में चिनूने हैं और इनका तो प्रत्यक्ष भी हो जाता है, क्योंकि बहुधा बालक के शौच के संग मल से कीड़े निकल कर रेंगने लगते हैं। (१) इसका उपाय यह है कि, सब से प्रथम बालक की पाचनशक्ति का उपाय करना चाहिये। (२) काँजी का पानी पिलावे। इसके बनाने की यह रीति है कि, उड़द की दाल के बड़े वा बेसन की पकौड़ी कर के-उनको पानी में डाल दे और उस पानी में राई नमक पीस कर डाल दे। उसे चार पाँच दिन तक रक्खा रहने दे। जब खट्टा हो जावे तब इस पानी को पिला दे। (३) अथवा शीघ्रतर उपाय यह है कि राई को पीस कर और दही में मिला कर पिला दे। (४) मुनक्का में बायविड़ङ्ग रख कर पाँच दाने से दस दाने तक खिला दिया करे। (५) नमक के पानी में कपड़ा भिगो कर अथवा कड़ुवे तेल में अथवा हींग में भिगो कर शौचस्थान में रक्खे। (६) मजीठ पीस कर पिला दे। (७) आम की गुठली का चूर्ण आठ रत्ती दे। (८) कभी अण्डी के तेल का विरेचन दिया करे। (९) चार माशे खाने का नोन, रत्ती हरी कसीस में आधी छटाँक ठंढे पानी में घोल कर गुदा में पिचकारी देने से चिनूने मर

(१०) अनार की जड़ के बकल का पानी भी इसकी औषध है। जिसकी विधि यह है कि, अनार की जड़ का ताज़ा छिलका एक छटांक कतर कर तीन पाव पानी में उबाले। जब आधा जल जावे, उतार लेवे और छान कर बोतल में रख छोड़े। सवेरे एक छटांक, उसके पश्चात् आध घंटे के अन्तर से पीता रहे। इस भाँति चार मात्रा खाने से और दो तोले अरण्डी के तेल का विरेचन लेने से बारह घंटे में सब कीड़े निकल जावेंगे। इसमें बालक को मीठा न खाने दे और न दूध पिलानेवाली को खाने दे। गरिष्ठ भोजन बालक को और दूध पिलानेवाली को न देवे। भोजन नोन का अधिक खावे।

(३१) हिचकी—(१) नारियल पीस कर और शकर मिला कर चटावे। (२) गीला कपड़ा तलुये पर रक्खे। (३) रीठे को डोरे में पिरो कर नार में पहिरा दे।

(३२) गंज—(१) प्रथम नीम के पत्तों को पानी में औटा कर सिर को खूब धोडाले। इस पीछे इस औषध को लगावे। गन्धक और चूना आधी आधी छटाँक तीन पाव पानी में डाल कर मिट्टी की हाँडी में औटावे और छान कर बोतल में भरदे। कबूतर के पख को इसमें भिगो, भिगो कर गंज वा खुजली पर लगा दे। (२) मक्खियों की विष्ठा, जो छप्परों के फूस पर इकट्ठी होजाती है,

इसको थाली में पानी भर कर घोले और कपडे को भिगो भिगो कर सिर पर रक्खे। (३) गौ के घी को धो कर इसमें कमीला, तूतिया, मुर्दासंग एक एक तोला पीस कर मिला ले और गज पर लगावे।

(३३) जल जाना-(१) इमली की छाल को जलाकर गौ के घी में मिला कर लगावे। (२) जले हुए अंग को उसी समय आग पर सेंक दे अथवा चूरा मल दे तो फफोला नहीं पडता। (३) यदि घाव हो गया होवे तो कडुवे तेल को चुपड चुपड कर रेल अर्थात् पत्थर के कोइले को महीन पीस कर बुरकता रहे। (४) अथवा चूने का पानी, जिसकी विधि आगे खुजली रोग में है, लगावे।

(३४) खुजली-चूने के पानी में कडुवा तेल डाल कर खूब हिलावे। जब हिलाते हिलाते गाढ़ा हो जावे तब उस में रुई के फाये भिगो भिगो कर खुजली के स्थान पर लगावे।

(३५) काँच निकल आना-(१) बालक ही के मूत्र से उसे शौच लिवावे। (२) पुरानी चलनी का चमडा जला कर और पानी में घिस कर उस स्थान पर छिडक दे। (३) कडुवा तेल लगा कर जला हुआ और पिसा लसोढा लगावे। (४) आम और जामुन की छाल और पत्ती को पानी में औटा कर उस पानी से शौच करावे।

(३६) पेट चढ़ आना–पानी में मिला हुआ शहद थोड़ा थोड़ा दिया करे । थोड़े दिनों इसका सेवन करने से पेट छँट कर ठीक हो जावेगा ।

(३७) चिनग–जब देखे कि, बालक मूत्र करते समय रोता है और छोगनी (इन्द्री) को पकड़ पकड़ कर खींचता है तो जाने कि, उसको चिनग है तब यह औषध करे। (१) चार पाँच डली बबूल के गोंद की कपड़े में बाँध पानी मे भिगो दे । फिर उस पानी में मिश्री मिला तीन चार वा पाँच बेर दिन भर में पिलावे । (२) पत्थर के बेर को पानी में घिस कर पिला दे । यह बेर पसारी और अत्तारों के बिकता है और ' हजरुलयहूद ' अर्थात् यहूद देश का पत्थर कहलाता है । ठीक बेर की आकृति का होता है ।

(३८) मिरगी वह रोग है कि, प्राणी इसमें निपट बेसुध हो कर धड़ाक से गिर पड़ता है । चाहे आग हो अथवा पानी हो, उसको अपने शरीर की सुध तनक भी नहीं रहती । यहाँतक कि, आग में जल कर मर तक जाता है । पर उठता नहीं है । पानी में दम घुट कर प्राण त्याग देता है, पर कुछ सुध नहीं रहती । कारण इसका मस्तक का निपट बेसुध हो जाना है । इसलिये इसका उपाय यही है कि, (१) मस्तक को सुस्त न पड़ने दे । इसका दौरा हुआ

करता है। जिस प्राणी को मिरगी रोग हो, उसको आग पानी के पास कभी न जाने दे। पानी को देख कर तो बहुधा मिरगी आ जाती है। जब इसका दौरा होवे तो जूते के तले से रोगी की नाक के नथनों को बराबर रगड़ती रहे, ताकि मस्तक अचेत न होने पावे। जबतक चेत न हो, बराबर रगड़ती रहे और दोनों कानों को सेंकती जावे। इन दोनों से मस्तक चैतन्य हो आता है। (२) जब दौरा होवे तो गिलहरी को काट टका भर टटका रुधिर रोगी की नाक में डाल दे, तो फिर कभी यह रोग न होगा।

(३६) नकसीर या नाक से रुधिर बहना—(१) अनार के फूल का रस और श्वेत दूब का रस इन दोनों से दिन में दो तीन बेर नास लेवे, रुधिर रुक जावेगा। (२) फिटकरी के पानी को नाक में सूँघे। (३) पोता मिट्टी पर पानी डाल डाल कर सूँघे। (४) नाक में जो कीड़े पड़ गये हों तो यह उपाय अति ही श्रेष्ठ है कि, पिंडोल मिट्टी को ले कर इसे कूट डाले। रोगी के मुख और नथुनों पर बहुत महीन कपड़ा ढीला कर के डाल देवे और फिर औंधा लिटा कर उसके नाक के नीचे खूब मिट्टी रख दे और आँख मिचवा कर उसके मस्तक को मिट्टी में ढक कर ऊपर से मिट्टी पर पानी हौले हौले डाले। जब सब मिट्टी तर हो जावे तब पानी डालना बंद कर दे,

पर रोगी को थोडी देर तक उसी प्रकार औंधा लेटा रहने दे। ज्यों ज्यों इस मिट्टी की सौंधी गन्ध नाक की राह से मस्तक में जावेगी, त्यों त्यों कीडे बाहर निकल आवेंगे। तीन चार दिन ऐसा करने से सब कीड निकल जावेंगे।

(४०) विषूचिका अर्थात् हैजा इसकी औषध सरकार से मुफ्त बटती है। (१) अफीम, हींग, कालीमिर्च और कपूर बराबर ले कर और पीस कर डेढ़ डेढ़ रत्ती की गोली बना ले। घंटे घंटे पीछे बालकों को खिलावे। (२) कपूर का अर्क पिलावे। यदि अर्क न मिल सके तो कपूर ही खिलावे। (३) जब जाने कि यह रोग फैल रहा है तब सदा हाथ, पाँव धो कर और कुल्ले कर के भोजन करे। एक ताँबे का पैसा डोरे में बाँध कर कौडी के ऊपर लटकाये रक्खे। कपूर को सदा अपने पास रक्खे और सूँघती रहे, बरन थोडा थोडा सा खा भी लिया करे।

(४१) लू लगना–(१) कच्चे आम के भुर्ते का पानी बना कर पीवे। (२) पुराने पेडों का शर्बत पीवे और हाथ पैरों में भी मले। (३) प्याज का अर्क पीवे।

(४२) पान से जीभ फट जाना–एक या दो लौंग खा ले। ज्यों ज्यों लौंग को चाबेगी वैसे ही जीभ जुड़ती चली जावेगी।

(४३) फूली–जो आँख में पड़ जाती है। चिरचिटे

की जड का रस शुद्ध शहद में मिला कर आँखों में आँजे। फूली कट जावेगी।

(८८) बालकों का कब्ज—इसके लक्षण साधारण हैं कि, जब बालक को दस्त खुल कर न आवें, बुरे बुरे स्वप्न दीखने से बालक सोते सोते रोने लगे तो बालपोषण में बताई हुई घुटियों में से कोई भी देवे। (१) अथवा कालानोन, सुहागा, भुनी हींग पानी में घिसकर और तनिक गुनगुनी कर के पिला देवे। (२) मुरदासग को पानी में घिस कर और शक्कर मिला कर औटावे और गुनगुना पिला दे। (३) अरण्डी का तेल पिला दे। ऐसे बालक को कभी इकेला न छोडे और न अँधेरे मकान में सुलावे। दिया बारे रक्खे।

यहाँ तक तो तुझ को बालरोगों की चिकित्सा बताई। अब तुझको कुछ फुटकर औषधें बताती हूँ, जिनसे बहुधा काम पडता है।

(८५) मकडी का फरजाना—जब बालक के अंग से मकडी रगड़ जाती है, तब उसके विष से फुसी हो जाती हैं; जिनमें जलन और खुजली होती है। औषध उसकी यह है (१) नींबू के रस में चूना पीस कर लगावे। (२) अमचूर पीस कर लगावे।

(८६) मक्खी का काटना—लोहे से घी घिस

कर लेप कर दे अथवा मक्खी की बीट ही पानी में घोल कर लगा दे। यह भी स्मरण रक्खे कि, जो जीव काटे, उसी की विष्ठा वहाँ लगा दे तो विष दूर हो जावेगा।

(४७) ततैया का काटना-(१) मथुरा के बने हुए अथवा सन के कागज को पानी में भिगो कर काटने के स्थान पर रख दे। (२) नौसादर और चूना मल दे। (३) पाँच दियासलाई पानी में भिगो कर उस स्थान पर खूब रगड़ दे। (४) गेंदे के पत्ते मल दे।

(४८) कुत्ते का काटना-(१) लालमिर्च पीस कर घाव में भर दे। (२) कुत्ते की विष्ठा जला कर भर दे। (३) कुचला पीस कर लगा दे और एक एक रत्ती सात दिन तक नित खा लिया करे। (४) चिरचिटे की जड़ को पीस कर शहद में चटा दे। (५) घीग्वार के मोटे मोटे पत्तों को ले कर, एक ओर से छील कर, सेंधानोन पीस कर बुरक दे और काटने के स्थान पर बाँध दे। दो तीन दिन में आराम हो जायगा।

(४९) बावले कुत्ते का काटना-एक पके केले की फली को ले कर बराबर के तीन टुकड़े करे। उसमें सिंह की खाल (पर बाल खूब उखाड़ कर) एक एक रत्ती भर कर एक एक घंटे पीछे खिलावे। आराम हो जावेगा।

(५०) कॉतर का चिपट जाना—(१) जहाँ पंजे खाल में गड़े हुए हों, वहाँ सींक से कड़ुए तेल की लकीर खींचती जावे। पंजे अलग होते हुए चले जायेंगे। (२) अथवा मूली के पत्ते का रस इसी प्रकार लगादे। (३) यह बहुत ही उत्तम है कि, कॉतर के मुख में थोड़ा सा बूरा भर दे तो तत्क्षण छूट कर गिर पड़ेगी।

(५१) बिच्छू का काटना—(१) मूली के पत्तों का रस लगा दे। (२) काशीफल के ऊपर जो डँठला होता है, उसको पानी में घिस कर लगा दे। (३) जमालगोटा पानी में घिस कर लगा दे। (४) औंगा की लकड़ी को हाथ में रख ले व पत्तों को पीस कर लगा दे। (५) दियासलाई के मसाले को पानी में घिस कर लगा दे। (६) फासफोरस वा गन्धक लगा दे। (७) पुरानी खाल को जला कर लगा दे। (८) एक माशा चूना पानी में मिलाकर सुँघा दे। उसी समय आराम हो जायगा।

(५२) साँप का काटना—यह बड़ा ही दुष्ट जन्तु है। इसके अनेक प्रकार हैं, जिनमें से कोई कोई तो बहुत ही विषैले होते हैं। भारतवर्ष भर में दोसौ अठारह प्रकार के सर्प गिने गये हैं, जिनमें तेंतीस प्रकार के बहुत ही विष धारी हैं। विषधारी साँप के काटने की पहिचान यह है कि, उसके काटने में दुहरे दाँतों के चिह्न दीख पड़ते हैं। जिन

में विष कम है, उनके इकहरे दाँत होते हैं। जहाँ सर्प काटे खाने वहाँ बन्द बाँधना बहुत ही आवश्यक है। काला साँप बहुत ही विषधारी है। औषधें तो अनेक हैं, परन्तु हुक्मी कोई नहीं है। इसमें सब से अधिक ध्यान इस बात का रक्खे कि, काटे हुए मनुष्य को सोने न दे। जैसे बने, वैसे उसको चैतन्य रक्खे। इसी कारण हमारे यहाँ थाली बजाने की प्रथा जारी है, जिसको 'ढाँक धरना' कहते हैं। आँखों में ठंढे पानी के छींटे देती रहे। कान में फूकती रहे। सब से प्रथम काटते ही कस के बाँध दे। पीछे सुई से जहाँ जहाँ साँप के दाँत लगे हों, वहाँ वहाँ से देखे कि, कहीं कोई दाँत टूट कर रह तो नहीं गया है। यदि रह गया होवे तो पहिले उसको निकाल डाले और फिर यह औषध दे।

(१) तूतिया और सफेद घुँघची को पीस कर नाक में नलकी से फूँके। थोड़ी देर पीछे पीला पीला पानी नाक की राह से झड़ने लगेगा और चेत आता जावेगा। जब चेत आ जावे, तब मठे में थोड़ा नमक घोल कर पिला दे तो चित्त में शीतलता आ जावेगी।

(२) कुनले को पानी में पीस कर पिला दे।

(३) मनुष्य को आधा और गाय भैंस को एक बीज पूरा पलाशपापड़े का पानी में पीस कर पिला दे।

(४) मुर्गी के पर पूँछ के ऊपर से नोच डाले और साफ कर के काटे हुए स्थान पर उस भाग को चिपका दे-थोडी देर में मुर्गी स्वयं चिपक जावेगी और विष को खींचने लगेगी और अन्त को मर कर गिर पडेगी। यदि इतने में काटे हुए को चेत न हो तो इसी प्रकार दूसरी तीसरी वा चौथी मुर्गी को करे। इस क्रिया से मुर्दा भी अच्छा हो जावेगा।

(५) सफेद कनेर की जड की छाल और सात काली-मिर्चें बारह तोले पानी में पीस कर शीशी में भर ले। एक घंटे पीछे खूब हिला हिला कर एक एक तोले पिलावे। यदि मुख बन्द हो रहा होवे तो चमचे से पिला दे। एक बेर ही देने से दो घंटे में आराम हो जावेगा, पर पहिले चार घंटे में इस औषध का गुण जान पड़ेगा। चार घंटे पीछे देह हिलने लगेगी।

(६) अज्जाझारा, जिसको चिरचिरा भी कहते हैं, उसका कोई सा अंग (पत्ते, डंडी वा जड़) पानी में पीस कर काटे हुए स्थान पर लगा दे और उस समयतक पिलाती भी रहे जब तक कड़ुवा स्वाद न जान पड़े। जब कड़ुवा लगने लगेगा, तभी विष उतर जावेगा।

(७) साठी की जड़ छः माशे को ग्यारह कालीमिर्चों में मिला कर और पानी में घोट कर पिला दे। जो इतने

से आराम न होवे तो आध घंटे पीछे फिर पिलावे। चार पाँच बेर के देने से मुर्दा भी जी उठेगा।

(८) हुक्के की कीट (जो नेहचे में जमती रहती है।) घी में मिला कर चने बराबर खिलावे। काले साँप का भी विष उतर जावेगा। यदि एक बेर के देने से आराम न होवे तो थोड़ी थोड़ी देर बाद दो तीन बेर देवे, जरूर आराम होगा। सहज परीक्षा इसकी यह है कि इस कीट को काले साँप को खिला दो, तो फन पटक पटक कर मर जावेगा। इस कीट को काटे हुए स्थान पर भी लगा दे।

(९) रीठा घोट कर पिलावे।

(१०) कमलगट्टे की मींगी पीस कर आँख में आँजे।

जहाँ साँपों का डर रहता है, वहाँ अपने चारों ओर कार्बोलिक पाउडर (Carbolic Powder) की लकीर करा दे। साँप उसको लाँघ कर कभी नहीं आवेगा।

यदि किसी ने विष खा लिया होवे तो उसके उतारने की ये औषधें हैं।

अफीम का विष—(१) हींग को पानी में घोल कर पिला दे। (२) प्याज का रस सुँघावे। (३) रीठे का जल पिलावे। (४) फिटकिरी का चूर्ण और निनौले का सत खिलावे। (५) घी में पीस कर चौकिया सुहागा पिलावे। (६) नारी (एक प्रकार की जड़ी, जो पोखरों में

होती है) का साग खिलावे अथवा उसके पत्तों का रस निकाल कर पिलावे। (७) काफ़ी (बुन) औटा कर पिलावे। (८) अरण्डी और नमक बराबर मिलाके पिलावे। (९) चौलाई वा अरहर के पत्तों का रस पिलावे। (१०) जिसने अफीम खाई हो, उसको सोने न दे टहलाता रहे।

संखिया का विष-(१) गूलर के पत्तों का रस निकाल कर पिलावे अथवा गूलर का दूध पिलावे। (२) गूलर की छाल औटा कर पिलावे। (३) कत्था खिलावे वा घोल कर पिलावे।

सींगिया का विष-नारंगी का रस पिलाने से उतर जाता है।

धतूरे का विष-जिसने धतूरा खा लिया होवे वा किसी ने खिला दिया होवे तो (१) अदरक का रस पिला दे। (२) बैंगन के फल, पत्ते वा जड़ को पानी में घोल कर पिला दे। (३) निबोली को अथवा उसकी मींग को पानी में घोट कर पिला दे। (४) चौलाई की जड़ वा गिलोय को पानी में घोट कर पिला दे। (५) कपास के फल, फूल, पत्ते, लकड़ी सब को पानी में घोट कर पिला दे।

बालचिकित्सा समाप्त।

बालशिक्षा ।

बालपोषण के संग बालशिक्षा बतानी भी बहुत ही उचित है, क्योंकि जिन दिनों में बालक पलते हैं, उन्हीं दिनों में उनको सिखाया पढ़ाया भी जाता है। सब से उत्तम शिक्षा तो बालक की माता के गर्भ ही में होती है, जैसा कि, मैं तुझको गर्भाधान में बता चुकी हूं कि, माता के आचार-विचार के गुण सन्तान में आते हैं, पर पीछे भी सन्तान को जैसी शिक्षा दी जाती है, उसका गुण भी अधिक होता है।

सन्तान को प्रथम ही से जैसी टेव डाली जावेगी, वैसी ही पड़ती जावेगी और बड़े होने पर वही टेव और स्वभाव उसके रहेंगे, क्योंकि यह तो तूने भी देखा है कि, जैसी टेव बालक को पड़ जाती है अर्थात् गोद में रहने की वा झूला में झूलते हुए सोने की वा अपनी माता के गोद ही में सदा रहने की। वह टेव कठिनता से छूटती है और माता को इसके छुटाने में बड़ी कठिनता पड़ती है। इसलिये प्रथम ही से बालक की टेव अच्छी और ऐसी डाले कि, पीछे बुरी जान कर उसके छुटाने की आवश्यकता न हो।

छोटे बालक कोरे घड़े और काँच के सदृश होते हैं। उस में जो भरा जावे, उसी की गन्ध उस में भर कर रह

जाती है अथवा जो कोई उसके सम्मुख आता है, उसी का प्रतिबिम्ब दिखलाई देता है। इसी कारण पूर्वही से उत्तम शिक्षा देने का प्रबन्ध करे।

माता पिता तथा सब लोगों का विचार ऐसा होता है और होता क्या है, है ही कि, अभी तो हमारी सन्तान बालक है। अभी क्या है। बडे होने पर सब सीख जावेंगे। सो यह उनकी महाभूल है। इसी सोच में रह कर पीछे उनको पछताना और हाथ मलना पडता है, क्योंकि बालक फिर सुधारे नहीं सुधरते। इसी असावधानी से सन्तान कुचाली, धूर्त, मूर्ख, झूठी, निर्लज्ज आदि अवगुणवाली हो जाती है।

पुत्र, पुत्री दोनों की शिक्षा समान होनी चाहिये, क्योंकि पुत्र केवल एक ही कुल को प्रकाश करता है, पर पुत्री पिता और पति उभय कुल की प्रकाशक हो जाती है। पुत्रियों को जो पुत्रों के बराबर पढ़ाना न चाहे तो न सही, पर इतना तो अवश्य पढ़ावे कि, वे अपने भले बुरे की बात पुस्तकों से आप पढ, लिख लें। पुत्र की अपेक्षा कन्या की शिक्षा की अधिकतर आवश्यकता है। इसलिये कि, वे दूसरे घर जावेंगी, जहाँ सब नये ही नये मनुष्यों से काम पडेगा और उस पर हर कोई आज्ञा करना चाहेंगे। उसके दोष और अवगुणों पर दृष्टि करेंगे।

तनिक सी बातों पर धमकावेंगे। माता, पिता की बुराई बात बात में करेंगे कि, कुछ सिखाया ही नहीं।

इसलिये कन्या को शिक्षा दे कर ऐसी दक्ष और चतुर कर देनी चाहिये कि, कन्या भी सुख पावे और नामधराई न हो। कन्या पतिगृह में जा कर अपनी चतुराई से सब को प्रसन्न रख सके और सब की प्रेमपात्र बन जावे। जो स्त्री यह समझ कर कि, कन्या तो पराये घर का धन है, शिक्षा नहीं देती है, महामूर्ख हैं। शिक्षा के लिये पढना लिखना एक बहुत ही उत्तम द्वार है। इसलिये कि, बिना मिले और देखे बुद्धिमान् पुरुषों की चतुराई सहस्त्रों वर्षों पूर्व की और सैकडों कोस दूर की केवल उनकी रचित पुस्तकों द्वारा ही आ जाती है।

शिक्षा से मेरा प्रयोजन केवल लिखा पढी ही से नहीं है, वरन मनुष्य को मनुष्यत्व सिखाने से है। इसलिये सन्तान को चार प्रकार की शिक्षा देनी उचित है।

१–आत्मिक शिक्षा अर्थात् प्रकृति, स्वभाव और गुण आदि की शिक्षा।

२–लिखने, पढने की शिक्षा।

३–व्यवहार शिक्षा अर्थात् आजीविका निमित्त शिल्प आदि। जिसमें भी सब से प्रथम निजकुलव्यवहार की शिक्षा।

४–धर्मशिक्षा।

अब इसी क्रम से तुझको शिक्षा प्रदान की रीति बताती हूँ। बालक को प्रथम ही से स्वच्छ रखना तो मैं बालपोषण ही में बता चुकी हूँ। इससे बालकों की प्रकृति स्वयं ही स्वच्छ रहने की पड़ जावेगी। ज्ञान होते ही बालक जब सदा स्वच्छ वस्त्र और स्थान को देखेंगे और माता, पिता की ताड़ना भी इसी ओर पावेंगे तो तभी से इस ओर ध्यान देंगे और इच्छा करेंगे। बालक जब बोलने लगे तभी से सब से प्रथम उसे पिता का नाम, धाम तथा ग्राम, ज्ञाति आदि बता दे कि, यदि कहीं खो जावे तो पूछने पर अपना पता बतादे। मैंने एक बालक को देखा कि, मेले में खो गया। जब उससे पूछें कि, किसका बेटा है? कह दे कि, 'चाचा का'। जब चाचा का नाम पूछें तो, कुछ नहीं। यदि वह 'चाचा' शब्द के बदले अपने पिता का नाम बता देता तो अवश्य कुछ पता चल जाता, परन्तु उसका कुछ पता न चला।

बहुधा स्त्रियों की रीति है कि, बालक जब रोते हैं वा किसी वस्तु को मचलते हैं, ऊधम करते हैं अथवा कहना नहीं मानते तब ऐसा कह कर उनके चित्त में डर और भय उपजा देती हैं कि 'सो जा, नहीं लूलू आ जावेगा', 'बाबाजी पर पकड़वा दूँगी,' 'कनफटा बैरागी वा कंजरी

झोली में डाल कर ले जावेगी' अथवा बालक रात्रि में कहीं जाते है वा दुपहरी में कहीं दूध वा अन्य श्वेत वस्तु खा कर डोलते हैं, तो उनसे यह कह देती हैं कि अमुक की भीत के नीचे पीर है, चुड़ैलों का फेरा है, भूत रहता है, उस पीपर के पेड़ पर प्रेत बसता है, सो वहाँ न जाइयो।

इसी प्रयोजन से जब बालक श्वेत वस्तु खा कर बाहर जाता है तब उनको वहाँ नहीं जाने देतीं और यदि जाने देती हैं तो ऊपर से थोड़ी सी राख खिला देती हैं।

इन बातों का प्रभाव बालकों के चित्त पर कुछ ऐसा होजाता है कि, भूत प्रेत का विश्वास मरने तक नहीं जाता, वरन मरते समय से पूर्व ही अपनी सन्तान को अन्य सम्पत्ति की भाँति सौंप जाते हैं। सो ऐसा निरर्थक और भयोत्पादक विश्वास बालकों को दिलाना महानिषिद्ध है। उनको केवल ईश्वर का भय दिलाना चाहिये कि, वह सब स्थानों में हमारे बुरे भले कर्मों को देखता और पापी को दण्ड देता है। हम कोई कर्म उससे छुपा नहीं सके हैं। वह सदा और सब स्थान में हमारी रक्षा करता है। इसलिये बुरे कर्म न करें और हर समय उसका उपकार मान उसका धन्यवाद करें। पुत्रों को मस्तक पर आड़ बेंदा इत्यादि लगाने की और पुत्रियों को नीला

आदि गुदाने की शिक्षा न देनी चाहियें। इससे उनको दूर रक्खे। यह अधम श्रेणी की प्रथा है। सभ्यमण्डली की नहीं है।

सन्तान के नाम अच्छे और श्रेष्ठ रक्खे कि, बड़े होने पर उनको अपने नाम के सुनने में लज्जा वा सकोच न हो। मैंने देखा है कि, जिस स्त्री के बालक हो हो कर मर जाते हैं, वे अपने बालकों को छीतरी में धर कर खींचती घसीटती है। कान, नाक छेद देती हैं इत्यादि। और इसी कारण उनका नाम 'छीतर' वा 'छीतरिया', 'घीसा' वा 'घसीटा', 'नकछेदी', 'कनछिदा', 'छिदा', 'नकटा', 'बूचा', 'कूड़ा', 'फकीरा', 'भिखारी' (इसमें से भीख मॉग कर लेने से) रख देती हैं। पुत्रियों के नाम भी ऐसे ही कारणों से 'मरो', 'निरादरी' इत्यादि रखती है। सो कदापि न रखना चाहिये। पुत्रों के नाम सदा गुण-सूचक और उत्तम प्रकार के रखने चाहियें और अन्त में वर्णसूचक उपाधि भी रखनी चाहिये। ब्राह्मण के नाम के अन्त में शर्मा वा देव, जैसे श्रीकृष्णदेव वा हरिप्रसाद शर्मा। क्षत्रियों के नामान्त में वर्मा, जैसे महावीर वर्मा। वैश्यों के में कृता वा गुप्त, जैसे श्रीनिवास गुप्त, लक्ष्मीचन्द कृता और शूद्र वर्ण के नामान्त में दास, जैसे चरणदास इत्यादि।

कन्याओं के नाम बहुत ही मनोहर, सुहाने तथा

प्यारे रखने चाहियें कि, माता, पिता के घर भी उनको लेने में सिहायें और पतिगृह में जाकर भी स्नेह के साथ बोले जावें । इसलिये कन्याओं के नाम ऐसे होने चाहियें, जैसे चन्द्रमुखी, चन्द्रप्रभा, विधुमुखी, विदुषी, सत्यवती, सरस्वती, यशोदा, सत्यदा, सुखदा, प्रियंवदा, विद्याधरी, आनन्दाबाई, सावित्री, भाग्यवती, माधवी, मालती, शारदा, विमला, कमला, श्रीकान्ता, श्रीदेवी, श्रीधरा इत्यादि ।

माता, पिता को सन्तान-पालन इस प्रकार से करना चाहिये कि, पुत्र-पुत्री में कुछ भेद न हो । एक बच्चे से दूसरे के लाड़-प्यार में कुछ विशेषता न जान पड़े । सब को समानदृष्टि से देख कर पालन-पोषण करना चाहिये ।

पुत्र, पुत्री के पालन में भेद होने से बहिन, भाई में प्रेम नहीं रहता । भाई बहिन को स्वकुटुम्बी नहीं समझने लगता, वरन इसी अल्पावस्था से बहिन को तुच्छ गिनने लगता और इसी कारण फिर उससे यथार्थ प्रेम नहीं मानता । लोकलाज को बुला चला लेता है । यह दूसरी बात है ।

इसी भेद से बालकों में भी परस्पर प्रेम प्रीति कम हो जाती है, वरन ईर्ष्या डाह इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं । इसीलिये कभी किसी बालक का पक्षपात भी न करना

चाहिये अर्थात् जिसका खोट हो, उसको अवश्य दण्ड दे। ऐसा कदापि न करे कि, एक अपराधी बालक को तो उसके अपराध पर दण्ड दिया जावे और दूसरा बालक अपराध करने पर बिना ताड़ना छोड़ दिया जावे। एक बालक को अधिक प्यार करें, खिलावें, पिलावें और दूसरे को इतना न करें। हाँ, जो बालक कहा न मानता हो, ऊधम करता हो, लिखता, पढ़ता न हो, रोता, मचलता अधिक हो, उसके सन्मुख लिखने, पढ़नेवाले, कहना माननेवाले, ऊधम न करनेवाले बालकों को अधिक अधिक वस्तु दे, प्रशंसा करे और न माननेवाले की निन्दा की जावे। इस पर जब वह लज्जित हो, तब यह कह कर कि, तुम भी अब यदि इन्हीं के समान कहना मानोगे, लिखोगे, पढ़ोगे तो तुमको ऐसी ही वस्तु अधिक मिला करेंगी, पर अब तो दिये देती हूँ, आगे जो अच्छी बातें न सीखोगे वा ऊधम इत्यादि करोगे तो न दूँगी। फिर ऐसा मत करियो और इसी के अनुसार फिर आप भी वर्ताव करे। यह न करे कि, इतना कह कर ही समय को टाल देवे। नहीं तो तुम्हारे वचनों में प्रतीति न होगी। यदि दो चार बेर के ऐसा करने पर, वह कुछ समझ जावे तब तो ठीक है, नहीं तो फिर उसको कभी वस्तु न दे। अन्य बालकों को दे दे और उसके सामने ही दे, जिससे उसको डर और शोक

उत्पन्न हो। जो बालक कहना न माने, उसको हर समय दुतकारे, ललकारे भी नहीं। केवल कभी कभी ही ऐसा करे, वरन सदा प्रेम से समझा दे कि, ऐसा न करना चाहिये। तू तो राजा है। अमुक बालक जो कहना नहीं मानता वा ऊधम करता है वा पढ़ता नहीं है, रोता है, (जैसी दशा हो) 'लुचा है', 'गुलाम है' इत्यादि शब्दों का प्रयोग कर के बतलावे, जिसमे उसका जी कुछ बढ़ जावे और निर्लज्ज न हो जावे।

बालकों को आपस में गाली वा अपशब्द न बोलने दे। जब कभी उनके मुख से ऐसे शब्द सुने, तभी उनको उपदेश कर दे कि, ये बातें बुरे बालकों की हैं कि, आपस में गाली दें वा लड़ें। 'अच्छे' और 'राजा' बालक सदा प्यार-प्रीति से बर्तते हैं और बोलते हैं। जो तुम 'राजा' वा अच्छे होगे तो फिर ऐसी बात न करोगे और बुरे वा 'नौकर' होगे तो करोगे।

इसी कारण बालकों को बुरे बालकों में कदापि न बैठने दे, जिसमे उनको कुटेव सीखने का अवसर ही प्राप्त न हो। बालकों में परस्पर अपराध क्षमा करने की भी टेव डालनी चाहिये, ताकि वे लड़ाई और वैर से बचे रहें और सुशीलतादि गुण सीखें। बालकों को गहने के दोष बता बता कर उनके मन में इनकी ओर से घृणा और ग्लानि

उत्पन्न करादे कि, ये पहिनाने से भी गहना न पहिनें ।

गुरुजनों का आदर-सत्कार करना तथा उन से भय और लज्जा मानना भी उनको बतावे ।

जो बालक इस प्रकार समझाने से न समझे तो उसको एक ही बेर ऐसी कठिन ताड़ना देनी चाहिये कि, उसको बहुत दिनों तक स्मरण आवे अथवा एक तमाचा कस के मार दे कान कस के मसल दे वा मसक दे । दिन भर भोजन न दे अथवा हाथ, पॉव बॉध कर धूप में बिठा दे वा कोठरी में बन्द कर दे । बालक ऐसा करने पर बहुत रोवेगा सो माता उसके रोने का कुछ ध्यान न करे । (जैसा कि, बहुधा करती है) नहीं तो पीछे फिर आप रोवेगी । ऐसी दशा में बालक को भले ही रोने दे, किसी को मनाने भी न दे और न किसी को उसकी ओर उठने दे । जब बालक रो पीट कर घंटे आध घंटे में चुप हो जावे तब उससे हॉ भी भरवाले कि, अब मैं फिर कभी ऐसा न करूँगा । जब वह हॉ भी भर ले तब प्यार से उसको समझावे । खाने, पीने की वस्तु देवे । पास बिठावे । बातों ही बातों में अच्छे बालकों की प्रशंसा कर कर के बालक के हृदय में उत्साह उपजावे ।

जो वह बालक फिर भी ऐसा ही करने लगे तो उसको पहिली ताड़ना का स्मरण दिला कर समझा दे । इस पर

भी जो न माने तो अब के पूर्व से दूनी ताडना दे। एक या दो बेर की ऐसी ताड़ना में सीधा हो जावेगा। परन्तु बेर बेर ताडना देना अच्छा नहीं है। इससे बालक ढीठ और निडर हो कर निर्लज्ज हो जाता है। बालकों को सब के सन्मुख फटकारना या झिझकारना न चाहिये। इससे भी ये निर्लज्ज हो जाते हैं और फिर वर्षों के यत्न से उनकी निर्लज्जता मिटेगी।

बालक के संग क्रोध से कभी न बोले और विशेष कर जब बालक क्रोध में हो। इस समय बालक पर आप क्रोध कभी न करे और न कड़ा हो कर बोले, वरन उसके क्रोध को कोई खेल की वस्तु को दे कर शान्त कर दे।

क्रोध के समय बालक को ताडना भी न करे, क्योंकि इसका कुछ प्रभाव बालक पर नहीं होता है; किन्तु बालक को ताडना अधिक हो जाती है। जब तुम्हारा क्रोध शान्त हो जावे तब एकान्त में शिक्षा हेतु ताड़ना दो। अपने क्रोध के बदले में ताड़ना मत दो, क्योंकि जो काम बालक से प्यार द्वारा निकलता है वह क्रोध और ताड़ना द्वारा नहीं निकलता। प्यार से बालक शीघ्र मान जाता है और आज्ञा का पालन करने लगता है।

बालशिक्षा में सबसे प्रथम और प्रधान शिक्षा इसी बात की है कि, बालक आज्ञापालन की टेव सीख जावे।

जिस बालक ने यह सीख लिया, उसने मानो संसार की सब वस्तु सीख लीं। जिस बालक में आज्ञाभङ्ग करने की कुटेव पड़ गई, जान लो वह कभी कुछ न सीखेगा, वरन जन्म भर दुर्दशाग्रस्त और पीडित रहेगा।

बालक को निरे लाड-प्यार से भी शिक्षा देना उचित नहीं है, नहीं, उचित समय पर जैसा मैं पहिले कह चुकी हूँ, अवश्य ही ताड़ना देनी चाहिये। कोई कोई मूर्ख स्त्रियाँ ताड़ना न दे कर अपनी सन्तान को निरे चाव और लाड़-प्यार में ही बिगाड कर माथे पर चढ़ा लेती हैं। वे फिर बड़े होने पर अपने इस किये हुए पर लाख लाख पछताती हैं। इसलिये यह गुरु स्मरण रक्खें कि, 'यथासमय प्यार दुलार और यथासमय दुतकार फटकार'। इससे बालक आज्ञाकारी हो जाता है। कोई कोई माताएँ तो ऐसी चतुर होती हैं कि, उनको ताड़ना करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। वे बातों ही बातों में बालक को शिक्षा दे देती हैं। जैसे, जब बालक दंगा करने लगते हैं तो सब को अलग अलग करके खेल में लगा कर उन का दंगा मिटा देती हैं। बीच बीच में आप भी उनके खेल को देखती रहती हैं और थोड़ी देर पीछे उनसे खेल समाप्त करा देती हैं। यदि बालकों की इच्छा समाप्त करने की नहीं देखतीं तो उनकी प्रार्थना पर थोड़ी देर की आज्ञा और दे देती हैं। बालक

अपनी इच्छा पूरी देख कर प्रसन्न हो जाते हैं और फिर आप ही खेल समाप्त कर के माता के पास आ जाते हैं। उस समय माता उनके इस आज्ञापालन की प्रशंसा करती है और अपनी प्रसन्नता प्रकट करती है। जब बालक किसी वस्तु को मचलते हैं और माता का कहना नहीं मानते तो, वह उस वस्तु को जिसके लिये बालक मचलता है, कभी नहीं देती और जिस वस्तु को वह बालकों के लिये नाहीं करती है तो ऐसे ढंग से करती है कि, बालकों का हियाव नहीं पड़ता कि, उसकी आज्ञा भङ्ग करें।

माता को चाहिये कि, बालकों के सन्मुख कोई बुरी बात न करे, न कोई बुरा शब्द मुख से निकाले, न कभी गाली दे, न बके, न मुँह चिढ़ावे और न खिराने। नहीं तो बालक भी ऐसा ही करने लगेंगे।

जब से बालक बोलने लगे, तभी से उनके संग सदा मीठा मधुर और हँस कर बोला जावे। 'जीकारे' के साथ आदरसूचक शब्दों से बोले। 'तू तड़ाक' से न बोले। नहीं तो बालक भी उसी प्रकार बोलने लगेगा।

बालकों को यह भी टेव डाले कि, जब कभी वे कुछ वस्तु कहीं से लावें वा उनको मिले, तो वे उसको अकेले ही न खा जावें। अपने बहिन भाइयों के संग मिल बाँट कर खावें। इसी कारण उनको बाज़ार आदि में न खाने दे,

घर लाकर ही खाने दे।

जो गुण वा प्रकृति माता अपनी सन्तान को सिखाना चाहे तो उन गुण और प्रकृति की आदर्श पहिले आप बने। जैसे बालक सत्य बोलना तब सीखेगा, जब उसके सग सदा सत्य ही बोला जावेगा; मिथ्याभाषण कदापि न किया जावेगा। यहाँ तक कि, हँसी में भी वा झूठ को भी झूठ न बोला जावे।

बालकों के सन्मुख किसी से हँसी ठट्टा न करे और न बालकों से करे। नहीं तो उनमें भी यह टेव पड़ जावेगी। अपना खोट बालकों के सन्मुख मत कहो। नहीं तो वे तुम्हारा आदर, मान कम करने लगेंगे। अच्छी बात का उनके अगाडी कभी निषेध मत करो, चाहे तुम उस बात को करती हो वा नहीं करती और मानती हो वा नहीं मानती।

बालकों से यदि अपराध बनपडे तो बालकों को समझा कर एक वा दो बेर क्षमा कर दे, ताडना न दे। हाँ, ऐसा करे कि, जिस वस्तु को वह बालक अधिक चाहता हो, उसे उससे छीन ले वा उसको न दे। जब वह बालक कोई अच्छा काम करे, तब उस वस्तु को दे दे। बालकों को बेर बेर ताडना देने का झूठा भय भी न दे अर्थात् हर बेर ऐसा न कह दिया करे कि, अब के ऐसा

काम करोगे तो पीटूँगी और पीटे कभी नहीं। ऐसा करने से बालक ढीठ हो जाते हैं। इसलिये जिस बेर ताड़ना देनी हो उसी बेर ऐसा कहे और ताड़ना दे दे, तब तो कुछ कहने और ताडना करने का प्रभाव भी होता है; परन्तु बड़े लडकों को ताडना वा बहुत लज्जित करना भी ठीक नहीं है और सन्तान का निरादर कभी न करे। इससे सन्तान को अपने में श्रद्धा नहीं रहती है। हर समय सन्तान को बुरा भला कहने से उनका चरित्र ठीक नहीं बन सक्ता है। बालक को यदि कोई ताडना दे रहा हो तो उस समय बालक की हिमायत न लेवे, वरन बालक ही को दब से ताडक के पास ही ले जा कर हाथ आदि जुड़वा कर ऐसा कहलवावे कि, मेरा अपराध क्षमा करो, मैं फिर ऐसा न करूँगा।

सन्तान के संग ऐसा व्यवहार रक्खे कि, सन्तान माता, पिता से निधड़क आन कर अपने मन की बात कह दे। ऐसी दशा में माता सन्तान को उचित शिक्षा दे सक्ती है। सन्तान जब अपने मन की बात ही न कह सकेगी, तब अवश्य बाहरवालों से जा जा कर कहेगी, इससे उनका चलन बिगडेगा।

सन्तान को आदि ही से इन बातों का अभ्यास डाले; (१) बड़ों की सेवा और उन की आज्ञापालन।

(२) अधीनता,सत्यशीलता। (३) आलस्य का त्याग। (४) नियम समता। (५) परिश्रम की बान। (६) दृढ़ता। (७) साहस। (८) महात्माओं के वचन स्मरण कराना। (९) सत्पुरुषों की जीवनी पढना। (१०) सदा सत्संग में रखना। (११) कुसंग में न पडने देना। (१२) ईश्वरोपासना करना। (१३) प्रत्येक वस्तु से कुछ शिक्षा ग्रहण करना इत्यादि। छोटेपन ही से उनको प्रणाम आदि करने की टेव सिखावे कि, उठते ही प्रातःकाल सब को प्रणाम करें और जब रात्रि को सोवें, तब भी सब को प्रणाम कर के सोवें। जब मिलें, प्रणाम करें। कुशल-क्षेम पूछें। जब दूसरे के घर जावें तब ऊधम न करें। जो बालक अपने घर आवें, उनसे न लडें, वरन प्यार से बोलें चालें, और खेलें। जहां दो मनुष्य बातें कर रहे हों, वहां न जावें, जो जावें, तो चुपके बैठे रहें।

बालकों के सन्मुख उनके विवाह आदि की बातें भी न करे और न उनको सुनने दे और विशेष कर, कन्याओं के सन्मुख, क्योंकि इससे उनका रजदर्शन शीघ्रतर हो आता है।

बालकों को बेरोक टोक अथवा डमाडोल वा आवारा न फिरने दे। खेलने के समय, खिलावे और दौडावे, किन्तु नियत समय पर, सगरे दिन नहीं। बालकों को

शीलता के संग बैठ कर बातें सुनने वा देखने का अभ्यास करावे। आठ वर्ष की अवस्था के पीछे लड़कियों को लड़कों में न खेलने दे और न दो स्यानी लड़कियों को एक खाट पर एक संग सोने दे। इसी अवस्था से उनको घर के काम-धन्धे अधिकतर सिखाने चाहियें। विशेष कर गुड़ियों के खेल के मिस से उनको सब बातें गृहस्थी की सिखा दे।

" लड़कियों को जब से गुड़ियाँ खिलाई जावें, तभी से रीति व्यवहार सब बताने चाहियें। गुड़ियाँ खिलाने का मुख्य प्रयोजन यही है कि, लड़कियाँ इस खेल ही खेल में सब सीख लें कि, स्त्रियों को क्या क्या करना चाहिये। नित उठ घर में क्या करना पड़ता है। भोजन किस प्रकार बनाते हैं। घर को कैसे स्वच्छ रखते हैं। सगाई विवाह कैसे होते हैं और उनकी रीति भाँति किस किस प्रकार करनी होती हैं। नेग टेहले कौन कौन से होते हैं। फेरे कैसे पड़ते हैं। स्त्री और पुरुष कौन कौन से वचन आपस में माँगते हैं। किस टेहले में क्या होता है और उसे कौन करता है। सासुरे में जा कर क्या करना होता है। पति के संग कौन कौन काम करने होते हैं। पुत्र वा पुत्री के विवाह में क्या करना होता है। कैसे कैसे गीत किस समय किस टेहले में गाये जाते हैं। गहने कितने होते हैं और

शृंगार कैसे करते हैं । इस प्रकार गुड़ियाँ खेलने में उनको सब बातें बता दे । किसी बड़ी चतुर स्त्री ने यह गुड़ियों का खेल पुत्रीशिक्षा के लिये निकाला था । इसी आठ वर्ष की अवस्था से उनकी चाल-ढाल, बोल-चाल, पहिनावे-उढ़ावे पर ध्यान देना उचित है । लड़कियों को कभी एक क्षण भी खाली न रहने दे । उनकी ऐसी टेव डाले कि, किसी कार्य करने में हीनता न समझें और जी न चुरावें, वरन सब धन्धे चाव और उमंग से करें । अपना काम आप कर लें । दूसरों का आसरा न तकें । लड़कियों को रस या बकने के गीत कभी न सीखने दे । न सुनने दे और न गाने दे । लड़कियों को अपनी माँ या भावज का हाथ बँटाने की भी टेव डालनी चाहिये । यह न विचारना चाहिये कि, हमारे घर तो टहलनी काम करती है फिर हम अपनी पुत्रियों से ऐसा काम क्यों करावें । नहीं, इस बात का ध्यान रक्खे कि, यदि हमारे घर टहलनी और चाकर हैं, पर वह घर, जहाँ पुत्रियाँ ब्याही जावेंगी, न जाने, कैसा हो, वहाँ टहलनी न हो तो फिर नामधराई होगी और लड़की को भी दुःख मानना पड़ेगा । इसलिये ऐसी टेव पहिले ही से सिखा देनी चाहिये ।

(८) बालकों को आरम्भ ही से ऐसी टेव डाले कि, वे बड़े बूढ़ों की मान-मर्यादा का ध्यान रक्खें । अपने

से अधिक आयुवाले का कभी निरादर न करें, वरन सदा मान करें । कभी किसी को कुरूप, लँगड़ा, लूला या अंग हीन देख कर हँसें नहीं, वरन दुःखी को देख कर दुःख मानें और दीन के सँग सहानुभूति प्रकट किया करें ।

(७) लिखने, पढ़ने की शिक्षा—जब से बालक कुछ बोलने लगे, तभी से उसके लिखने, पढ़ने की शिक्षा का भी आरम्भ समझना चाहिये । लिखने, पढ़ने की शिक्षा केवल पाठशाला ही में होती है, न कि पोथी पढ़ाने ही से । बालकों की शिक्षा बिना पोथी के भी हो सकी है। इस प्रकार कि, पहिले उनको नातेदारों के नाम, जो सदा सन्मुख रहते हैं, बताने । जैसे चाचा, बाबा, चाची, दादी, इत्यादि । इनके सग ही पीछे उन वस्तुओं के नाम बतावे, जो खाने, पीने की हों । जैसे रोटी, पूरी, पानी, दूध । इसके पीछे पशु, पक्षी इत्यादि के नाम, जो घर में रहते हों वा नितप्रति देखने में आते हों, बतावे और उनके वृत्तान्त गुण आदि भी बताने । बालक जब अच्छी भाँति बोलने लगे तब उसको जो वस्तु बताई जावे, वह उसको दिखा कर बताई जावे, जिससे वह उसकी समझ में भली भाँति आ जावे और भूले नहीं, क्योंकि देखने से बालक के चित्त पर उस वस्तु का चित्र खिंच जाता है ।

जब बालक कुछ और बड़ा हो जावे और अच्छे

प्रकार बोलने लगे तब उसको छोटे छोटे मन्त्र, भजन, दोहे, नीति की कहानियाँ और कहावत सिखावे और गवावे। उच्चारण पहिले ही ठीक करना चाहिये।

इसलिये बालक को बोलते ही वर्णमाला के अक्षर सिखा दे और इसके लिये बावन प्रकार के बहुत से अक्षर खाँड़ के बनवाले। जैसे कि, दिवाली में हाथी आदि खिलौने खाँड के बनते हैं। मिठाई के स्थान में इन्हीं अक्षरों को दे और बालकों से पहिचनवावे कि क वा ख ऐसा होता है। दो तीन दिन तक क दे फिर इसी भाँति ख दे फिर जब ख माँगे तो धोखा दे कर क वा त दे, जो बालक ले ले तो उसको सावधान कर दे कि, देखो कौन सा अक्षर है। जो वह बता दे कि, यह तो क है ख नहीं है तो उसी समय उसको एक के पलटे दो दे दे। यदि उस पर न बताया जावे तो उसको बता दे कि, यह ख नहीं है। क वा त है। इसी प्रकार सब अक्षर पहिचनवा दे। इसके सिखाने के लिये यह भी उपाय करे कि, उनके वस्त्र पर भी पहिचान के लिये इन अक्षरों को डोरे वा रेशम से काढ़ दे वा गोटे और कलाबत्तू से बना दे। जिससे बालक पहिचानते रहें कि, यह अमुक अक्षर का कपड़ा है और यह अमुक का। उनके खेलने के खिलौनों पर भी यही अक्षर बनवा दे और उन खिलौनों के नाम भी उन्हीं

नाम से रख दे । इस भाँति करने से उनको अक्षर पहिचानना बहुत ही थोड़े दिनों में आ जायगा ।

जब अक्षर पहिचानना आ जावे तब उनको लिखाने का अभ्यास कराना चाहिये । जब कुछ लिखने लगें तब शब्दों के अक्षर याद रखने और अभ्यास करने का यह उपाय बहुत उत्तम और सुगम है और युक्तिपूर्ण है कि मेरे बनाये हुए शिक्षक ताश से उनको खिलावें, जिसमें उनका जी भी बहले और अक्षरज्ञान भी हो ।

सात आठ वर्ष की अवस्था तक बालक को बिना पुस्तक के अधिक शिक्षा दे । मस्तकशक्ति पर अधिक परिश्रम न पड़ने दे ।

इतनी आयु तक तो माता आप ही शिक्षा दे । इसके पीछे यदि चाहे तो पाठशाला में भेजे । यदि आप पढ़ा सके तो दो वर्ष तक और भी पढ़ावे । सोलह वर्ष की आयु तक बालकों को जो वस्तु सिखावे, दिखा कर सिखावे । इससे विचारशक्ति पर अधिक भार नहीं पड़ने पाता । इसीलिये उनको ऐसी ऐसी बातें सिखावे कि जिनके समझने में उन की विचारशक्ति अधिक व्यय न हो और स्मरण अच्छी भाँति रहे अर्थात् हाथी के विषय में यदि कुछ बताना चाहे तो हाथी उनको दिखा दे, तब कुछ बतावे । जो इस प्रकार बताया जावेगा, वह सदा स्मरण रहेगा ।

जब बालक कुछ लिखने लगे तब पहिले उनसे मोटे अक्षर लिखावे और इस कारण कि, अक्षर टेढ़े न होने पावें, लकीर खींच कर लिखवावे। जब हाथ कुछ जम जावे तब इस टेव को छुटाती जावे। जो बालक हकलाता होवे तो यह उपाय करे। इससे हकलाना जाता रहेगा।

(१) जब बालक हकलावे तो उसकी ओर कोई हँसे या चिढ़ावे नहीं।

(२) प्यार से शाबाशी देती जावे।

(३) बोलते में शीघ्रता न करने दे। धीरे धीरे बोलने का अभ्यास डलवावे और साँस ले ले कर बोलने दे।

(४) ऐसे बालक से एकान्त में बातें करे। जिस शब्द पर हकलावे, उस शब्द को कई बेर हौले हौले कहलावे।

(५) जब बालक तुतलावे तो बालक से अपनी बायें हाथ की तर्जनी को दायें हाथ की उँगलियों से मुड़वावे।

(६) मुख में पत्थर के छोटे छोटे टुकड़े या चने डाल कर एकान्त में बालक को आप ही आप बातें करने का अभ्यास करावे।

(७) बोलते समय बालक को सीधा बैठा या खड़ा रक्खे। झुकने या टेढ़ा न होने दे।

(८) व्यायाम करावे। विशेषकर मुद्गर हिलवावे।

(९) गवाया करे, इससे अवश्य तुतलाना छूट जावेगा।

बालकों को सब से प्रथम मातृभाषा की शिक्षा दे। जब मातृभाषा में दक्ष और निपुण हो जावें तब अन्य भाषा सीखने दे। यदि दूसरी भाषा मातृभाषा में दक्ष होने के पूर्व ही सिखाई गई तो वे दोनों भाषाओं में अधूरे रहेंगे, किसी भाषा के पण्डित न होंगे और यदि हुए तो समय बहुत लगेगा।

मैंने देखा है कि, जिन बालकों ने मातृभाषा पूर्णतया सीखने के पूर्व अंग्रेज़ी का आरम्भ कर दिया, जैसा कि बहुधा हो रहा है तो चाहे वे बी. ए. और एम. ए. हो गये हैं; परन्तु अपनी मातृभाषा को शुद्ध और भले प्रकार नहीं लिख पढ़ सके हैं और न शुद्ध बोल सके हैं। जैसा कि वे अंग्रेज़ी को लिखते, पढ़ते और बोलते हैं। मातृभाषा को प्रथम पढ़े बिना दूसरी भाषा को मनुष्य देर में सीखता है।

सात आठ वर्ष की आयु तक माता को स्वयं शिक्षा देने का विधान यों किया है कि, अकेली माता सौ शिक्षकों का गुण रखती है। यदि माता स्वयं शिक्षा न दे सके तो इस प्रकार से किसी अध्यापक वा अध्यापिका को सौंप दे, जिसमें ये गुण हों। (१) विद्वान् हो। (२) सिखाने, पढ़ाने का ढंग जानती हो, चाहे बहुत न पढ़ी हो। (३) उच्चारण जिसका ठीक हो, चाहे वेतन कम

को अधिक देनी पड़े, पर वह अपने गुण कर के तुमको सस्ती ही पड़ेगी । (४) थोड़े वेतनवाले शिक्षक बालकों की शिक्षाप्रणाली ठीक नहीं जानते, उनकी शिक्षा में बालक बिगड़ जाते हैं । (५) बालकों को प्यार प्रीति से शिक्षा दे, मार कर वा भय दिखा कर शिक्षा न दे । मैंने देखा है कि, जो शिक्षक बहुत मारते हैं, उनके बुद्धिमान् शिष्य भी मूढ़ बन जाते हैं ।

जिस शिक्षक से बालकों का प्रेम न होगा, वरन भय खावेंगे, उस शिक्षक की कोई भी बात मन से नहीं सीखेंगे और उसकी बताई हुई को शीघ्र भूल जावेंगे ।

जब से पुस्तक पढ़ाना बालकों को प्रारम्भ कराया जावे, तभी से उनके पास कभी कोई बुरी पुस्तक पढ़ने में न आवे । जैसे लावनी, ख्याल, प्रेम वा रस की कहानी, बारहमासी इत्यादि । पुस्तकें उनको ऐसी पढ़ाई जावें, जो सर्कारी पाठशालाओं में प्रचलित हों वा जो किसी श्रेष्ठ पुरुष की बनाई वा बताई हुई होवें अथवा आप माता, पिता ने सोची होवें ।

जो पुस्तकें पढ़ाई जावें, वे सोच समझ कर पढ़ाई जावें । तोते की भाँति न पढ़ाई जावें कि, [illegible] भी छूँछा रह जावे और समझे, बूझे कुछ नहीं । से कह दे कि, जहाँ उनके समझ में न आवे, वहाँ

में चिह्न बना दिया करें या अपना विचार लिख दिया करें और फिर शिक्षक से उसको पूछ लिया करें ।

थोड़ा पढ़ावे; पर बहुत घुखवावे और गुणावे । पीछे का पढ़ा हुआ हर समय में, वरन कुछ कुछ नित फिरवाता रहे । क्योंकि विद्या और पान बिना फेरे गल जाते हैं । ऐसा न होने दे कि, आगे की दौड़ और पीछे का चौड़ । जितना पढ़ावे, भली भाँति समझा दे, जब तक बालक न समझ ले, कभी अगाड़ी न बढ़ावे । समझ में बैठा कभी भूलता नहीं है । बालक जब कुछ पढ़ लिख जावे तब उसको पढ़ने, लिखने के लाभ बताने और उसके उत्साह को बढ़ावे । कभी भंग वा कम न होने दे । अच्छे पढ़ने, लिखने पर वा परीक्षा में अच्छा निकलने पर, बालक की इच्छानुसार, उसकी इच्छा पूरी कर दे अथवा धन वा वस्त्र वा और कोई खेलने की सामग्री दिलादे । जब पढ़ने से जी हट जावे, तब न पढ़ावे । थोड़ा सा मन-बहलाव करने दे । नहीं तो बालक का जी उकता जावेगा और पढ़ने में ग्लानि हो जावेगी, क्योंकि जो कार्य मन से होता है, वह अच्छा होता है । दबाव डालने वा डरपाने से नहीं होता है । सामान्य बातों से भी बालकों को कुछ न कुछ सिखाता रहे; जिससे, उनके सोचने की शक्ति बढ़े । पहिले उनसे एक बात को पूछे, जो न आवे तो

आप बता दे। दृष्टान्त दे दे कर शिक्षा की ओर चित्त को लगावे। दूसरे बालकों की बड़ाई कर कर के वा उनसे लज्जा दिला दिला कर उनमें चाव उत्पन्न करे।

१. जो सिखावे, वह प्यार प्रीति से सिखावे। कभी क्रुद्ध हो कर न सिखावे। प्यार से काम अच्छा निकलता है। भूल जाने पर बालक को एक वा दो बार बता दे। मारे नहीं। क्रोध न करे, पर इतना भी न होने दे कि, बालक निरानिडर ही हो जावे। थोड़ी ताड़ना अवश्य रक्खे। रात के समय बालकों को ऐसी ऐसी कहानियाँ सिखावे, जिनसे उनको कुछ शिक्षा भी प्राप्त हो और मन भी बहले और जिनके सीखने और सुनने की वे अधिक इच्छा भी करने लगें। दो चार कहानियाँ दृष्टान्त के लिये तुझे बताये देती हूँ।

कहानी (१)

एक बारहसींगा प्यासा हो कर ताल के तट पर गया। निर्मल और अचल जल में अपनी परछाईं निरख मन में फूल गया कि, मेरी देह और सींग कैसे सुन्दर हैं। पर पैरों पर जब दृष्टि पड़ी तो सोचने लगा कि, ईश्वर ने इन को क्यों ऐसा कुरूप बनाया। यह विचार मन में कर ही रहा था कि, इतने में बधिक कुत्ते ले कर अहेर निमित्त आ पहुँचे। यह उनको देख कर भागा। अपनी उन्हीं पतली और कुरूप टांगों से चौकड़ी भरता हुआ उनसे दूर

निकल गया, पर वे ही सुन्दर सींग, जिनको इतना सराह रहा था, एक सघन झाड़ी में अटक गये और वह फँस गया। जितने सींग सुलझें, इतने में कुत्तों ने आ पकड़ा और फाड़ डाला। तब वह बारहसींगा अपने मन में कहने लगा कि, जिन टाँगों को मैं बुरी बताता था, वह तो काम आईं और जिनकी सुन्दरता को देख फूलता था, वे ही मृत्यु की कारण हुईं। अतएव—

शिक्षा

वस्तु के रूप को न देखना चाहिये, किन्तु उसके गुण को देखना उचित है।

कहानी (२)

हर मनुष्य के कन्धे पर एक झोली पड़ी हुई है। आधी अगाड़ी को, आधी पिछाड़ी को। पीछे की में अपने दोष भरे हैं और आगे की में औरों के। इसलिये मूर्ख और अज्ञानी मनुष्य औरों ही के दोषों को तो देख लेते हैं, पर अपनों को नहीं देख सके हैं। पर बुद्धिमान् और चतुर मनुष्य इस झोली को सदा उलट कर रखते हैं कि, औरों के दोषों पर अपनी दृष्टि नहीं पड़ने देते, सदा अपने ही दोषों को देखते रहते हैं और उन्हें छोड़ते जाते हैं।

कहानी (३)

किसी कौवे को मोर के पंख कहीं से मिल गये। उनको

उसने अपने देह में लगा लिये और घमण्ड से कहने लगा कि देखो मोर में और मुझमें अब कुछ अन्तर है ? अब हम भी मोर बन गये। सो अब उन्हीं में जा कर रहेंगे। इन काले कौवों में नहीं रहेंगे। यह कह कर मोरों में जा मिला। मोरों ने इस नये अद्भुत पक्षी को देख कर कहा कि, यह कौन पक्षी है कि, चाल तो कौवों की सी और पख हमारे से हैं। यह मोर का बच्चा भी नहीं है। यह बातें मोर कर ही रहे थे कि, उसकी काँव काँव और खोहखाने ने तुरन्त प्रकट कर दिया कि, यह तो कौवा है। इस पर मोरों ने उसे चोंचों से मारना प्रारम्भ कर दिया और उसके सब पर नोचडाले कि, वह लँड्रा रह गया और अपने पास से यह कह कर निकाल दिया कि, कहीं मोरपख लगाने ही से मोर बन जाते है। मोरों की सी चाल, मोरों की सी बोली, उनकी सी रहन सहन तो है ही नहीं और यह कौवे में कहाँ से और कब आ सकी है ?

यहाँ से पिटपिटा कर वह बिचारा फिर कौवों ही में आ मिला, पर कौवों ने भी इसको अब न बैठने दिया। वे कहने लगे कि, अजी मोर साहिब ! यहाँ आप काँव काँव करनेवाले कौवों में क्या करेंगे ? हम आपके रहने योग्य कहाँ ? आप तो मोरों में जाइये। वहाँ ही १०७ यहाँ आप का क्या काम ? इस पर जब यहाँ से भी

गये तो दुःख पा पा कर मर गये। क्योंकि बिना पर उड़ तो सके नहीं।

शिक्षा

किसी के वस्त्रों की नक़ल न करो। जो सीखो तो उन के गुण सीखो।

कहानी (४)

एक बेर ऐसा हुआ कि, पशु और पक्षियों में लड़ाई ठनी। चमगिदड पहिले तो किसी की ओर न हुआ, पर जब देखा कि, पक्षी हारने पर हैं तब तुरन्त पशुओं में जा मिला और पक्षियों की बुराई करने लगा। जब पशुओं ने पूछा कि, क्या तू पक्षी नहीं है? तो बोला कि, क्या पक्षी के कभी दाँत और कान भी होते हैं?, मैं तो पशु हूँ। यह सुन पशु चुपके हो गये। पर थोड़ी ही देर पीछे ऐसा हुआ कि, पशुओं की हार होने लगी और पक्षी जीतने को हुए। तब यह पक्षियों में चट से आ मिला और पशुओं की खोटी कहने लगा। जब पक्षी कहने लगे कि, तू भी तो पशु ही है तो बात बना कर कहा कि, क्या पशु के पंख भी होते हैं? पक्षी भी यह सुन कर चुप हो गये। इसके उपरान्त दोनों में मेल हो गया। तब दोनों कहने लगे कि, हम तुम तो निबट ही लिये, उस चमगिदड को दण्ड देना चाहिये, जो तुम्हारी हार पर हममें और हमारी

हार पर तुम में जा मिला था और एक से दूसरे पक्ष की खोटी कही थी । यह विचार दोनों ने यह नियत किया कि न तुम इसको अपने पास बैठाओ और न हम । जहाँ तुम देखो, वहाँ तुम मारो और जहाँ हम देखें, वहा हम मारें ।

चमगिद्दड यह मता सुन कर भागा और डर के मारे अँधेरे में जा छुपा। जहाँ वह अबतक छुपा रहता है और केवल रात को निकलता है । पशु पक्षी दोनों में से जो कोई उसे पाता है, मार कर खा जाता है ।

शिक्षा

जो मनुष्य एक ओर नहीं रहता, इसकी बुराई उससे और उसकी इससे करता रहता है, उसके सब शत्रु बन जाते हैं, मित्र कोई नहीं रहता ।

कहानी (५.)

एक समय लड़ाई में बिगुल बजानेवाला शत्रुओं के हाथ में पड़ गया । वे उसे मारने लगे । तब वह बोला कि, भाई ! मुझे क्यों मारते हो ? मैंने तो लड़ाई में किसी को नहीं मारा । न मेरे पास लड़ाई के शस्त्र हैं । मैं तो बिगुल बजाता हूँ । इस पर उन्हों ने कहा कि हम इसलिये तुमको मारते हैं कि, आप तो अलग रहते हो और औरों को लड़ा देते हो । यदि तुम आप लड़ते तो इतना दोष तुम्हारा न था, क्योंकि तुमको भी लड कर मरने का भय होता ।

ही को लड़ा देते हो और आप बचे रहते हो। इसी कारण तुम्हारा अधिक दोष है और अधिक दण्ड के योग्य हो।

शिक्षा

लड़नेहारे से लड़ानेहारा अधिक बुरा है।

कहानी (६)

एक वन में एक ही स्थान पर दो पेड़ थे। एक अरण्ड का, दूसरा बेत का। एक समय आँधी आई और मेह बरसा। अरण्ड जो सदा अकड़ता और सतराता रहता था, अब भी सतराता रहा, नवा नहीं। बेत बिचारा जो तनिक सी बयार से भी नव जाता था अब और भी अधिक नव गया। आँधी के वेग से अरण्ड तो उखड़ कर कलामुण्डी खाते हुए जा पड़े, बेत नव कर बच गया। जब शान्ति हुई तब बेत अरण्ड से बोला कि, क्यों अकड़ने और नवने में कितना भेद है? घमण्ड करना अच्छा नहीं होता, जो घमण्ड न करते तो हमारी भाँति तुम भी बच जाते।

शिक्षा

घमण्डी दुःख भोगता है। नव के चलता है, वह सुख पाता है।

कहानी (७)

दो बिल्ली साझे में कहीं से एक रोटी लाईं। बाँटने के समय झगड़ने लगीं। आपस में जब निबटेरा न हुआ तो

अपने पडोसी बन्दर से न्याय चाहा । उसने रोटी के छोटे बड़े दो टुकडे कर के पलड़ों में धरे । जब बडा टुकड़ा भारी हुआ तो उसमें से इतना तोड़ कर मुखमें दे लिया कि, दूसरा टुकड़ा भारी हो गया । अब इसमें से इतना तोडकर मुखमें रख लिया कि, दूसरा भारी हो गया । जब दो तिहाई रोटी खा गया तो बिल्ली बोली कि, बस रहने दो । देख लिया तुम्हारा न्याय । हमारी बची बचाई ही रोटी हमें दे दो । इस पर बन्दर बोला कि, क्या मेरी मेहनत का कुछ मुझे न दोगी ? यह कहते कहते बचे हुए टुकडे को खा कर पेड पर जा चढ़ा । दोनों बिल्ली पछताती रह गईं और सन्तोष कर चुप हो रहीं ।

शिक्षा

जो अपना निबटेरा आप नहीं निबटाते, दूसरों के पास ले जाते हैं, वे ठगा कर फिर पीछे पछताया करते हैं ।

जैसी बालकों की रुचि देखे, वैसी ही शिक्षा दे । रुचि के विपरीत शिक्षा कभी न दे । इससे तीव्र बुद्धि बालक भी मूढ हो जाता है । जैसे बालक यदि वैद्यक पढ़ना चाहता है, पर तुम उसको गणित पढ़ाते हो । जिस कारण उसका मन उसमें नहीं लगता है और न उसकी समझ में आता है । यदि उसको वैद्यक पढ़ाई जावे तो वह बहुत थोड़े दिनों में विज्ञ और निपुण हो

सक्ता है । इसके अनेक दृष्टान्त हैं कि, जिन बालकों को उनकी रुचि के विपरीत शिक्षा दी गई है, वे निरे उजड्ड रह गये हैं । पर जब उन्हीं को किसी कारण से उनकी रुचि के अनुसार शिक्षा मिली, तो वे देश भर में बड़े चतुर और निपुण हो कर प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हो गये हैं ।

रुचि को पहिचानने में कुछ कठिनता नहीं पड़ती। जिस विषय में बालक बिना बताये वा पढ़ाये किसी बात को सीख जावे तो जान लेना चाहिये कि, इसकी रुचि इसी ओर है ।

(१) बालकों को कोडी, पैसे, फल, फूल या खिलौनों से जोडना, घटाना, गुणा और भाग, छोटे छोटे अङ्कों का जबानी बतावे । जैसे दो दो फल दो बालकों को दे कर उनसे गिनवावे, फिर तीन तीन दे कर, फिर चार चार, पॉच पॉच दे कर गिनवावे । इससे जोड़ना आवेगा ।

जब इसमें कुछ अभ्यास हो जावे तब बाकी इस प्रकार सिखावे कि एक बालक को पाँच फल दे कर तीन फल उस बालक से दूसरे बालक को दिला दे और फिर पूछे कि, तुम पर अब कितने फल रह गये । इसी भाँति अधिक दे दे कर और कम कर करके सिखावे ।

गुणा सिखाने की यह रीति है कि, बराबर बराबर फल कुछ बालकों को दे कर फिर पूछे कि, सब बालकों पर सब फल कितने हुए ? बिना गिनके बताओ। जब न बता सकें तो जितने जितने फल दिये हैं वा जितने बालकों को दिये हैं, उसी अंक के पहाड़ों का स्मरण दिला कर बुलवावे तो वे बता देंगे। फिर उनको समझा दे कि, इसी प्रकार पहाड़ा बोल कर बिना गिने बता दिया करो। इस प्रकार पहाड़ों से काम लेकर गुणा सिखादे।

(२) भाग इस रीति से सिखावे कि बीस फल एक स्थान पर रख दे। चार बालकों से कह दे कि, बराबर इसमें से सब ले लो। जब वे बाँट चुकें तब उन से पूछे, कितने कितने फल आये ? जब गिन कर वे बता दें तो समझा दे कि इसी भाँति पहाड़ों से लेखा लगा कर बता दिया करो कि, इतनी वस्तु को जो इतनों पर बराबर बराबर बाँटें तो इतनी इतनी आवेंगी। ४ पंजे २०, ८ चौक ३२ और ९ सत्ते ६३ इत्यादि।

(३) जब बालक लिख पढ कर निपुण और चतुर हो जावें, तब उनको व्यवहार शिक्षा इस प्रकार से दे कि, निज कुल का जो कुछ व्यवहार हो, प्रथम वह उनको बतावे। कार्य करने की ऐसी टेव डाले कि, जिस काम को करें, धुनि बाँध कर करें और भली भाँति करें।

करलें, कभी मुख न मोड़ें और न छोड़ें। चाहे अन्त में हानि भी उठानी पड़े, पर अधूरा कभी न छोड़ें। अधूरे काम करने की टेव कदापि न पड़ने दे। अपने सब कार्यों को ठीक समय पर उचित प्रकार से आरम्भ और समाप्त करने का स्वभाव बनावें और काम को बेढंगा न करें।

अपने व्यवहार के कुछ सिद्धान्त निश्चय कर लें कि, सदा उन के ही अनुसार बर्तें। जिससे साख बँध जावे और लाभ हो। कोई टेव या बान खोटी न डालें कि, जिससे व्यवहार या कार्य में विघ्न पड़ने लगे। जैसे लेखा जोखा आप न देखना, चाकरों ही का भरोसा कर के सब काम उन्हीं के ऊपर छोड़ रखना। उनकी चौकसी या परताल आप न करना। ऐसा करने से हानि सम्भव है। कहावत चली आती है कि, 'स्वामी की आँख लाख का काम करती है'।

किसी दुर्व्यसन में पड़ कर अपने बने या बँधे कार्य को न बिगाड़ लें। उनको सिखाना चाहिये कि, व्यवहार में सदा शील और नम्रता से काम निकालें। अपने काम को जिस प्रकार बने सुधार लें, बिगड़ने न दें। चाहे कड़े बन कर वा नम्र बन कर। बालकों को विद्या और धन के गुण भी सिखावें कि, इन दोनों के बिना संसार का कोई काम नहीं चलता। इसलिये उनको सर्वोत्तम समझ कर

यथासाध्य उपार्जन करना चाहिये। ये मनुष्य के बड़े काम के और सहायक होते हैं, जिनके पास ये होते हैं, उसका संसार में कोई काम अटका नहीं रहता, पर ये दोनों अपने पिता के समय के पुत्र हैं। इसलिये समय को वृथा न खोवे। समय को अमूल्य जान कर सदा काम में लगावे। यों ही न खो देवे नहीं तो पीछे पछताना पड़ता है।

(४) धर्मशिक्षा भी बालकों को प्रथम ही से इस कारण देनी उचित है कि, फिर उनके चित्त में से धर्म के वे विचार, जो इस आयु में चित्त पर चढ़ जाते हैं, निकाले नहीं निकलते। यही तो कारण हुआ कि, जिन बालकों की धर्मशिक्षा बचपन में नहीं हुई थी और वे अंग्रेजी पढ़ने लगे, ईसाइयों की पुस्तकें पढ़ पढ़ कर या उनके उपदेश सुन सुन कर अथवा उनकी संगति में पड़ क्रस्तान होते चले गये। यदि उनकी धर्मशिक्षा बाल्यावस्था ही में हो जाती तो वे ऐसे धर्मधुरन्धर होते कि, धर्मावतार कहलाते, परन्तु विधर्मी हो जाने से उनके विचार बदल गये।

जितने बालकों ने अंग्रेजी शिक्षा पाई, उनमें से अधिकांश की वृत्ति ईसाईमत की ओर झुक गई थी और अपने निज धर्म से अनभिज्ञ थे। इस कारण जो जो दोष ईसाइयों ने कहे वा उनके पुस्तकों से उनको जान पड़े, वे मान लिये और निज मत त्याग अन्य मत ग्रहण कर लिया।

मैं स्वय ऐसे ही कारणों से अपने धर्म में अविश्वासी हो गई थी और कुछ सदेह नहीं था कि, वर्ष दो वर्ष यदि ऐसी ही दशा रहती वा किसी पादरी का संग हो जाता तो अवश्य कृस्तान हो जाती। पर अब जब से आर्यसमाज स्थापित हो गया है और इसने वैदिकधर्म का झंडा बीच मैदान में खडा किया है तब से प्रायः सभी स्कूलों और कालिजों में शिक्षा पानेवाले निज निज धर्म से जानकार हो कर अन्य मतवालों को बात की बात और चुटकियों में उडाते है। कृस्तानों और मुसलमानों के मत को तो कुछ समझते ही नहीं। इनकी पोल तो ऐसी खोलते हैं कि, ये मतवाले तो सामने खडे नहीं रहते। इसीलिये बालकों को प्रथम ही से धर्मशिक्षा इस प्रकार से देवें कि सब से पहिले बालकों में ईश्वर का विश्वास, प्रेम और भय उपजावे कि, ईश्वर ही सब को उत्पन्न कर के पालता पोषता है। हम सब को उसकी भक्ति और आराधना करनी चाहिये। दोनों काल आप संध्या वा भजन करने को बैठे और बालकों को बैठा कर भजन करावे।

जब कोई लूला, लॅगडा, कुष्ठी वा दुःखी दृष्टि पडे तो बालकों को ईश्वर का भय दिलावे कि, ईश्वर ने इसकी यह दशा बुरे कर्मों के फल से कर दी है। इसने पहिले जन्म में वा इस जन्म में बुरे कर्म किये थे। इसलिये य

दण्ड मिला है। यदि तुम बुरे कर्म करोगे (यहाँ पर चोरी करना, हत्या करना, झूठ बोलना इत्यादि बुरे कर्मों के विवरण भी उन्हें बता दे) तो तुमको भी ऐसा ही दण्ड मिलेगा।

इसी प्रकार जब वे किसी कीडे मकोडे को सतावें वा मारें तो उनको उपदेश दे कि, हत्या से महापाप होता है। जो इन कीडे मकोड़ों को मारता वा सताता है, ईश्वर उनकी बुरी दशा करता है। मारनेवाले को भी इसी प्रकार मारता और दुःख देता है। इसलिये तुमको किसी जीव को न मारना चाहिये।

अथवा जब बालक कोई अपराध करे तब आप क्षमा कर के उससे ईश्वर से भी क्षमा मँगवावे अथवा जिसके घर में पूजा वा देवालय हो तो बालक को वहाँ ले जा कर ईश्वर से क्षमा की प्रार्थना करावे कि, मेरा अपराध क्षमा कर। अब मैं फिर ऐसा कर्म न करूँगा।

बालकों की सत्य में निष्ठा और प्रीति करावे और सत्य बोलने के गुण और पुण्य बतावे, जिससे वे सदा सत्य बोलने की टेव डालें। सत्य बोलनेवालों का यश उनसे कहे। झूठ की घृणा उनके मन में उत्पन्न करावे। झूठ बोलने वालों की दुर्दशा का हाल कह सुनावे कि, झूठों का कोई विश्वास नहीं करता। परमेश्वर झूठों को दण्ड देता

है और वे कष्ट पाते हैं। यथा—

दोहा।

झूठ कबहुँ नहि बोलिये, झूठ पाप को मूल।
झूठे की कोइ जगत मे, करे प्रतीति न भूल॥
मिथ्याभाषी साच हू कहे न माने कोइ।
भाँड़ पुकारे पीरवस, मिसुसमझेंसबकोइ॥

मैंने एक लडके को अपनी सुसराल में देखा कि, वह नित्य झूठ बोला करता था। जब वह गङ्गाजी में तैरता तो झूठमूठ ही मिसु कर चिल्लाता कि डूबा डूबा, कोई निकालियो निकालियो, और दिखाने के लिये गोते खाने लगता। उसको ऐसा करते देख कर सब चुपके हो जाते। सब खेल जान लेते थे। पर एक दिन ऐसा हुआ कि, वह बालक सचमुच डूबने लगा और बहुत चिल्लाया, पर सब ने नित्य की भाँति खेल ही समझ कुछ ध्यान न दिया और वह लडका डूब गया। न वह लडका झूठ बोलने की टेव डालता और न डूबता।

जीवों के प्रति प्रेम की शिक्षा भी बालकों को देवे, जिससे दयाभाव उनके चित्त में उत्पन्न हो जावे और निर्दयी न बन जावें। ईश्वर के गुणानुवाद बता बता कर उन के मन में विश्वास और भय पूर्ण प्रकार से उत्पन्न करा दे और इसी हेतु उनसे नित्य सोते और जागते अथवा साँझ

सकारे ईश्वर की प्रार्थना इस प्रकार करावेः—

कुण्डलिया।

चिन्ता दूर करो प्रभु, मङ्गलरूप अनन्त।
परम पिता करुणाअयन, लेहु सुद्धि भगवन्त॥
लेहु सुद्धि भगवन्त, हरी तू दीनदयाला।
शोकहरन सुखकरन, तुही सबजन रखवाला॥
निर्धन धन भूपाल, साधु सन्तन के मिन्ता।
बार बार तुहि नमो, हरो प्रभु मेरी चिन्ता॥

चौपाई।

ओमग्नेव्यापक जगनायक। हिरण्यगर्भ भक्तन सुखदायक॥
शङ्कर महादेव भव ईशा। विश्व विराट अदित्य महेशा॥
सत् सच्चिदानन्द अविनासी। विष्णु अगोचर घट घट वासी॥
ज्ञानस्वरूप भक्तभयभञ्जन। सबमें व्यापक नित्य निरञ्जन॥
निर्भय निराकार भवस्वामी। प्रणतपाल हरि अन्तर्यामी॥
अचल अनन्त पूत कर्तारा। सर्वशक्तिमन जन भर्तारा॥
तैजस प्राज्ञ अनादि अरूपा। दयानिधे देवी सुख रूपा॥
अजरअमरजगदीशदयाला। सकट हरण गणेश कृपाला॥
निरामय वायू दुखभञ्जन। आनँदरूप सन्तमन रञ्जन॥
पूरण ब्रह्म पुरुष जगधारी। परब्रह्म स्वामी सुखकारी॥
नित्यानन्द प्रीति उत्पादक। ज्योतिरूप तव वेद प्रचारक॥
अलख महा होता सर्वज्ञा। प्रोहित धर्मराज उपजज्ञा॥

शुद्धस्वरूप अजन्मा कर्त्ता । सबसुखदाता अरु दुखहर्त्ता ॥
वरुण इन्द्र यम मंगल पर्शांत । शिवविश्वम्भरजगमसुदर्शात॥
सर्व मित्र राजप हितकारी । रूप अद्वितिय भवभयहारी ॥
सृष्ट्युत्पादक निर्गुनरूपा । पूज्य अपार सर्व जगभूपा ॥

बस, ईश्वर की इसी प्रार्थना पर आज के उपदेश को अन्त करती हूँ । हमारे मोने में वह ईश्वर हमारी रक्षा करे ।

बालशिक्षा समाप्त ।

स्त्रीसुबोधिनी

पञ्चम भाग

धर्मोपदेश

आठवें दिन रात्रि को छुटकारा पाकर मोहनी से दुर्गा बोली कि, हे बहिन मोहनी ! अब तक तो मैंने तुझको सात दिन के सप्ताह में घर के काम-काज ही बताये, अब आज थोड़ा सा सप्ताह के फल में धर्म और नीति विषय भी बताती हूँ। मैंने बहुधा देखा है कि, स्त्रियाँ अपने कुल-धर्म को छोड़ कर ऐसे ऐसे बुरे पूजन और कर्म को अपना धर्म मान बैठी हैं कि, मैं देख देख कर बहुत ही दुःख मानती हूँ। मैं नहीं जानती कि, वे धर्म का अर्थ भी समझती हैं वा नहीं ? मैं तो यही कहूँगी कि, 'नहीं समझतीं'। समझना तो दूसरी बात है, वे जानती भी नहीं हैं कि, धर्म किसे कहते हैं ? जैसे किसी ने बहका दिया, वैसा ही मान गई और करने लगी। मूर्ख में बुद्धि तो होती नहीं, दूसरे की देखादेखी तुरन्त करने लगती हैं और कुछ नहीं विचारतीं कि, हम क्या करती हैं। यह करना भला है वा बुरा। सत्य है वा असत्य ?

धर्म का अर्थ है कि, जो किसी वस्तु का स्वभाव अर्थात् स्वाभाविक गुण हो, जैसे अग्नि का धर्म जलाना। पानी का धर्म शीतलता इत्यादि । बस यही सोच कर प्रत्येक वर्ण और बुरे भले मनुष्यों के गुण माने गये हैं अर्थात् जिनमें वह वह गुण पाये जावें, उनको उन उन नामों से पुकारना चाहिये अथवा यों कहो कि, जो अपने को उस नाम से पुकरवाना चाहे, वह उस उस नाम के गुणों को धारण करे। इसी कारण धर्म का अर्थ यह हो गया है कि, जिसके लिये जिन जिन कार्यों के करने की शास्त्रों में आज्ञा है, वही उसका धर्म है । यह धर्म इस लोक और परलोक दोनों में सुख मिलने के अभिप्राय से किया जाता है। यह धर्म ऐसी वस्तु है कि, इस असार संसार में यही एक मित्र बनाने के योग्य है क्योंकि इस संसार की समस्त वस्तु अधिक से अधिक मृत्यु तक संग दे सकी है। यहाँ तक कि, निज शरीर भी चिता तक संग नहीं निबाहता। पहिले ही छुट जाता है, परन्तु यह धर्म मरने पर भी संग नहीं छोडता। बराबर संग रहता है । इसलिये ऐसे मित्र को ढूँढ़ कर के करना चाहिये और नियम से पालन करना चाहिये और ऐसे मित्र की रक्षा जान दे कर भी करनी चाहिये। सो अब नहीं किया जाता, अब तो इस विषय में अन्धपरम्परा हो रही है। कोई नहीं सोचता कि,

'यह संसार परलोक की खेती है, जैसा जो कोई उसमें बोवेगी, वैसा ही काटेगी और लुनेगी'।

हमारा मन हमारा खेत है, यदि उसमें विचाररूपी अन्न न बोवेगी तो कुविषयरूपी घास, फूस, सत्यानाशी आदि उत्पन्न हो आवेंगे। अब की स्त्रियाँ गुरु करती हैं, मन्त्र सुनती हैं, तुलसी की माला पहिनती हैं और जपती हैं। सो महाअनुचित करती हैं। किसी शास्त्र में स्त्रियों को ऐसी आज्ञा नहीं है, वरन इसके विरुद्ध है कि, स्त्री को किसी अन्य गुरु की आवश्यकता नहीं, उसके लिये उसका पति ही परमगुरु है। यथा—

श्लोक

न पिता नात्मजो वात्मा न माता न सखीजनः।
इह प्रेत्य च नारीणां पतिरेको गुरुः सदा॥
गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः।
पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वत्राभ्यागतो गुरुः॥
पत्युराज्ञां विना नारी उपोष्य व्रतचारिणी।
आयुराहरते भर्तुः सा नारी नरकं व्रजेत्॥

जब स्त्री का धर्म यह है कि, परपुरुष की परछाहीं को न पतियावे तो स्त्री के लिये यह उचित कब हो सकता है कि, स्त्री दूसरे पुरुष के पास जा कर बैठे। उसके दावे, उससे एकान्त में बातें करे। स्त्री को पात

रिक्त कभी किसी अन्य पुरुष को गुरु न बनाना चाहिये । यदि ऐसा करेगी तो उसके पातिव्रत में अन्तर पड़ेगा । स्त्री तो अपने पति ही को अपना गुरु समझे और पति सेवा ही को गुरुमन्त्र जाने । यथा—

श्लोक

पतिशुश्रूषणान्नार्यास्तपो नान्यद् विधीयते ।
सावित्री पतिशुश्रूषां कृत्वा स्वर्गे महीयते ॥

तुलसी की माला धारण करने और जपने से स्त्री को बड़ा ही पाप होता है क्योंकि ये विधान विधवाओं के लिये हैं । सौभाग्यवती स्त्रियों के लिये तो लिखा है कि, सदा कमल की माला धारण करें । तुलसी की माला को हाथ में भी न लें । तुलसी की माला जपना वैरागिनियों का काम है । गृहस्थिनी स्त्रियों का काम नहीं है । ऐसी स्त्रियों के लिये लिखा है कि, नरक भोगेंगी, बालविधवा हो जावेंगी वा युवावस्था में विधवा होंगी और फिर नाना प्रकार के दुःख और क्लेश भोगेंगी ।

शास्त्र में लिखा है कि, तप, जप, तीर्थयात्रा, सन्यास, मन्त्रसाधन और देवता का पूजन ये सब बातें स्त्री और शूद्र को नाश करनेवाली हैं । कारण क्या है कि, ये बातें केवल उससे हो सक्ती है, जो स्वाधीन है अथवा जिसको दूसरे की सेवा नहीं करनी पड़ती और दूसरे की प्रसन्नता

पर जिसका जीवन नहीं है, परन्तु स्त्री और शूद्र जो सदा अपने स्वामी ही की सेवा में रहते हैं, उनको इन बातों के करने का छुटकारा कहाँ, जो करें ? और यदि किया भी जाता है तो फिर सेवा में भङ्ग पडती है, जिससे स्वामी की अप्रसन्नता होती है और जिससे सेवक को हानि पहुँचना प्रत्यक्ष सम्भव है। इसलिये जप, तप, पूजा और पाठ इत्यादि का निषेध स्त्रियों के लिये शास्त्र में लिखा है।

पूजा, पाठ इत्यादि करनेवाली स्त्रियाँ बहुधा निस्सन्तान और बाँझ रह जाती हैं क्योंकि उनके पति का चित्त उनसे प्रसन्न नहीं रहता, सन्तान फिर कहाँ से हो ? और यदि पति का चित्त प्रसन्न भी है तो स्त्री का चित्त नहीं है, वह पूजा, पाठ में लगा हुआ है। गर्भ कहाँ से रहे ?

इन्हीं कारणों से पति की सेवा के सिवाय स्त्री को कभी अन्य देवकी सेवा न करनी चाहिये। नित उठ प्रातःकाल अपने ईश्वर की प्रार्थना ही केवल कर लेना बहुत है और सर्वदा अपने पति ही का ध्यान और सेवा करनी सर्वोत्तम है।

आजकल की स्त्रियों ने अपने कुलधर्मों को छोड़ जिन धर्मों को ग्रहण कर लिया है, उनके दोष और बुराइयाँ मैं तुझे बताये देती हूँ कि, तू उनके दोष समझ उनको न करेगी।

जिस ईश्वर ने हमको उत्पन्न किया है और उस अवस्था में कि, माँ के उदर में ही थी, तभी हमारे भोजन निमित्त माता के स्तनों में दूध भर दिया था और माता के हृदय में ऐसा मोह उत्पन्न कर दिया था कि, सैकड़ों दुःख और कष्ट सह कर उसने हमारा लालन, पालन किया। आप दुःख सहे, पर हमको दुःख न पहुँचने दिया। जो वह ईश्वर ही माता के हृदय में ऐसा मोह उत्पन्न न करता तो हम पल कर इतनी बड़ी क्योंकर होतीं, वरन मर जातीं और न कभी कोई माता अपनी संतान को पालती और अब भी वही ईश्वर हम को नित भोजन, बसन की सामग्री प्रस्तुत करता है, क्योंकि खेतों में उसी की कृपा से अन्न उपजता है। वस्त्रों के लिये रुई आदि वृक्षों में लगती है। रोगनिवृत्ति के लिये ओषधि उत्पन्न होती हैं। रात्रि को सुषुप्ति अवस्था में वही हमारी रक्षा करता है। इस कारण उसी ईश्वर की उपासना, उसी से प्रार्थना और उसीका ध्यान करना उचित है। उसके सिवाय दूसरा कोई उपास्य नहीं है।

पर बहिन! इस ईश्वर को छोड़, मूर्ख स्त्रियों ने भ्रम में पड़ कर ऐसे ऐसे नीच, दुष्ट तथा निन्दनीयों को अपना पूज्य मान रक्खा है कि, कहते भी लज्जा आती है। जैसे अमरोहे का मियाँ, जाहरपीर, जखैया, सय्यद, सेढ़,

शीतला, भुमियाँ, पीर, बाराही, ताजिया, भूत, प्रेत, भूतनी, सौत, चुड़ैल, अऊद, पितर इत्यादि ।

हे बहिन ! जो यह स्त्रियाँ तनिक सा भी विचार करें तो ऐसी मूर्खता की बात कभी न करें और स्याने, देवी के भगत और ठगियों की ठगाई में कभी न आवें और न अपने धर्म में बट्टा लगावें और न पाप की भागिनी बनें । मैंने बहुधा स्त्रियों को कहते हुए सुना है कि, "गृहस्थ स्त्री को तो आल औलाद के लिये सभी कुछ करना पड़ता है । स्याने, भोपे सभी की माननी पड़ती हैं और पूजना पड़ता है", पर मेरी समझ में नहीं आता कि, इन्होंने इसमें क्या धर्म विचारा है, जिससे उनको इनका विश्वास हो गया है । मैंने देखा है कि, जब लोग अमरोहे के मियाँ की जात देने (ज़्यारत करने) को जाते हैं और राह में जो कहीं गंगाजी उतरनी पड़ती हैं तो उनका जल अपनी देह से छूने तक नहीं देते, नहाने की तो कौन कहे, हाथ तक उसमें नहीं बोरते, इस विचार से कि, ऐसा करने से मियाँ चिन्ट जावेगा, क्योंकि गंगाजी हिन्दुओं का तीर्थ है और वह हिन्दुओं के तीर्थों से अप्रसन्न होता है और ज़्यारत नहीं मानता ।

हाय ! हाय ! इतना नहीं सोचती हैं कि, अपने धर्म की बात को छोड़ कर दूसरे चाण्डाल की तो पूजा करें

और गंगाजी को छुएँ तक नहीं, जिनकी इतनी महिमा हमारे यहाँ मानी है। देखें, यह 'निपूता मियाँ' हमारा क्या कर सक्ता है? जो इसको नहीं पूजते हैं, उनका ही यह क्या कर लेता है और अपने पूज्यों को छोड़ ऐसे नीच विधर्मी को क्यों पूजें?

जब हम मुसल्मानों को ही बुरा कहते हैं तब वह भी तो एक मुसल्मान ही था और जिस पर भी गया हुआ कि, दूसरे मुसल्मान भी उसके नाम पर गालियाँ देते हैं और कभी उसको नहीं पूजते, पर धिक्कार है हम आर्यों पर, जो ऐसे विधर्मी को मानते और मरे हुए को हाथ जोड़ते और पूजते हैं। जब मुसल्मान को छूते तक नहीं हैं और उसका जूँठा क्या छुआ तक कोई आर्य नहीं खाता फिर सोचने की बात है कि, स्त्रियाँ, जो बहुधा 'मियाँ की कड़ाही' करती हैं और फातिहा दिला कर उसके जूँठे भोग को खाती हैं, क्या इससे आर्यत्व नहीं जाता है? पर इसका ध्यान किसी को नहीं। मियाँ को पूजेंगी और जूँठा खावेंगी। इसी प्रकार सय्यदों (शहीदों) का पूजन है। उनके विषय में भी हम नहीं विचारतीं कि, ये शहीद कौन हैं? [illegible] उसको कहते हैं, जो [illegible] जान दे दे। [illegible] पुरुषार्थों [illegible]

मारने के यत्न में वा युद्ध में अपने प्राण त्याग कर दिये, क्या ऐसे जन हमारे पूजनीय कभी ठहर सक्ते हैं ? नहीं नहीं, कदापि नहीं । धिक है उनके पूजनेवालों पर !!!

जाहरपीर का भी पूजना ऐसा ही है क्योंकि उसके विषय में भी वे नहीं सोचतीं कि, वह कौन था ? और यदि उसको न पूजें तो वह हमारा क्या कर सक्ता है ? कहानी तो तैंने उसकी सुनी ही है कि, अपने मौसी के बेटों से लड कर मरा था, अपनी माता के कहने से घर त्याग निकल गया और धरती में समा गया और तभी से जाहर का जाहरपीर हो गया ।

धरती में कौन सा मनुष्य नहीं समा सक्ता है ? लज्जा और क्रोध के मारे बहुत से मनुष्य कुयें वा नदी में जा गिरते हैं । इसी प्रकार वह भी किसी अन्ने कुयें में जा गिरा और मूर्ख लोग उसको किसी कारण से पूजने लगे, पर तमाशा यह है कि, उसके संग उसके चमार को भी पूजते हैं, जिसका नाम भज्जू था ।

हाय ! क्या यह लज्जा की बात नहीं है कि, हम उच्च कुल की हो कर नीच कुलवालों को पूजें? उसके हाथ जोडें? दण्डवत् करें और उनकी मानता मानें ?

इसके संग तो चमार ही पुजता है, पर एक और इस से भी अधिक नीच पुजता है, जिसका नामजग्घया है ।

उसके संग भंगी पुजता है ।

इसकी पूजा में स्त्रियाँ अपने बालकों के जीव बचाने को इस भंगी के नाम का एक सुअर का घेटा कटवाती हैं और उसके लोहू का टीका अपने बालक के माथे पर लगाती हैं। घेटा कटाती बेर भंगी से कहती है कि, "देख नार पर से दो कर दीजो, कहीं दिलगी न रह जाय।" जो कहीं शीघ्रता से दो टुकडे हो नार अलग हो गई तो बडा पुण्य समझती है कि, हमारी जाति (ज्यारत) अङ्गीकार हुई ।

हे बहिन ! ये निर्दयी स्त्रियाँ भगवान् से नेक नहीं डरतीं कि, एक बिचारे घेटे का बलिदान वृथा करती हैं और अपने बालक के जीव के पलटे दूसरे के बालक का जीव मरवा डालती हैं इस अभिप्राय से कि, हमारा बालक अब न मरे क्योंकि परमेश्वर ने जो इसका जीव लेना चाहा था, सो हमने उसके पलटे घेटे का जीव दे दिया।

बहिन ! इन्हों (स्त्रियों) ने परमेश्वर को क्या अन्धा समझ लिया है कि, वह इतना भी नहीं देख सका और समझता कि, किसके पलटे किसका जीव मारा गया ? जो ऐसा ही है तो फिर क्या डर है ? दूसरे के बालक के पलटे इसीके बालक के प्राण हर लिये जावेंगे ।

यह जखैया बालक का जीव क्या बचा सका है ?

स्त्रियाँ ऐसी ऐसी अन्धी, मूर्ख और मतिहीन हो गई हैं कि, कुछ कहने ही में नहीं आता ! इतना तो ये सोचें कि, जैसे तुमको अपना बालक प्यारा है,क्या सुअरिया को अपना घेंटा उतना प्यारा नहीं है ? जब तुमने उसके घेंटे को मरवा डाला तब क्या वह तुम्हारे लाल को नहीं कोसेगी और परमेश्वर उसके दुःख की पुकार न सुनेगा और तुम्हारा बालक घेंटा कटवाने से फिर जीता ही रहेगा ?

राम ! राम ! लज्जा नहीं आती कि, क्या अब हम आर्य ऐसे धर्महीन और गयेबीते हो गये कि, हम भंगी, चमार, कोली, चाण्डाल इत्यादि के हाथ जोड़ते फिरें और उनकी पूजा करें । तनिक सोचो कि, जिस परमेश्वर ने हमको उत्पन्न किया है केवल वही हमको जीवदान दे सक्ता है और देता है । अन्य दूसरा कोई नहीं दे सक्ता और ऐसे नीच क्या दे सके हैं और हैं ही कौन ? जब आप ही कुमौत मरे तो हमारा क्या बिगाड सके हैं । जो आप मर गये वे हमको क्या जिला सके हैं ।

जब कोई किसी को यहाँ मारता है वा सताता है, उसको दण्ड मिलता है तो क्या इन नीचों को, यदि हम को सतावेंगे, मारेंगे, ईश्वर दण्ड न देगा ?

यह भी तो विचारना चाहिये कि, ये कोई देवता थे

वा कौन थे जो इनको पूजा जावे ? जब ये महानीच मनुष्य थे, जिनको कोई अपने पास भी नहीं बैठाता था तो धिक्कार हमको है, जो उनको पूजते हैं ! यह बहुत ही बड़ी मूर्खता की बात है।

और तो और, मैंने देखा है कि, मूर्ख स्त्रियाँ अर्जियाँ लिखा कर ताजियों को देती हैं कि, हमको बेटा दो। हमारे बालकों पर मेहर करो। हमारे घरवालों का रोजगार लगावो। इसी प्रकार की अनेक बातें उनमें लिख लिख कर उनसे माँगती हैं। यह नहीं जानती हैं कि, वे ऐसी बातें हमको दे सक्ते हैं कि, नहीं ? जिनको हमने आप अपने हाथों से बनाया है, वे बिचारे क्या कर सक्ते हैं ? ये कागज और बाँस इत्यादि के बनाये हुए खिलौने हैं। जैसे विवाह बरात में बनते हैं और निकलते हैं, उनको अर्जी देने से क्या हो सक्ता है ? आप ही थोड़ी देर में पाताल को जानेवाले हैं, हमारी अर्जी की क्या फिकर करेंगे। बहुतसी स्त्रियाँ अपने बालकों को इन ताजियों के नीचे हो कर निकालती हैं कि, जो बालक हमारे हो हो कर मर जाते हैं, वह न मरा करें। इन ताजियों का जूँठा शर्बत भी बालकों को पिलाती हैं, इन पर चढ़ी हुई कौड़ियों को बालकों के गले में पहिनाती हैं। इनका गुलाम बनाने के लिये बालकों के

अंग में बद्धी * (जो दोनों ओर को जनेऊ की तरह
होती है) पहिनाती हैं । इन बातों से कभी किसी को लाभ
नहीं हुआ, पर मूर्खता ऐसी फैली हुई है कि, इनका पूजना
नहीं छोड़तीं और जो किसी की मनचाही हुई बात ईश्वर
कृपा से हो भी गई, तो बस इन्हीं की कृपा समझ फिर
तो ऐसा निश्चास कर बैठती है कि, सकल सचे हैं तो
ये हैं, परिचय गारी हैं तो ये हैं, दूसरा और कोई नहीं
है । नीचजाति में से कोई ही सी जाति बची होगी कि,
उसका कोई मनुष्य न पुजता हो । जैसे, नगरसेन धोबी,
सेढू भंगी, कुएँवाला कमालखाँ इत्यादि । न जाने, ये
मूर्ख स्त्रियाँ किस किस का भय करती हैं कि, उनके नाम
की मशक छुड़वाती हैं, मुगियाँ उसरवाती हैं, भुमियाँ पर
दूध चढ़ाती हैं, बाराही (सुअरिया) की कड़ाही करती
हैं, शीतला का 'पूर बोलती हैं' । जो बालक को
ताप आगई हो तो मसानी पर लाल कागज का तब
(तख्ता) चढ़ाती हैं ।

कोई एक बात हो तो बहिन, मैं तुझे बताऊँ । यह
कुएँ ऐसी कुएँ में भाँग पड़ी है कि, प्राय सभी स्त्रियाँ
मूर्खता में पड़ी हुई हैं कि, जो घरवाले इन बातों के
ने को नाहीं करते हैं तो दुबक दुबक कर कोली,

* मुसलमानों में बद्धी गुलाम का चिह्न होता है—

चमार, कुम्हार इत्यादि को, जिनको वह इन दुष्टों का भय समझती है, बुला लेती है और उनकी कही हुई बात को ईश्वर का सा वाक्य समझती हैं और मानती हैं। जो कुछ इन्हों ने कह दिया, वही प्रमाण है। इनको कोई लाख समझावे, पर एक न मानें और ये लोग भी, इन स्त्रियों को निरी मूर्ख और डरपोंक समझ कर, ऐसे ऐसे भय दिखलाते है कि, फिर जो इनसे कह देते हैं, वही करवा लेते है। घरवाले जो इन बातों को झूठी बताते हैं तो कहती हैं कि, संतान के लिये सभी करना पड़ता है। तुम हमारी बातों में मत बोलो। तुम मत करो, हम तो सभी करेंगी। गृहस्थ को तो सब से काम पडता है। देखो फलानी स्त्री ने नहीं माना था, सो कैसी पछितावी है और जो हम न करेंगी तो हम भी पछितावेंगी।

ऐसी बातों के अतिरिक्त बहुत सी स्त्रियों में एक और रोग लगा हुआ है अर्थात् जो इन बातों से बची हुई हैं, वे दूसरे प्रकार से धर्म के पलटे अधर्म कमाती हैं। वह यह है कि, बहुत सी स्त्रियाँ तीर्थ पर वा किसी पुण्यतिथि पर दान देती हैं वा कोई वस्तु महीनों तक खाना छोड़ देती हैं और पीछे ब्रह्मभोज कराती हैं वा अपने जीते जी ‘ राहचनेनी ’ इत्यादि कर डालती हैं अथवा बाग, बावड़ी वा तुलसी का विवाह करती हैं, जिनमें कुछ भी

पुण्य नहीं है । इनमें से बहुत सी स्त्रियाँ तो अपने नाम के लिये दान पुण्य करती हैं, उनका तो यही फल है कि, उनका नाम हो गया । कुछ स्त्रियाँ अपने आश्रित पुरोहित इत्यादि को दान देती हैं अर्थात् उन मनुष्यों को जिनसे उनका कुछ काम निकलता रहता है । सो यह भी पुण्य नहीं है । पेट भरे को देना वा टहल के बदले देना वा फल की इच्छा से देना, इनमें कुछ पुण्य नहीं होता है, वरन कभी कभी पाप हो जाता है । इस कारण से कि, जो इस धन को दान लेने से कोई कुकर्म करे तो उस कुकर्म का फल दाता को होगा क्योंकि न वह देता और न यह करता ।

मैंने देखा है कि, यह लोग भीख माँग माँग कर तो धन इकट्ठा करते हैं और उसको लड़ाई झगड़े वा किसी कुकर्म में लगा देते हैं । जैसे कि, तीर्थवासियों को तू देखती ही है कि, वहाँ के स्त्री, पुरुष दोनों के कैसे कैसे निन्दनीय कर्म धर्म हैं । दान से यह अभिप्राय है कि, भूखे, टूटे, दीन, दरिद्री, राँड़, अनाथ इत्यादि को दे । यह नहीं कि, जिसका पेट भरा है, उसको और भोजन करा दे, पर जो वास्तव में भूखा है, उसको टूक भी न डाले । आजकल दान की यही दुर्दशा हो रही है । जो दानपात्र हैं, उनको तो दान मिलता नहीं, जो कुपात्र हैं, उनको सहस्रों, वरन

लक्षों रुपये का धन मिलता है और दीन दुखिया बिचारे मारे मारे फिरते हैं। जिनको नित नये नये भोजन घर पर भी है, उनको सब कोई खिलाते हैं और यह समझते हैं कि, हम बड़ा पुण्य कर रहे हैं। जो कोई दुखिया वा अनाथ उस भोजन के समय आ गया तो उसको गाली देते हैं, पिटवाते हैं। क्या हुआ जो वेहया बन कर इन दाताओं से कुछ ले गया। इसी दान ने दाता और लेता दोनों को पापी बना दिया है।

लोगों को धर्म के भ्रमजाल में कुछ ऐसा फँसाया है कि, वे निपट भौंचक्के से हो गये हैं कि, ठीक प्रकार से उनको कुछ सूझता ही नहीं है। जो कुछ उनको बता दिया जाता है, वही बोली बोलते हैं। जैसे मदारी कपड़े के भीतर बालकों को बिठा कर, उनके मस्तक पर हाथ फेर कर कहता है कि, 'गदहे की बोली बोलो' और बालक बोलने लगते हैं। 'बकरे की बोली बोलो' और बालक बोलने लगते हैं अर्थात् जो जो मदारी उनसे कहता है, वे वही बोलते हैं, पर जब वे उस कपड़े से बाहर निकल कर आते हैं और उनसे पूछा जाता है कि, तुमने गदहे की बोली क्यों बोली थी? तो कहते हैं कि, हमने तो नहीं बोली। ठीक वही दशा हमलोगों की है क्योंकि देख! हमको वैतरणी नदी पार उतरने का भय लगा कर हमसे

मरते समय गौ पुण्य करा लेते हैं और सब बड़ी श्रद्धा और प्रेम से गोदान करते हैं और इसको बड़ा भारी पुण्य मानते हैं, पर यह नहीं सोचते कि, यह गौ क्योंकर वहाँ हमारी सहायता को पहुँच सकी है। दाता तो अभी प्राणत्याग कर के वैतरणी पर पहुँचा जाता है और गौ तो यहाँ अभी कई वर्षों तक रहेगी। वहाँ क्योंकर इससे सहायता मिलेगी? इसका विचार किसी को नहीं होता है। इस पर तुझको एक दृष्टान्त भी सुनाती हूँ, जो मुझको इस समय स्मरण आ गया।

एक मनुष्य था, जिसके एक पुरोहित था। इनमें परस्पर बड़ी प्रीति थी। वह अपने पुरोहित जी का बहुत आदर, सत्कार करता था। जब वह रोगग्रस्त हो कर मर गया तब उसके पुत्र ने पुरोहितजी को बहुत सा दान अपने बाप की मृत्यु पर यह सोच कर दिया कि, यह हमारे पुरोहित भी हैं और मृत पिता के परमस्नेही मित्र भी हैं। इनको दान देने से पिता का आत्मा अधिकतर प्रसन्न होगा। पुरोहितजी को दान तो अधिक मिला, परन्तु एक घोड़ी जो इस मृत मनुष्य की सवारी में रहती थी, न मिली और वह कुछ अधिक मूल्य की थी। पुरोहितजी को अब यह धुनि बँधी कि, यह घोड़ी और लेनी चाहिये। मुखसे तो वे माँग न सके, परन्तु यह उपाय विचारा। वे एक दिन प्रात

काल ही उठ कर इस मृत मनुष्य के पुत्र के घर आये और बहुत ही उदास होकर बैठ गये। जब उस पुत्र ने इनसे पूछा कि, पुरोहितजी! आज ऐसे प्रातःकाल कैसे आये और क्यों उदास बैठे हो? इन्होंने अत्यन्त शोक प्रकट करके अन्त को उत्तर दिया कि, पुत्र वैसे तो तुम बडे योग्य हो, तुमने अपने मृत पिता का क्रियाकर्म अतिउत्तम किया, पर तुम्हारे पिता तब भी अति कष्ट पाते हैं। पूछा–क्यों? और तुमको कैसे ज्ञात हुआ? बोले कि, उनको हमसे अधिक स्नेह था सो उन्होंने हमको आज स्वप्न दिया है और स्वप्न में हम को देख कर रोदिये। हमने जो कारण पूछा तो उत्तर दिया कि, पुत्र ने दान दिया, सो हमको पहुँच गया। हम अति प्रसन्न हुए और विशेष कर इससे कि, तुमको मिला, पर अपने पाँव दिखाकर बोले कि, देखो छालों के मारे घायल हो गये हैं। अपने घर कभी पैदल न चले, जब गये तब सवारी पर ही चढ कर गये। यहाँ बिना सवारी के नित पैदल चलना पडता है। सो यदि ऐसी ही दशा रही तो हमारे कष्ट का ठिकाना नहीं। हमारे पुत्र ने हमारे लिये कोई सवारी दान नहीं की। जो हमारी घोड़ी हमारे निमित्त दान में और भी तुमको दे देता, तो यह कष्ट काहे को सहना पड़ता। सो ऐसे दाता और धर्मात्मा यजमान को और अपने परममित्र को कष्ट में देख कर चित्त

को उसी समय से महाखेद हो रहा है। निद्रा भङ्ग होगई, नींद नहीं आई। इसी कारण उठ कर हम यहाँ तुम्हारे पास कहने को चले आये हैं।

पुत्र भी अपने पिता की भाँति भोला और पिताभक्त था। पुरोहितजी की बात को सत्य जान कर वह घोड़ी उनको दान कर दी। थोड़े दिन पश्चात् इनके कोई सम्बन्धी आये और उस घोडी का वृत्तान्त पूछ कर कहने लगे कि, तुम पुरोहितजी के धोखे में आ गये। उसको समझा कर बोले कि, देखो उलटा कर अभी लेते हैं।

दूसरे दिन पुरोहितजी को बुला कर कहने लगे कि, हमारे और तुम्हारे मित्र कैसे योग्य पुरुष थे, उन्हें मृत्यु ने ग्रस लिया। पुत्र ने उनका क्रियाकर्म भी अच्छे प्रकार से कर दिया। दान कर कर के उनके पास सामग्री भी सब पहुँचा दी। घोडी का कष्ट था, सो वे तुमसे स्वप्न में कह गये। अब वह भी पहुँचा दी, पर आज रात्रि को मुझे स्वप्न दिया और अपना सब देह दिखा कर बोले कि, 'हमारे देह में ये फोडे हो गये हैं'। यहाँ इनका कुछ इलाज नहीं होता है। वैद्यों ने यह कहा है कि, यदि तप्त लोहे से पुरोहितजी का देह दग्ध कर दिया जावे तो मेरे फोडे अच्छे हो जावें। सो पुरोहित जी आज कृपा कर अपने देह को दग्ध करा लीजिये तो आप के यजमान को शीघ्र आराम होजावे।

इसको सुन कर पुरोहितजी घबराये और कहने लगे कि, यजमान दान तो पहुँच जाता है, परन्तु शरीर दग्ध नहीं हो सक्ता। इस पर बहुत वादानुवाद हो कर पुरोहितजी ने जो कुछ घोडीआदि दान में ली थीं, लौटा दी। उस दिन से उस पुत्र ने तो मृत पिता के निमित्त दान किया नहीं, सब को ठगी समझ लिया॥

सो हे बहिन मोहनी ! यही समाचार गोदान का है। न यह पहुँचती है और न कुछ होता है। यह तो ठगी की बातें हैं। वैतरणी कोई नदी नहीं है, जो मर कर उतरनी पडती हो। यह तो गौ लेने का मिस ही मिस है। हाँ, हमारे देह में अवश्य वैतरणी है, जो मरते समय जीव को उतरनी पडती है। पर उस वैतरणी से अभिप्राय यह है कि, रोगी रहने में जो दुर्गन्धि आदि अपवित्रता रोगी की देह में हो जाती है और प्राणत्याग के समय आत्मा को उससे महाक्लेश और दुःख होता है और जिसका उपाय गौ का दूध है अर्थात् जिस मनुष्य ने आयु भर वा बहुधा गौ का दूध पिया है, उसके शरीर के परमाणु ऐसे हो जाते हैं कि, उनमें यह दुर्गन्धि आदि अपवित्रता उत्पन्न नहीं होती है अर्थात् आत्मा को देहवियोग में कुछ ग्लानि वा दुःख नहीं होता है। यही वैतरणी है, जिसमें राद, लोहू इत्यादि दुर्गन्धित पदार्थ माने हैं।

यमदूतों का भी यही वृत्तान्त है कि, वे कोई देहधारी जीव नहीं हैं, किन्तु हमारे ही दुष्ट विचार हैं, जो जन्म भर होते रहते हैं और इस समय साक्षात् हो कर हमारे सम्मुख आ खड़े होते हैं और मरनेवाले को उनसे क्लेश पहुँचता है। उनके भयानक रूप और दृश्य देख देख कर उसका आत्मा भयभीत होता है, दुःख मानता है, रोता है, चिल्लाता है। परन्तु रोआ पीटा नहीं जाता। मरने पर वायु-मण्डल (यमलोक) में जीव को जाना पडता है। यदि न मरा, निरोग होकर अच्छा हो गया तो कहता है कि, ऐसे ऐसे भयानक जीव मेरे प्राणान्त को आये थे, मुझको यहाँ तक लेगये, पर पीछे छोड दिया। इसका व्याख्यान यदि सविस्तर दिये जावे तो बहुत हो जावेगा। सो केवल संकेतमात्र बता दिया है। इसलिये प्राणी अपने विचारों को सदा अच्छे रक्खे और बुरे कार्यों तथा पाप के संकल्प विकल्प और कुव्यसनों को मन में स्थान न दे।

अब मनुष्य विचार नहीं करते हैं; जिससे प्रत्येक बात के तत्त्व को समझें। वे तो उसी को मान लेते हैं, जो उनको समझा दिया गया है। यह उसकी बाबत कभी नहीं विचारा जाता कि, यह बात सम्भव भी है वा नहीं? सच है वा झूठ? हे ईश्वर! तू इस देश की स्त्रियों को अब भी कभी बुद्धि और समझ देगा, क्यों ऐसी मूर्खों से पाला डाला

है ? देख ! तुझे तो यह निपट ही भूल गई। तेरी महिमा को तो पहिचानती भी नहीं। सब प्रकार से अन्धी और बहिरी बन गई हैं। कोई लाख दिखावे वा पुकारे और सुनावे, पर कुछ फल नहीं।

धर्मोपदेश समाप्त।

स्यानों का कपट।

बहिन ! मैं तुझे धर्मोपदेश तो कर चुकी, पर स्याने भोपों के विषय में कुछ न बताया। सो और बताती हूँ। तू देखती है कि, स्त्रियाँ इनके भ्रम में ऐसी फँस रही हैं कि, कुछ कहा नहीं जाता। तनिक माथा दुखा कि, 'खोर' मान ली। बालकों को कुछ रोग हुआ कि, स्यानों को बुला भेजा। स्त्रियाँ क्या, पुरुष तक इनके प्रपञ्च ही का आश्रय ले कर स्त्री और सन्तान की जानें खो देते हैं और औषध नहीं करते। इन्हीं के 'गण्डा मूरी' के भरोसे पर बने रहते हैं। ये धूर्त कुछ ठगठगा कर इन बेचारों के प्राण हर लेते हैं। मूर्खों का तो कुछ ठीक ही नहीं है। मैंने देखा है कि, बड़े बड़े चतुर पुरुष भी तो स्त्रियों के कहने से इनके प्रपञ्च में आ जाते हैं। स्याने लोग होते तो मूर्ख और धूर्त हैं, परन्तु उनकी चतुराई ने स्त्री पुरुषों को अपने 'मोहनमन्त्र' और वशीकरण में कुछ ऐसा फाँसा है कि, वे खूब माल उड़ाते हैं।

जब लोग मूर्ख होते थे और इनके प्रपञ्चों को नहीं समझते थे, किन्तु यही जानते थे कि, इनकी क्रिया ठीक है, तभी से इनके अधिकार में पड कर, अब तक विश्वास करते चले आये हैं और इनका नाम उसी समय और कारण से स्याने (चतुर) पड गया है।

स्त्रियाँ इन स्याने भोपों के बहकाने में ऐसी आई हुई है कि, रात, दिन इन्हीं को गुरु बना बैठी हैं पर ये दुष्ट इनको ऐसा ऐसा धोखा दे कर ठगते हैं कि, जिसका कुछ कहना ही नहीं। कोई बात ऐसी कर के दिखा देते हैं कि, ये स्त्रियाँ उनको परमेश्वर से भी अधिक समझने लगती हैं और उनकी ठगाई में आ जाती हैं।

जहाँ कहीं किसी स्त्री ने इनको अपना बालक वा बहू बेटी (जिन पर वह सौत, भूतनी, चुडैल इत्यादि का असर ...ठी हैं) दिखाये कि, इन्होंने अपना दाँव लगाया। ... तंबाकू उतार कर पीते हैं और बहाना बना कर ... इस पर तो अमुक की खोर है। इस पर तो ...यद (शहीद) का फेरा है। इसकी सौत का ... कोई बडी भारी चुडैल लग बैठी है। ... मिला कर बता दिये। जो ...क सय्यद (शहीद) ... को लिये हुए

है ? देख ! तुझे तो यह निपट ही भूल गई। तेरी महिमा को तो पहिचानती भी नहीं। सब प्रकार से अन्धी और बहिरी बन गई हैं । कोई लाख दिखावे वा पुकारे और सुनावे, पर कुछ फल नहीं ।

धर्मोपदेश समाप्त ।

स्यानों का कपट ।

बहिन ! मैं तुझे धर्मोपदेश तो कर चुकी, पर स्याने भोपों के विषय में कुछ न बता या । सो और बताती हूँ। तू देखती है कि, स्त्रियाँ इनके भ्रम में ऐसी फँस रही हैं कि, कुछ कहा नहीं जाता। तनिक माथा दुखा कि, 'खोर' मान ली। बालकों को कुछ रोग हुआ कि, स्यानों को बुला भेजा। स्त्रियाँ क्या, पुरुष तक इनके प्रपञ्च ही का आश्रय लेकर, स्त्री और सन्तान की जानें खो देते हैं और औषध नहीं करते । इन्हीं के 'गण्डा मूरी' के भरोसे पर बने रहते हैं। ये धूर्त कुछ ठगठगा कर इन बेचारों के प्राण हर लेते हैं । मूर्खों का तो कुछ ठीक ही नहीं है। मैंने देखा है, ब[illegible] चतुर पुरुष भी तो स्त्रियों के कहने से इनके [illegible] हैं । स्याने लोग होते तो मूर्ख और धूर्त [illegible] उनकी चतुराई ने स्त्री पुरुषों को अपने [illegible] वशीकरण में कुछ ऐसा फाँसा है कि, [illegible]

जब लोग मूर्ख होते थे और इनके प्रपञ्चों को नहीं समझते थे, किन्तु यही जानते थे कि, इनकी क्रिया ठीक है, तभी से इनके अधिकार में पड कर, अब तक विश्वास करते चले आये है और इनका नाम उसी समय और कारण से स्याने (चतुर) पड गया है।

स्त्रियाँ इन स्याने भोपों के बहकाने में ऐसी आई हुई हैं कि, रात, दिन इन्हीं को गुरु बना बैठी हैं पर ये दुष्ट इनको ऐसा ऐसा धोखा दे कर ठगते हैं कि, जिसका कुछ कहना ही नहीं। कोई बात ऐसी कर के दिखा देते हैं कि, ये स्त्रियाँ उनको परमेश्वर से भी अधिक समझने लगती हैं और उनकी ठगाई में आ जाती हैं।

जहाँ कहीं किसी स्त्री ने इनको अपना बालक वा बहू बेटी (जिन पर वह सौत, भूतनी, चुड़ैल इत्यादि का असर माने बैठी हैं) दिखाये कि, इन्होंने अपना दाँव लगाया। उन पर तबाकू उतार कर धींते हैं और बहाना बना कर बताते हैं कि, इस पर तो अमुक की खोर है। इस पर तो बडा भारी सय्यद (शहीद) का फरा है। इसकी सौत का खलल है अथवा कोई बडी भारी चुड़ैल लग बैठी है। कभी कभी इन में से दो तीन मिला कर बता दिये। जो कारण पूछा तो कह दिया कि फुलाँ वक्र सय्यद (शहीद) की सवारी जाती थी और यह इस बालक को लिये हुए

है ? देखा ! तुझे तो यह निपट ही भूल गई। तेरी महिमा को तो पहिचानती भी नहीं। सब प्रकार से अन्धी और बहिरी बन गई हैं। कोई लाख दिखावे वा पुकारे और सुनावे, पर कुछ फल नहीं।

धर्मोपदेश समाप्त ।

स्यानों का कपट ।

बहिन ! मैं तुझे धर्मोपदेश तो कर चुकी, पर स्याने भोपों के विषय में कुछ न बताया। सो और बताती हूँ। तू देखती है कि, स्त्रियाँ इन के भ्रम में ऐसी फँस रही हैं कि, कुछ कहा नहीं जाता। तनिक माथा दुखा कि, 'खोर' मान ली। बालकों को कुछ रोग हुआ कि, स्यानों को बुला भेजा। स्त्रियाँ क्या, पुरुष तक इनके प्रपञ्च ही का आश्रय ले कर स्त्री और सन्तान की जानें खो देते हैं और औषध नहीं करते। इन्हीं के 'गण्डा मूरी' के भरोसे पर बने रहते हैं। ये धूर्त कुछ ठगठगा कर इन बेचारों के प्राण हर लेते हैं। मूर्खों का तो कुछ ठीक ही नहीं है। मैंने देखा है कि, बड़े बड़े चतुर पुरुष भी तो स्त्रियों के कहने से इनके प्रपञ्च में आ जाते हैं। स्याने, लोग होते तो मूर्ख और धूर्त हैं, परन्तु उनकी चतुराई ने स्त्री पुरुषों को अपने 'मोहनीमन्त्र' और वशीकरण में कुछ ऐसा फाँसा है कि, वे खूब माल उड़ाते हैं।

जाती थी वा खीर खा कर दुपहरी में आती थी, (अथवा इसी प्रकार और बात बना कर) सो इस पर 'चूरेवाला' जिन्न वा 'बुर्जवाला' प्रेत आसक्त हो गया है। इसके पास आता जाता है। उसीके मारे यह पीली पड़ी जाती है। उसी ने इसको कष्ट दे रक्खा है, वह अमुक स्त्री को भी लग बैठा था, पर जब हमको सुध मिली और इलाज किया तो दो घड़ी में चिल्लाता हुआ उस पर से उतर गया और भागा। आज तक नाम भी नहीं लिया, सो घबरावो मत। हम इस पर भैरों की चौकी बैठा देंगे, फिर गुरुकृपा से कोई साला जिन्न-फिन्न कुछ नहीं कर सकेगा। इसकी खाट को भी हम 'कील देंगे' कि, फिर वह इसकी खाट तक न फटकने पावेगा।

यदि किसी स्त्री के गर्भाशय में कुछ रोग हो कर रज-प्रवाह हो गया और रोगवश शीघ्र आराम न हुआ और जब इन स्यानों को दिखाया तब इन्होंने बता दिया कि, इसका पाँव किसी 'गदृत' पर पड गया है। सो इसका 'पैर कट गया' है। हम इसका 'उगदृत' कर देंगे तो फिर वैसा ही हो जावेगा।

ऐसी बातें बना कर और मूर्ख लोगों को भरमा कर ये लोग अपने में श्रद्धा करा लेते हैं। जब घरवालों ने आग्रह किया कि, आप ही के हाथ से यश होगा, आप ही इस

खिला रही थी, उसी समय से वह इस बालक को देख कर राज़ी हो गये हैं। कहते हैं कि, ले जायँगे। यदि इसका कुछ उपाय करा दोगी तो कदाचित् बच जावे, नहीं तो इस सय्यद के झपेटे में आये हुए बालक बचते नहीं हैं। सय्यद की चद्दर चढ़ावो और हमारा यह गंडा और तावीज़ इसके बाँध दो। गुरु की कृपा हुई तो बाल भी बाँका न होगा अथवा यों बता दिया कि, यह भूतों के फेरे में आ गया है। अमुक सय्यद वा पीर की चद्दर बोल दो वा चढ़ा दो तो उसकी मेहर से इनके फेरे में से निकल जावेगा और इस पर फिर हम चौकी रख देंगे कि, फिर आगे को किसी के 'झपेटे' वा 'फेरे' में न आवेगा। तुम्हारे बालकों से मीराँ चिंट रहा है, यदि उसकी जात (ज़्यारत) बोल दो तो तुम्हारे बालक जीने जागने लगेंगे। नहीं तो ऐसे ही बीमार हो हो कर मर जाया करेंगे।

यदि कोई स्त्री बीमार हुई तो कह दिया कि, इसकी सौत इस पर आ चढ़ी है। 'बाहरवाली' चुड़ैल लग बैठी है। दुपहर के सम्य मीठा खा कर यह आती थी और वह चुड़ैल वहाँ खड़ी थी। बस वहीं से इसके संग हो ली है। पर कुछ नहीं, हम यह भभूत और मिर्च देते हैं, इनको खाव, छुट जावेगी। किसी को यों बता दिया कि, शृंगार किये हुए यह बैठी थी अथवा पान खाये हुए रात्रि में

जाता और ठगाता भी न पड़ता और न इतना कष्ट उठाना पड़ता।

एक बेर, दो बेर, वरन दश बीस वर देख कर भी मूर्ख लोग इन स्यानों के भ्रमजाल में से नहीं निकलते। कुछ ऐसा मोहनीमन्त्र पढ़ा है कि, इन्हीं को परमेश्वर और जीवदानी समझते हैं। आराम हो गया तब तो स्यानों की कृपा और जो न हुआ तो अपने कर्मों के खोट बतलाती हैं। यह नहीं सोचतीं कि, आराम न होने पर जो हमारे कर्मों का खोट है तो आराम होने पर हमारे कर्मों का पुण्य और प्रभाव क्यों नहीं है?

ये स्याने और भगत अपनी बातों का विश्वास मूर्खों के चित्त पर इस प्रकार जमाते हैं कि, फिर मिटाये नहीं मिटता। पर मैंने बहुत सी स्त्रियों के चित्त से इनके जमाये हुए भ्रम और विश्वास को दूर कर दिया है। वे स्त्रियाँ, इनकी ठगी से जानकार हो गई हैं और अब ठगाई में नहीं आतीं। यह बात यों हुई कि, मेरे पड़ोस में एक स्याना एक बालक को झाड़ा देने आया करता था। एक दिन मैं भी देखने को चली गई तो मुझे विश्वास कराने को अब वह कहने लगा कि, अब इस बालक का रोग चला, मेरे देवता ने मुझको दिया है कि, अब यह बालक अच्छा हुआ।

का जीवदान देंगे तो बोले कि, हम तो रात दिन यही करते है, पर तुम जानते हो कि, देवता की प्रसन्नता पर सब कुछ किया जाता है, जो देवता के भोखने आदि (भोजन) के लिये कुछ खर्च करोगे तो हाथ पाँव की मेह नत हम कर देंगे। तुम जानते हो कि,हम तो पुण्य जान कर कर देते है, कुछ लेते नहीं है। ईश्वर की राह पर करदेते है। अपने कर्मों से चाहे किसी को आराम हो वा न हो पर यदि सच्चे मन से किया जाता है तो आराम नेचे (निश्चय) होगा। गुरु ने वह विद्या बताई है कि, झूठी कभी पडती ही नहीं है। सैकडों चुडैलों और भूतों को बोतलों में बन्द कर कर के पृथ्वी में गाड दिया है।

मूर्ख इनकी ऐसी बातों और फुसलाने में जब आ जाते है, तब उन पर ये अपना हाथ खूब साफ करते है। किसी कारण से यदि कुछ आराम पड गया, तब तो फिर स्याने की प्रशंसा में स्त्रियाँ भी डोम, भाट बन जाती है और जो आराम न हुआ तो अपने कर्मों का खोट बताने लग जाती है। इन से ठगा कर फिर दूसरों से इसी प्रकार जा ठगाती है और वे भी इसी प्रकार इनको जैसा ही खूब ठगते है अन्त को कुछ भी नहीं होता और कष्ट सहना पडता है और प्राण तक जाते रहते है।

यदि औषध की जाती तो कदाचित् आराम भी हो

रात को वह स्याना आया और बहुत सा पाखण्ड रच कर उसने क्या किया कि, एक परात ले कर उसमें पानी भरा और तीन ईंटें उसमें रख कर चौमुखा दिया बाला और बीच में उसे इस प्रकार धरा कि, दिये की बत्ती पानी से कुछ ऊपर रहे, जिससे बुझने न पावे। इसके पीछे उसने उन ईंटों पर एक सकरे मुख का घडा औंधा रक्खा और कहने लगा कि, देखो जो इस पर खोर होगी तो इस परात का सब पानी इस घड़े में ऊपर चढ़ जावेगा। मैं अपने देवता से विनती करता हूँ। देवता की कृपा होते ही फिर आज ही से आराम पड जावेगा। कुछ भी खटका वा भय न रहेगा, पर देवता की मानता करनी पडेगी। उस को 'बलि' चढ़ाना होगा और 'धार' देनी होगी।

हम सब ने कहा कि, अच्छा जो कहोगे, सो करेंगे। इसको आराम हो। इन बातों के करने में थोड़ी ही देर हुई थी कि, इतने में दिये की बत्तियों का धूआँ घड़े में भरने लगा और धूएँ के भरते ही परात का पानी घडे में ऊपर को चढ़ने लगा। आध घटे में सब पानी ऊपर को चढ़ गया। इसे देख कर सब स्त्रियों को और उनके घर के कई पुरुषों को इसका विश्वास आ गया कि, निश्चय कर के खोर थी। तभी तो पानी अपने आप ऊपर को चढ़ गया। यह देवता ही का काम था, नहीं तो नहीं चढ़ता क्योंकि

(भोजन) खूब सा मिलना चाहिये । देखो इस मोरछल में हो कर हम इस बालक के रोग को खींचते हैं । यह कह जब झाड़ा दे चुका तो दिखाने लगा कि, इस मोरछल में इसका रोग उतरता आता है, न मानो तो देख लो । उसने मोरछल की चन्द्रकला पर हाथ फेर कर, एक तिनके को हाथ में ले कर जो उस मोरछल के पास किया तो वह तिनका उसमें चिपट गया । उस बालक की माता इसको देख कर ऐसी प्रसन्न हुई कि, बस कहा ही नहीं जाता और उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि, रोग अवश्य उतर चला, पर मुझे विश्वास न आया । मैंने एक मोर पंख को ले कर वैसे ही हाथ फेरा तो उसी प्रकार तिनका उठ आया । तब तो मैं उस स्त्री से बोली कि, ये सब 'ठग विद्या' की बातें हैं । देख ! क्या मेरे भी हाथ में रोग है, जो उतर कर इसमें आ गया है । तुझको तो तुच्छ बात का विश्वास आ जाता है । जब मैंने उसे उसके सामने ही कर के दिखाया तो उसका विश्वास हट गया और फिर झाड़ा न दिलाया । एक बेर मैंने यह भी देखा कि, एक स्याने ने किसी पर खोर बताई और उसके पहिचानने का यह उपाय बताया कि, आज रात्रि को मैं तुम्हें कर के यह दिखा दूंगा कि, इस पर खोर है वा नहीं । हमारी बात झूठ है वा सच, जब आंख से देख लो तब मानना ।'

कहा कि, आज मैं इस चुड़ैल को आग में जलाये देता हूँ। यह कपड़ा मैंने सिद्ध किया है। इसको बिछा कर इस पर अपने देवता की अग्यारी करूँगा। इस पर जो चुड़ैल है, वह इस कपड़े में उतर आवेगी। इसलिये इस कपड़े को आज तुम उस स्त्री के अंग में लपेट दो। रात्रि में आ कर आज भस्म कर दूँगा। इतनी इतनी सामग्री अग्यारी को मँगा रखना। वह कपड़ा स्त्री को पहिना दिया गया। रात को वह स्याना आया और उस कपड़े को मँगा, अग्यारी के स्थान को लीप, पोत और उस कपड़े को बिछा, उस पर समिधा रख कर बोला कि, अब भस्म करता हूँ। चुड़ैल आग में जल जावेगी, जैसे होली जल गई थी, और यह कपड़ा प्रह्लाद की भाँति ऐसा ही बना रहेगा। यह कहते कहते बहुत सा मसाला रख कर उसने अग्यारी की और मनही मन में कुछ गुन गुन करता रहा। जब अग्यारी कर चुका तो उस कपड़े को निकाला। वह बिना जला निकल आया, कहीं आँच का लेशमात्र भी नहीं लगा।

स्त्रियाँ और पुरुष बड़े ही अचम्भे में रहे, मैं भी इस अवसर पर वहाँ थी। मैंने सोचा विचारा तो प्रथम तो कुछ समझ में न आया। अचानक एक पुस्तक मेरी दृष्टि में पड़ गई। उसमें लिखा था कि दुआतशा (~,....) दारू में कपूर को घिस घिस कर कपड़े में सात पुट दे सुखा कर, आग में

पानी ऊपर को कभी नहीं चढ़ता है ।

इसका कहना बहुत ठीक है । आशा पड़ती है कि आराम भी हो जावेगा । इस प्रकार विश्वास आने पर भगत जी की बड़ी महिमा होने लगी । यहाँ तक कि जो जो उसने माँगा वही वही उसको मिला ।

पर मेरे मन में इसका भी विश्वास न बैठा, सन्देह ही रहा । मुझे किसी पुस्तक की बात उस समय स्मरण हो आई कि, धुएँसे पानी ऊपर को खिंच सका है । मैंने उसी समय घर पर जा कर जो उसी प्रकार से कर के देखा तो वे खोर लपट ही पानी ऊपर को चढ़ने लगा और थोड़ी देर में सब पानी उसी भाँति चढ़ गया ।

दूसरे दिन मैंने पड़ोस की सब स्त्रियों को बुला कर यह सब कर के दिखाया तो वे बड़ी ही पछताईं कि, हाय ! हाय ! हमने वृथा ठगाया ।

एक स्त्री मेरे पड़ोस में कुछ अस्वस्थ हुई । उसकी मा के यहाँ इसका इलाज स्याने ही करते थे । यहाँ भी स्याना ही बुलाया गया । स्याने ने आ कर कहा कि, इस पर चुड़ैल है । इसका इलाज मैं अब के शुक्रवार को कर दूँगा, जिससे फिर न आवेगी ।

पर इतनी सामग्री मेरे देवता के लिये चाहिये, सामग्री सब उसको दी गई । उसने शुक्रवार को आ कर

सजा है। इस गुडगुड़ी में चूना भरा हुआ है। उसी का शब्द है। जब यह शब्द मेरा स्याने के कान में पड़ा तो वह घबराया और यह कह कर कि, यहाँ पीरजी की अवज्ञा होती है, ऐसे स्थान पर हम कुछ नहीं करना चाहते हैं, जाते हैं। सो यह कहता ही कहता बिना कुछ लिये दिये वहाँ से तत्काल चम्पत हुआ और सब से पहिले उस गुडगुड़ी ही को भगवाया। मैंने जब यह खेल कर के स्त्रियों को दिखाया तो बहुत ही प्रसन्न हुई कि, तूने हमको ठगी से बचा लिया।

इसी प्रकार एक पण्डित जी आये और कहने लगे कि, हमको देवी का इष्ट है, जो मनुष्य हम से कुछ माँगे तो वह ताम्रपत्र पर देवी की कृपा से उसको लिखा हुआ मिल जाता है। यही देवी के सिद्ध होने का प्रमाण है।

यह सुनकर बहुत से मनुष्य उस पण्डित के निकट गये और अपने अपने मन की उससे कहने लगे। जब देखा कि, मनुष्यों की श्रद्धा हमारे प्रति हुई है, तब उसने अपना ढोंग रचना आरम्भ किया। प्रसिद्ध कर दिया कि, आज देवी ने हम से कह दिया है कि, आज इच्छा पूर्ण होने का दिन है। इसलिये जिस किसी को जो माँगना हो सो हम से माँगो। यह सुन दो मनुष्यों ने उनसे याचना की। पण्डितजी ने कहा कि, ताम्रपत्र के टुकड़े हमारे पास

डालदो, जलेगा नहीं। मैंने जो इसको किया तो सच्चा निकला। तब तो मैंने यह करके स्त्रियों को दिखाया। तब वे कहने लगीं कि, जो पहिले से बता देती तो काहे को दस बीस रुपये का धन लुटा बैठतीं।

इसी प्रकार एक स्याने ने यह किया कि, मैं अपने पीर की चौकी बैठाये देता हूँ, जो पीर आज आ जावेंगे तो फिर तुम को कुछ भी भय किसी का न रहेगा। उसने क्या किया कि, बहुत लीप, पोत कर, बहुत सी मिठाई, फल, फूलों की माला इत्यादि मँगा कर बहुत कुछ प्रपञ्च रचा। फिर एक मिट्टी की गुड़गुडी अपने लड़के से मँगा कर वहाँ रक्खी और उसको ताज़ी करने के मिस से उसमें पानी सा कुछ भरा और एक फूल की माला उस पर उसने पहिना दी और कुछ गुन गुन करता रहा। इतने में उस गुड़गुड़े में से शब्द आने लगा। स्यानेजी बोले, लो पीरजी आ गये, जो माँगना हो सो माँग लो। मुझे ऐसी बातों का चाव था। यद्यपि मेरी सास मुझको ऐसी बातों के लिये नाहीं किया करती थी, पर मैं ऐसी जगह जाये बिना मानती न थी, अवश्य ही जाती थी। सो यहाँ भी पहुँच गई। यह सब मैंने देखा, पर पीर का विश्वास नहीं आया। सोचते सोचते स्मरण आ गया कि बिना बुझे हुए चूने में नींबू का रस डालने से ऐसा कौतुक हो

क्योंकि उनके झूठ और धोखे भली भांति तूने कर के बता दिये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि, यह निरे झूठे और ठग होते हैं। मोहल्ले की सब स्त्रियों ने फिर तो ऐसी बातें करना छोड़ दिया और ईश्वर के भजन और प्रार्थना के सिवाय और कुछ नहीं करने लगीं। कोई कभी किसी झाड़ा, फूँकी वा भगत का नाम न लेतीं। जो कभी किसी को कोई रोग होता, तो वैद्य वा हकीम की औषध करतीं और इन लोगों के फन्दे वा फरेब में न पड़तीं। मैंने उनको यह भी निश्चय करा दिया कि, स्त्रियाँ जो अपने ऊपर सौत वा चुड़ैल का विचार मान लेती हैं कि, जिससे उनके हाथ, पाँव अकड़ जाते हैं, दाँतों की बत्तीसी भिच जाती है वा इसी प्रकार के और कष्ट हो जाते हैं कि, अचेत पड़ी रहती हैं, बोलती नहीं हैं, दाँत बँध जाती है; सो मैंने उनको भली भाँति समझा दिया कि, स्त्रियों के बहुत से रोग ऐसे होते हैं, जिनसे उनकी यह दशा हो जाती है। जैसे स्त्रीचिकित्सा में मूर्च्छा रोग का वर्णन मैं कर चुकी हूँ और उनसे यह दुःख उठ खड़े होते हैं। इन रोगों का कारण यह होता है कि, जो स्त्रियाँ अपवित्र रहती हैं, उन्हीं को ऐसे ऐसे रोग हो जाते हैं वा जो क्रोध अधिक रखती हैं वा जिनके पति परदेश में रहते हैं वा जिनको काम की अधिक इच्छा होती है अथवा इसी प्रकार और

लाओ, हम उनको देवी के आगे आज रख दें, फिर तुम ले जा कर उनको आठ दिन तक धूप, दीप देना। आठवें दिन जो कुछ तुमको परिचय देवी की ओर से मिलना होगा, ताम्रपत्र पर लिखा हुआ पावोगे।

उन्होंने वैसा ही किया। ताम्रपत्र ला दिये। पण्डितजीने दूसरे दिन वे ताम्रपत्र उनको लौटा दिये। उनसे कह दिया कि, देख लो इन पर कहीं कुछ लिखा तो नहीं है। उन्होंने देखा, कुछ नहीं मालूम पड़ा। उन्होंने ले जा कर आठ दिन तक धूप, दीप दी। आठवें दिन जो देखा तो ताम्रपत्र पर उनकी इच्छानुसार लिखा हुआ मिला। मैंने भी देखा। बहुत सोचा विचारा, कुछ समझ में न आया। पीछे ज्ञात हुआ कि, पण्डितजी ने ताम्रपत्रों पर तेज़ाब से ये अक्षर लिख दिये थे। उस समय देखने पर प्रकट नहीं हुए—चार, पाँच दिन में वे अक्षर उभर आये। तब मैंने उन्हीं लोगों को कर के दिखा दिया। तब वे मन में बड़े ही पछताये कि, हम पण्डितजी की ठगाई में आ गये। ये लोग ऐसे ही ठगते हैं। जो पहिले से ज्ञात हो जाता तो कभी ठगाई में न आते।

जब ऐसी बातें मैंने कई बेर लुगाइयों को करके दिखादीं, तब उनको विश्वास होगया और कह दिया कि, आज से हम किसी स्याने, भोपे, भगत इत्यादिकी ठगाई में नहीं आवेंगी।

करने के लिये चुरा ले गई और कोई कहती कि, खाते में मेरे बालक को नज़र लगा गई। इसी प्रकार कोई दिन ऐसा नहीं होता था कि, दो चार जनी की आपस में लड़ाई न हो लेती हो।

इसी विचारसे कोई किसीके पास नहीं बैठती थी और न कोई दूसरी को पतियाती थी, वरन एक दूसरी से सदा लड़ती भिड़ती वा कहती सुनती ही रहती थी इसी कारण आपस की प्यार प्रीति सब जाती रही थी। आपस का उठना बैठना सब बन्द हो गया था। मनों में अन्तर और वैर पड़ गये थे। आपस में बुराई होने लगी थी, पर जब से उनका विश्वास बदला और परिचय मिला तो उनके विचार भी बदले और वे पहिली बातों को छोड़ बैठीं और आपस में एक दूसरे से क्षमा की प्रार्थी होने लगीं और अपनी पूर्व-मूर्खता पर पछताने लगीं कि, अन-समझ में कैसी कैसी बातें हो गई कि, आपस में व्यर्थ वैर-भाव उत्पन्न हो गया था। अब उन बातों को मन से थूक दो और परस्पर प्यार प्रीति से रहो सहो। ईश्वर सबका भला करेगा। वही तुम्हारे बालकों को पालता है और वही हमारों को। चीता हुआ किसी के मन का नहीं होता है। हमारे कर्मों के अनुसार ईश्वर हमको दुःख सुख देता है। आती है, तभी कोई मरता है। किसी के चाहे

और कारणों से हो जाते हैं ।

जैसे मिरगी का रोग होता है कि, मनुष्य बहुत देर तक अचेत पडा रहता है, पर फिर अपने आप चेत आने पर उठ खड़ा होता है और जब रोग का दौरा होता है, तो फिर वैसा ही हो जाता है । बिना औषध ही मिरगी रोगवाला एक वा दो घंटे में अच्छा हो कर चेत में आ जाता है । इसी भाँति कोई रोग ऐसे हैं, जिनमें दाँत बँध जाती है, बत्तीसी भिच जाती है । वे सब औषध करने से सके हैं, न कि इन झूँठी झाडा, फूँकी और

जब वे स्त्रियाँ इन सब बातों को समझ को छोड कर केवल ईश्वर के ऊपर भ कोई बात होती, ईश्वर की कृपा और देतीं और जो औषध करने योग्य रो चिकित्सा करतीं । पहिले तो उन की लडाइयाँ भी हुआ करती थीं लडके की उसने 'लट' काट ल बालक के ऊपर आँचल डाल कर गई, कोई लड़ती कि, मेरे तो बालक हो हो कर क्यों बैठ गई और छिगे, मेरे बालक की

करने के लिये चुरा ले गई और कोई कहती कि, खाते में मेरे बालक को नजर लगा गई। इसी प्रकार कोई दिन ऐसा नहीं होता था कि,-दो चार जनी की आपस में लड़ाई न हो लेती हो।

इसी विचारसे कोई किसीके पास नहीं बैठती थी और न कोई दूसरी को पतियाती थी, बरन एक दूसरी से सदा लड़ती भिड़ती वा कहती सुनती ही रहती थी इसी कारण आपस की प्यार प्रीति सब जाती रही थी। आपस का उठना बैठना सब बन्द हो गया था। मनों में अन्तर और वैर पड़ गये थे। आपस में बुराई होने लगी थी, पर जब से उनका विश्वास बदला और परिचय मिला तो उनके विचार भी बदले और वे पहिली बातों को छोड़ बैठीं और आपस में एक दूसरे से क्षमा की प्रार्थी होने लगीं और अपनी पूर्व मूर्खता पर पछताने लगीं कि, अन-समझ में कैसी कैसी बातें हो गई कि, आपस में व्यर्थ वैर-भाव उत्पन्न हो गया था। अब उन बातों को मन से थूक दो, और परस्पर प्यार प्रीति से रहो सहो। ईश्वर सबका भला करेगा। वही तुम्हारे बालकों को पालता है और वही हमारों को। चींता हुआ किसी के मन का नहीं होता है। हमारे कर्मों के अनुसार ईश्वर हमको दुःख सुख देता है।-मौत आती है, तभी कोई मरता है। किसी के चाहे

और कारणों से हो जाते हैं ।

जैसे मिरगी का रोग होता है कि, मनुष्य बहुत देर तक अचेत पडा रहता है, पर फिर अपने आप चेत आने पर उठ खड़ा होता है और जब रोग का दौरा होता है, तो फिर वैसा ही हो जाता है । बिना औषध ही मिरगी रोगवाला एक या दो घंटे में अच्छा हो कर चेत में आ जाता है । इसी भाँति कोई रोग ऐसे है, जिनमें दाँत बँध जाती है वा बत्तीसी भिच जाती है । वे सब औषध करने से दूर हो सक्ते हैं, न कि इन झूँठी झाड़ा, फूँकी और उतारे से ।

जब वे स्त्रियाँ इन सब बातों को समझ गई तब सब को छोड कर केवल ईश्वर के ऊपर भरोसा करने लगीं । कोई बात होती, ईश्वर की कृपा और इच्छा के ऊपर छोड़ देतीं और जो औषध करने योग्य रोग होता तो उसकी पूर्ण चिकित्सा करतीं । पहिले तो उन स्त्रियों में प्रकार प्रकार की लड़ाइयाँ भी हुआ करती थीं, कोई कहती कि, मेरे लडके की उसने 'लट' काट ली, कोई कहती कि, मेरे बालक के ऊपर आँचल डाल गई, कोई कहती कि, टोटका कर गई, कोई लडती कि, मेरे दुपट्टे का पल्ला काट लिया, उसके तो बालक हो हो कर मर जाते हैं, मेरे पास आ कर वह क्यों बैठ गई और मेरे कपड़ों से अपने कपड़े भिड़ा दिये, मेरे बालक की टोपी और कुर्ता टोट का

कोई नहीं मरता । ऐसा विचार और आपस में प्यार प्रीति मान कर रहने लगीं और उसी दिन से अपने बालकों के गंडे, तावीज़, बद्धी, यन्त्र इत्यादि सब तोड़ कर फेंक दिये और फिर कभी नाम न लिया।

बहुत सी स्त्रियाँ तो ऐसी समझीं कि, वे इस विषय में अपने पतियों को उलटी समझाने लगीं और उपदेश करने और चतुराई का बात निकालने लगीं। एक बेर का वृत्तान्त है कि, एक स्त्री के पति ने आ कर कहा कि, मथुरा के जिलम में सुरसान एक ग्राम है। वहाँ एक बाबाजी को हनुमान्जी ने स्वप्न दिया है कि, हम कोटा ग्राम में, जो मथुरा से दो कोस पर दिल्ली की सड़क पर है, चारसौ वर्ष से तालाव में दबे हुए पड़े हैं। हमको जा कर खुदवा और निकलवा। हम फुलां बुर्ज के कोने में हैं। बाबाजी ने आ कर वहाँ खुदवाया और उसी बुर्ज के कोने में दस वा ग्यारह हाथ नीचे पर हनुमान्जी निकले हैं। मैं भी देख आया हूँ। अभी पूरे निकले नहीं हैं, खुदाई हो रही है। बहुत आदमी देखने को नित जाते हैं और भेंट चढ़ाते हैं। बाबा जी से कोई बेटा माँगता है, कोई बिवाह की कहता है, कोई नौकरी चाकरी माँगता है। सो तू भी चल, दर्शन कर आवें। यह सुन वह स्त्री बहुत हँसी और अपने पति से कहने

लगी कि, आप तो बहुत भूले। जब हनुमान्जी आप समर्थ हैं कि, द्रोणाचल को उठा लाये थे, तो क्या इस तालाब में से आप न निकल सके, जो बाबाजी को स्वप्न दिया और चारसौ वर्ष से क्या करते रहे, तब से किसी को स्वप्न न दिया ? हे प्राणनाथ ! यह सब झूठी बातें हैं। बाबाजी ने यह सब अपने धन्धे की बात निकाली है। मुझे तो इसका कारण यह ज्ञात होता है कि, कुछ वर्ष हुए हों पचास, सौ वा अधिक, उस समय इन बाबाजी के गुरु या गुरु के गुरु इस स्थान पर रहते होंगे और इन हनुमान्जी की पूजा करते होंगे। उस समय का कोई ही आदमी कदाचित् उस गाँव में होगा, जो इस भेद को जानता हो।

इसलिये बाबाजी ने सोचा कि, चलो विख्यात कर दें कि, हमको स्वप्न हुआ है और इससे हम सिद्ध प्रसिद्ध हो जावेंगे और करामाती हनुमान्जी के कारण खूब पुजने लगेंगे। मन्दिर बन जायगा और हमारे भोजन चलेंगे, मौज उड़ेंगी। स्वप्न कुछ भी न दिया होगा। बात जड़ में इसी भाँति होगी। सो वहाँ जाना केवल धोखा खाना है। परमेश्वर का भजन करो, जो सदा सब स्थान में है और सब को देता है।

उस स्त्री ने इसी प्रकार कई वेर अपने पति को ऐसी बातों पर समझाया तब उसके पति के जी में भी बैठ गई।

एक बेर एक ब्राह्मण ने बस्ती से कुछ दूर पर अपने खेत में एक गड़हा खोद उसमें कुछ चने भर दिये और एक मूर्त्ति देवी की उसमें सीधी गाड़ कर दो दो हाथ मिट्टी ऊपर से डाल दी और प्रसिद्ध कर दिया कि, सावन के महीने में एक देवी मेरे खेत के किसी स्थान में निकलेगी, मुझको स्वप्न दिया है, पर यह नहीं बताया कि, किस दिन। लोगों ने उसकी बात को कुछ सत्य और कुछ झूठ माना क्योंकि वह देवी का भगत भी था। जब सावन के महीने में एक दिन बहुत मेह बरसा तो वह देवी की मूर्त्ति निकल आई। कारण क्या था कि, वर्षा का पानी जो उस गड़हे में गया तो चने भीज कर फूले और वह मूर्त्ति ऊपर को उकसी; पर केवल मस्तक ही मस्तक निकला। लोगों ने यह देख कर भगत की बड़ी बड़ाई की और कहना मानने लगे। सब ने मिल कर उसका मन्दिर बनवाना चाहा और कहा कि, देवी को खोद कर सब निकाल लें, पर ब्राह्मण ने कहा कि, नहीं, देवी की यही इच्छा है कि, इतनी ही रहें। उसकी इस बात को भी सब मान गये, पर वहाँ पर एक पुरुष मूर्त्तिपूजा न माननेवाला भी था। उसने इस भेद की खोज लगाई और पता लगा लिया और सब में कह फिरा। बहुतों ने उसकी बात मान खोद कर देखा तो सब भेद खुल गया।

भगतजी फिर तो उसी दम से मुख छिपाकर न जाने, रात ही को कहाँ चले गये और अपना घर बार भी छोड़ गये।

इस पापका यह फल हुआ कि, उनका घरबार (बाहर) खेत, धरती दूसरे लोगों ने ले ली। इसलिये बहिन! मैं तुझसे कहती हूँ कि, तू कभी ऐसी मूर्खता की बात में मत पड़ियो। मैंने तुझे थोड़े ही से में सब समझा दिया है। भीकना तो इसका बहुत बड़ा है, कहाँ तक कहूँ। दो चार दृष्टान्त तुझे बता दिये हैं। तू ईश्वर को छोड, कभी किसी अन्य देव को मत पूजियो। इन भूत, प्रेत, चाण्डाल, पिशाचों के फन्दे में मत पड़ियो। धर्म के विषय में मैं तुझसे यही कहती हूँ कि, तू इनसे बचियो और केवल अपने ईश्वर ही को पैदा करनेवाला, पालनेवाला, दुःख सुख का देनेवाला, मारने और बचानेवाला, हमारी प्रार्थना सुननेवाला, सङ्कट हरनेवाला, आनंद और सम्पत्ति, देनेवाला, विपत्ति और कष्ट में सहाय करनेवाला जानियो। वही एक परमेश्वर है, जो जगत् का पालनकर्ता है। दूसरा कोई पूजा वा वन्दना के योग्य नहीं है। स्त्री और पुरुष अपना मन कहीं और न भटकावें। केवल इसी की ओर ध्यान रक्खें और शरण लें।

स्यानों का कपट समाप्त।

नीति

हे बहिन ! आज मैं तुझको कुछ नीति भी बताये देती हूँ । तू यह नहीं जानती कि, नीति कहते किसको हैं, सो पहिले यही बताती हूँ ।

नीति उसे कहते हैं कि, जिसके अनुसार बर्तने वा काम करने से अपना बिगाड न हो । दूसरे की घातों से बची रहे । सब की भली और प्यारी बनी रहे । किसी से धोखा न खा जावे अथवा ठगा न रहे । अच्छी अच्छी बातों को ग्रहण करे और बुरी बातों को छोड अपना काम न बिगड़ने दे । चतुराई सीखे, मूर्खता तजे इत्यादि ऐसी ऐसी बातों के करने को नीति कहते हैं, सो यह नीति तीन प्रकार की है । इस प्रकार—

(१) आत्मिक वा धर्मनीति–जिससे यह अभिप्राय है कि, अपने को सुख मिले, अपनी उन्नति हो, दुःख से बची रहे और आदर मान पावे ।

(२) राजनीति–जिससे यह अभिप्राय है कि, किसी के छल और कपट में न आ जावे । राजदण्ड आदि से रक्षित रहे । चतुराई से समयोचित काम करे । अपना कार्य न बिगड़ने दे, जैसे बने बना ले ।

(३) सामाजिक नीति–ऐसे कार्य करने को कहते हैं कि, अपने को कोई बुरा न कहने पावे, वरन लोग

प्रशंसा करें और प्रेम प्रीति मानें। सो अब तुझको क्रम से ये तीनों बताती हूँ।

(१) आत्मिक वा धर्मनीति

दोहा

(१) (२) (३) (४)
द्वै निश्चै करि एक सों, चहुँ करि त्रय वस ध्यान।
(५) (६) (७)
पांच जीत छः जान अरु, सात छाँड सुख मान॥
सुन जाने सब धर्म को, तजै कुमति सुनमार।
सुन सुन ज्ञानी होत हैं, सुनन मोक्ष अधिकार॥
स्तुतिनिन्दा कोऊ करहिं, लक्ष्मी रहै कि जाय।
मरे कि जिये न धीर जन, धरें कुमारग पाय॥
क्षमातुल्य कोउ तप नहीं, सुख सतोष समान।
तृष्णा सम कोउ व्याधि नहि, धर्म दया सो ध्यान॥
पेट भरे अपमान सहि, सुख कर शोभा जाय।
तनदुखसहि जो धृतिगहै, नित नित श्रीअधिकाय॥

नारी

ससारिक सब सम्पदा, तिनमें उत्तम नारि।

---

(१) धर्म, अधर्म (२) बुद्धि (३) साम, दाम, दण्ड, भेद (४) मित्र, दाम, शत्रु (५) पञ्चइन्द्रिय (६) द्विविधा, विग्रह, सन्धि, आश्रम, आसन, अरि (७) काम, क्रोध, मद, लोभ, तृष्णा, मत्सर, मोह।

जानो पूरब पुण्य फल, मिलहि जाहि शुभनारि ॥
जो नारी शुचिचतुर अरु, भर्ता के अनुसार ।
नित्य मधुर बोले सरस, लक्ष्मी ताहि निहार ॥
पति के सँग जीवनमग्न, पति हरषे हरषाइ ।
नेहमयी कुलनारि की, उपमा कही न जाइ ॥
क्रूर भूप कलहनि तिया, और कुटिल परधान ।
ये तीनों इक छिनक में, करें नाश धन प्रान ॥
भूमि पर्यो जल शुचिभयो, पतिसेवक शुचि नारि ।
प्रजाक्षेमकर राज शुचि, विप्र सँतोष सुधारि ॥
विप्र धर्मीकृत दृढ़ भयो, धर्मी दृढ़ राजान ।
पतिसेवक नारी जु दृढ़, दृढ़ तृण थूल प्रमान ॥
नदीतीर जो तरु लग्यो, बिनु अकुश जो नारि ।
मन्त्रिहीन जो राज ये, निहँ विनशै निरधारि ॥
क्रियाहीन सब ज्ञान हत, नरहत मूढ़ गँवार ।
नायक बिनु सेना जु हत, नारी बिनु भर्तार ॥
असन्तोपि द्विज नष्ट है, सन्तोषी भूपाल ।
वेश्या नष्ट जु लाज से, लाज तजे कुलबाल ॥
नृप उदार मन्त्री सुघर, और पतिव्रत नारि ।
सदा सुखद ये तीन हैं, [illegible] विचारि ॥
पण्डित की [illegible] भई, [illegible] बसाइ ।
लाज तजे [illegible] नाइ ॥

सेवक शठ नारी कुटिल, नृपति कृपण खल मीत।
करो भूलि विश्वास जनि, इनकी प्रीति सभीत॥
नारी दुष्ट रु मित्र शठ, उत्तर दायक भृत्यु।
सर्प सहित गृहवास ये, निश्चय जानो मृत्यु॥
वचन पलट नृप कलहितिय, और चटोरा पूत।
ये तीनों दुख देत हैं, समझ लेउ मजबूत॥

पुत्र

शुभ तरुवर जो एकही, फूल्यो फले सुवास।
सब वनग्रामोदित कियो, सुकुल सुपूत सुपास॥
सुत गुणज्ञ हो एकही, सौ न होई गुणहीन।
एक चन्द्र की ज्योति ज्यों, सहस तार नहि कीन॥
कह जाये बहु सुतनते, शोक रु दुख के धाम।
कुल थामे सो एक ही, भल कुल को विश्राम॥
सोवे निर्भय सिंहिनी, इक सुपुत्र को पाय।
दस कुपुत्र होते भये, गदही लादी जाय॥
जैसे एक कुवृक्ष की, अग्निविपिनकर नाश।
तैसे एक कुपुत्र करि, होत सकल कुल नाश॥

विद्या

उत्तम विद्या लीजिये, यदपि नीच पै होय।
परो अपावन ठौर में, कञ्चन तजत न कोय॥

माता बैरिनि पिता रिपु, जिन न पढ़ाये बाल।
सभा माहिं शोभित नहीं, जिमियकनिकटमराल॥
ब्राह्मण को गुरु अग्नि है, विप्र वर्ण गुरु जान।
पत्नी के पति ही गुरू, विद्या सब को जान॥
विद्या देती विनय को, विनय पात्रता योग।
जिहिते धन धन से धरम, जिहिसुख भोगतलोग॥
जाके विद्या दान तप, धर्म शील नहिं ज्ञान।
सो नर धरती भार है, घूमत मृगा समान॥
विद्या युत सुबरण सदृश, जहाँ जाइ तहँ मान।
मूर्ख दुखी निज नगर में, चाहे देश बिरान॥
विद्या धन सम और नहिं, जग में कहत सुजान।
विद्या ही से मनुज लघु, होवें भूप समान॥

सोरठा

धन करि के जो हीन, हीन न ताको कहत बुध।
विद्या बुद्धि विहीन, हीन सोई सब वस्तु में॥
अति उताइलो होइ, गुरु सेवा कबहुँ न करे।
चहै बड़ाई सोइ, ये विद्या के तीन अरि॥

सत्य

सत्य स्वर्ग सोपान, जैसे बोहित उदधि को।
तासम और न जान, जानत सकल सुजान हैं॥

दोहा

जहाँ सत्य तहँ धर्म है, जहाँ सत्य तहँ योग।
जहाँ सत्य तहँ श्री रहत, जहाँ सत्य तहँ भोग॥
सत्य नाव करि जो चढ़े, यह भवसिन्धु अपार।
आप बचे अरु और को, देवे पार उतार॥

क्षमा

उत्तम धन छाँड़े क्षमा, हिये धरे अति रोष।
जान बूझ यह आपको, बड़ो लगावत दोष॥
नर का भूषण रूप है, रूपहु को गुण जान।
गुण को भूषण ज्ञान है, क्षमा ज्ञान को जान॥

सोरठा

क्षमावन्त को जान, लोग कहत असमर्थ हैं।
सो यह दोष, न मान, क्षमिबे को धन जानिये॥

संतोष

दोहा

हे संतोष सुसम्पदा, हमें करो धनवान।
यद्यपि जगमें बहुत धन, नहिं कोउ तोहिं समान॥
नहिं लखपति नहिं कोटिपति, नहिं कुबेर को होइ।
सन्तोषी जो पाइ सुख, रहे कौन मे सोइ॥

गर्व

श्वान लेत लोग्यो लपकि, तापर करत गरूर।
सौ को दै भक्षण करत, वीर धीर गजपूर॥
जाको जौ मुट्ठी नहीं, होत वहै नृपराज।
छोटे मोटे होत सब, सोच गर्व नहिं काज॥

मृत्यु

इन्द्र भये धनपति भये, भये शत्रु के शाल।
कल्प जिये कोऊ गये, अन्त काल के गाल॥
जो जन्मत सो मरत है, यामें नहिं संदेह।
चहे आज चहे सौ बरस, पीछे फिर क्या नेह॥
कोउ परसों नरसों कोऊ, मरत एक कोउ आज।
रहै न कोउ चिरकाललौं, यहिविधिजगतसमाज॥

चौपाई

जिहिदिन गर्भ पर्यो यह प्रानी। मौतहुतादिनतेलिपटानी॥

आराधना

दोहा

फिरत बैठत उठत, सोवत जागत आदि।
ताको नित ध्यावत रहो, जो प्रभु परम अनादि॥
ब्राह्ममुहूरत में उठहु, करहु गुरू को ध्यान।
भजन करहु जगदीशको, जाते सब कल्यान॥

धन

सोरठा

दान भोग अरु नास, तीन होत गति द्रव्य की ।
नाहिंन द्वै को बास, जहां तीसरो बसतु है ॥
दुख आरत अरु दीन, नास्तिक उन्मद आलसी ।
इन्द्रिन के आधीन, ता घर रहै न लच्छमी ॥

दोहा

दान भोग से हीन जा, कृपण करे धन गोप ।
दण्डयोग सो अधम नर, करे नृपति तेहि लोप ॥
अमिल द्रव्यहू यत्न ते, मिले सुअवसर पाय ।
सचितहू रक्षा विना, स्वतः नष्ट ह्वै जाय ॥
क्रूर कर्म ते होत धन, सकुल विनाशे हाल ।
सुधरम ते धन जोरिये, सो निबहै बहु काल ॥
द्वै प्रकार ते होत है, धन को नाश निदान ।
दानपात्र अपमान कर, देत अपात्रहि दान ॥
द्रव्य पायके देत नहि, और करे नहि भोग ।
निश्चय ताकी सम्पदा, होत और के योग ॥

विभव

और मदन ते विभव मद, अति पापिष्ठ लखाय ।
रनरै अपने समय, यह बिनु विपति न जाय॥

उद्यम सयम चतुरई, करै समय लखि काज।
अप्रमाद धीरज सुमति, विभव मूल महराज ॥

सुख

सुतवश है, पुनि भाक्तिअरु, महज वचन वश नारि।
अल्प विभव सतोषपन, यहै स्वर्ग निर्द्धारि॥
भोग्यरु भोजन शक्ति पुनि, अरु सुन्दर भरतार।
गृह विभूति दातारपन, पट मोटे तप धार॥
पुत्रि चरित तिय हित करन, दुखसुख मित्रसमान।
मनरञ्जन तीनो मिले, प्रत्य पुण्यहि जान॥
बहुसुत विद्याशील बल, कुल धन सत्य स्वरूप।
मित्र भाषिवो शूरता, स्वर्ग जान दस भूप॥
असतोष जाके सदा, क्रोधी शङ्कावन्त।
ईर्षा सहित मलीन मन, पराधीन जीवन्त॥
ये छः नर या लोक में, लहैं नहीं सुख साज।
दुःखी नित्यहि जानिये, महाराज कुरुराज॥

पूर्व पुण्य

वन पुर है जग मित्र है, कष्ट भूमि है रत्न।
प्रत्य पुण्यहिं पुरुष के, होत इते विन यत्न॥

इन्द्रियाँ

पाचो इन्द्रिय मन सहित, जीत करै वश कोय।

पाप न लहै अनर्थ तिहि, करो कहाँ ते होय ॥
नर के इन्द्रिय पाँच जो, एक खुले नरवीर।
बुधि ताही मग स्रवत है, मशकछिद्र ज्यों नीर ॥
जीभ न ताके वश रहे, होत दुखी मति हीन।
जिमि कटियाके मास लागि, प्राण तजत है मीन ॥

(१) चौपाई

गज कुरंग झष भृंग पतंगा। विनशैं एक एक के संगा ॥
जो एकहि ये पाँचों लागें। ताको क्यों न आपदा पागें ॥

दोहा

तजि इन्द्रियप्रिय विषय को, प्राणवृत्ति दृढ़ धारि।
क्षुधा विकलता से बचे, नहि मन बढ़े विकारि ॥
क्रोध कबहुँ नहि कीजिये, होइ क्रोध ते हानि।
हित अनहित नहि लखिपरत, है यह दुखकी खानि॥
काम क्रोध अरु लोभ ये, खुले नरक के द्वार।
ताते इन तिनहून को, करे सदा परिहार ॥

चौपाई

काम क्रोध ये मच्छ कराला। रुकत न अल्पबुद्धि के जाला॥

---

(१) हाथी काम इन्द्रिय के हिरण श्रोत्र (कान) इन्द्रिय के मीन रसना इन्द्रिय के भ्रमर घ्राण के और पतंग चक्षु इन्द्रिय के वश हो मर प्राण तज देते हैं क्योंकि इनमें यही एक एक इन्द्रिय प्रधान है, पर मनुष्य में पाँचों इन्द्रिय प्रधान हैं। यदि उनके वश में पड़ जायगा तो कुछ भी ठीक न रहेगा। इसलिये इन्द्रियों ही को अपने वश में रखना उचित है।

निकसत इन्द्रिय छिद्रन पाई । याको ज्ञान गिलत सत माई॥

दोहा

दैव विप्र राजा रमणि, रोगी वृद्धो बाल।
निग्रह काजे क्रोध को, इनसों सदा नृपाल॥

आत्मरक्षा

गुरु छाया अरु तात की, बड़े भ्रात की छांहि।
राजमान छाया गहर, दुर्लभ ये जगमांहि॥
आत्मा को आधार अरु, साक्षी आत्मा जान।
निज आत्मा को भूलि हू, करिये नहि अपमान॥

आलस्य

आलस वैरी बसत तन, सब सुख को हर लेत।
त्योंही उद्यम बन्धु सम, किये सकल सुख देत॥
कर्म हेतु हरि तन दियो, ताते कीजे काज।
दैव शाप आलस करे, ता को होइ अकाज॥
श्रम कीने सुख मिलत है, बिन उपाय नहि भोग।
दैव दैव करि आलसी, भोगत हैं दुख सोग॥

सोरठा

आलस तजि मतिमान, बुद्धि मूल जो विजय को।
गहिये करि शुभ ज्ञान, यहमतिमनुमहराजकरि॥
आलस दोष महान, देखा फल कैसो भयो।

जाने ऊँट अयान, मरण लह्यो निज करम ते ॥

परिश्रम

दोहा

श्रम से विद्या पाइये, श्रम ही से धन होय ।
श्रम ही से सुख होत है, श्रम बिनु लहै न कोय ॥
श्रम ही से अधिकार पुनि, लहत मनुज अधिकाय ।
बिनु श्रम कारज होय नहि, श्रम से दुःख नसाय ॥
श्रमी पुरुष सम्पति लहै, श्रमी सुधन अरु धाम ।
श्रम ही से या जगत में, ज्ञान लहै अभिराम ॥
श्रम कीने धन होत है, धन ही सुख को मूल ।
व्यवसायी अरु चतुर नर, उद्यम को मत भूल ॥
द्वै जन ये या जगत मे, लहै न शोभा साज ।
उद्यम तजे गृहस्थ अरु, यती करे सब काज ॥
कंकण ते सोहत न कर, कुण्डल ते नहि कान ।
चन्दन ते सोहत न तन, गुण ते शोभित जान ॥

ग्राह्यगुण

अनसूया धीरज क्षमा, अनालस्य अरु दान ।
शान्ति सहित इन छः गुनन, तजे न नर किछु आन ॥
कुल कृतज्ञता दान दम, बुद्धि पराक्रम पाठ ।
यहु सुनियो बहु भाषियो, तेज बढ़ावन आठ ॥

क्रोध हर्ष के वेग को, जे थाँभत निज चित्त ।
मोह न लहे विपत्ति में, तहाँ बसत श्री नित्त ॥
अनसूया धीरज क्षमा, मृदुता सरल स्वभाउ ।
मित्रन को सन्मान गुन, इनते बाढ़त आयु ॥
आयुर्बल यश सौख्य धन, पुण्य पुज़ादि प्रभाव ।
वृद्ध होत जेहि कर्म ते, सो सेवहु करि भाव ॥
विद्या उत्तम कुल जनम, बहुधन रूप उदार ।
नीचन को उन्माद कर, संतहि को शृङ्गार ॥
तुलसी या संसार में, चार वस्तु है सार ।
सत्य वचन आधीनता, हरिसुमिरण उपकार ॥

सोरठा

धर्म अर्थ अरु काम, भली भाँति सेवत जु नर ।
ये तीनों अभिराम, दुहू लोक तिनको मिलत ॥

त्याज्यदोष

तजत बडे हू अर्थ, निरखि अनीति अधर्मयुत ।
सुखरी दुःख समर्थ, छोड़त अहि ज्यों काँचुली ॥

दोहा

है कंटक तीक्षण महा, देह सुखावन अर्थ ।
अधन करे चितकामना, कोप करे असमर्थ ॥

हरै परायो द्रव्य अरु, परपतिहित अनुकूल।
छाँडे सेवा करत को, ये तीनों क्षयमूल॥

पण्डित के गुण

चाह न करे अलभ्य की, गत को सोच न होइ।
मोह न लहे विपत्ति को, पण्डित कहिये सोइ॥
गुण में धरे न दोष चित, सजे भूत करि काज।
रजै आरज कर्म ते, सो पण्डित महराज॥
पाय बड़ो ऐश्वर्य अरु, विद्या अर्थ समाज।
विनय शील छोड़े नहीं, सो पण्डित महराज॥

सज्जन के गुण

सोरठा

सत्पुरुषन की रीति, सम्पति में कोमलहि मन।
दुख ही में यह रीति, वज्र समानहि होत तन॥

दोहा

शशिकुमुदिनिप्रफुलितकरत, कमलविकासत भानु।
बिनु मांगे जल दत घन, त्योंही सन्त सुजानु॥
पुहुप गुच्छ सिरपै रहे, कै सूखे वन माहिं।
मान ठौर सत पुरुष रहि, कै सुख दुख धन माहिं॥
लोक हेतु धारत धरा, निर्भर वृक्ष पहार।
कहिये सोइ विधि साधु को, करै सदा उपकार॥

आवे अरि जो दॉव मे, निश्चय हनिये ताइ।
दया न उर मे कीजिये, फिर वह बल चढ़िजाइ॥
यद्यपि अरि मृदु हुइ रहे, नहिं कछु लखे निवाह।
जबतक दॉव न आवही, मिटे न अन्तस डाह॥

नीति

सुख दिखाइ दुख दीजिये, खल सों लॅरिये काहि।
जो गुड़ दीन्हे ही मरे, क्यों विष दीजे ताहि॥
जो रीझे जिहि भॉति सो, तैसे ताहि रिझाव।
पीछे युक्ति विवेक सो, अपने मत पर लाव॥
विपति धीर सम्पति क्षमा, सभा माहिं शुभबैन।
युधिविक्रम यश माहिं रुचि, ते नरवर गुण ऐन॥

सोरठा

जो बर्नै जिहि रीति, तासों त्योंही वर्तिये।
शुद्धसाधु सो प्रीति, कपटी सों कीजै कपट॥

दोहा

अपने अपने लाभ को, बोलत बैन बनाय।
वेश्या वरस घटावही, योगी वरस बढ़ाय॥
काम परे ही जानिये, जो नर जैसो होय।
विन ताये खोटो खरो, गहनो लखै न कोय॥
विपति बराबर सुख नहीं, जो थोडे दिन होइ।
इष्ट मित्र बन्धू जिते, जानि परें सब कोइ॥

समय न चूके नै चले, दान यथाविधि देइ
भलीभाँति सुख ते करे, स्ववश सबै करि लेइ ॥
बडे वंश जनम्यो जु नर, पावक विप्र भुजग ।
ये कबहूँ न अपमानिये, अमित तेज इन सग ॥
गूढ़मंत्र कोऊ करे, तहाँ न जइये जान ।
कबहुँ न कीजै नीच सो, गूढ़मत्र हित मान ॥
राजा रमणी अग्नि गुरु, शत्रु सर्प सुख भोग ।
आयुध को विश्वास जिय, करत न पण्डित लोग ॥
मूरख मीत अमीत अरु, पण्डित चञ्चल चित्त ।
इनसों कबहूँ न मन्त्र को, भेद भाषिये मित्त ॥
जिहिनरकोकुलशीलअरु, विद्या जानी नाहिं ।
कवि तिनके विश्वास को, करे कदैभू नाहिं ॥
मुदित मिलापी जानि के, मतकर खुगल विश्वास।
बहुदिन सेवो सर्प ज्यों, अन्त डसे गहि गास ॥
कारज आछो अरु बुरो, कीजे बहुत विचार ।
बिना विचारे करतही, होत रार अरु हार ॥
बचक बेश्या नानियाँ, ये बकार दुख देत ।
तुरत नाश धन तन करें, तनिक द्रव्य के हेत ॥
बनिता बपु बाणी बिनय, बस्तर बुद्धि बिबेक ।
ये बकार सुख देत हैं, बुधजन कह्यो सटेक ॥
जहाँ न दीखे पच ये, तहाँ न कर अनुराग

भय लज्जा अरु लोक गति, चतुराई अरु त्याग॥
भले बुरे जहँ एक से, तहाँ न बसिये जाय।
ज्यों अन्याय पुर में बिके, खर गुरु एकै भाय॥
काम परे चाकर परखि, बन्धु दुःख में काम।
मित्र परखि आपद समय, विभवक्षीण लखि बाम॥

सोरठा

जो देखे नहिं जीत, यद्यपि भूमि सुहावनी।
तजे सकल यह रीत, आतम रक्षा के लिये॥

वचन

दोहा

लागत तीर शरीर में, तेऊ घाव पुर जात।
कुवचन क्षत क्यौंहु न पुरत, दीसत नाहिं पिरात॥
सजै न उद्धत वेष अरु, मुख ते कटु उचरै न।
सो सब को प्यारो लगै, निज विक्रम बल ऐन॥

समानता

कीजै आप समान सों, वैर प्रीति व्यवहार।
कबहुँ न कीजै नीच सों, चरचा कथा विचार॥

कीर्ति

जे न करत कबहूँ कलह, अल्प प्रयोजन अर्थ।
तिनकी कीरति जग बढ़त, रञ्च न लेत अनर्थ॥

नम्र चतुर मित मान नर, सरल कृतज्ञ सुकोइ ।
लहे बड़ाई जगत में, यद्यपि निर्धन होइ ॥

शील

सकटहु मे ना करे, जो अनकरनो काज ।
ताको आरज शील कवि, भाषत हैं भट्राज ॥
पर दुख लखि हरषे नहीं, निज सुख मे न सुखाय ।
आरज शील सुजानिये, कबहूँ नहि पछिताय ॥

साक्षी

वैद्य कुचाली चोर ठग, शत्रु मित्र विख्यात ।
व्योपारी जु जहाज को, साक्षी करै न सात ॥

रक्षा

दीन वृद्ध बालक त्रिया, बिन अपराध अनाथ ।
तिनकी रक्षा कीजिये, वित्त बुद्धि बलसाथ ॥

बुद्धिमानी

जाति धर्म अरु समय गति, जानै देशाचार ।
अगली पिछली बात को, जो चित करे विचार ॥
होनहार आगम लखै, जानै सब व्यवहार ।
जहाँ जाइ तहँ होइ वह, सब ही को सरदार ॥
जहँ मूरख को मान है, पण्डित जन अपमान ।
बसत न ऐसे देश में, जो नर बुद्धिनिधान ॥

गुण

जहाँ न जाको गुण लहै, तहाँ न ताको काम ।
धोबी बसिके कह करे, दीगम्बर के गाम ॥
गुण पूछो तजि रूप को, गहो शील कुलचाल ।
गहो सिद्धि विद्या लहो, विना भोग धनपाल ॥
मुग्ध पूज्य निज धाम में, प्रभुपूजित निज बग्र ।
भूपति पूज्य स्वदेश में, पूजत गुणी समग्र ॥
गुणगुणज्ञ सँग होत गुण, निर्गुणीन सँग दोस ।
जिमि नदीन को मिष्टजल, होत समुद्र न श्रोस ॥

त्याज्यदोष

मद्यपान जूवा कलह, अरु बहुतन सो वैर ।
अरु करिवो तिय पुरुष को, अन्तर चुगली पैर ॥
पतिपत्नी को वाद अरु, नृप को दोष कुचाल ।
अनकरने इतने कहे, कुरुकुलतिलक नृपाल ॥

बल

धर्म अल्पहू सेइये, सूक्षम गति उर आनि ।
निर्बल पै बल साजिये, सो बल अल्प बखानि ॥
शुश्रूषा बल तियन को, नृपबल दण्ड बखान ।
दुष्टन को बल मारिबो, क्षमा साधुबल जान ॥

अधमनर

रोलाछन्द

मलिन करम नित करे सदा झगरोई ठाने।
बहुत जो बोले झूठ भक्ति कबहुँ न उर आने॥
करे नीच सों नेह चतुर आपहि अति माने।
इनकी तजिये सेव इते नर अधम बखाने॥

दुष्ट

दोहा

दुर्जन को विश्वास नहि, कबहुँ न कीजै भूल।
बर विनाश को करत है, यदपि होइ अनुकूल॥
मिष्टवचन कहि आदिमें, पीछे करे विनास।
ऐसे नर के सङ्ग तें, लहि अपयश उपहास॥

सोरठा

फूले फले न बेत, यदपि सुधा बरसहिं जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचिसम॥

दोहा

मूरख को उपदेश ते, बढ़त कोप नहि शांति।
दूधपान हू ते बढ़त, विषधर विषबहु भाँति॥
काव्यशास्त्र आनन्द ते, रसिकन के दिनजात।
मूरख के दिन नींद में, कलह करत उत्पात॥

दुःखद

अर्थ धर्म को छाँड़िके, इन्द्रिन के वश होइ।
वाम धाम धन प्राणको, नातु लहै नर सोइ॥

संग

जैसी संगति सेइये, बसिये जैसे वास।
जैसे नर चाहैं भयो, तैसो होइ प्रकास॥
उत्तमही को सेइये, मध्यम समय प्रमान।
अधम न कबहूँ सेइये, जो चाहै कल्यान॥
करत नहीं उपदेश कछु, तऊ करो सतसंग।
सत्पुरुषन की बात हू, देत चित्त को रंग॥
सहवासी वश होत नृप, गुणकुल रीति विहाय।
नृपयुवती अरुतरुलता, मिलत प्राय सँग पाय॥
संगति कीजे साधु की, जो पण्डित बुधिमान।
साधारणहू वचन मे, निकसत मुख ते ज्ञान॥

सोरठा

बाँटि न खाय कठोर, लज्जा हीन कृतघ्न नर।
दुष्ट आतमा चोर, इनको सग न कीजिये॥

मित्र

दोहा

मूरख क्रोधी साहसी, अरु अभिमानी होइ।
धरम रहित सों मित्रता, पण्डित करे न कोइ॥

लोभ

जैसे ऊपर भक्ष लखि, मछ् वसी विधि जाल।
तैसे लोभी अर्थ तकि, लखे न आतमघात॥
लोभ महारिपु देह में, सब दुःखन की खान।
पापमूल अरु प्राणहर, तजें ताहि मतिमान॥
लोभ विवश नर करत है, मित्र विप्र गुरुघात।
देशधर्म कुलधर्म अरु, तजें तुरत पितुमात॥
क्रोध काम अहंकार ते, लोभ महाबलवान।
जाके वश ह्वै तजत हैं, दुर्लभ प्रिय नर प्रान॥

तृष्णा

श्वेत चिकुर तन दशन बिन, भयो वदन ज्यों कूप।
गात सबै शिथिलित भये, तृष्णा तरुण स्वरूप॥

द्यूत

सोरठा

सुनी पुरातन बात, जुवा कलह को मूल है।
फाँसी हू में तात, ताते जुवा न खेलिये॥

फुटकर

दोहा

उत्तम नर अपमान ते, डरपत शील समुद्र।
मरिबे ते मध्यम डरे, वृत्तिनाश ते क्षुद्र॥
उपजत श्री शुभ कर्म ते, बढ़त बुद्धि ते सोइ।
चतुराई ते मूल गहि, संयम ते दृढ़ होइ॥
रूप तेज बलवान वर, श्रीशुचि परम उद्योत।
तिय सराहि सुकुमारता, स्नान किये द्युति होत॥
बुद्धि वृद्धि वय वृद्धि अरु, विद्यावृद्धि सुजान।
द्रव्य वृद्धि इनको करत, मूढ़न लों अपमान॥
वन में रन में दुर्ग में, विषम आपदा माहिं।
जाके धीरज मुख्य है, तिनको कछु भय नाहिं॥
या जग में द्वै कर्म करि, नर पावे अति चैन।
आश्रय करै न नीच को, कहे न करुये बैन॥
सुलभ पुरुष संसार में, कहें सुहाती बात।
दुर्लभ अप्रिय पथ्यवच, वक्ता श्रोता तात॥
जो ध्रुव वस्तुहि छोड के, सेवत अध्रुव बात।
अध्रुव प्रथमहि नष्ट है, ध्रुवहु नष्ट है जात॥
आवै समय विनाश जब, बुद्धि होत विपरीत।
हित शिक्षा भावे नहीं, प्यार लगे अनरीत॥

बिना विचारे करत हैं, जो नर मिथ्या बात ।
तिन कर घटत विश्वास सब, फिरि पीछे पछितात॥

सोरठा

खीझे बिन अपराध, रीझे बिन कारण सुनर ।
तिनके शील अगाध, शरदकाल के मेघ जिमि ॥

इति राजनीति ।

---

(२) सामाजिक नीति

दोहा

जो कहुँ सब प्राणीन सों, होय सरलता भाव ।
तीरथ जल अभिषेकते, ताको अधिक प्रभाव ॥
जिनके गृह धन तिनहि के, मित्र रु बाँधव लोग।
जिनके धन तेई पुरुष, जीवन तिनको योग॥
हाथ रसोई मातु के, गृह कारज सुत थाप।
धर्म काज भार्या जु वश, करि देखे नित आप॥

ग्राह्यगुण

आदर दै विद्वान को, गुण को कर सन्मान ।
प्रिय वाणी अरु न्यायरत, करो सुपात्रहि दान ॥
शुष्क बैर हिंसा वृथा, निन्दा पर की बात । -
राजधर्म को सोच को, तजहु व्यर्थ जो बात ॥

वृद्धन की सेवा करत, सब सों प्रणत सुभायु।
ते पावत जग चार फल, यश बल कीरति आयु॥

त्याज्यदोष

निन्दा चुगली झूठ अरु, परदुखदायक बात।
जे न करहिं तिनपर द्रवहिं, सर्वेश्वर सब भाँत॥

सम्पत्ति

सम्पति सचय कीजिये, सम्पति से सुख जान।
जग में सम्पति से सुयश, सम्पति धर्म निदान॥
सम्पतिबिनकुलधर्म नहिं, सिद्ध काज नहिं होइ।
लहे दीनता जग विषे, दुखी होइ पुनि सोइ॥
सम्पति ही से शत्रु सब, वश में करत सुजान।
सम्पति से धीरज रहे, सम्पति से कुलकान॥

पराधीनता

गंगातट, गिरिवर गुहा, उहाँ कहाँ नहि ठौर।
क्यों ऐसे अपमान सो, खात बिराने कौर?
सूखी रोटी है भली, टहल किये जो पाउ।
दानी के पकवान पर, नहि चित कबहुँ चलाउ॥
जो पर भोजन देखि के, राखे निज अभिलाख।
सोवत जागत रातदिन, सो दुख पावे लाख॥

शोभा

उत्तम कुल आचार बिन, करे प्रणाम न कोइ।
कुलहीनो आचारयुत, लहै बड़ाई सोइ॥

सत्सङ्ग

जड़ताई मति की हरत, पाप निवारत अंग।
कीरति सत्य प्रसन्नता, देत सदा सत्संग॥

प्रीति

बिनशत बार न लागही, ओछे जनकी प्रीति।
अम्बर डम्बर साझ के, अरु बारू की भीति॥

छन्द दोधक

नीच की प्रीति की रीति यही है।
जौलों प्रयोजन तौलों सही है॥
कारज सिद्ध भयो जब जाने।
रंचकहू उर प्रीति न माने॥

दोहा

ओछे नर की प्रीति की, दीनी रीति बताय।
जैसे छीलर ताल जल, घटत घटत घटिजाय॥
जहाँ बैर अति बढ़त है, तहाँ न प्रीति संयोग।
पूँछ शोक नित सर्पको, गायक को सुत सोग॥
धन देके तन राखिये, तन दे रखिये लाज।

धन दे तन दे लाज दे, एक प्रीति के काज ॥

कुलकलह

कुलकलेशसों जगत मे, सुखी भयो नहि कोय।
करि विरोध सुग्रीवसों, गयो बालि जिमिखोय।
कुलकलेशसों निशिदिना, सदा मानिये शङ्क।
ननिक विभीषण के कलह, क्षण मे टूटी लङ्क।

उपकार

अष्टादशो पुराण मे, कियो व्यास निरधार।
महापाप अपकार है, महापुण्य उपकार।

धन

मित्रनारि सुतजन सुहृद, जन निर्धन तजि देह।
पुनिधनलखि आश्रय लहे, धनहि पुरुषको नेह।
विभव पूजिये लोकमें, नहिं शरीर को चाहि।
पुरुष श्रेष्ठ चाण्डालहू, जाके धन घर माहि।
सुतबिनघर शून्यो जुगिन, बिन बांधव पुनि देश।
मूरख को शून्यो हृदय, निर्धन को सब देश।
आदर आसन भूमि जल, कहियो मधुरी बानि।
होत सन्त के दरश ते, कबहुँ न धनकी हानि।

सज्जन

अमृतभरे तन मन वचन, निशिदिन जग उपकार

पर गुण मानन मेरु सम, विरले जन संसार ॥
उत्तम नर विपदा सहे, सदा पराये हेतु ।
जैसे गाँड़ो ईख को, कटि कटि के रस देतु ॥
विपति परेहू सुघर नर, निजगुण नाहिं छिपाय ।
जरत दूध जिमिआगसों, रहत मलाई छाय ॥
भले पुरुप परकाज को, दुख सहिलेत अनेक ।
डकै तूल दुखपाय बहु, परतन सहत विवेक ॥
नम्र होत फल भार तरु, जलभरि नम्र घटासु ।
त्यों सम्पति करिसतपुरुप, नवे सुभाव छटासु ॥

दुष्ट

अपने हित के हेतु जो, परहित करत विनास ।
सो नर दुर्जन जानिये, करैं जगत में त्रास ॥
सर्प स्वभाव कठोर अरु, निन्दक पापी निष्ट ।
धूर्त विरोधी कुमति नर, ये पावत बहु कष्ट ॥
तृणहू उतारे जन गनत, कोटि सुहद उपकार ।
प्राण दिये हू दुष्ट जन, करत वैर व्यवहार ॥
दयाहीन बिनुकाजरिपु, तस्करता परिपुष्ट ।
सहि न सकत सुख बन्धुको, सो स्वभाव सो दुष्ट ॥
भरे उमँग खोटे पुरुप, पर अकाज को धाय ।
जिमि माखी घृतपात्रको, तन तजि तुरत नसाय ॥

कुटिल नरनमें कुटिलता, श्वानपूंछ जिमिजानि ।
गड़ी रहे सौ बरस लौं, पूँछ न छोडत बानि ॥
नवनि नीचकी अतिबुरी, तनिक न इन पतियाय।
जब कमान अतिनवत है, तुरत तीर लगिजाय ॥
हस्ती हाथ हजार तज, घोडा शत हथ दूर ।
सिंगवाले दश हाथ तज, दुर्जन देशहि दूर ॥
ऊपर दीखे सुमिल सो, भीतर अनमिलआँक ।
कपटी जन की प्रीति है, खीरा कीसी फाँक ॥
विष तक्षक के दन्त में, माखिन के सिरभंग ।
बीछिन के पूँछन बसै, दुष्टन के सब अंग ॥

कृतघ्न

मेटे कृत उपकार को, और करे अपकार ।
सोई पतित कृतघ्न नर, दुर्गति लहे अपार ॥
चोर जुवारी अधम खल, लम्पट की गति मान ।
नहिं कृतघ्न की होत गति, यह निश्चय कर जान ॥
जो तृण सम उपकार को, मानत सदृश पहार ।
ऐसे उत्तम जीव की, होय न कबहूँ हार ॥

दुःखद

रूप शील कुल वित्त बड़, सुख शोभा सत्कार ।
देखि और को जो कुढ़ै, ताको रोग अपार ॥

बल

ब्रह्मज्ञान को ब्रह्मबल, तप तपसी बल तात ।
गुणवन्तन को बल क्षमा, दुष्टन को बल घात ॥
कैसे निबहे निबल जन, करि सबलन सों वैर ।
जैसे बस सागर विषे, करत मगर सों वैर ॥

फुटकर

सज्जन जनबसि करनको, रची विधाता मौन ।
कूरन हू को आभरण, मौन सदा सुख भौन ॥
वृद्धन को सेवै न जो, धनचित कुलहि न शुद्धि ।
ताकी प्रीति न होइ थिर, जाकी चञ्चल बुद्धि ॥
वचन पारखी होउ तुम, पहिले आप न भाख ।
अनपूछे नहि भाखिये, यही सीख जिय राख ॥
पाँच सात की बात को, करत न जो हित मानि ।
सो पीछे पछितात है, जिमि मन्दोदरिरानि ॥
जो बिन पूछे हठ करे, सो पीछे पछिताय ।
लाख भाँति बोधन करे, जियकी जरनि न जाय ॥

सोरठा

चञ्चल चित्त निहार, ऐसे निर्दय पुरुष को ।
बुद्धि विलोकि विचार, पण्डित दूरहि ते तजत ॥

नीति समाप्त ।

रीति त्योहार और व्रत

बहिन मोहनी ! जो मैंने तुझको बताने को कहा था सो तो बता चुकी, अब वह बताती हूँ कि, जिससे यह ज्ञात होजाय कि, जो रीति-भाँति मैं करती हूँ, उससे क्या लाभ है। वह रीति क्यों नियत की गई, क्यों प्रचलित हुई, उसके न करने से कोई हानि भी होती है कि, नहीं और इस रीति का ठीक अभिप्राय क्या है ?

त्योहार क्या वस्तु है ? दिन तो सब एक से हैं, पर इस दिन को ऐसा त्योहार क्यों माना ? किसी किसी त्योहार को जो व्रत करते हैं, सो क्यों और इतने व्रत भी नियत किये गये हैं सो क्यों ? जब तू इसको सुन लेगी और समझ लेगी तो ये सब बातें तुझको आप ज्ञात हो जावेंगी। मैंने देखा है कि, प्राय सभी स्त्रियाँ इन बातों को नित करती हैं, परन्तु विचार इनका कोई नहीं करतीं कि, अभिप्राय और कारण क्या है ? कोई कोई रीति तो ऐसी करती हैं कि, जिनसे न कुछ लाभ और न फल, बरन धन की हानि। कोई कोई रीति ऐसी बुरी प्रचलित है कि, लोक में निन्दा का कारण होती हैं और मूर्खता प्रकट करती हैं।

इन रीतियों के करने में वे सोचे समझे किसी बात को कर उठने के सिवाय कभी कोई बात सुघराई की

नहीं। त्योहार हैं, तो उलटे करना अर्थात् जो कुछ उन का अभिप्राय है, वह नाममात्र को न करना, वरन उलटी हानि कर लेनी। व्रत हैं, तो इतने करना कि, मनुष्य जो न मरता हो, वह भी अधमरा तो अवश्य ही हो जाय और सदा बलहीन, सुखमलीन, वीर्यहीन, तनक्षीन, धनहीन, दीन, संतानविहीन, वरन सब प्रकार से हीन ही हीन रहा आवे। कभी प्रसन्नमुख न दीख पड़े। बहिन! इनके विषय में, मैं कहाँ तक कहूँ, पर थोड़ा सा वृत्तान्त इनका तुझ बताये देती हूँ, जिससे तू सब प्रकार की बुराई से बच कर और झूँठी रीतियों से निकल कर और व्रतों के भ्रमजाल में न पड़ कर और त्योहारों का सुख भोग कर, इस मेरे कथन का फल अनुभव करेगी और कहेगी कि, जो मैं इस कथन को न सुनती तो यह सुख और आनन्द मुझको कभी स्वप्न में भी न मिलता और अन्य मूर्ख स्त्रियों की भाँति मैं भी इस मूर्खता के जाल में फँसी हुई इन रीति और व्रतों में सदा दु'ख पाया करती और यह सच्चा सुख कभी न देखती, किन्तु सदा झूठे व्यवहारों ही में मैं मग्न रहती। जो कोई मुझको दया वा हित कर के उपदेश करता तो उसे धन्यवाद देने के पलटे उससे उलटी लड़ने लगती वा बुरा भला कहने लगती।

ले सुन, पहिले मैं तुझे कुछ रीतियों के विषय में बताना चाहती हूँ, पर रीति आजकल इतनी अधिक हो गई है कि, जिनका कुछ ठीक नहीं। जबतक शास्त्रोक्त रीति सब स्थानों और कुलों में वर्ती जाती थी, तबतक सब की रीति-भाँति मिलती थी, पर जब से मनुष्य अनपढ़े होने लगे, तभी से अन्तर पड़ने लगा, परन्तु जब से स्त्रियों ने पढ़ना, लिखना सब छोड़ दिया, तब से तो कुछ रहा ही नहीं। घर की रीति-भाँति सब इन स्त्रियों के अधीन ठहरीं, और ये रहीं निरी मूर्ख। इनके मन में जो आया या जैसा जिसने बहकाया ये वैसा ही करने लगीं। यहाँ तक कि, शास्त्र की रीति भाँति तो अब तक एक भी न रही। अनपढ़ों का शास्त्र 'बुढ़ियापुराण' अलग ही रच गया। जिसमें ऐसी ऐसी अद्भुत बातें रक्खी हैं कि, जिन्हें कहते हुए जिह्वा लजाती और सकुचाती है।

यह बुढ़ियापुराण इतना बढ़ गया है कि, जो मैं तुझे आज से सुनाने बैठूँ तो दोचार वर्ष में पूरा हो तो हो। यह भारत देश में इतना रचा गया है कि, हमारे वेद, पुराण, शास्त्र, स्मृति, काव्य, व्याकरण इत्यादि सब ग्रन्थ एक ओर और यह अकेला एक ओर।

मैं सब को तो तुझे बता नहीं सकी और न सब का

बताना भी कुछ योग्य समझती हूँ कि, कौन से स्थान वा कुल की रीति तुझे बता दूँ, जिससे तुझे आगे को काम पड़े क्योंकि तेरे सासरे का अभी कुछ ठीक नहीं है, न जाने कि कहाँ और किसके कुल में विवाह हो। मैं तुझे थोड़ी सी कुरीतें बताये देती हूँ जिनको करना उचित नहीं है। इससे तू समझ जायगी कि, यदि काम पड़े तो किस प्रकार की रीति करना अच्छा होगा और किस प्रकार की नहीं।

तुझे ज्ञात हो जायगा कि, मूर्खता के कारण कैसी कैसी कुरीतियाँ प्रचलित हो गई हैं और प्रतिदिन होती चली जाती हैं और कोई उनका संशोधन, परिशोधन नहीं करता है। इसीलिये मैंने एक पुस्तक 'कुरीति-संशोधन' नाम की बनाना चाही थी, जिसमें देश भर की बुरी रीतियों का निर्णय किया जाता कि, क्यों उन को नियत किया? क्या उनसे अभिप्राय रक्खा था और अब उनका क्या होगया? पर उसके बनाने का सावकाश न मिला। वे जहाँ तहाँ से इकट्ठा करना चाहती थीं, पर न कर सकी।

कुरीतियाँ तीन कारणों से प्रचलित हुई हैं। (१) बहुत सी तो हँसी ठट्ठे के कारण प्रचलित हो गईं। (२) कोई कोई विशेष कारण से। (३) कुछ शास्त्रोक्त आज्ञा

से। किन्तु समयान्तर से उनका ठीक अभिप्राय वा प्रयोग न रहने से, कुछ की कुछ होती चली गई। ठीक शास्त्रोक्त रीति तो कदाचित् ही किसी जाति और कुल में कोई कोई ही रही है। नहीं तो अधिकतर वे ही बिगड़ी हुई हैं।

अपनी कन्या वा पुत्री को सब जातिवाले किसी वर के साथ विवाहना चाहते हैं। पुत्री को क्वारी कोई नहीं रखना चाहता है क्योंकि क्वारी रखने में बहुत से उत्पात हो जाते हैं। कुल को कलङ्क लगता है। लोक में निन्दा होती है। माता, पिता, भ्राता और नातेदारों को लज्जा आती है। पर तो भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण आदि में उन की बेटियाँ तीस तीस वर्ष तक क्वारी बैठी रहती हैं। इतनी अवस्था तक भी उनका विवाह नहीं होता है क्योंकि बेटी के माता, पिता धनवान् नहीं और बिना धन लिये हुए बेटेवाला सम्बन्ध नहीं करना चाहता है। वह कहता है कि, जब तक इतने रुपये न दोगे, मैं तुम्हारी पुत्री का विवाह अपने पुत्र से नहीं करूँगा, पर न पुत्री के पिता पर इतना रुपया है और न वह दे सक्ता है। निदान उसकी पुत्री क्वारी ही रही आती है।

यदि किसी के मग थोड़ा धन दे कर किसी प्रकार विवाह हो भी गया तो उसके माता, पिता के यहाँ ही वह छोड़ दी जाती है। पीछे उसका नाम भी भुलाने

को नहीं लेते। फेरे पार कर उसके क्वारपन के दोष को केवल नाममात्र उतार देते हैं। जो रीति विवाह की होनी चाहिये, सो नहीं होती। सदा अपने माता, पिता के घर ही में रह कर अपना जीवन काटती हैं और बुरा भला जो कुछ बन पड़ता है, सभी कर बैठती हैं और कुल को कलंक लगाती हैं।

इस प्रकार एक एक कनौजिया, सरवरिया और कुलीन ब्राह्मण, दस दस बीस बीस स्त्रियों से धन ले लोभवश विवाह कर लेता है और फिर उनको उनके पीहर (माता के घर) ही में छोड़ देता है। जो धनवान् की बेटी होती है, उसको केवल अपने पास रख लेता है, जिसके माँ, बाप इस छोड़ने के भय से उसको बहुधा धन देते रहते हैं।

बहुत से मनुष्य ऐसे भी होते हैं, जो धन के लालच ही से अपनी बेटियों को बढ़ाया करते हैं और रुपये ले ले कर उनका विवाह करते हैं और इस लालच के कारण वे ऐसे अन्धे हो जाते हैं कि, अपनी बेटी के जीवन और सुखभोग का उनको कुछ भी ध्यान नहीं रहता है। उनको केवल धन ही का ध्यान है, जिसके कारण दस दस वर्ष की कन्याओं तक को वे साठ वा सत्तर और कभी कभी अस्सी वर्ष के बुड्ढों तक को ब्याह देते हैं। ये दो चार वर्ष पीछे ही राँड हो कर अपने माता, पिता के नाम को

निन्दित कर्म कर के धूलि में मिला देती है, पर इन धनके लोभी मातः पिता को कुछ भी लज्जा नहीं आती। 'धीचेचा' 'हजारों के बाप' इत्यादि नाम को धराते हैं और लोक, परलोक दोनों को बिगाड़ते हैं।

कोई कोई अपनी पुत्री को शालग्राम, ब्राह्मण के बेटे अथवा पीपल के पेड़ ही से फेरे दिलवा देते हैं। किसी पुरुष वा अपने स्वजातीय के सङ्ग उसका विवाह नहीं करते हैं। वे जन्मभर बेचारी ब्याही हुई भी क्वारी ही रहती हैं। कोई कोई अपने पुत्र, पुत्री का विवाह इतनी छोटी अवस्था में कर देते हैं कि, लड़का शीतला में मरजाता है और कन्या को आयु भर रँड़ापा भोगना पड़ता है अथवा लड़के का दूसरा विवाह करना पड़ता है और कभी कभी लड़का बड़ी अवस्था होने पर महाकुपात्र निकल जाता है, और उस दशा में बेचारी विवाहिता कन्या को महाकष्ट और दुःख भोगने पड़ते हैं। कभी कभी वर कन्या की आयु समान होने पर भी विवाह कर देते हैं और कोई कोई तो धन के लोभ वा अन्य और किसी कारण से जैसे धनवान् माता, पिता होने से उनके कम उमर के लड़कों ही को अपनी बड़ी उमर की बेटी ब्याह देते हैं, कहीं कहीं तो यहाँ तक सुनने और देखने में आया है कि, पेट के बालकों ही की सगाई हो गई और जब बोलने वा

चलने लगे तब विवाह भी हो गया। मेरी आप सुनी हुई बात है कि, एक स्त्री दूसरी से कह रही थी कि, जो तेरे और मेरे इस गर्भ से बालक उत्पन्न हों तो उनकी सगाई हो गई। जो मेरे लड़की और तेरे लड़का हो तो मैं सगाई कर दूँगी, जो इसके विरुद्ध होगा तो तू सगाई कर दीजो। ये दोनों आपस में बहुत ही प्रेम के साथ बतरा रही थीं।

दूजिया के विवाह में दोष माना जाता है। जो लड़का रँडुवा हो गया, चाहे उसकी थोड़ी ही अवस्था है, पर उसको दूजिया जान कर अपनी पुत्री का विवाह बहुत से उस लड़के के संग करने में दोष समझते हैं। कोई कोई तो कदापि नहीं करते। अन्य लड़के के संग जो उससे बड़ी आयु का है, विवाह देते हैं, पर उसके संग नहीं।

सगाई करते समय लड़के को तो देख लें, पर लड़की को न दिखावें। उसके दिखाने में बुराई वा अपनी मानहानि * समझें।

* विचार करने से इसके दो कारण प्रतीत हुए (१) यदि देखने पर लड़की कानी, भेंड़ी अथवा कुरूपा इत्यादि जान पड़ी तो कदाचित् उसकी सगाई में विघ्न पड़ जावे। (२) विवाह होने पर यदि लड़की बुरी, भली निकलेगी तो दूसरी भी ब्याह ली जावेगी। लड़के का केवल इसलिये देख लेते हैं कि विवाह पाछे जो लड़का बुरा भला निकलेगा तो फिर लड़की दूसरा लड़का नहीं विवाह सकेगा।

हे बहिन ! ये कितनी बुरी बातें हैं । कोई तो ऐसा भी करते हैं कि, पहिले पीपल के पेड से फेरे दिला कर फिर लडकी के फेरे लडके के संग दिलाते हैं और कन्यादान करते हैं, सो भला यह भी कोई रीति में रीति है । जब फेरे एक से फिर गये तो फिर कन्यादान कैसा ? अब वह कन्या कहाँ से रही ? उसके फेरे तो पीपल के संग पडते ही कन्यापन जाता रहा ।

कोई कोई मनुष्य अपनी युवा पुत्रियों को इतने छोटे छोटे बालकों को विवाह देते हैं कि, वह सधवा हो कर भी एक प्रकार की विधवा ही रही आती है । इन कुरीतियों को कोई तनिक भी नहीं विचारता और मेटता । प्रायःसभी इन कुरीतियों से दुःख पाते हैं, पर इनके मेटने की कोई चेष्टा नहीं करता । इसी प्रकार की और भी बहुत सी रीतियाँ हैं । जैसे जब कन्या के कंकण बाँधती है, तब उसमें ऐसी ऐसी वस्तुएँ बाँधती है, जिनसे कुछ प्रयोजन नहीं । कंकण हाथ की शोभा के लिये बाँधते हैं, परन्तु इस प्रचलित कंकण से उलटी कुरूपता आती है । यह कंकण चीकट में जैसा चिकटा हुआ होता है । इसमें लोहे का एक छल्ला भी बाँधा जाता है । सोने चाँदी के आभूषण सब कोई पहिनते हैं, लोहे के कोई नहीं पहिनता और विशेषकर ऐसे समय में, जब कन्या का शृङ्गार वर की प्रसन्नता के

निमित्त किया जावे।

इस लोहे के छल्ले का कोई कोई जनी यह प्रयोजन बतलाती हैं कि, लोहे के भय से भूत, प्रेत इत्यादि जो कोई इस समय कन्या पर बाधा करने को आवे, वह डर कर चला जावे।

पहिले समय में जो शृङ्गार और शोभा की बात गिनी जाती थी, वह अब वैसी नहीं रही। अब उसके स्थान में पलट कर कोई दूसरी बात कर देनी चाहिये। जैसे वर और कन्या के मुख पर रोली, चाँवल और पान के टुकड़ों से मरवट माँडना, जो ऐसा बुरा लगता है कि, सुन्दर रूप को भी कुरूप बना देता है।

वर को कन्या के अधीन रखने के अब कैसे कैसे उपाय गढ़े गये हैं। जैसे कि, जिस समय वर कन्या के पिता के द्वार पर पहिले ही दिन बरात लेकर जाता है, तब स्त्रियाँ उस समय कन्या के मुख में चाँवल भरवा कर वर के ऊपर सात बेर थुकवाती हैं। इसलिये कि, इस टोने से वर कन्या के अधीन हो जावेगा। दूसरा, जब फेरों से पहिले वर और कन्या मँडवे के नीचे स्नान करते हैं, तब कन्या के नहाने का कुछ पानी वर पर डाल देती हैं। तीसरे, जब फेरे फिर कर वर और कन्या कुलदेव के पूजने को कन्या के पिता के यहाँ ही बैठते हैं, तब वहां पर दोनों

भी नहीं समझता है और पीछे तो उनको कुछ भी याद नहीं कि, हमने कभी कोई प्रतिज्ञा आपस में की थी और यदि की थी तो वे क्या क्या थीं। अब तो केवल लीक पीट के वचन होते हैं। पुरोहितजी वा पण्डितजी दोनों वर कन्या के वकील बन कर इन वचनों को कहते जाते हैं वा कहलवाते जाते हैं और बेचारे वर कन्या समझते भी नहीं कि, यह क्या खेल है।

प्रसिद्ध यों किया जाता है कि, यह रीति पार्वतीजी के समय से प्रचलित हुई है अर्थात् जब पार्वतीजी ने फेरे फिरती समय महादेवजी के पास दूसरी स्त्री गङ्गाजी को देखा तो वे क्रुद्ध हो बैठीं। जब महादेवजी ने क्रोध को शान्त करने को कहा, तब पार्वतीजी ने ये वचन उनसे कराये थे और फिर क्रोध त्याग दिया था।

पर अब यह रीति ऐसी हो गई है कि, सभी वर कन्या के संग बर्ती जाती है। चाहे वर के दूसरी दस स्त्रियाँ और भी विवाहिता हों, पर ये वचन सबसे अवश्य ही कहलाये जावेंगे कि, दूसरी स्त्री का मुख न देखूँगा। सब से ऐसे ही झूठे वचन किये, पर निबाहे एक के मग भी नहीं। फिर ऐसे वचन कराने की कौन सी आवश्यकता है। जो जो वचन होते हैं, उनको तो मैं पहिले ही कह चुकी हूँ।

कन्या के पिता के यहाँ की स्त्रियाँ कहीं कहीं ऐसा भी करती हैं कि, जब वर कन्या से कुलदेव की पूजा कराती हैं, तब उस समय वर की परीक्षा लेने के हेतु कन्या की जूतियों को कपड़े में लपेट कर रख देती हैं और वर से कहती हैं कि, पहिले इनको पूजो । जो वर उनको पूज देता है तो जूतियों को खोल कर दिखा देती हैं और उस की हँसी करती हैं और जो वह इनको नहीं पूजता तो कहती हैं कि, तुम कुलदेवों की भी पूजा नहीं करते हो।

इसी समय स्त्रियाँ परीक्षा निमित्त वर से "सिल्लोक" (श्लोक) अथवा "छन्न" (छन्द) पढ़वा कर सुनती हैं और पारितोषिक में छल्ले अँगूठी, रुपये इत्यादि देती हैं यह वर की विद्या और बुद्धिमानी की परीक्षा लेना है, पर फेरे फिर जाने के पीछे यह ली जाती है, इसलिये व्यर्थ है क्योंकि अब क्या लाभ? यदि विवाह के पूर्व ली जाती तो कुछ प्रयोजन भी था । जब फेरे फिर गये तब सिवाय मूर्खता के और क्या होसक्ती है। क्योंकि विवाह के पूर्व तो दूसरा वर भी कन्या को हो सक्ता था, पर विवाह उपरान्त अब क्या हो सक्ता है? कहते हैं कि, छन्द से वेद विद्या का अभिप्राय था अर्थात् वेद विद्या में परीक्षा ली जाती थी, परन्तु अब तो निपट बकने और निर्लज्ज छन्दों पर फूल फूल कर स्त्रियाँ पारितोषिक देती हैं ।

यह उनकी मूर्खता ही का कारण है कि, वे आप भी बकने और निर्लज्ज गीत गाती हैं और बरातियों को गालियाँ गाती है और माँ, बाप, बहिन, भाई, सास, ससुर और जेठ, देवर किसी की तनिक भी लाज नहीं मानतीं। यहाँ तक कि, हाट बाट में भी बकती हुई चली जाती हैं और ऐसे शब्द बकती हैं कि, जिनको एकान्त में भी मुख से निकालते हुए लाज आती है, पर इनको तनिक भी लाज नहीं आती, ये सैकड़ों मनुष्यों के सम्मुख गाती चली जाती हैं और नाममात्र को भी नहीं लजातीं। यह महानिन्दित और बड़ी ही बुरी रीति है, जिससे बढ़ कर शायद ही कोई दूसरी रीति हो। न जाने, इसको स्त्रियाँ कब छोड़ेंगी और अपने को धिक्कार देंगी? ऐसी ही दूसरी निर्लज्ज बात एक और देखने में आती है कि, एक थान या अन्य सामग्री पर जो समधी के यहाँ भेजने को बनवाई जाती है, समधी, समधिन दोनों की आकृति बनवाती हैं और मनुष्यदेह के समस्त अङ्ग उनमें रख वाती हैं जिनको देख देख कर लाज आती है। यह रीति भी निपट निष्प्रयोजन प्रचारित कर रक्खी है, जिसमें कुछ लाभ नहीं और केवल मूर्खता और लज्जा से भरी है।

ये स्त्रियाँ अपनी मूर्खता के कारण बड़े बड़े कौतुक करती हैं। ये हर्ष और आनन्द, दुःख की ब

करने लगती हैं और बुरी बात को भी अच्छी समझ लेती हैं। यदि उसीको कोई दूसरा करे, तो उसे वे बुरा शकुन गिनें, पर जो आप करें तो उसी को शकुन मान लें। जैसे कि, जब स्त्री अपनी सतान के विवाह में भात पहिनती है, तब अपने पिता या भाई से मिल कर रोती है और उसी रोने को शकुन में समझती है। इसी प्रकार जब पतिगृह को जाती हैं तो भी रोती है। भला मगल कार्य में रोने का क्या काम है? ऐसे समय में हँसना चाहिये या रोना? सोच तो सही।

कुलदेवताओं को पुरोहितजी के हाथ से भीत में दो उलटे सरवे चिपकवा कर बन्द करा देना और इसी भाँति मेह, आँधी, आग, बिजली, ओला, चील, कौवा, कुत्ता, बिल्ली इत्यादि को भी बन्द करा देना और उनसे यह प्रार्थना करना कि, तुम हमारे विवाह में विघ्न मत डालना। हम तुम्हारा न्योता पीछे अच्छी भाँति करेंगे। अब तेरी समझ में यह बात आती है कि, कुलदेवता, आँधी, मेह, ओला इत्यादि में कभी भी व इस प्रकार बन्द करने से ~द हो सके हैं और ये कभी बन्द रहे हैं?

आँधी, मेह, ओला मैंने तो कभी नहीं देखा कि, किसी ; विवाह में बन्द रहे हों। जब कभी पड़नेहार हुए, तभी ।ड़ गये, पर यह अन्ध परम्परा कुछ ऐसी छा गई है कि,

कोई इसके झूठे वा सचे होने का कुछ विचार ही नहीं करता और रीति पर चले ही जाते हैं।

अपनी कारीकन्या को दूसरी विवाहित कन्या के फुल-देनों के स्थान में इस अभिप्राय से ले जाती हैं कि, यहाँ उनसे माँगने से इसको भी इसी वर्ष में वर मिल जायगा। ऐसा करने पर भी चाहे पाँच वर्ष पीछे विवाह हो, पर इस झूठ भ्रम को वे न छोड़ेंगी।

पुत्र के विवाह में भी वैसी ही रीतियाँ होती हैं, जैसी कन्या के में। जैसे जब से वर के तेल चढ़े तभी से उसके पास कोई वस्तु लोहे की अवश्य रखती हैं। जिससे भूत, प्रेत जो उसको उबटना आदि लगा हुआ देख कर कुछ बाधा करना चाहे वा कोई परी उस पर मोहित हो कर, उसे अपने देश को उठा कर ले जाना चाहे तो लोहे को देख कर डर जायँ। भला जो इतना करना चाहेगा और दिखाई न देगा, वह इस लोहे के टुकड़े से क्या डरेगा? यह निरा भ्रम है।

फिर घुड़चढ़ी के समय घोड़ी पर चढ़ाने से पहिले किसी किसी के यहाँ गधी पर चढा देते हैं। तब पीछे घोड़ी पर चढ़ाते हैं। इसमें न जाने कौन सी मूर्खता की बात रक्खी है। इसी समय एक और रीति होती है। जब वर घुड़चढ़ी हो कर चलता है, तब माता रूस कर

कुएँ में डूबने को चलती है कि, मैंने तुझे पाल कर इतना बडा किया, अब तू कहाँ को जाता है ? मेरे दूध का मोल देता जा, नहीं तो मै कुएँ में गिरती हूँ। यह कह कर कुएँ पर जा बैठती है। तब वर उसके बहुत मनावने कर के समझाता है, पर वह तब भी नहीं उठती। रुपये और गहने का लालच देता है, इस पर भी वह नहीं मानती। अन्त को कहता है कि, सब का मोल होता है, पर माँ के दूध का मोल नहीं है। मै तेरे लिये दासी लेने को जाता हूँ, जो तेरी टहल करेगी। यह सुन कर माँ कुएँ पर से उठ आती है।

बहिन ! इस रीति और चतुराई को तो तनिक देख कि, अभी तक यही नहीं मालूम कि, मेरा पुत्र कहाँ जाता है और उससे दूध का मोल माँगा जाता है। वाह ! क्या अच्छी संसार भर से निराली रीति है !

जब पुत्र विवाहने को चला जाता है, तब स्त्रियाँ विवाह की सब रीति यहाँ पर आपस में करती है। एक स्त्री उनमें से पुरुष बनती है, जिसे 'बूबना' कहते हैं और सब मुहल्ले और पडोस भर में ऐसी बकती फिरती हैं और ऊधम मचाती हैं कि, मुझे तो कहने में भी लाज आती है। पर न जाने उनके मन कैसे निर्लज्ज है कि, बुरे बुरे शब्दों के नाम ले ले कर बकने में वे नेक नहीं

लजातीं । वे किसी वृद्धो, वडी वा पुरुष की भी शंका नहीं करतीं । इस रीति का नाम 'खोरिया' है ।

जब वर विवाह कर आता है, तब वर का फूफा व, बहनोई जो 'मान्य' कहलाता है, उसको द्वार पर रोकता है कि, घर में नहीं घुसने दूँगा । इस पर वर अथवा उसके माता, पिता कुछ देते हैं, तब वर घुसने पाता है । किसी बहनोई ने अपने साले से लड कर चाहे ऐसा किया होगा कि, अब वह एक रीति ही मान ली गई । सोचने की बात है कि, दुलहिन को घर में आदर से लेना चाहिये या बाहर ही से रोक देना चाहिये ?

जब दुलहिन विवाह हो कर आ जाती है, तब उसका मुख देख कर उसको गहना या रुपये देते हैं । भला अब मुख देखने का क्या फल ? अब क्या वह फिर सकी है ? कुरूपा है तो तुम्हारे यहाँ को और सुरूपा है तो तुम्हारे यहाँ को । मुख देखो चाहे न देखो ।

पहिले देख लेते तो कुछ हो भी सका था, अब तो ऐसा करना केवल मूर्खता है । इसी प्रकार दुलहिन की परीक्षा घर के काम काज में लेते हैं । जो दुलहिन बहुत ही छोटी होती है तो उसका केवल हाथ पके हुए भोजन से छुलवा देते हैं । लीक तो पीटेंहीगे । चाहे कोई बात सार हो वा असार । अब जो दुलहिन फूहर है तो क्या और

चतुर हैं तो क्या? अब तो दुलहिन जैसी है, वैसी भुगतनी पड़ेगी। अब यदि पछताये तो क्यों? ये बातें तो रहिन! रहीं, सो रहीं, इनसे भी अनोखी एक बात और कैसी है कि, बेटी को धोबिन से सुहाग मँगवाती है। जबतक धो-बिन अपने मुख से न कह दे कि, 'हाँ, मैंने सुहाग दिया,' तब तक सुहाग ही न चढ़े! भला यह भी कोई रीति में रीति है? कहाँ नीच जाति धोबिन और कहाँ उससे सुहाग माँगना! क्या उसके पास सुहाग रक्खा है, जो पुड़िया बाँध कर दे देगी? क्या उसीका दिया हुआ सुहाग मिलता है? आप तो धोबिन राँड बैठी रहती है और दूसरों को सुहाग देती है। जो ऐसी ही सुहाग देने वाली हैं तो अपने ही पति को धोबिन क्यों मरने देती है?

जबतक स्त्री पतिव्रता है, तबतक उसका सुहाग बना ही है-धोबिन बेचारी क्या सुहाग देगी? जो एक धोबिन ने किसी को सुहाग दे दिया तो क्या सभी धोबिन दे सक्ती हैं? इस रीति की भी कैसी अन्ध परम्परा है!

इसका कारण जो मैंने 'भविष्योत्तरपुराण में' देखा, तो यह जान पड़ा कि, काञ्चीनगर में एक देवस्वामी ब्राह्मण था, जिसके एक पुत्री थी। इस देवस्वामी की स्त्री से किसी भिक्षुक ने यह कह दिया था कि, तेरी पुत्री विवाह के समय विधवा हो जावेगी, परन्तु सिंहलद्वीप में

जो पवित्र सोना धोबिन रहती है, यदि वह अपना सुहाग तेरी पुत्री को दे देगी तो उसका पति जी उठेगा।

विवाह के समय ऐसा ही हुआ और जब सोना आई तब उसने अपने पातिव्रतधर्म के बल से, उसके मृत पति को जिला दिया। तब से मूर्ख स्त्रियों ने इसको एक रीति ही मान ली है कि, चाहे कोई भी धोबिन हो, उससे विवाह में सुहाग अवश्य माँगती है।

जैसी मूर्खता की रीति यह है, वैसी ही मूर्खता के साथ 'माई पूजने' की रीति है। जिसमें ठीक अभिप्राय 'मातृपूजन' का है अर्थात् अपनी माता का पूजन करते हैं और धन्यवाद देते हैं कि, तूने पाल कर हमको इतना बड़ा किया और हमारे कारण इतने कष्ट और दुःख सहे। अब हम जब तेरी सेवा करने योग्य हुए तभी तू हमको विवाह कर के अलग करे देती है अर्थात् जो कुछ सेवा का भार उनपर है, उसका धन्यवाद अभी दे देते हैं कि, फिर न जाने वर कन्या के साथ में रह कर माता को भूल जाय वा कन्या ही वर के स्नेह में अपनी माता को याद न रक्खे अथवा फिर कोई ऐसा अवसर ही न मिले कि, माता की सेवा बन पड़े, परन्तु आज कल जो 'माईपूजन' होता है, उसे सभी जानती हैं। कहने की कुछ आवश्यकता नहीं है।

विवाह की एक रीति और कहने को रह गई है अर्थात्

स्त्रियों के आगे रंडी नचाना और समधिन को उससे महाबकनी गालियाँ दिलवाना। सो यह भी महानिषिद्ध रीति है क्योंकि इसको देख कर स्त्रियों के चित्त चलायमान हो जाते हैं। उनके जी में इनकी सी वृत्ति धारण करने के विचार उत्पन्न होने लगते हैं।

ये दूसरे के घर पर अर्थात् अपनी समधिन को तो गाली दिलवाने में हर्ष मानते हैं, पर जब इनके घर पर इनका समधी गाली गवाता है तब बुरा मानते हैं।

जैसी ये निषिद्ध रीति विवाह समय की हैं वैसी ही अनेक और रीतियाँ मृत्युसमय की हैं। मृत्यु समय की भी बहुत सी ऐसी ही कुरीतियाँ हैं कि, उनसे भी मूर्खता के सिवाय और कुछ प्रकट नहीं होता है। जैसे जब कोई वृद्ध मनुष्य मरता है, तब उसका विमान (विवाहन) निकालते हैं और गाजे बाजे से हर्ष मनाते हुए उसके शव को दाह निमित्त ले जाते हैं और इस विमान निकालने के कारण मृतक को घण्टों तक बरन कभी कभी पूरे दिन भर वा रात भर तक पड़ा रखते हैं और शव के बिगड़ने का कुछ विचार नहीं करते। ऐसे अवसरों पर धनवान् लोग बहुधा शव के ऊपर बहुमूल्य कपड़ा अपने नाम वा प्रतिष्ठा हेतु डालते हैं, जिसको चाण्डाल वा भंगी ले लेता है।

इस बहुमूल्य वस्त्र के डालने से अथवा विमान निकालने से कोई प्रयोजन मृतक का नहीं सरता क्योंकि उसको अब क्या, जो जो कर्म उसने अपने जीते जी किये थे, उन्हीं का फलभोग उसे दूसरे जन्म में मिलेगा, चाहे बहुमूल्य कपडा डाला जावे वा थोडे मूल्य का ।

हाँ, यह अवश्य है कि, इस वृथा के झंझट से शव में दुर्गन्धि आने का भय हो जाता है ।

अपने घर के मनुष्य के मरने पर, सब को शोक होता है, परन्तु इस कुरीति के कारण लोग अपने पुरषा के देहान्त होने से हर्ष मनाते हैं अर्थात् यह समझते हैं कि, उसका जो वृथा भार हमारे ऊपर था, उससे आन पाप कटा। यह कितनी बुरी बात है कि, जिन्होंने पालन पोषण निमित्त कितने कष्ट और दुःख उठाये, उनकी सेवा का भार उठ जाने के कारण हम हर्ष मानें। धिक्कार ऐसी बुद्धि पर ! इस दुशाले अथवा बहुमूल्य कपडा डालने में यह बहुत बडा दोष है कि, भंगी उस बहुमूल्य वस्त्र को ओढ़ कर निकलता है और बराबरी करता है । उस समय लोग कहते हैं कि, अब भंगी दुशाले ओढ़ते हैं और बराबरी करते हैं ।

यदि विचार कर के देखा जाय तो इसमें भंगी का क्या प है ? दोष तो तुम्हारा ही है । न तुम भंगी को बहु-

मूल्य कपड़े दो, न वह ओढ़ कर निकले क्योंकि मोल ले कर कभी दुशाले आदि कदापि न ओढ़ेगा। जब तुमने सिला कर उसको दुशाले आदि दिये तो उसके ओढ़ने में उसका क्या दोष है? जो कुछ दोष है, वह तो तुम्हारा ही है।

दूसरी बात यह कि, इसी विमान का गोटा किनारी या कपड़ा इत्यादि ला कर घर में रखना। वैसे तो मृतक को छूते भी नहीं हैं, यदि छूते हैं तो बिना स्नान किये घर में नहीं घुसते, पर इसके वस्त्रों तक को घर में रखना। इस निमित्त कि, बालकों के कपड़ों में उनको टाँक देंगे तो हमारे भी बालक इतनी ही आयु के हो जायेंगे।

किसी किसी जाति में जैसे अग्रवाल बनियों में यह भी कुरीति इस समय होती है कि, समधियाने की स्त्रियाँ जब शोक जताने को आती हैं, तब अपने संग बहुत स्त्रियों को लाती हैं और कपड़े का एक गुड्डा बना कर लाती हैं और फिर खूब गाती बजाती हैं और नाचती कूदती हैं, जिसको वे 'हाँसे तमासे' के नाम से प्रसिद्ध करती हैं। इसमें महानिर्लज्जता की बातें करती हैं, जिनको सुनाया तक नहीं जाता और तुझको इसी कारण बता नहीं सकी हूँ।

किसी किसी जाति में जैसे मथुरा के चौबे, खत्री और सारस्वत इत्यादि में स्यापे की रीति बहुत ही बुरी प्रच-

लित है । मरे हुए का स्यापा चार चार वर्षोंतक चल जाता है और कभी तो ऐसा भी होता है कि, पहिल स्यापा निबटने नहीं पाया कि, दूसरे का आरम्भ हो गया

जो स्त्रियाँ स्यापे में जाती हैं, वे बहुत ही मलिन रहत है । शृङ्गार तो कभी करने ही नहीं पातीं । महीनों, बरन वर्षों लंघन (उपवास) करती हैं । रॉडों की सी दश अपनी बनाये रखती है । कपडे धुलाती नहीं, बालों में तेल डालती नहीं । गहना पहिनती नहीं इत्यादि, यह तक कि, नथ तक उतार देती हैं और सुहागिनों जैस अन्य बातें भी त्याग देती हैं । मरे हुए के घर जा कर रोना पीटना करती रहती है और दोनों हाथों से छाती पीटत हैं, यहाँतक कि, कभी कभी तो रुधिर तक भी झलकआता है, बरन किसी किसी के तो निकलने भी लगता है ।

किसी किसी अभागिनी स्त्री को तो जन्म भर इसी स्यापे के रँड़ापे में बिताना पड़ता है । उसे कभी छुटकारा नहीं मिलता । उसकी आयु इसी में घुल जाती है ।

जब वे रोती, पीटती हैं तब स्वर के साथ रोती हैं । मानों एक प्रकार का गान कर रही हैं । मृतक के जन्म से ले कर मरणपर्यन्त का बखान करती हैं, जिसको 'बन पढ़ना' कहते हैं । इस रीति का नाम उल्लानी है । जिसमें एक स्त्री पहिले बोलती है, फिर पीछे सब स्त्रियाँ 'हये हये'

कर के छाती पीटने लगती है। इसमें भी स्त्रियों की चतुराई और मूर्खता देखी जाती है। जो अच्छे प्रकार बैन पढ़ती है, उसकी प्रशंसा होती है। जिस पर अच्छा पढ़ना नहीं आता वह मूर्ख गिनी जाती है।

इसी कारण सारस्वतों और खत्रियों के यहाँ एक प्रकार के लोग होते हैं, जिनकी स्त्रियाँ बैन पढ़ने का अभ्यास करती रहती हैं और बड़ी बड़ी वेतन पर बैन पढ़ने के लिये दिल्ली आदि नगरों में बुलाई जाती हैं।

स्यापे का प्रयोजन तो यह था कि, जा कर अपने नातेदारों को ढाढस बँधावें। उनको समझा, बुझा कर सन्तोष दिलावें, न कि ऐसा करें कि, याद दिला दिला कर उसके घरवालों को उलटा और रुलावें और रॉंडों जैसी दशा कर लें। सुहागिनों को कब कहा है कि, वे अपने पति के सम्मुख ऐसा भेष बना कर आवें। उन को तो सदा शृङ्गारमयी हो कर पति के सम्मुख आना चाहिये।

जैसी उलटी रीति इस स्यापे की कर रक्खी है, उसी प्रकार पर्दे की रीति को कर रक्खा है। मेरी समझ में नहीं आता कि, पर्दा किससे करना चाहिये। जो यह कहो कि, अपनों से तो क्यों? और जो कहो कि, बाहरवालों से तो भी क्यों? पर मैंने देखा है कि, इन दोनों ही से पर्दा किया जाता है, पर होता एक से भी

नहीं है क्योंकि स्त्रियाँ जब घर में रहती है तो डेढ़ हाथ का घूँघट खींचे रहती है। यदि बाहर का कोई मनुष्य आया तो कहती हैं कि, 'पर्दा हो जाने दो, तब आना' पर जब आप तीर्थयात्रा, स्नान अथवा और किसी प्रयोजन से बाहर जाती है तो ये ही 'पर्दे की बीबी' मुख खोले हुए बेपर्दे और बेखटके चली जाती हैं और उन के मुखारविन्द को सब कोई देखता है और यदि वहाँ पर कोई जानता पहिचानता मिल गया तो चट से घूँघट खींच कर सिमटने लगती है।

अब तू ही बता कि, पर्दा किससे हुआ? घरवालों से या बाहरवालों से? इसलिये मेरी समझ में नहीं आता कि, पर्दा किस से किया जाता है। इस कहने से मेरा यह प्रयोजन नहीं है कि, पर्दा न किया जावे, नहीं, अवश्य किया जावे, परन्तु ढन से।

पहिले समय में पर्दा नहीं था। रानी, महारानी तक उजागर सभाओं में मुख खोल कर बैठती थीं और रहती थीं। यह पर्दा तो अब मुसल्मानों के समय से उन के अनुचित व्यवहार और अन्याय से प्रचलित हो गया है। जहाँ मुसल्मानों के भय का प्रभाव न पहुँच सका, वहाँ यह पर्दा उस देश में अब भी नहीं है। जैसे मरहटों और काश्मीरियों में।

पर्दे की जो बात है, वह तो स्त्रियाँ करती नहीं हैं, केवल घर में घुसा रहना या मुख न दिखाना, इसीको पर्दा मान रक्खा है ।

पर्दे का प्रयोजन केवल इतना है कि, स्त्री के किसी गुप्त अंग पर पुरुष की दृष्टि न पड़ जावे, जिसके इसके के लिये उनको मोटे कपड़े या कुर्ती इत्यादि पहिनने चाहियें । सो यह तो करती नहीं हैं । बल्कि जिनके यहाँ अधिक पर्दा है, उन्हीं की स्त्रियाँ इतना महीन कपड़ा पहिनती हैं कि, उसका पहिनना न पहिनने के बराबर है क्योंकि उसमें से सब अंग झलकते रहते हैं ।

इसी प्रकार घूँघट की रीति है कि, मैं नहीं जानता कि, स्त्रियाँ अपने गुरुजनों से क्यों घूँघट करती हैं ? क्या इस कारण कि, उनका मुख कहीं न देखें, देख सो तो नहीं क्योंकि कभी किसी कारण से उनका मुखारविन्द एक बेर भी यदि गुरुजनों की दृष्टि पड़ा गया तो फिर पीछे उनसे मुख छिपाने के लिए घूँघट मारने की क्या आवश्यकता है ? क्योंकि जिस हेतु घूँघट मारती थीं, वह तो रही नहीं, परन्तु देखते हैं कि, जैसा है और समस्त स्त्रियों का व्यवहार है कि, मुख देखने के पीछे भी निरन्तर पूर्ववत् उनसे घूँघट करती रहती हैं ।

इसलिये इस प्रयोजन से घूँघट

है और न यह प्रयोजन इसमें हो सक्ता है क्योंकि अपने बड़े बूढ़ों से क्यों मुख छिपाया जाय और अन्यों को दिखाने में संकोच न किया जाय ?

यदि यह कहे कि, उनकी कुदृष्टि बचाने के हेतु, सो भी नहीं । गुरुजन ऐसा कदापि नहीं कर सक्ते हैं, कनिष्ठ जन यदि करें तो सम्भव है, पर उनके सम्मुख असङ्कुचित खुला रहता है। घूंघट का प्रयोजन इन कारणों के विचारने से यह ज्ञात नहीं होता है, वरन इसका प्रयोजन केवल गुरुजनों का मान जान पड़ता है । इसलिये स्त्रियों को अपना मुख और मस्तक सदैव खुला रखना चाहिये। जब गुरुजन उनकी दृष्टि में पड़ें तब उसको नाममात्र के लिये साड़ी वा ओढ़न से ढाँप लें । यह स्त्रियों का अपने गुरुजनों के प्रति मान तथा आदरसूचक व्यवहार है । जैसा कि मरहटों और काश्मीरियों में अबतक प्रचलित है कि, बेटे की बहू अपने ससुर के सम्मुख मुख खोले रहती है और गुरुजनों की दृष्टि पड़ने पर उनके मानरक्षार्थ सिर ढक लेती है । यही प्रथा पुरानी है, जैसा कि, करनाटकी महाराज पृथ्वीराज के सिवाय दूसरे पुरुष का मान नहीं करती थी और इसी हेतु दूसरे पुरुष से सिर नहीं ढकती थीं ।

परन्तु मुसल्मानों की देखादेखी अब इसका प्रचार

जाता रहा। मरहटे आदि में जहाँ यवनों का प्रभाव अधिक नहीं होने पाया था, हमारी यह पुरानी रीति अभी तक बनी है। प्रमाण इसका इतिहासों से मिलता है। कुछ मुसलमानों के अन्याय और अत्याचार के कारण, उस समय यथोचित समझ कर पर्दे का प्रचार कर लिया था, पर अब वह अन्यायी राज्य नहीं रहा, जिसके भय से यह सोचा गया था। यदि अबकी स्त्रियाँ यह कहें कि, यह प्रचलित प्रथा अब छूट नहीं सकी क्योंकि चिरकाल के प्रचार से इसका इतना प्रभाव हो गया है कि, इसको त्याग कर उस त्यागी हुई प्रथा को पुन प्रचलित करने में बड़ा ही सकोच जान पड़ता है और प्रचलित प्रथा को पूर्व की प्रथा से बहुत अच्छी समझती है तो यों ही सही। मेरा अभिप्राय इस घूँघट की प्रचलित रीति को उठाने का नहीं है। मेरा प्रयोजन तो केवल यह प्रकट करने का है कि, इस घूँघट की रीति का अभिप्राय स्त्रियाँ नहीं समझतीं, वरन उलटा समझी हुई है, सो मैं इसका ठीक अभिप्राय उनको जताना चाहती हूँ।

मैं इस घूँघट में बहुत से लाभ समझ रही हूँ अर्थात् स्त्री के रूप रंग की इस घूँघट से बहुत ही रक्षा होती है क्योंकि इसके कारण मुख पर धूलि और धूप अपना कुछ प्रभाव नहीं जमाने [illegible] का रंग रूप बिगड़े,

किन्तु यह घूँघट एक प्रकार मुख की कान्ति और शोभा को बढ़ाने का और अवगुणों को छिपाने का हेतु होता है, जो स्त्री को अपने हितार्थ अत्यन्त अभीष्ट और प्रयोजनीय है । जब गुरुजनों का मान करना कनिष्ठों का धर्म है, तब उसको पूर्णप्रकार निबाहना चाहिये, पर मैं देखती हूँ कि, आजकल की स्त्रियाँ अपने जेठ, ससुर इत्यादि गुरुजनों से घूँघट तो डेढ़ हाथ का मार लेंगी, परन्तु वैसे उनके सिरकी पगडी तक उतारने को तय्यार हो जावेंगी तो फिर मान कहाँ रहा ? क्या वे घूँघट खींच कर ही मान करना जानती हैं और मानरक्षा की जो बातें हैं, उनमें से एक भी नहीं करती हैं । न गुरुजनों का उपदेश मानतीं, न उनकी शिक्षा सुनतीं और न उनकी आज्ञा पालतीं तो क्या निरे घूँघट खींचने ही से उनका मान होगया ? कदापि नहीं । चाहे तुम घूँघट खींचो वा न खींचो । जो मानरक्षा के नियम हैं, उनका पालन तन, मन, धन से करो । तब तो मानरक्षा है, नहीं तो इस वृथा घूँघट काढ़ने में क्या धरा है ? मेरे कहने का यही अभिप्राय है ।

कुरीतियों का यह वर्णन संक्षेप से मैंने तुमको बता दिया है, नहीं तो यह बहुत बड़ा है क्योंकि अगणित कुरीतियाँ प्रचलित हो रही हैं । उनका कहाँतक वर्णन

होसक्ता है और कोई कोई तो उनमें से ऐसी हैं कि, उनका कुछ प्रयोजन ही समझ में नहीं आता। जैसे जन्मोत्सव में 'कूआपूजन' और विवाह में 'चाकपूजन'।

बहिन! यह तो कुरीतियों की बात तुझे बताई। अब कुछ थोडा सा समाचार लगे हाथों तुझे त्योहारों का भी बता दूँ। इस समय बहुत तो नहीं बता सकूँगी क्योंकि इसके पीछे तुझे व्रतों का भी वृत्तान्त बताना है। तुझे मालूम है कि, त्योहारों का अर्थ क्या है? ले पहिले तुझे यही बताती हूँ। इसका अर्थ है 'अति आहार' या 'तिथिउपहार' अर्थात् ऐसा दिवस जिसको और दिवसों से अधिक भोजन किया जावे या अपने घर अच्छे खाद्य पदार्थ बना कर अपने सगे सम्बन्धियों को उपहार में भेजे जावें। तिथिउपहार का अपभ्रंश हो कर ही त्योहार शब्द बन गया है।

त्योहार अनेक हैं, परन्तु जैसे चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र है, उसी प्रकार और क्रमसे उन के चार मुख्य त्योहार हैं। सलूनों, दशहरा, दिवाली और होली।

सलूनों को केवल ब्राह्मणलोग श्रावणी श्राद्ध करते हैं। इसलिये यह ब्राह्मणों का त्योहार है। दशहरे को अस्त्र, शस्त्र तथा घोडे इत्यादि का पूजन होता है, इस

कारण यह क्षत्रियों का है । दिवाली को लक्ष्मी की पूजा होती है और वही में नया लेखा-जोखा पड़ता है, इस हेतु यह वैश्यों का है । होली को मादक (नशे की) द्रव्य पीते हैं, अश्लील शब्द बकते हैं, बूढ़े बड़े और श्रेष्ठ पुरुषों का कुछ ध्यान नहीं रखते, यहाँ तक कि माता, पिता आदि के अगाड़ी कहनी अनकहनी बकते हैं। ये शूद्रों के आचरण हैं । इस लेखे यह शूद्रों ही का त्योहार है । द्विजों का नहीं ।

परन्तु अब किसी त्योहार में किसी वर्ण की विशेषता नहीं रही । प्रत्येक त्योहार को चारों वर्ण मानते हैं। इनके सिवाय छोटे छोटे और भी अनेक त्योहार हैं, पर मैं तुझको मुख्य ही के विषय में कुछ बताऊँगी । त्योहार नियत करनेवाले का इनसे यह अभिप्राय था कि, स्त्री, पुरुष नित अपने जीविका के धन्धे में और घर के काम काज में लगे रहते हैं । उनको नित उठ धनसंचय करने ही की चिन्ता रहती है । इसलिये चिन्ता के निवारण के हेतु महीने वा पक्ष में एक दिन ऐसा भी होना चाहिये, जिस दिन जीविका की चिन्ता छोड़, हर्ष मनावें । अच्छे भोजन करें । आपस में मिलें, भेंटें, स्नान करें, वस्त्र बदलें, शृङ्गार करें, वाटिकाओं में जावें, विविध प्रकार के आनन्द और हर्ष मनावें और जगत् के जंजाल को एक

प्रकार भूल जावें।

दूसरा अभिप्राय यह भी था कि, आपस का मेल-मिलाप और प्यार प्रीति बढ़े जो कुछ भोजन आदि हमारे यहाँ बने हैं, वे हम दूसरों के यहाँ भेजें और दूसरों का हमारे यहाँ आवे। औरों के बनाये भोजन का स्वाद हम लें और हमारे का वे अथवा हम और वे एक स्थान पर बैठ कर संग भोजन करें, गावें, बजावें, हँसें, बोलें और हर्ष मनावें। आपस में जो कुछ वैरभाव किसी प्रकार का होगया हो तो उसे आज के दिन मिटा लें और आगे को पहिली ही जैसी प्यार-प्रीति फिर कर लें। इसी कारण इन त्योहारों के नाम बहुधा ऐसे ही रक्खे गये हैं, जिनका ब्योरा मैं तुझे आगे बताऊँगी।

त्योहारों से 'सूपकर्म' अर्थात् 'पाकविद्या' की उन्नति और शिक्षा से भी अभिप्राय था कि, स्त्रियों को अच्छे अच्छे भोजन बनाने आ जावें क्योंकि चित्त प्रसन्न करने के लिये भोजन भी एक ही पदार्थ है।

सो अब ये सब अभिप्राय तो उड़ गये। केवल लीक पीटना रह गया है, सो भी ठीक नहीं, किन्तु विरुद्धता के साथ। त्योहार तो होते ही हैं, पर प्यार-प्रीति नामको नहीं रहती, बरन उलटी कहा सुनी हो जाती है। कोइ कहती है कि, फलानी ने हमारे बायना न भेजा वा भेजा त

थोड़ा भेजा या बुरा भेजा अथवा हमारे जिवाने को न्योता भी नहीं दिया। जब हमारे हुआ था तब हमने सिद्दा सिद्दा कर दिया था। क्या खाना ही जानतीं हैं, खिलाना नहीं जानतीं ?

इसी प्रकार की कहा-सुनी अब तो त्योहारों को होती है। प्यार-प्रीति रखना तो अब नाम को भी नहीं।

अब तुमको मुख्य मुख्य त्योहारों के नाम और उस दिन क्या क्या होता है और बताती हूँ, पीछे प्रत्येक त्योहार के अर्थ भी बताऊँगी।

पहिला त्योहार तीज है, सो सावन सुदी तृतीया को होता है, जिसको 'सुहाग तीज' वा 'हरियाली तीज' कहते हैं। यह त्योहार केवल स्त्रियों ही का है। पुरुष इसमें सम्मिलित नहीं होते हे। इस दिवस झूला झूलने को मुख्य काम समझती है, जिससे अभीष्ट यह रक्खा है कि वर्षाकाल में जो घरों में वायु का अवरोध रहता है, झूला झूलने से समारसेवन का फल हो जाता है और मेघमाला के कारण मलार रागिनी गाई जाती है, जो ऐसे समय में बहुत ही प्रिय लगती है और चित्त को प्रफुल्लित करती है। परन्तु अब इस अभीष्ट अभिप्राय के विपरीत कार्य होता है अर्थात् थोड़े से स्थान में इतनी स्त्रियाँ इकट्ठी हो जाती हैं कि, वहाँ की वायु को और उलटा विषवत् कर के बिगाड़

देती हैं। बहुत सी स्त्रियों का थोड़ी सी जगह में ऐसे काल में इकट्ठा होना ठीक नहीं है।

इसके पीछे सावन सुदी पूर्णमासी को सलून्यो होती है। इस दिन सब कोई अपनी बहिन, भतीजी, फूफी इत्यादि और ब्राह्मणों से रक्षाबन्धन (राखी) बँधवाते हैं और दक्षिणा देते हैं। कारण इस रक्षाबन्धन का यह ज्ञात हुआ है कि, एक बेर राजा इन्द्र राक्षसों से लड़न को चढ़े थे। तब प्रस्थान के समय उनके हाथ में उनकी स्त्री इन्द्राणी ने रक्षाबन्धन बाँध दिया था। जिसमें राई, हल्दी, सुपारी, दूब, रोली, चाँवल और गुड़ बाँधा था और वह दिन आज को तिथि का था। राजा इन्द्र की जय रही। इसी कारण उस समय से यह त्योहार हो गया कि, हर कोई चाहे वह कहीं जाव या न जावे, इस तिथि को राखी अवश्य बँधवावेगा।

पर अब यह बात तो रही नहीं कि, वही वस्तु राखी में बाँधी जावें। अब तो उनके स्थान में झूठे मोती, मूँगे राखी में लगाये जाते हैं, जिनसे न कुछ प्रयोजन, न लाभ।

दशहरा का त्योहार इसके पीछे कारसुदी दशमी को होता है। कोई तो इसका कारण यह बतलाता है कि, रामचन्द्रजी महाराज ने आज के दिन रावण पर

चढ़ाई की थी । कोई कहता है कि, आज के दिन रावण को जीता था, जिसके कारण इसका नाम 'विजयदशमी' भी पड़ गया है । एक कारण यह भी बतलाते हैं कि, जेठ सुदी दशमी से राजाओं की सेना अपने अस्त्र शस्त्र रख देती थी । क्योंकि वर्षाकाल में चढ़ाई और लड़ाई सब बन्द रहती थीं । अब क्वारसुदी में वर्षाकाल का अन्त हो जाता है । इसलिये सैनिकलोग अपने अपने हथियार निकाल उज्ज्वल करते और ओपते थे । घोड़ों आदि को सजाते थे । सो वह रीति रजवाड़ों में अभी तक बर्ती जाती है कि, राजा की सवारी बड़ी धूम धाम और गाजे-बाजे से निकलती है और छोंकर के वृक्ष की पूजा होती है । जैसा कि 'शमीवृक्ष' की पूजा का विधान इस तिथि को कहीं कहीं पर पुस्तकों में किया गया है, पर बहुधा बरन समस्त स्थानों में देखा गया है कि, लोग आज के दिन नौरते (जौ के पेड़, जिनको आठ, दस दिन पहिले हाँडियों में बो देते हैं) अपनी अपनी बहिन, भानजी, फूफी इत्यादि से सलून्यों की भाँति टॅकवाते हैं और उनको तथा ब्राह्मणों को दक्षिणा देते हैं ।

इसका कुछ अभिप्राय ज्ञात नहीं होता है कि, ऐसा करने का क्या प्रयोजन ।

करवाचौथ–यह त्योहार सुहागिन स्त्रियों ही का है

और पतिनिमित्त किया जाता है । जब पाण्डव वन को गये थे, तब द्रौपदी ने पति की प्रसन्नता के निमित्त किया था। सो अब स्त्रियाँ इसको करती तो हैं, परन्तु पति की प्रसन्नता का कुछ विचार और ध्यान नहीं करती हैं क्योंकि त्योहारों के दिन ही अपने पति से रार ठान देती हैं ।

दिवाली का त्योहार जो सब त्योहारों में बड़ा और सुथरा है, कार्त्तिक बदी अमावस्या को होता है । वर्षा के कारण जो हाट, घाट, मन्दिर इत्यादि बिगड़ गये थे, वे सब सुधार कर आज के दिन सजाये जाते है । नये लेखे चलने मारम्भ होते हैं । धन, धान्य भी पकने पर आजाता है । जिस कारण आह्लाद और हर्ष होता है ।

दिवाली नाम इसका यों पड़ गया कि, इस अमावस्या को अपने अपने मन्दिर की शोभा दिखाने के हेतु हर कोई दिये बालता है । इसलिये यह दियेवाली अमावस्या कहलाती थी । 'दियेवाली' का संक्षिप्त होकर 'दिवाली' हो गया ।

दिये बालने का कारण एक यह भी माना जाता है कि, इस तिथि को यमराज, धर्मराज और मृत्यु का तर्पण करना और देवताओं का पूजन करना, स या वा रात्रिसमय राहबाट, बाग, बावड़ी, कूप, तड़ाग, अटा, अटारी इत्यादि पर दीपक जलाना । दूसरे दिन स्नान कर के पितरों

का तर्पण करना लिखा है, परन्तु अब कुछ नहीं होता है
नाम मात्र को कोई कोई जन लक्ष्मी का पूजन कर लेत
हैं। नहीं तो रात भर, वरन दूसरे दिन तक जुआ खेल
जाता है, जिसको अगाड़ी के साल भर की हार, जी
का शकुन मानते हैं।

अन्नकूट दिवाली के दूसरे दिन होता है। इस दि
वर्षाऋतु में उत्पन्न हुई समस्त वस्तुओं का भोज्य बना
जाता है और जो जो वस्तु इस ऋतु की अबतक खाने
नहीं लाई जाती थीं, इस कारण कि, वे पूर्ण परिपा
स्वादिष्ट और गुणकारी नहीं हुई थीं, सो आज से उन
खाने लगते हैं। जैसे ईख, कचरी इत्यादि, परन्तु देखने
आया है कि अब तो बहुत से मनुष्य इन वस्तुओं
अन्नकूट होने के पूर्व ही खाने लगते हैं। सो यह अन्न
भी पूर्ण प्रकार से जैसा चाहिये, नहीं होता है।

गोवर्द्धनपूजा—यह भी इसी परिवा को रात्रि
समय होती है। इस त्योहार के गुण तो उसके नाम ही
स्पष्ट और प्रत्यक्ष हैं। यह गौ माता की महिमा प्र
करने को नियत किया गया था कि, लोग गौ का उत
ही मान करके उसकी रक्षा करें, जितने उससे उनको ल
पहुँचते हैं। जैसे दूध, दही, घी, गोबर, ईंधन (उपले
खेतों को खाद। बैल जो धरती को जोतते हैं, गाड़ी

खींचते और बोझ को ढोते हैं और मरने पर भी उनकी खाल की अनेक वस्तुएँ चरसे, जूते इत्यादि बनती हैं, इस लिये गौ को लक्ष्मी तुल्य मान कर वर्ष भर में एक दिन उनका सम्मानपूर्वक पूजन करें। सो तो होता है, परन्तु गौ माता की रक्षा, जो इसका मुख्य अभीष्ट था, वह नहीं होती है। अर्थात् बूढ़ी, ठेंठी (ठाड़ी जो दूध न देवे) गौ को, जिससे इतने लाभ उठाये हैं, अपने घर बाँध कर रक्षा करें। बधिक आदि के हाथ लोभवश बेच न डालें। सो नहीं होता है। प्रायः अधिकांश बेच ही डालते हैं।

देवउठान—यह कार्तिक सुदी एकादशी को होता है। जैसे वर्षा के आरम्भ होने पर आषाढ़ सुदी एकादशी से शुभ कार्य और यात्रा आदि बन्द होजाती हैं। बहुत से फल-फलारी तथा अन्य वस्तुओं के हानिकारी होजाने से खाना बन्द कर देते हैं। उसी भाँति इस तिथि को वर्षा की समाप्ति होने से शुभ कर्मों और यात्रादि का आरम्भ हो जाता है और बहुत सी वस्तुओं को (जिनका खाना अब तक बन्द था) खाने लगते हैं।

लोगों का यह विश्वास कि, 'देवता लोग जो सो गये थे, सो इस तिथि को अब जागे हैं' ठीक नहीं है, किन्तु यह बात है कि, देव अर्थात् दिव्यगुण (श्रेष्ठ) वाले

पुरुष जो वर्षाकाल में बैठे थे वे अब उत्तम कार्यों के कर को उठ बैठे । यह अभिप्राय है । सो लोग इसको त विचारते नहीं हैं, उनका विश्वास है कि, देवतालोग ज आकाश में रहते हैं, वर्षा के चार महीने भर सोते हैं शेष आठ महीने जागते हैं ।

वसन्तपंचमी–यह माघ सुदी पंचमी को होती है । इस दिन नाच, रंग कर के लोग अत्यन्त हर्ष मनाते हैं । जिस प्रकार श्रावणमास में मलार रागिनी अति प्रिय लगती है, उसी प्रकार इस वसन्तऋतु में वसन्त और होली का गान अतिप्रिय और सुरीला लगता है । अधिक हर्ष का कारण यह भी होता है कि, अब हिमऋतु की समाप्ति होती है और वसन्तऋतु जो सब ऋतुओं का राजा माना गया है, उसका अब आरम्भ होता जाता है । अंग में उमंग आने लगती है । नाना जड़ी, बूटी फूट निकलती है । कृषि भी पकने लगती है । आम में मौर आना प्रारम्भ हो जाता है और चित्त में आनन्द भरने लगता है । उसीके कारण उत्सव मनाया जाता है ।

होली का त्योहार फागुन सुदी पूर्णमासी को होता है और बड़ा त्योहार माना गया है । यह अधम श्रेणी के मनुष्यों अर्थात् शूद्रों का त्योहार था क्योंकि आज के दिन प्रह्लादजी को, जो दैत्यकुल में परम ईश्वरभक्त थे,

उनके पिता ने अपनी भगिनी होलिका की गोद में बिठा कर अग्नि में जलवा दिया था। उस समय दैत्यलोग यह हर्ष मनाते थे कि, आज प्रह्लाद भस्म हो जावेगा और होलिका जीवित निकल आवेगी। इसलिये वे मद पी कर उन्मत्त होगये थे और उच्च स्वर से 'जय होलिका माई की' 'जय होलिका माई की' उच्चारण करते थे और मदमत्त होने के कारण अपशब्द भी उनके मुख से निकलते थे। सो यह त्योहार दैत्यकुल के अर्थात् शूद्रों के हर्ष मनाने का है। सभ्यलोगों या उच्च वर्णों का नहीं है, परन्तु अब चारों वर्ण इसको मनाते हैं और उन्मत्त हुए बकते फिरते हैं। यह नहीं विचारते कि, होलिका कौन थी और उसकी जय हमको मनानी चाहिये या नहीं और शूद्रों के आचरण हम क्यों धारण करें ? यह तो त्योहारों का अतिसंक्षिप्त वृत्तान्त रहा। अब तुझको इनका अर्थ भी बताती हूँ कि, जिस प्रकार ये त्योहार बुद्धिमानों को मनाने चाहियें।

(१) तीज–तीन बात तज (१) अपने पति से कपट, (२) दुराव और (३) झूठ, जिससे तेरा सुहाग अचल रहे।

(२) सलूनों–जैसे द्विजलोग वर्ष भर के पापों का प्रायश्चित्त आज करते हैं, उसी भाँति तू भी अपने वर्षभर के अपराध दूसरों से क्षमा करा ले और दूसरों के आप

पुरुष जो वर्षाकाल में बैठे थे वे अब उत्तम कार्यों के करने को उठ बैठे । यह अभिप्राय है । सो लोग इसको तो विचारते नहीं हैं, उनका विश्वास है कि, देवतालोग जो आकाश में रहते हैं, वर्षा के चार महीने भर सोते हैं, शेष आठ महीने जागते हैं ।

वसन्तपंचमी–यह माघ सुदी पचमी को होती है। इस दिन नाच, रंग कर के लोग अत्यन्त हर्ष मनाते हैं। जिस प्रकार श्रावणमास में मलार रागिनी अति प्रिय लगती है, उसी प्रकार इस वसन्तऋतु में वसन्त और होली का गान अतिप्रिय और सुरीला लगता है । अधिक हर्ष का कारण यह भी होता है कि, अब हिमऋतु की समाप्ति होती है और वसन्तऋतु जो सब ऋतुओं का राजा माना गया है, उसका अब आरम्भ होता जाता है। अंग में उमंग आने लगती है । नाना जड़ी, बूटी फूट निकलती हैं । कृषि भी पकने लगती है । आम में मौर आना प्रारम्भ हो जाता है और चित्त में आनन्द भरने लगता है । उसीके कारण उत्सव मनाया जाता है ।

होली का त्योहार फागुन सुदी पूर्णमासी को होता है और बड़ा त्योहार माना गया है। यह अधम श्रेणी के मनुष्यों अर्थात् शूद्रों का त्योहार था क्योंकि आज के दिन प्रह्लादजी को, जो दैत्यकुल में परम ईश्वरभक्त थे,

उनके पिता ने अपनी भगिनी होलिका की गोद में बिठा कर अग्नि में जलवा दिया था। उस समय दैत्यलोग यह हर्ष मनाते थे कि, आज प्रह्लाद भस्म हो जावेगा और होलिका जीवित निकल आवेगी। इसलिये वे मद पी कर उन्मत्त होगये थे और उच्च स्वर से 'जय होलिका माई की' 'जय होलिका माई की' उच्चारण करते थे और मदमत्त होने के कारण अपशब्द भी उनके मुख से निकलते थे। सो यह त्योहार दैत्यकुल के अर्थात् शूद्रों के हर्ष मनाने का है। सभ्यलोगों या उच्च वर्णों का नहीं है, परन्तु अब चारों वर्ण इसको मनाते हैं और उन्मत्त हुए बकते फिरते हैं। यह नहीं विचारते कि, होलिका कौन थी और उसकी जय हमको मनानी चाहिये या नहीं और शूद्रों के आचरण हम क्यों धारण करें ? यह तो त्योहारों का अतिसंक्षिप्त वृत्तान्त रहा। अब तुझको इनका अर्थ भी बताती हूँ कि, जिस प्रकार ये त्योहार बुद्धिमानों को मनाने चाहियें।

(१) तीज—तीन बात तज (१) अपने पति से कपट, (२) दुराव और (३) झूठ, जिससे तेरा सुहाग अचल रहे।

(२) सलून्यो—जैसे द्विजलोग वर्ष भर के पापों का प्रायश्चित्त आज करते हैं, उसी भाँति तू भी अपने वर्षभर के अपराध दूसरों से क्षमा करा ले और दूसरों के आप

क्षमा कर दे । स्रावकलोगों में इसी प्रकार की रीति प्रचलित है कि वे लोग भादोंसुदी परिवा को आपस में एक दूसरे से क्षमा कराते हैं, जिसको वे 'खिमाई' कहते हैं। यह रीति उनमें भादों के व्रतों के पीछे होती है ।

(३) दशहरा-(१) अपनी दशों इन्द्रिय (अर्थात् पाँच ज्ञानइन्द्रिय और पाँच कर्मइन्द्रिय) को हरा-अभिप्राय यह है कि, उनको अपने वश में रख । उनसे कोई अनुचित कर्म न होने दे । (२) दूसरा अर्थ यह कि, दश बातें प्यार-प्रीति के खोनेवाली हैं । उनको हरा अर्थात् छोड । वे बातें ये हैं-ईर्षा, द्वेष, मद, मिथ्या, निन्दा, अपकार, कृतघ्नता, वैर, लगालूतरी और बुराई ।

(४) दिवाली-देनेवाली सुख की, प्यार-प्रीतिवालों को और दान आश्रितों को ।

(५) श्रीपञ्चमी-पाँच श्री को संचय कर अर्थात् (१) मुखश्री (मुखकी कान्ति), (२) श्री (धन), (३) श्री (लक्ष्मी जैसी अपने पति की सेवा), (४) राजश्री (राजद्वार में मान), (५) मित्रश्री (परस्पर प्यार-प्रीति) ।

(६) होली-किसी उपकार के कारण आप दूसरी की होली वा दूसरी अपनी होली और मन का कपट और अन्तर भस्म कर दिया ।

हे बहिने! अब तू त्योहारों का अर्थ समझी। मैने बहुत ही थोड़ा सा तेरे समझानेमात्र को कह दिया है। बहुत न कह सकी। अब तुझ से व्रत और कहे देती हूँ, जिन्होंने स्त्रियों को बहुत ही दुःख दे रक्खा है कि, सदा अकाल जैसी मारी ही रहती है। घर में होते हुए भी अन्न नहीं खातीं। सो ये भी उनकी भूल के कारण से अथवा उनके उपदेष्टाओं के बहकाने से हैं क्योंकि व्रतों का प्रयोजन यह नहीं था, जैसा कि, स्त्रियाँ आज कल समझी हुई हैं और व्रत करती हैं।

व्रत का अभिप्राय क्या कहूँ, अब तो उसका अर्थ भी उलट गया है क्योंकि व्रत 'वृ' धातु से निकला है, जिस का अर्थ 'पसन्द करना' है अर्थात् एक किसी अच्छी बात को स्वीकार कर के धारण कर लेना। जैसे सत्य का व्रत, परोपकार का व्रत, हिंसा अथवा छल, कपट और मिथ्या के त्याग का व्रत, परन्तु अब इसका अर्थ उपवास अर्थात् भूखे रहने का हो गया है। पूर्व समय में यह बात नहीं थी, पर अब हो गई है। इस पूर्व प्रथा का पता किसी किसी बात में अब भी पाया जाता है। जैसा कि, वर्षाऋतु में बहुत सी स्त्रियां किसी विशेष वस्तु का खाना छोड़ देती है। जैसे कोई स्त्री नमक नहीं खाती, कोई हरी भाजी नहीं खाती, कोई ऐसी वस्तु खाना छोड़

देती है, जो हर अथवा हल द्वारा उत्पन्न होती है। वे केवल ऐसी वस्तु खा खा कर चार महीने अपना निर्वाह कर लेती हैं, जैसे सिंघाड़ा, पसाई के चाँवल, कूटू, फल-फलारी इत्यादि। बहुधा ऐसी वस्तु त्यागी जाती हैं, जो उनको अत्यन्त प्रिय थीं। इससे यह अभिप्राय है कि, मन मारने की टेव पड़े और दूसरा यह कि, वर्षाकाल में भोजन को पचाने की शक्ति घट जाती है और भोजन भली भाँति पचता नहीं है। इस कारण ऐसे पदार्थों को भोजन में लाया जावे, जो सहज में पच जावें। पहिले अभिप्राय से यह लाभ भी है कि, यदि ऐसी टेव मनुष्य को रहे तो किसी समय जो किसी वस्तु पर मन चले और वह उस समय न मिल सके तो मन को दुःख वा खेद न होवे।

पर अब यह प्रथा तो उठ गई अर्थात् इन बातों को तो कोई करती नहीं है। अब तो व्रत से अभिप्राय उपवास वा भूखों मरने का रख लिया गया है और इसी कारण स्त्रियाँ उपवास करती हैं और व्रतों के ठीक और यथार्थ अभिप्राय को नहीं जान सकी हैं।

व्रत से केवल उपवास करना ही समझ लिया गया है, जो स्त्रियों के लिये शास्त्रों में अत्यन्त वर्जित है क्योंकि व्रत करने से पति और पुत्र दोनों की आयु घटती है,

पर आजकल की मूर्ख स्त्रियाँ इसको उलटा समझ रही हैं और इसीलिये व्रत करती है, जिसका फल यह होता है कि, पति मर जाते हैं और पुत्र भी रोगी बने रहते हैं वा परलोक सिधार जाते हैं और आप राँड़ हो कर बैठती है।

जिस स्त्री ने व्रत किया, वह दुर्बल तो होहीगी। स्त्री के दुर्बल होने से दूध भी निर्बल हो ही जाता है, जब भोजन ही न खावेगी तब दूध कहाँ से आवेगा, बालक भूखा रहेगा, दुर्बल होगा और आयु घटेगी। इसी प्रकार पति की दशा होगी क्योंकि जो स्त्री रोगी रहती है अथवा दुर्बल रहती है, उसके संग से उसका पति भी रोगी और दुर्बल होजाता है। मै तुझे लज्जा के भय से इस समय नहीं बता सक्ती हूँ कि, स्त्री के रोग पति की देह में किस प्रकार आ जाते हैं। बड़ी स्त्रियाँ इसको जानती हैं और बड़ी होने पर तू भी जान लेगी, परन्तु प्रचलित प्रथानुसार उपवास भी किया जावे तो उनके गुण जानने चाहियें, जिससे कुछ लाभ भी हो। उपवास के गुण ये है —

(१) पेट की ग्लानी पचाने का।

(२) भूख का दुःख ज्ञात होने का कि, यदि कोई भूखा आवे तो उसके दुःख का यथावत् ज्ञान हो जावे कि, भूख में यह क्लेश होता है। जैसा कि, उपवास के दिन न खाने से हमको हुआ था।

जिस मनुष्य को भूख लगने से पहिले ही नित पेट भर भोजन मिल जाता है, उसको भूख की व्यथा का ज्ञान नहीं हो सक्ता है।

(३) जो अन्न हमारे इस दिन के एक समय के भोजन न करने से बच रहा, वह किसी दीन वा दुःखी अथवा भूखे, प्यासे को दान दे दिया जावे कि, जिसमें हमारी कुछ हानि भी न हो, वरन पुण्य हो और दूसरे का संकट कटे क्योंकि यदि हम खाते, तब भी यह अन्न उठता। अन्न उसके उठने में दो गुण हुए।

पर स्त्रियों के व्रत में यह बात और भी सोची गई है कि, प्राचीन कथाओं को और अपने धर्म को भी स्मरण रख सकें, भूल न जावें क्योंकि जिस रीति से कि स्त्रियाँ व्रत करती हैं अर्थात् वर्ष के नियत दिन को उपवास करती हैं और कहानी सुनती हैं, कुछ दान, पुण्य भी करती हैं, परन्तु इस प्रकार के व्रत से जो लाभ निकलते हैं, आज कल की मूर्ख स्त्रियाँ उनको भी नहीं समझतीं, बूझतीं, चाहे अन्धपरम्परा से व्रत बराबर बड़े नियम से करती हैं। कोई व्रत तो पातिव्रतधर्म की और कोई व्रत दयापालन की महिमा की शिक्षा देता है कि, स्त्रियाँ इस बहाने से पातिव्रत वा सतीधर्म इत्यादि की महिमा भूल न जावें, जिसमें ऐसे श्रेष्ठ धर्मों को त्याग बैठें। इसीलिये इन व्रतों

के द्वारा कहानी आदि सुनने के कारण उनको प्रति-वर्ष स्मरण बना रहेगा।

व्रत का प्रयोजन भूखे मरने का नहीं है। इनके नियत करनेवालों का यह अभिप्राय न था, वरन यह प्रयोजन था कि, मैंने इस बात की रुचि धारण की है अर्थात् दया, धर्म, सत्यभाषण, पातिव्रत इत्यादि की। सो स्त्रियाँ अब व्रत तो करती हैं और कहानी भी सुनती हैं, पर व्रतों के मुख्य उद्देश्य को नहीं समझती हैं और व्रत भी इतने बढ़ा लिये हैं कि, वर्ष भर के दिन तो ३६० ही होते हैं पर व्रत गिनो तो ४६०, वरन ५०० होंगे।

प्रथम तो ७ वारों के सात व्रत से ३६० तो वैसे ही हो गये। रहे नवदुर्गा, गणेशचौथ, एकादशी, पूर्णमासी, प्रदोष और दूसरे जैसे, वामनद्वादशी, हरछठ, शिवचतुर्दशी इत्यादि, क्योंकि जैसे कोई दिन सप्ताह भर में व्रत से खाली नहीं रहने दिया, उसी प्रकार कोई तिथि भी ऐसा नहीं छोड़ी, जिसको व्रत न माना गया होवे क्योंकि प्रति तिथि का यह लेखा रक्खा गया है।

(१) अमावस्या पितरों की, (२) प्रतिपदा ब्रह्मा की, (३) द्वीज अश्विनीकुमार की, (४) तीज गौरी की, (५) चौथ गणेश की, (६) पंचमी नागों की, (७) छठ स्वामिकार्त्तिक की, (८) सप्तमी मुनियों

की, (९) अष्टमी ऋषियों की, (१०) नवमी दुर्गाओं की, (११) दशमी कुलदेव की, (१२) एकादशी विष्णु की, (१३) द्वादशी वामनावतार की, (१४) त्रयोदशी महादेव की, (१५) चतुर्दशी नृसिंह की, (१६) पूर्णमासी चन्द्रमा की ।

पर इससे तो मेरा कुछ प्रयोजन नहीं । मैं तो तुझे केवल यह बताती हूँ कि, ये व्रत जो स्त्रियाँ रखती हैं, सो रखने चाहियें वा नहीं अथवा उनके पलटे क्या करना चाहिये ? यह तो मैं तुझे पहिले ही बता चुकी हूँ कि, स्त्री के उपवास करने से बहुत सी हानियाँ होती हैं आपको भी, पुत्र को भी और पति को भी, जिनके निमित्त वे व्रत रहती हैं। क्योंकि व्रत चार प्रकार के हैं।

(१) पतिनिमित्त, (२) पुत्रनिमित्त, (३) भ्राता निमित्त, (४) अपनी मोक्षनिमित्त ।

व्रत तो बहुत हैं, मैं इस समय सब गिनाना नहीं चाहती हूँ । केवल तत्त्व तत्त्व बताये देती हूँ कि, जो कहानी व्रत के दिन सुनाई जाती है, उसे मन में धारण कर वैसा ही काम करे । न कि दिन भर भूखी मरे । भूखी मरने से कुछ नहीं होता, किन्तु जो कुछ उस व्रत से अभीष्ट है, उसे करे । अब पहिले मे तुझे वे व्रत बताती हू, जो पतिनिमित्त किये जाते हैं और ये ही नव

अधिकतर हैं। मैं तिथि वार क्रम से कहती हूँ। सुन! चैत्रसुदी ३–इस दिन बहू बेटियाँ सब व्रत रहती हैं, जो सुहागिन होती हैं। विधवा स्त्रियें इस व्रत को नहीं करतीं। महादेव और गौरापार्वती की मूर्त्ति बना कर पूजती हैं। जिसे 'गनगौर' कहती हैं। उद्देश्य इसका यह है कि, जैसा महादेव पार्वतीजी में स्नेह था, वैसा ही हममें हो। पार्वती की भाँति सुहाग अचल बना रहे और जन्म जन्म में यही पति मिले, जैसे पार्वतीजी को मिला था। यह वरदान माँगती हैं, पर इसके अभिप्राय को नहीं समझतीं कि, उनमें क्यों ऐसा अचल और निष्कपट प्रेम रहा? अर्थात् जो जो बातें गौरापार्वतीजी ने पातिव्रत धर्म के पालन में कीं, उनको हम भी करें। सो ऐसा तो करतीं नहीं हैं क्योंकि पातिव्रतधर्म तो नाममात्र को नहीं, केवल व्रत ही व्रत हैं, पर पार्वतीजी का सा दुर्लभ फल एक दिन के उपवास में चाहती हैं। सो क्योंकर मिल सक्ता है? मैंने देखा है कि, जो स्त्रियाँ नितप्रति अपने पति को दुःख और क्लेश देती रहती हैं, प्रातःकाल से आधीरात तक रार रखती हैं, छल, कपट करती हैं, झूठ बोलती हैं, वे भी इस व्रत को अवश्य रखती हैं। चाहे उसी दिन पति से खटपट कर डालें। जो स्त्री ऐसी हैं, उनका व्रत वृथा है, कुछ भी फल और लाभ नहीं।

जेठ की अमावस्या–जिसे 'बरसाती-अमावस्या' कहते हैं। इस दिन वटके वृक्ष के नीचे जाकर सब सखी सहेली मिल कर पूजती हैं और आपस में एक दूसरे को जयमाल पहिनाती हैं। कोई कोई वृक्ष की डाली मँगा कर घर ही में पूज लेती हैं। यह व्रत पातिव्रत सिखाने को नियत किया गया था। यह बरसाती 'वटसावित्री' का अपभ्रंश है। इस दिन सब सुहागिन स्त्रियाँ व्रत रखती हैं और राजा सत्यवान् की रानी सावित्री की कथा सुनती हैं, जिसने अपने सत्य सुकृत और पातिव्रत के बल द्वारा यमराज से अपने ससुर द्युमत्सेन के और सास के नेत्र और राज और अपने पिता अश्वपति के १०० पुत्र बचा लिये और अपने पति की आयु ४०० वर्ष की करा ली।

इससे सब स्त्रियों को यह पातिव्रतधर्म पालना चाहिये और इस व्रत से याद रखना चाहिये और जो स्त्री वर्ष भर तक इस धर्म को अच्छी भाँति निबाहे, उसके गले में उसकी सहेली जयमाल डालें, जिससे दूसरी स्त्रियों को लाज आवे और दूसरे वर्ष वह भी करें। जेठ में गरमी अधिक होने से इस वटवृक्ष के नीचे एकत्र होती हैं और अमावस्या के दिन (जिसको सावित्री को यह वर मिला था) इसीलिये यह व्रत किया जाता है।

भादौंसुदी ३–जिसे 'हरतालिका' तीज कहते हैं। इसे भी सब स्त्रियाँ रखती हैं। यह व्रत सब से प्रथम पार्वतीजी ने किया था, जिनके कारण इसका नाम 'हरतालिका' पड़ा। जब पार्वतीजी राजा हिमाचल के यहाँ जन्मीं और थोड़ी ही अवस्था में सब पढ़ लिया तब उनके लिये वर की खोज हुई कि, कोई ऐसा ही श्रेष्ठ वर इनके लिये होना चाहिये। इतने में नारदजी ने उनके पिता से आ कर कहा कि, पार्वती का विवाह जो विष्णु से हो तो अच्छा है। पार्वती के योग्य वर वे ही हैं, परन्तु पार्वती के मन में महादेवजी बस रहे थे। इसलिये शिवजी से विवाह करने के निमित्त तप करने को वे चली गई और आज के दिन उनकी प्रार्थना पूरी हुई। तब से यह व्रत चला है और उद्देश्य इसका यह है कि, सब स्त्रियाँ अपने अपने पति से विवाहने को ऐसा ही पक्का मन रक्खें और किसी प्रकार न बहँकें।

इस व्रत में आठ प्रहर उपवास करना होता है। दूसरे दिन जा कर भोजन करना पड़ता है। रात को जागरण करना होता है। यह सब व्रतों में कठिन रक्खा गया है। इस कारण से कि, एक दिनरात के उपवास से इतना कष्ट होता है तो पार्वतीजी को वर्षों के उपवास में न जाने कितना कष्ट हुआ होगा! जिसके पलटे उनको

मनवाञ्छित फल मिला, पर आजकल की स्त्रियाँ ए
दिन तो व्रत करती हैं और फल ऐसा माँगती हैं,
पार्वतीजी को सहस्रों वर्ष की घोर तपस्या करने प
मिला था ।

अब की स्त्रियाँ वर्ष भर वा अनेक बेर तो लड़ती रहत
हैं । तनिक सी बातों में रूठती हैं और एक दिन के व्र
रखने से वह फल चाहती हैं । सो कब सम्भव है । हाँ
यदि तुम भी ऐसा ही निश्चल मन अपना अपने प
की ओर से रक्खो, जैसा पार्वतीजी ने रक्खा था कि
नारद के बहँकाने पर भी विष्णु के सग रह वैकुण्ठ क
सुख न चाहा, पर योगीश्वर महादेव से विवाह किया ।

भादौंसुदी ५–जिसे 'ऋषिपञ्चमी' भी कहते हैं
यह इसलिये रक्खा गया है कि, इस दिन उत्तक ऋषि
ने अपनी पुत्री से व्रत कराया था । इसका कारण य
था कि, उत्तंक ऋषि की कन्या को कृमिरोग होगया थ
क्योंकि वह स्रीधर्म के दिनों में कुछ अनाचार कर बैठ
थी और आचार में भंग डाल ली थी । जो नियम इ
चार दिन के लिये विधान किये गये हैं, उनके विरुद्ध
उसने कार्य कर लिया था अर्थात् पति के पास चली
गई थी । सो उसके पिता ने आज के दिन उससे व्रत
कराया था और ऐसा भोजन उसको कराया था, जे

उस अन्न से बनता है कि, जो हल द्वारा, उत्पन्न नहीं होते—जैसे सिंघाड़ा, पसाई इत्यादि। इसके सेवन से उसका रोग जाता रहा। कुछ औषधि भी अवश्य दी होगी क्योंकि केवल व्रत से रोग नहीं जा सक्ता है। अब स्त्रियाँ व्रत तो करती हैं और ऐसे ही अन्न के भोजन भी करती हैं, जो बिना जुती हुई भूमि में उत्पन्न होते हैं, पर मुख्य बात को नहीं जानतीं। इस व्रत से यह याद रखना चाहियें कि, मासिक धर्म के चारों दिनों में स्त्री को बड़े नियम के साथ आचार, विचार से रहना चाहिये कि, कोई हानि न होने पावे।

इसका नाम ऋषिपञ्चमी यों रक्खा है कि, सप्तऋषि अर्थात् कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वशिष्ठ की सम्मति से कन्या की चिकित्सा की होगी। क्योंकि ये सातों ऋषि एक ही स्थान पर साथ साथ रहते थे।

पुत्र निमित्त के व्रत

आषाढ़ में शीतला के व्रत होते हैं। ठंढा और बासी भोजन स्त्रियाँ करतीं हैं। इससे यह अभिप्राय है कि, ये दिन शीतला निकलने के होते हैं। जो माता दूध पिलाने वाली हैं, वे ऐसा करें कि, जिससे उनके दूध में शीतल गुण उत्पन्न हों और शीतला न निकलने पावें। व्रत रखने

की कुछ आवश्यकता नहीं है। व्रत से तो और गरमी बढ़ती है। केवल ठंढी वस्तु का सेवन चाहिये। सो वह भी उस स्त्री को, जो दूध पिलाती हो न कि सब को, जैसा कि आजकल करती हैं। जो बालक माँ का दूध नहीं पीते, भोजन करते हैं, उनकी माताओं को ऐसे भोजन की कुछ आवश्यकता नहीं है, वरन उन बालकों ही को है और इसी प्रकार चैत में भी कराना चाहिये, जिसके कारण 'बासोरा' किया जाता है।

पुत्रवती स्त्रियाँ प्रति चौथ को गणेशजी का व्रत करती हैं। जैसा 'सकटचौथ' आदि को। इस अभिलाषा से कि, पुत्र गुणवान् हों। सो यह भी उनका भ्रम है। बिना पढ़ाये और केवल व्रत करने से कोई गुणवान् नहीं हो सक्ता है। यदि गुणवान् बनाना है तो लिखावो, पढ़ावो।

कार्त्तिकबदी८–जिसको 'अहोई अष्टमी' कहते हैं। इस व्रत को पुत्रवती स्त्रियाँ ही रखती हैं। इसका वर्णन दूसरी बेर करूंगी।

व्रत जो भाई की प्रीतिनिमित्त किये जाते हैं।

सावनसुदी५–जिसे 'नागपञ्चमी' कहते हैं। इसमें बेटियाँ भाई की प्रीति के गीत गाती हैं, पर व्रत रखना वृथा है। प्रीति की रीति ही करनी चाहिये। व्रत से कुछ नहीं।

कार्त्तिकसुदी २–जिसे 'यमद्वितीया' और

'भाईदूज' भी कहते हैं। ऐसा व्यवहार कर रक्खा है कि, बहिन के घर का भोजन बड़ा भाई नहीं करता है, परन्तु इस तिथि को बहिन के घर ही का भोजन किया जाता है और बहिन को कुछ रुपये, पैसे यथा श्रद्धा भाई देता है। कारण इसका यह रक्खा है कि, ऐसा करने से भाई, बहिन की प्रीति में अन्तर न आने पावेगा, किन्तु बनी रहेगी।

इसी कारण आज के दिन स्त्रियाँ व्रत रह कर बहिन भाई की कहानी सुनती हैं। परन्तु भाई से जिनकी प्रीति भी नहीं है, व्रत वह भी रहती हैं। उनको भाई की प्रीति से कुछ काम नहीं है, व्रत से काम है। अब तुझको मैं व्रत बताती हूँ, जो अपनी मोक्षनिमित्त किये जाते हैं। सब से प्रथम चैत सुदी परिवा को व्रत रखते हैं। जिसे सबत्सर की परिवा कहते हैं। यह इसलिये है कि, सब कोई जानता रहे कि, आज के दिन परमेश्वर ने इस सृष्टि को पैदा किया था। हम सब को उसका धन्यवाद देना उचित है। इसी दिन से नवदुर्गा का व्रत रखते हैं और बलिदान देते हैं, पर इसमें बड़ी भूल है कि, बलिदान बकरे और भैंसे का देते हैं क्योंकि इनसे ठीक अभिप्राय कुछ और ही है। इस कारण कि, जीवहत्या करना कभी अच्छा नहीं है। इन दोनों पशुओं के बलिदान से सरस्वती देवी की प्रसन्नता मानी है, पर विचार से ज्ञात हो सक्ता है कि, पाप करने से कब

फल अच्छा मिलसक्ता है ? इस बलिदान से इन पशुओं के वध का अभिप्राय कदापि नहीं है, किन्तु यह है कि, जो भैंसा और बकरा तुम्हारे देह में बसते हैं और जिन को पालने से सरस्वती तुमसे अप्रसन्न होती है अर्थात् तुम्हारी बुद्धि हीन हो जाती है, उनको शरीर से निकाल कर उनका बलिदान कर दो। यह अलंकार में वर्णन किया है। अब इसका सविस्तर वृत्तान्त लिखा जाता है अर्थात् भैंसे से तो क्रोध का और बकरे से काम का अर्थ है क्योंकि भैंसे का क्रोध और बकरे का काम विख्यात है और देह में काम, क्रोध के रहने से बुद्धि मलीन रहती है और मनुष्य अंधासा हो जाता है, पर इनके दमन करने से बुद्धि निर्मल हो जाती है और वही सरस्वती की प्रसन्नता है।

आषाढ़ में व्यासपूनों को गुरुपूजा होती है। इस लिये कि, गुरु के उपकार को न भूल जायँ और वर्ष भर की जो कुछ शंकाएँ हों, उनका आज के दिन समाधान कर लिया जावे।

भादौंबदी ४–जिसको 'बहुलाचौथ' कहते हैं। यह सत्य बोलने की प्रशंसा में है और इस दिन इसीकी कहानी स्त्रियाँ सुनती हैं। बहुला गौ को इस दिन वन में फिरते हुए सिंह मिला और उसे खाना चाहा। तब बहुला ने

कहा कि, मैं अपने बछड़े को देख आऊँ, तब खा लीजो। इस पर बाघ ने गौ को चले जाने दिया। बहुला सत्यवादिनी थी, बछड़ेको देख कर सिंह के पास चली गई, तब बाघ बोला कि, 'तू जो चली आई, क्या तुझे अपने प्राण का भय न था ?' इसके उत्तर में बहुला बोली कि, प्राण का भय तो अवश्य था, परन्तु उससे अधिकतर मुझको अपने सत्य प्रण के जाने का भय था क्योंकि मेरा प्रण है कि, "प्राण जायँ पर वचन न जाई"। सिंह ने जब यह सुना और सोचा कि,इस गौ ने अपने सत्य के प्रण को न छोड़ा और प्राण देने को आगई। तब उसने गौ को प्राणदान दे दिये। उसी दिन से सत्य की महिमा दिखाने के लिये इसका व्रत नियत कर दिया कि, सब लोग बहुला की भाँति सत्य की वृत्ति धारण करें, प्राण जाने तक का भय न करें, पर सत्य को न छोड़ें। सो स्त्रियाँ व्रत तो करती हैं पर सत्य-प्रतिज्ञा नाममात्र को भी नहीं, यहाँतक कि, व्रतके दिन भी सत्य नहीं बोलतीं। उस दिन भी अनेक झूठी बातें बोल कर संसार में पाप की भागी होती हैं।

भादौं सुदी ४–जिसे 'सिद्धविनायक' और 'पथराचौथ' भी कहते हैं। इससे यह प्रयोजन रक्खा है कि, कोई किसी को झूठा कलंक न लगावे जैसा कि, आज के दिन श्रीकृष्णचन्द्रको लगाथा और उससे क्लेश उत्पन्नहुआथा।

भादौंसुदी१२–जिसे 'वामनद्वादशी' कहते हैं। इस दिन वामन अवतार ने राजा बलि को छला था, जिसका कारण यह हुआ था कि, राजा बलि ने इन्द्रका राज छल करके ले लिया था। इस व्रत से यह उपदेश रक्खा है कि, यदि कोई किसी के संग छल करेगा तो दूसरे उसके संग छल करेंगे। जैसा वामन ने बलि के संग किया।

भादौंसुदी१४– जिसे 'अनन्तचौदश' कहते हैं। इस दिन सूत अथवा रेशम आदि का जो अनन्त बनाया जाता है, उसमें १४ गॉठ दी जाती हैं। इसका उद्देश्य यह रक्खा है कि, परमेश्वर जो अनन्त है, १४ भुवन का स्वामी है। उसका सदा स्मरण रक्खो। उससे भय मानो कि, वह सब स्थानों में है और तुम्हारे भले, बुरे कामों को देखता है। १४ भुवनों में तुम उससे छिपाकर किसी स्थान में, कोई कर्म नहीं कर सके, जहॉ वह न देख सके।

कार में भी नवदुर्गा होती हैं, पर अभिप्राय वही है, जो चैत्र की नवदुर्गा का है।

कार्त्तिकस्नान–यह विधवाओं के लिये है। सुहागिनों के लिये कदापि नहीं क्योंकि अब जाड़े के दिन लग जाते हैं। इनमें काम की अधिकाई होती है। इसलिये प्रातःकाल स्नान करना, व्रत रखना और ऐसा भोजन न करना चाहिये, जो बल करनेवाला व वीर्य करनेवाला

हो। जैसे उड़द, तिल, मधु इत्यादि, किन्तु ऐसे साधन करने चाहियें, जिससे काम आदि कम होते जावें। जैसे स्नान आदि। और इसी युक्ति से माघ का स्नान रक्खा है और वह भी विधवाओं के लिये ही है, सुहागिनों के लिये नहीं है, पर आजकल तो सभी स्त्रियां, क्या छोटी क्या बड़ी, क्या ब्याही क्या क्वारी, क्या राँड़ क्या सुहागिन सभी इसके फल को लूटती हैं। ठीक बात को कोई नहीं समझतीं और न कोई उनको उपदेश करता। भेड़धसान की रीति मच रही है।

' हे बहिन मोहनी! मैं तुझे अब कहाँ तक बताऊँ। जितना बता दिया है, उसी से तू सब कुछ समझ ले और इन बातों को समझ बूझ कर करियो। मूर्ख स्त्रियों की भाँति तू भी इनमें मत फँस जाइयो। जहाँ तक बने, वहाँ तक औरों को भी उपदेश करती रहियो कि, स्त्रियाँ इनको छोड़ कर गुणवान् बनें और अपने पति, पुत्र की सब भाँति सहाय करें।

मैंने भी बहिन, अपना यह धर्म समझ लिया है कि, एक वा दो घंटे नित ऐसी वार्ता में लगा देना, जिससे यह हमारा देश सुधरे और जो जो बुरी बातें आजकल प्रचलित हैं, वे मिटें। उनके स्थान में अच्छी अच्छी बातें फैलें। हमारे यहाँ की स्त्रियाँ विद्यावती, गुणवती और

बुद्धिमती बनें । तू भी अब पढ़ना फिर आरम्भ कर दे । मैंने माँ को समझा दिया है । वह तुझे अब न रोकेगी । तू भी पढ़ने में जी खूब लगाइयो । पढ़ने से मनुष्य के चार आँखें हो जाती हैं । बहिन ! मैं कल ही जाऊँगी । इसलिये अब बहुत समय नहीं है, जो तुझे और कुछ बताती, पर जो कोई बात मुझे और याद आवेगी, सो तुझे लिख कर वा छपवा कर भेज दूँगी । तू जल्दी पढ़ना सीख ले, जिससे मेरी लिखी हुई बात को पढ लिया करे ।

ले, अब बहुत नहीं कहती, तुझे आशीष देती हूँ कि, इस मेरे कथन के सुनने का ईश्वर तुझे यह फल दे कि, तू अपने माता, पिता और पति को सदा प्रसन्न रख सके और वे तुझे मन से चाहें । इसी भाँति जो कोई स्त्री इसको पढ़े वा सुने, वह भी इसके फल को चाखे । हे ईश्वर ! मेरी इस हृदयान्तर की प्रार्थना को कान धर कर सुनियो और पूरी कीजियो । चल उठ, सो रहें । आज कथा सम्पूर्ण हुई ।

रीति त्योहार और व्रत समाप्त ।